चतुर्विंशति तीर्थंकर विधान

ॐ

रचयित्री

आर्यिका विज्ञानमति

प्रकाशक

धर्मोदय विद्यापीठ

सागर (मध्यप्रदेश)

कृति : चतुर्विंशति तीर्थंकर विधान

रचयित्री : आर्यिका विज्ञानमति

सम्पादन : डॉ॰ ब्र॰ भरत भैया

संस्करण : द्वितीय, मई, २०१९

आवृत्ति : ११00

पुण्यार्जक : श्रीमती सुशीलाबाई जैन धर्मपत्नी स्व॰ चौ॰ श्री नन्नूलालजी जैन, पुत्र–राजेन्द्रकुमार, सुरेन्द्रकुमार, वीरेन्द्रकुमार जैन, मालथौन वाले, सागर (म॰ प्र॰)

प्राप्तिस्थान : धर्मोदय विद्यापीठ
बाहुबली कॉलोनी, सागर (मध्यप्रदेश)
७५८२-९८६-२२२

श्रावक संस्कार साहित्य केन्द्र
तीर्थधाम श्री नन्दीश्वर द्वीप जिनालय
जैन नगर, लालघाटी, भोपाल-४६२०३२
९४२५३-७४८९७

मुद्रक : विकास ऑफसेट, भोपाल

भक्ति सरिता

भगवद् भक्ति की पावन परम्परा अनादिकालीन है। आदि ब्रह्मा आदिम तीर्थंकर आदिनाथ भगवान् से प्रवाहित अंतिम तीर्थंकर भगवान् महावीरस्वामी के शासन काल में भी अनवरत रूप से बहती हुई भक्ति सरिता आज भी जनमानस के पापों को प्रक्षालित कर रही है। सर्वज्ञ प्रणीत धर्म दो प्रकार का है, मुनि धर्म और श्रावक धर्म के रूप में। मुनि महाराज पंच परमेष्ठी का ध्यान करके भावात्मक भक्ति पूर्वक अपनी आत्मा को परमात्मा से जोड़ते हैं, तो श्रावक अष्ट द्रव्यमय भक्ति, पूजा, अर्चना करके अपने आपको परमात्मा के करीब ले जाता है। वह कभी बृहद् विधानार्चना द्वारा अपने पापों को प्रक्षालित करता है तो कभी आहारादि दान क्रियाओं से तो कभी अनशनादि तपाराधना करके भी अपनी आत्मा को कर्म के भार से हल्का करता है। जिनेन्द्र भक्ति की चर्चा करते हुए आचार्य समन्तभद्र स्वामी पात्रकेसरी स्तोत्र अपरनाम जिनेन्द्र गुण संस्तुति में कहते हैं कि हे भगवन्! आपके गुणों की अपरिमित शक्ति समूह की निरंतर स्तुति/भक्ति करने वाला पुरुष जिन भक्ति की महिमा से महती लक्ष्मी, वैभव के साथ केवलज्ञान और निष्कषाय अनंत सुख में स्थित होने का पुरुषार्थ करने में उद्यत हो जाता है। आपके अल्प गुण का वर्णन भी हमारे श्रेयस् को कराने वाला है, फिर जो आपके अनंत गुणों की अहर्निश भक्ति करता है, उसे मोक्षरूप परम स्थान क्यों नहीं प्राप्त होगा।

आचार्य भगवंतों की भावनाओं को आत्मसात् करते हुए चारित्र चक्रवर्ती आचार्य शान्तिसागरजी महाराज की शिष्य परम्परा में आचार्य शिवसागरजी महाराज के प्रथम शिष्य महाकवि ज्ञानवृद्ध, अनुभववृद्ध

आचार्य ज्ञानसागरजी महाराज के द्वितीय शिष्य आचार्यकल्प १०८ विवेकसागरजी महाराज के कर-कमलों से रेगिस्तानी क्षेत्र के कूकनवाली ग्राम में २ फरवरी, १९८५ को रत्नत्रय निधि को धारण करने वाली चेलना, सुलोचना, मनोरमा जैसी गौरवान्वित आर्यिकाओं की श्रेणी में अपना महामहिम स्थान बनाने वाली पूज्य आर्यिकाश्री के अंतर्कूप में भक्ति पयस् लबालब भरा हुआ है। उसी भक्ति पयस् की बूँदें जिनार्चना/ विधानों के रूप में समूची जैन समाज के जिनभक्तों की आत्मा को अभिसिंचित कर रही हैं। निजात्मा को भक्ति पयस् का पान कराते हुए अन्य सभी भव्यात्माओं को भक्ति पयस् से संतुष्ट करने वाली पूज्य आर्यिकाश्री ने चतुर्विंशति तीर्थंकर भगवान् के लघु विधानों की सृजना की, सभी विधान अलग-अलग ही प्रकाशित हुए जिनको पाकर श्रावकों ने विशेष जिनभक्ति की प्रेरणा पायी। एक दिन भोपाल निवासी श्री जिनेश भाई (जैननगर, लालघाटी) से उनके मित्र साधर्मी भाई ने कहा पूज्य आर्यिकाश्री द्वारा सृजित नेमिनाथ विधान बहुत ही अच्छा लगा। विधान करके मैं आनन्द विभोर हो उठा। सुनकर वे बोले—भाई माताजी का हर विधान २४ कैरेट सोना की भाँति है। आप जो भी करोगे सभी तुम्हारी आत्मा रूपी तिजोरी को आनन्दामृत रूपी सोने से भर देंगे। चाहे चौबीस तीर्थंकर के विधान हों, नंदीश्वर विधान हो, दशलक्षण विधान हो, तत्त्वार्थसूत्र विधान हो या रक्षाबन्धन विधान हो, सभी एक से बढ़कर एक हैं। जो चाहो, जब चाहो करके आनन्दामृत से भर सकते हैं। सारी बातें सुनकर वे साधर्मी भाई बोले—भाई जिनेश आपने सही कहा—जिनेन्द्र भगवान् के प्रति भक्ति तो ऐसी ही होनी चाहिए। सच है—अपने भव की विभूति को नष्ट करके के लिए सदैव जिन

भक्ति करना चाहिए। जो श्रद्धा से भरकर विनय के साथ आत्मनिष्ठ होकर जिनवंदना करता है, वह परमात्मा के अत्यन्त निकट पहुँच जाता है। जिस प्रकार सूरजमुखी के पुष्प का मुख जैसे सूरज की ओर ही रहता है, ठीक उसी प्रकार भव्य जीवों का हृदय भी सदैव जिन चरणों की ओर ही रहता है। जिस प्रकार समस्त नदियाँ सागर में मिलकर कृतकृत्य हो जाती हैं, उसी प्रकार भव्य जीव जिनेन्द्र चरणरूपी सागर में मिलकर कृतकृत्य हो जाते हैं।

इसी भगवद् भक्ति की श्रृंखला में ब्र० भरत भैया (धर्मोदय विद्यापीठ) ने पूज्य आर्यिकाश्री से निवेदन किया कि हम सभी चतुर्विंशति तीर्थंकर विधानों को एक साथ प्रकाशित करना चाहते हैं। उस समय तो पूज्य आर्यिकाश्री कुछ नहीं बोले, बाद में जब मैंने पूछा तो बोलीं–आप लोग जैसा चाहें, मुझसे इससे कोई प्रयोजन नहीं हैं। मेरा प्रयोजन तो भगवद् भक्ति रूप विधान लिखने तक था सो पूरा हो गया।

ब्र० भरत भैया ने अपनी भावनाओं को साकार रूप देते हुए कृति की संयोजना की, जो आप सभी के हाथ में है। विश्वास है आप सभी समाहित चतुर्विंशति तीर्थंकर विधानों को पाकर भगवद्भक्ति करके अपने आपको पापों से बचाने का प्रयास करेंगे और भक्ति करते-करते एक दिन परम्परा से भगवान् बनने का पूर्ण पुरुषार्थ कर लेंगे।

अंत में असीमानंत सुख के भोक्ता जिनेन्द्र भगवान् के चरणों में यही प्रार्थना है कि हमारे अंतस् में भी हमारी दीक्षा प्रदात्री गुरुवर्या सम श्रद्धा, आस्था अंतिम श्वास तक ही नहीं वरन् जब तक आपके जैसे न बन जायें तब तक बनी रहे। इसी भावना से अनंत-अनंतशः नमन...

संघस्था आर्यिका आदित्यमति

आर्यिका श्री विज्ञानमति माताजी : परिचय

पूर्वनाम	:	लीला
पिता	:	श्री बालूलालजी (समाधिस्थ मुनि यशसागरजी महाराज)
माता	:	श्रीमती कमलाजी
जन्मतिथि	:	मिति आश्विन शुक्ला पंचमी, सन् १९६३
जन्मस्थान	:	भीण्डर (उदयपुर-राजस्थान)
लौकिक शिक्षा	:	हाईस्कूल
परिणय	:	भीण्डर में ही, १८ वर्ष की आयु में, सन् १९८१
गृहत्याग	:	परिणय के १८ माह बाद
प्रतिमा धारण	:	अलोध में ५ प्रतिमा, कुचामन में ९ प्रतिमा के व्रत
आर्यिका दीक्षा	:	२ फरवरी १९८५, कूकनवाली (कुचामनसिटी-राजस्थान)
दीक्षागुरु	:	परम पूज्य आचार्यकल्प समाधिस्थ श्री विवेकसागरजी मुनिराज
रुचियाँ	:	स्वाध्याय, तप-त्याग, चिन्तन-मनन, लेखन
विशिष्टता	:	मधुर, गम्भीर पौराणिक शैली में प्रवचन
दीक्षित शिष्याएँ	:	समाधिस्थ आर्यिका श्री वृषभमति माताजी, आदित्यमतिजी, पवित्रमतिजी, गरिमामतिजी, सम्भवमतिजी, वरदमतिजी, शरदमतिजी, चरणमतिजी, करणमतिजी, शरणमतिजी, सुवीरमतिजी, सुयशमतिजी, उदितमतिजी, रजतमति।

आर्यिका श्री विज्ञानमति माताजी के चातुर्मास

वर्ष १९८५	-	मारोठ (राजस्थान) (गुरुदेव के साथ)
वर्ष १९८६	-	मदनगंज-किशनगढ़ (राजस्थान)
वर्ष १९८७	-	अजमेर (राजस्थान)
वर्ष १९८८	-	सिंगोली (मध्यप्रदेश)
वर्ष १९८९	-	रामगंज मंडी (राजस्थान)
वर्ष १९९०	-	शाहपुर (मध्यप्रदेश)
वर्ष १९९१	-	रहली, सागर (मध्यप्रदेश)
वर्ष १९९२	-	कटंगी (मध्यप्रदेश)
वर्ष १९९३	-	हरदा (मध्यप्रदेश)
वर्ष १९९४	-	नीमच (मध्यप्रदेश)
वर्ष १९९५	-	बिजौलिया (राजस्थान)
वर्ष १९९६	-	केकड़ी (राजस्थान)
वर्ष १९९७	-	नसीराबाद (राजस्थान)
वर्ष १९९८	-	नसीराबाद (राजस्थान)
वर्ष १९९९	-	आष्टा (मध्यप्रदेश)
वर्ष २०००	-	केसली (मध्यप्रदेश)
वर्ष २००१	-	सम्मेदशिखर (झारखण्ड)
वर्ष २००२	-	आरोन (मध्यप्रदेश)
वर्ष २००३	-	मालथौन (मध्यप्रदेश)
वर्ष २००४	-	करमाला (महाराष्ट्र)
वर्ष २००५	-	पाण्डीचेरी

वर्ष २००६	-	श्रीरामपुर (महाराष्ट्र)
वर्ष २००७	-	घुवारा, सागर (मध्यप्रदेश)
वर्ष २००८	-	तेन्दूखेड़ा (मध्यप्रदेश)
वर्ष २००९	-	बामौरकलाँ (मध्यप्रदेश)
वर्ष २०१०	-	रावतभाटा (राजस्थान)
वर्ष २०११	-	किशनगढ़ (राजस्थान)
वर्ष २०१२	-	भीण्डर (राजस्थान)
वर्ष २०१३	-	घाटोल (राजस्थान)
वर्ष २०१४	-	बागीदौरा (राजस्थान)
वर्ष २०१५	-	नन्दीश्वर द्वीप जिनालय, भोपाल (मध्यप्रदेश)
वर्ष २०१६	-	जतारा, जिला-टीकमगढ़ (मध्यप्रदेश)
वर्ष २०१७	-	नन्दीश्वर कॉलोनी, टीकमगढ़ (मध्यप्रदेश)
वर्ष २०१८	-	नेहानगर, सागर (मध्यप्रदेश)

आर्यिका श्री विज्ञानमती माताजी द्वारा रचित कृतियाँ

सिद्धान्त ग्रन्थ

- तत्त्वार्थमञ्जूषा भाग-१-२
- चउबीस ठाणा प्रश्नोत्तर मञ्जूषा १-२
- तिरेपनभाव प्रश्नोत्तरमञ्जूषा १-२
- लघु तत्त्वार्थमञ्जूषा
- कर्म सिद्धान्त मञ्जूषा

नैतिक साहित्य

- संस्कारमञ्जूषा पूर्वार्द्ध, उत्तरार्द्ध
- शीलमञ्जूषा
- विवेकमञ्जूषा
- प्रवचनमञ्जूषा
- सम्यक्त्वमञ्जूषा
- अनर्थ दण्ड क्या ?
- पलायन क्यों ?
- सच्चे देव का स्वरूप
- सभ्य परिवार
- अच्छी सास
- बहू कैसी
- समझदार बेटा
- संस्कारित बेटी
- भोगोपभोगपरिमाण विधि
- बाल संस्कारमञ्जूषा

पद्यात्मक

- भूषणद्वय महाकाव्य
- सुदर्शन चरित्र
- धीवर की धी
- भक्तिपुञ्जमञ्जूषा

विधान

- श्री बड़ेबाबा विधान
- चतुर्विंशति विधान (सामूहिक)
- चतुर्विंशति विधान (अलग-अलग)
- कल्पद्रुम मण्डल विधान
- उपसर्गहर रक्षाबंधन विधान
- तत्त्वार्थसूत्र विधान
- श्री सिद्धचक्र विधान
- सहस्रनाम विधान
- श्री नन्दीश्वर विधान
- पंचविधान संग्रह
- चौंसठ ऋद्धि विधान
- दशलक्षण विधान (लघु एवं बृहद्)
- सोलहकारण विधान
- श्री सम्मेदशिखर विधान
- यागमण्डल विधान
- पंचमेरु विधान
- श्रुतपंचमी विधान

जीवनी

- राणोली रत्नाकर (ज्ञानसागरजी)
- मारवाड़ का मार्तण्ड (विवेकसागरजी)

आर्यिका श्री का जीवन वृत्त– लीला से गुरु माँ, मेवाड़ की महाव्रती, पथ के साथी, भाग-१-२, नाव के खिवैया, माँ की चिंतन लहरें।

अनुक्रम

	श्री बड़ेबाबा विधान	१
१.	श्री आदिनाथ विधान	२६
२.	श्री अजितनाथ विधान	५०
३.	श्री संभवनाथ विधान	७४
४.	श्री अभिनंदननाथ विधान	१००
५.	श्री सुमतिनाथ विधान	१२३
६.	श्री पद्मप्रभ विधान	१४७
७.	श्री सुपार्श्वनाथ विधान	१७१
८.	श्री चन्द्रप्रभ विधान	१९५
९.	श्री सुविधिनाथ विधान	२१९
१०.	श्री शीतलनाथ विधान	२४३
११.	श्री श्रेयोनाथ विधान	२६७
१२.	श्री वासुपूज्य विधान	२९२
१३.	श्री विमलनाथ विधान	३१४
१४.	श्री अनंतनाथ विधान	३३९
१५.	श्री धर्मनाथ विधान	३६४
१६.	श्री शान्तिनाथ विधान	३८८
१७.	श्री कुन्थुनाथ विधान	४१४
१८.	श्री अरनाथ विधान	४३७
१९.	श्री मल्लिनाथ विधान	४६२
२०.	श्री मुनिसुव्रत विधान	४८६
२१.	श्री नमिनाथ विधान	५१०
२२.	श्री नेमिनाथ विधान	५३३
२३.	श्री पार्श्वनाथ विधान	५५८
२४.	श्री वर्द्धमान महावीर विधान	५८३

श्री बड़ेबाबा विधान

स्तुति

(दोहा)

पूज्य बड़े बाबा तुम्हें, कोटि-कोटि परणाम।
थुति करता हूँ चाव से, मिट जावे भव नाम॥१॥

(पद्धरी)

जय पूज्य बड़े बाबा महान, तुम दर्शन से हो पाप हान।
सब दोष विनाशक धीर वीर, मम दोष विनाशो गुण गरीर॥२॥

मैं दरशन कर जो नन्द पाय, वो कह सकता ना शब्द माय।
है गद-गद वाणी पुलक देह, है केवल तुममें मम सनेह॥३॥

मैं हरिहर आदिक देव देख, ना तुष्ट हुआ हूँ हे विशेख।
सो आया सबको छोड़ आज, मैं वंदन करहूँ सिद्ध काज॥४॥

मैं हर्षित होकर नाच-नाच, मम इष्ट पूज्य हो आप साँच।
मैं ठुमक-ठुमक कर दऊँ ताल, मैं चलना चाहूँ आप चाल॥५॥

मैं तननं-तननं तुरहि देय, मैं घननं-घननं घण्ट देय।
मैं ढम-ढम-ढम-ढम-ढोल बजा, मैं पूजूँ मेटो जनम सजा॥६॥

तव दर्शन से हो अग्नि नीर, तव पर्शन से मिट जाय पीर।
हो पापी के भी पाप नाश, पुनवान बढ़ेंगे मोक्ष पास॥७॥

मैं पर्वत चढ़कर निकटआय, सब मिटा परिश्रम आप पाय।
तुम कर्म रहित हो वीतराग, है मेरा तुमसे परम राग॥८॥

दृग ज्ञान सुदर्शन सौख्य वीर्य, ना होते तुममें कभी शीर्य।
त्रयलोकालोकं रहे जान, है उसका फिर भी नहीं मान॥९॥

सुर शक्री-चक्री पड़े पाद, पा जाने समकित सत्य खाद।
जो एक बार भी करे दर्श, ना होवे तन-मन कभी कर्श ॥१०॥

वो फिर-फिर आवे आप चरण, ना तजता क्षण भर आप शरण।
गुरु विद्यासागर सूरि देव, तव दर्श करन को आप गेह ॥११॥

वे दरशन करके रीझ गये, वे पुनः-पुनः आ शीश नये।
फिर मंदिर नूतन बनवाया, जब बाबा को था पधराया ॥१२॥

वह दृश्य देखने लायक था, हर बच्चा उसका भावक था।
तब हर्ष अश्रु भी झलक रहे,ना दर्शक की वा पलक नये[१]॥१३॥

यह मंदिर कितना है विशाल, यह संरक्षा की है मिशाल।
औ दीक्षा दीनी नेक यहाँ, यह गुरु कृपा है आज यहाँ ॥१४॥

हम सबही उनके शिष्य रहे, हम भक्ति करे यह इष्ट अये।
अब मन में मेरे नहीं आस, मैं केवल तुमरा रहूँ दास ॥१५॥

मैं बलि-बलि जाऊँ दिवस रात, मैं भव-भव पाऊँ आप साथ।
मम मोठे बाबा वर्ष-वर्ष, जयवंत रहे हो हर्ष-हर्ष ॥१६॥

गुरु छोटे बाबा कोटि वर्ष, इह दरशन देवे देय पर्श।
हम दरशन पा द्वय बाबा के, हम बचे कर्म के धावा से ॥१७॥

मैं नन्त-नन्तशः नमन करूँ, मैं शिव मारग पर गमन करूँ।
मैं तब तक पूजूँ आप पाद, ना होवे जब तक मुक्ति साथ ॥१८॥

(दोहा)

महिमा तुमरी हे प्रभो, कह सकता है कौन?।
बृहस्पती भी हारकर, ले लेता है मौन॥

इति परिपुष्पाञ्जलिं क्षिपामि!

---

१. पलकें नहीं झपक रही थी।

विधान प्रारम्भ

स्थापना

(ज्ञानोदय)

मोठे बाबा बहुत बड़े हैं, बुंदेली में सबसे ही।
बड़े कहे हैं कुण्डलपुर में, महिमाशाली सबमें जी॥
श्रीधर स्वामी इसी क्षेत्र से, मोक्ष गये हैं भव छोड़ा।
सिद्धक्षेत्र का अतिशय भारी, हमने भी आ मन जोड़ा॥

(दोहा)

पूज्य बड़े बाबा प्रभु, श्रीधर श्रेष्ठ महान्।
सन्निधि थापन उर बुला, अहनिशि पूजूँ आन॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं बड़ेबाबा अत्र अवतर अवतर संवौषट् इति आह्वानम्।
ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं बड़ेबाबा अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम्।
ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं बड़ेबाबा अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणम्।

(घत्ता)

मैं स्वर्णिम झारी, में जल डारी, हे शिवकारी गुण गाऊँ।
मम जन्म मिटा दो, जरा बढ़ा दो, मृत्यु नशा दो पद आऊँ॥
हे बाबा मंगल, मेटो दंगल, मिथ्या जंगल में उलझा।
मैं महिमा सुनके, तुमको भजके, पूजा करके अब सुलझा॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं बड़ेबाबा अर्हं नमः जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं...।

शुभ मलया चंदन, काटो बंधन, करके वंदन शरण गहूँ।
मैं शीतल बनने, आतप हरने, अर्चन करने चरण चहूँ॥
हे बाबा...॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं बड़े बाबा अर्हं नमः संसारतापविनाशनाय चंदनं...।

ये अमल अखण्डित, सौरभ मण्डित, करने खण्डित पाप तमम्।
मैं अक्षत लायो, थाल भरायो, मन हरषायो मेट ममम्[१]॥
हे बाबा...॥

---

१. अहंकार

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं बड़े बाबा अर्हं नमः अक्षयपदप्राप्तये अक्षतं ...।

हे काम विभंगे! रंग बिरंगे, सुरभित चंगे पुष्प लये।
बस ताप नाश दो, चरण वास हो, आप खास हो धर्म महे!॥
हे बाबा मंगल, मेटो दंगल, मिथ्या जंगल में उलझा।
मैं महिमा सुनके, तुमको भजके, पूजा करके अब सुलझा॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं बड़े बाबा अर्हं नमः कामबाणविध्वंशनाय पुष्पं ...।

ले नैवज मीठे, विधि मल रूठे, तुम हो नीठे त्रिभुवन में।
मैं थाल भराऊँ, मंदिर आऊँ, क्षुधा नशाऊँ, चरणन में॥
हे बाबा...॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं बड़े बाबा अर्हं नमः क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं ...।

ये दीपक प्यारा, मणिमय न्यारा, आज उजारा देख तुम्हें।
सब मोह नशाने, ज्ञान सुपाने, दीप चढ़ाने भाग्य जगे॥
हे बाबा...॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं बड़े बाबा अर्हं नमः मोहान्धकारविनाशनाय दीपं ...।

ये धूप दशांगी, सुरभित संगी, हे शिवरंगी लाया हूँ।
मैं कर्म जलाने, तुम गुण पाने, धूप चढ़ाने आया हूँ॥
हे बाबा...॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं बड़े बाबा अर्हं नमः अष्टकर्मदहनाय धूपं ...।

हे गुण-गण धारी! लौंग सुपारी, पिस्ता प्यारी ले आऊँ।
दो मोक्ष महाफल, मेटो दल-दल, बनने अविचल नित ध्याऊँ॥
हे बाबा...॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं बड़े बाबा अर्हं नमः मोक्षफलप्राप्तये फलं ...।

मैं द्रव्य सजाके, जल्दी आके, पूज रचाके हर्षित हूँ।
औ आप अमोलक, हे सुख गोलक, बजा सुढोलक अर्पित हूँ॥
हे बाबा...॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं बड़े बाबा अर्हं नमः अनर्घपदप्राप्तयेऽर्घ्यं ...।

प्रत्येक-अर्घ्य

(दोहा)

अष्टक से मैं पूजकर, मुख्य गुणों को अर्घ।
देता हूँ गुण सिन्धु को, मिटे कर्म उपसर्ग॥

इति मण्डलस्योपरि पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्/क्षिपामि॥

(ज्ञानोदय)

स्वेद नहीं हो चेतन में वह, मल है तन का क्यों आवे?।
स्वेदहीनता अतिशय प्रभु का, किसके मन को ना भावे ॥
मंगल ग्रह भी मंगल कर दे, बाबा को जो अर्पित हो।
पूजन करके भक्ति भाव से, जीवन करे समर्पित औ ॥१॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं बड़े बाबा अर्हं नमः निःस्वेदत्व जन्मातिशय गुणधारक जिनेन्द्रेभ्योऽर्घ्यं...।

मल-मूत्रों के आँख नाक के, नव द्वारों के मल से भी।
रहित रहा तन पूजा से मम सुधर गये हैं परभव भी ॥
बृहस्पती सी बुद्धि बढ़ेगी बाबा तेरे दर पर आ।
श्रद्धा-पूर्वक अर्घ चढ़ावे, गुरु ग्रह भी तो भागे वा ॥२॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं बड़े बाबा अर्हं नमः निर्मलत्व जन्मातिशय गुणधारक जिनेन्द्रेभ्योऽर्घ्यं ...।

दुग्ध समा है धवल रक्त जो, वत्सलता को बतलाता।
क्षेम-कुशल के काम देखकर, तीनलोक तव गुण गाता ॥
शुक्र ग्रहं क्या कर पायेगा, कुण्डलपुर के बाबा को।
सुमरण करके जप करले तो, जग में उसका नामा हो ॥३॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं बड़े बाबा अर्हं नमः क्षीरगौररुधिरत्व जन्मातिशय गुणधारक जिनेन्द्रेभ्योऽर्घ्यं ...।

ऐसा सुन्दर रूप कहीं ना, सुरनर किन्नर खगधर में।
देखा हमने बाबा जैसा रूप कहाँ है जगभर में ॥

मोह राहु भी तव अर्चा से, भगे राहु क्या कर पाये?।
तुमरे साथे बोल भव्य तू, क्यों ना प्रभु के गुण गाये? ॥४॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं बड़े बाबा अर्हं नमः समचतुरस्रसंस्थान जन्मातिशय गुणधारक जिनेन्द्रेभ्योऽर्घ्यं ...।

वज्रों से भी बलशाली तुम, तन से सबका हित होता।
चूर दिये हैं आत्म शक्ति से, पूजक का भव मित होता ॥
क्रोध केतु भी तव चरणों की, आराधन से मिट जावे।
अहो केतु ग्रह कैसे बाबा, तुम भक्तों के टिक पावे ॥५॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं बड़े बाबा अर्हं नमः वज्रवृषभनाराच संहनन जन्मातिशय गुणधारक जिनेन्द्रेभ्योऽर्घ्यं ...।

सामुद्रिक शुभ लाञ्छन से ये, सुडौल सुन्दर अद्भुत औ।
सौरूप्यं है अतिशय बाबा, वन्दक भी तो अद्भुत हो ॥
सूर्य ग्रहों से ग्रसित हुये भी सूरज सम वो चमक उठे।
आ जावे दरबार आपके,आनन्दित हो फुदक उठे ॥६॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं बड़े बाबा अर्हं नमः सौरुप्य जन्मातिशय गुणधारक जिनेन्द्रेभ्योऽर्घ्यं ...।

देह सुरभि से चम्प चमेली, पारिजात भी लज्जित हो।
बाबा भज लें आप चरण तो, प्रज्ञ जनों में सज्जित हो ॥
मिथ्यातम का शनि लागा जो, नन्तकाल से प्राणी के।
मिट जावे शनि रुके कहो क्या, शरण पाय सुखदानी जे ॥७॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं बड़े बाबा अर्हं नमः सौगन्ध्य जन्मातिशय गुणधारक जिनेन्द्रेभ्योऽर्घ्यं ...।

एक सहस वसु लक्षण शोभित, आप वदन यह प्यारा है।
सहस भवों के पाप मेट कर, अर्चक लगता न्यारा है ॥
भूत पिशाचं आकर बाबा, लीन होय सब भूल गये।
सता सके क्या भूत कहो जो, तव चरणों की धूल गहे ॥८॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं बड़े बाबा अर्हं नमः सौलक्षण्य जन्मातिशय गुणधारक जिनेन्द्रेभ्योऽर्घ्यं ....।

उपमा कैसे अतुल शक्ति की, हो सकती है किससे जी।
भक्त पुजारी बाबा तेरा, आगे होता सबमें जी ॥
जन्म-जरा के रोग मूल से, शरणागत के नाश करें।
कुष्ठ भगंदर आदि रोग क्या, रहे शीश जो पाद धरे ॥९॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं बड़े बाबा अर्हं नमः अप्रमितवीर्य जन्मातिशय गुणधारक जिनेन्द्रेभ्योऽर्घ्यं ...।

मिष्ठ वचन को सुनकर लाडू, पेड़ा घेवर बावर भी।
फीके लगते पूजक के तो नहीं बचेंगे पातक जी ॥
सोम सौम्यता धरता जो भी सौम्य बिम्ब को पूजेंगे।
सोम ग्रहों का काम बचा क्या दुर्दिन सह भव रूठेंगे ॥१०॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं बड़े बाबा अर्हं नमः प्रियहितवादित्व जन्मातिशय गुणधारक जिनेन्द्रेभ्योऽर्घ्यं ...।

(चौपाई)

चार शतक कोशों तक पूरी, दुर्भिक्षं से धरती दूरी।
रहती अतिशय बाबा तेरा, पूजन में मन लागा मेरा ॥११॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं बड़े बाबा अर्हं नमः गव्यूतिशत चतुष्टय सुभिक्षत्वघातिक्षय-जातिशय गुणधारक जिनेन्द्रेभ्योऽर्घ्यं...।

पक्षी सम हो गगन बिहारी, बाबा तुमसे विधियाँ हारी।
लोक-अन्त में जाय बसे हो, पाद-पद्म उर आन बसे औ ॥१२॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं बड़े बाबा अर्हं नमः गगनगमनत्व घातिक्षयजातिशय गुणधारक जिनेन्द्रेभ्योऽर्घ्यं ...।

कुछ कम कोटी पूर्व वर्ष तक, बिन खाये भी पुष्ट रहा तन।
भगवन भोजन कभी न करते, दुखियों के कष्टों को हरते ॥१३॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं बड़े बाबा अर्हं नमः भुक्त्यभाव घातिक्षयजातिशय गुणधारक जिनेन्द्रेभ्योऽर्घ्यं ...।

गमनों से वा दिव्य वाच से, प्राणी वध ना होय आप से।
अहोऽप्राणिवध अतिशय किसमें, हो सकता बस भगवन तुममें ॥१४॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं बड़े बाबा अर्हं नमः अप्राणिवधत्व घातिक्षयजातिशय गुणधारक जिनेन्द्रेभ्योऽर्घ्यं ...।

तीर्थंकर जो कर्म आपका, उपसर्गों से रहित आप वा।
अन-उपसर्ग अतिशय जैसा, अन्य कहाँ हो बाबा वैसा ॥१५॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं बड़े बाबा अर्हं नमः उपसर्गाभाव घातिक्षयजातिशय गुणधारक जिनेन्द्रेभ्योऽर्घ्यं ...।

सबको लगता प्रभु का आनन, मेरे आगे रहा आप तन।
चारों दिशि में दिखते सबको, आनन्द भारी बाबा हमको ॥१६॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं बड़े बाबा अर्हं नमः चतुर्मुखत्व घातिक्षयजातिशय गुणधारक जिनेन्द्रेभ्योऽर्घ्यं ...।

सब विद्याएँ चेरी बनकर, रहती नित ही बाबा तुम पद।
विद्येश्वर की पूजा कर लूँ, फिर क्यों ना मैं भव को तर लूँ ॥१७॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं बड़े बाबा अर्हं नमः सर्वविद्येश्वरत्व घातिक्षयजातिशय गुणधारक जिनेन्द्रेभ्योऽर्घ्यं ...।

अहा देह की छाया नाहीं, पड़ती भूपर तुमरी भाई।
अच्छायत्वं अतिशय कैसे, गावे हम हैं गूँगे जैसे ॥१८॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं बड़े बाबा अर्हं नमः अच्छायत्व घातिक्षयजातिशय गुणधारक जिनेन्द्रेभ्योऽर्घ्यं ...।

आँखों की पलकें ना झपके, इनसे तो बस समता झलके।
देखन की सब इच्छा त्यागी, थकें नहीं हैं ये बड़भागी ॥१९॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं बड़े बाबा अर्हं नमः अपक्ष्मस्पंदत्व घातिक्षयजातिशय गुणधारक जिनेन्द्रेभ्योऽर्घ्यं ...।

नख केशों की वृद्धि रुकी है, इन्द्र मुकुट की मणी झुकी है।
परमौदारिक देह रही है, अतिशय है यह बात सही है ॥२०॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं बड़े बाबा अर्हं नमः समान नख केशत्व घातिक्षयजातिशय गुणधारक जिनेन्द्रेभ्योऽर्घ्यं ...।

(नरेन्द्र)

(लय–शांतिनाथ के पद...)

अर्धमागधी भाषा सुनकर, असंख्यात भवि प्राणी।
एक साथ ही समझे बाबा, मिटे शंक दुख खानी॥
तव दर्शन से निःशंकित हो, समकित भी पा जावे।
अज्ञानों का अंध मिटे तो, तम से क्यों भय खावे?॥२१॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं बड़े बाबा अर्हं नमः सर्वार्धमागधी भाषा देवोपनीतातिशय गुणधारक जिनेन्द्रेभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सिंह गाय औ साँप नेवला, जन्म विरोधी जीवा।
बैर भूलते तुम्हें देखकर, मिट जाती सब पीड़ा॥
सर्व जीव में बने मित्रता, अतिशय भगवन तेरा।
कुण्डलपुर में दर्श करे जब, हर्षित हो मन मेरा॥२२॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं बड़े बाबा अर्हं नमः सर्वजन मैत्री-भाव देवोपनीतातिशय गुणधारक जिनेन्द्रेभ्योऽर्घ्यं...।

षट् ऋतुओं के फल-फूलों से, लद जाते इक साथे।
वृक्ष-लताएँ झाड़-झाड़ियाँ, मुकुलित हो चहकाते॥
तेरी अर्चा करने वाले, पुत्र पौत्र यश पूजा।
पाते पल में धन-धान्यों को, उन सम ना हो दूजा॥२३॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं बड़े बाबा अर्हं नमः सर्वर्तुफलादि शोभित तरु परिणाम देवोपनीतातिशय गुणधारक जिनेन्द्रेभ्योऽर्घ्यं...।

आप विचरते जहाँ-वहाँ की, धरती दर्पण भाँती।
निर्मल होती रत्न प्रपूरित, सब मन को हर्षाती॥

चमक उठेगा तीन लोक में, रत्नों सम तुम सेवी।
पापों का प्रक्षालन करके, बन जावे वृष-नेमी॥२४॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं बड़े बाबा अर्हं नमः आदर्शतलप्रतिमारत्नमयी देवोपनीतातिशय गुणधारक जिनेन्द्रेभ्योऽर्घ्यं...।

जिस दिशि में तुम विहरण करते, चले पवन अनुकूलं।
मन्द-मन्द ही नहीं किसी को, वायु रहे प्रतिकूलं॥
बाबा तेरे चरण पड़े तो, पाप पंक धुल जावे।
मन्द-मन्द ही कर्म उदय हो, कष्ट सभी भग जावे॥२५॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं बड़े बाबा अर्हं नमः विहरणमनुगतवायुत्व देवोपनीतातिशय गुणधारक जिनेन्द्रेभ्योऽर्घ्यं...।

तुम्हें देखकर कलिया मन की, खिलती पुलकित देही।
हो जाते हैं आनन्द पाते, चाहे हो निर्नेही[१]॥
सुख में हो या दुख में होवे, गीत तुम्हारे गावे।
बाबा खुशियाँ जीवन भर हो, फूला नहीं समावे॥२६॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं बड़े बाबा अर्हं नमः सर्वजनपरमानन्दत्व देवोपनीतातिशय गुणधारक जिनेन्द्रेभ्योऽर्घ्यं...।

वायु जाति के देव मार्ग के, काँटे कंकड़ धूली।
दूर करे सो धरा स्वच्छ हो, जब आते शिव चूली॥
संकट टलते पूजक के जब, अर्पित होकर पूजे।
बाबा तुमको तजकर वे तो, और कहीं ना रीझे॥२७॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं बड़े बाबा अर्हं नमः वायुकुमारोपशमित धूलि कंटकादि देवोपनीतातिशय गुणधारक जिनेन्द्रेभ्योऽर्घ्यं...।

मेघ जाति के देव गगन में, गर्जन करके आवें।
हरष-हरष कर रिमझिम-रिमझिम, गंधोदक बरसावें॥
आधि-व्याधि से झुलस रहा हो, आप भक्तिमय पानी।
पी लेवे तो पल भर में ही, बनता शान्ति प्रधानी॥२८॥

---
१. स्नेह से रहित

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं बड़े बाबा अर्हं नमः मेघकुमार कृत गन्धोदकवृष्टि देवोपनीतातिशय गुणधारक जिनेन्द्रेभ्योऽर्घ्यं...।

पाद रखेंगे आप जहाँ पर, देव कमल रच देवें।
सहस पत्र के कनक विनिर्मित, सूर्य दीप्ति हर लेवें॥
दो-सौ पच्चिस पद्म देखकर, विस्मय सबको होवे।
पादयुगल को एक साथ रख, गमन आपका होवे॥२९॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं बड़े बाबा अर्हं नमः पादन्यासेकृत पद्मानि देवोपनीतातिशय गुणधारक जिनेन्द्रेभ्योऽर्घ्यं...।

पकी फसल जब दर्शक का तन, रोमांचित कर देती।
त्रिभुवनपति के वैभव को ही, निरख-निरख सुख लेती॥
भाग्यवान जो भगवन तेरी, पूजा कर हरषावे।
भूत-प्रेत की बाधाएँ भी, क्षण-भर में विनशावे॥३०॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं बड़े बाबा अर्हं नमः फलभारनम्रशालि देवोपनीतातिशय गुणधारक जिनेन्द्रेभ्योऽर्घ्यं...।

बिजली बादल ओस कणों से, धूँधल से भी रीता।
नभतल होता निर्मल जैसे, फटिक मणी हो शीता॥
बाबा आकर आप चरण में, लोट-पोट हो जावे।
आपद के सब बादल छटकर, नींद चैन की पावे॥३१॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं बड़े बाबा अर्हं नमः शरत्कालवन्निर्मल गगनत्व देवोपनीतातिशय गुणधारक जिनेन्द्रेभ्योऽर्घ्यं...।

तुरही घंटा ढोल नंगाड़ा, ढम-ढम झन-झन बाजे।
साढ़े बारह कोटि वाद्य से, सुरकृत दुन्दुभि साजे॥
बाबा तेरे पद पंकज की, धूली शीश चढ़ावे।
कल्याणक हो उसका पंचम, तीन लोक पद आवे॥३२॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं बड़े बाबा अर्हं नमः एतैतैतिचतुर्निकायामर परस्पराह्वान देवोपनीतातिशय गुणधारक जिनेन्द्रेभ्योऽर्घ्यं...।

दसों दिशाएँ शारद नभ सी, निर्मलता ले भाती।
भाव मलों से रहित नाथ के, अतिशय को बतलाती॥
पुण्यास्त्रव हो पूर्व पाप का, नाश पाप ना आवे।
पूजे बाबा उसके घर में, खुशहाली छा जावे॥३३॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं बड़े बाबा अर्हं नमः शरन्मेघवन्निर्मल दिग्विभागत्व देवोपनीतातिशय गुणधारक जिनेन्द्रेभ्योऽर्घ्यं...।

सहस आर का झग झग करता, धर्म चक्र से पावन।
उसे देखकर पापी का भी, जीवन होता सावन॥
सौ-सौ उसके भाग्य जगेंगे, जो भगवन को ध्यावें।
अपयश मिटकर यश फैलेगा, सहज-सौख्य को पावें॥३४॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं बड़े बाबा अर्हं नमः धर्मचक्रचतुष्टय देवोपनीतातिशय गुणधारक जिनेन्द्रेभ्योऽर्घ्यं...।

(दोहा)

सिंहासन पे राजते, फिर भी अधर विराज।
विस्मित सबको कर दिया, समवसरण में राज॥
कुण्डलपुर में आय के, बाबा की हम आज।
दृम-दृम वीणा नाद कर, पूज रचे शिरताज॥३५॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं बड़े बाबा अर्हं नमः सिंहासन-प्रातिहार्य-धारक जिनेन्द्रेभ्योऽर्घ्यं...।

साढ़े बारह कोटि के, ढम-ढम ढोल बजाय।
तुमरा अतिशय देखकर, लायो अर्घ्य सजाय॥
कुण्डलपुर...॥३६॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं बड़े बाबा अर्हं नमः दुन्दुभि-प्रातिहार्य-धारक जिनेन्द्रेभ्योऽर्घ्यं...।

हरित मणी के पत्र का, सघन छाँव का गाछ।
उसके नीचे आपकी, छवि अशोक निरबाध॥
कुण्डलपुर...॥३७॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं बड़े बाबा अर्हं नमः अशोकवृक्ष-प्रातिहार्य-धारक जिनेन्द्रेभ्योऽर्घ्यं...।

चामर झुककर उठ रहे, कहते सुन ले भव्य।
झुक जा चरणों उच्च ही, गति हो होगा श्रव्य[१]॥
कुण्डलगिरि में आय के, बाबा की हम आज।
दृम-दृम वीणा नाद कर, पूज रचे शिरताज॥३८॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं बड़े बाबा अर्हं नमः चतुषष्टि चामर-प्रातिहार्य-धारक जिनेन्द्रेभ्योऽर्घ्यं...।

कोटि सूर्य चन्दा सभी, फीके ही पड़ जाय।
भामण्डल को देखकर, तेज सौम्यता पाय॥
कुण्डलपुर...॥३९॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं बड़े बाबा अर्हं नमः भामण्डल-प्रातिहार्य-धारक जिनेन्द्रेभ्योऽर्घ्यं...।

तीन-लोक त्रय छत्र का कहते हैं स्वामित्व।
पूजन अर्चन से रहे, सुख में ना खामित्व॥
कुण्डलपुर...॥४0॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं बड़े बाबा अर्हं नमः छत्रत्रय - प्रातिहार्य-धारक जिनेन्द्रेभ्योऽर्घ्यं...।

दूर-दूर तक आपकी, दिव्य वाच फैलाव[२]।
समाधान सब प्रश्न का, पा जावे भवि चाव[३]॥
कुण्डलपुर...॥४१॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं बड़े बाबा अर्हं नमः दिव्यध्वनि-प्रातिहार्य-धारक जिनेन्द्रेभ्योऽर्घ्यं...।

---

१. उच्च गति प्राप्त करके सम्मानीय होगा।

२. दिव्यध्वनि प्रसारित होती।

३. इच्छित समाधान पाते हैं।

नाना-विधि के पुष्प जो, डण्ठल नीचे राख।
बरस कहे रे पूज ले, बन्धन होंगे राख॥
कुण्डलगिरि में आय के, बाबा की हम आज।
दृम-दृम वीणा नाद कर, पूज रचे शिरताज॥४२॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं बड़े बाबा अर्हं नमः पुष्पवृष्टि-प्रातिहार्य-धारक जिनेन्द्रेभ्योऽर्घ्यं...।

नंत दर्श से हे प्रभू अवलोकन हो जाय।
तीन लोक त्रयकाल सब, बिन श्रम के दिख जाय॥
कुण्डलगिरि...॥४३॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं बड़े बाबा अर्हं नमः अनंत-दर्शन-गुणधारक जिनेन्द्रेभ्योऽर्घ्यं...।

नंत ज्ञान में सर्व ही, द्रव्यों की पर्याय।
गुणों सहित झलके अहो, दर्पण सम तुम माय॥
कुण्डलगिरि...॥४४॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं बड़े बाबा अर्हं नमः अनंत-ज्ञान-गुणधारक जिनेन्द्रेभ्योऽर्घ्यं...।

मोह कर्म के नाश से, अनंत सुख सम्पन्न।
इन्द्रिय से ना उपजता, दूर हुआ परपंच॥
कुण्डलगिरि...॥४५॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं बड़े बाबा अर्हं नमः अनंतसुख-गुणधारक जिनेन्द्रेभ्योऽर्घ्यं...।

शक्ति रही अद्भुत प्रभू, और कहीं ना होय।
ना थकते नाराम[१] की, आवश्यकता होय॥
कुण्डलगिरि...॥४५॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं बड़े बाबा अर्हं नमः अनंतवीर्य-गुणधारक जिनेन्द्रेभ्योऽर्घ्यं...।

---

१. आराम की नहीं

(सखी)

(अति पुण्य उदय.....)

तव रत्नवृष्टि सुर करते, जब आप गरभ को धरते।
नव-मास आपकी सेवा, कर सुरिया पाती मेवा॥
छप्पन कुमारी सेव करती, मात की वसु याम है।
क्योंकी विराजे आप उसके, गरभ में शिव धाम है॥
बाबा गरभ में आप आये, रत्नमयी यह भू धरा।
ओहो हुई तब रत्नगर्भा, नाम इसने शुभ धरा॥
मैं गर्भ उत्सव पूजकर, ना चाहता हूँ सम्पदा।
मैं आप पद की शरण पाऊँ, क्यों मिले फिर आपदा॥४७॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं बड़े बाबा अर्हं नमः स्वर्गावतरण गर्भकल्याणकधारक जिनेन्द्रेभ्योऽर्घ्यं...।

हे जन्म कल्याणक धारी, तव महिमा जग में न्यारी।
सुर करे मेरु अभिषेकं हम करते पूज विशेखं॥
हम पूज करते आपके अब, जन्म लड़ियाँ ना बची।
शचि देख मिथ्या मद तमों से, चंद क्षण में हाँ बची॥
बाबा तुम्हें जब सहस आठों, कलश से अभिषेचता।
सौधर्म सुर कर सहस नयना, दरश कर भव खेवता॥
मैं धन्य हूँ प्रभु आपको पा, सर्व दुख से बच गया।
औ मोहतम अज्ञान मेरा, दूर मुझसे हट गया॥४८॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं बड़े बाबा अर्हं नमः जन्मकल्याणकधारक जिनेन्द्रेभ्योऽर्घ्यं...।

जब तप की भावन भाई, तब लौकान्तिक सुर आई।
तव करे प्रशंसा भारी, यह संयम की बलिहारी॥
देखकर तव संयमों को, तप तपस्या योग को।
वादी-कुवादी मोह तजते, भोगि छोड़े भोग को॥

दीक्षा कल्याणक देख बाबा, साथ तुमरे नृपवरम्।
जाके बने थे वन-निवासी, पावने को सुखवरम्॥
हे देव तुमने मौन धर, सम्मुग्ध सबको कर दिया।
मैंने सुउत्तम अर्घ देकर, शीश पद में धर दिया॥४९॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं बड़े बाबा अर्हं नमः तपकल्याणकधारक जिनेन्द्रेभ्योऽर्घ्यं...।

जब ध्यान अग्नि सुलगाई, तुम लीन हुए निज माहीं।
तब चार-घातिया धाये, प्रभु केवलज्ञान उपाये॥
तुम पाय करके ज्ञान केवल, समवसरण शोभित हुए।
भवि दिव्य-ध्वनि से देशना पा, आप पद मोहित हुए॥
बारह सभा में देव-देवी, मनुज नारी पशुगणम्।
ऋषि श्रमण-श्रमणी बैठ पीते, धर्म अमृत दुखहरम्॥
हम पूज करके, ताल देकर, छम छमा छम नाचते।
ये अर्घ देने आपको, बाबा धमाधम आवते॥५०॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं बड़े बाबा अर्हं नमः ज्ञानकल्याणकधारक जिनेन्द्रेभ्योऽर्घ्यं...।

जो घाति अघाति दुखदाई, वे पूर्ण मिटे जब भाई।
तब शिव-पुर में जा राजे, हम पूजें हे सुखसाजे!॥
हम पूजते जो मोक्ष पद में, राजते अति विमल हैं।
हे नाथ! अर्चा करहिं पापी, जीव बनते अमल हैं॥
हे श्रेष्ठ श्रीधर केवली ने, मुक्तिरमा को पा लिया।
इस भूमि को हो धन्य करके, सिद्ध पावन कर दिया॥
बाबा सदा ही आपकी जो, ध्यावते गुणमाल हैं।
वे मुक्तिवधु के हाथ से वा, पहन ले वरमाल हैं॥५१॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं बड़े बाबा अर्हं नमः मोक्षकल्याणकधारक जिनेन्द्रेभ्योऽर्घ्यं...।

(विष्णुपद)

क्षुधा नागिनी डसती पल-पल, सो तुमने नाशी।
भूख दोष जो चारों गति में, दे पीड़ा खासी॥
उसको मूल मिटाया बाबा, पूजूँ हे धीरं।
क्षुत्-बाधा मिट जावे मेरी, अरजी है वीरं॥५२॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं बड़े बाबा अर्हं नमः क्षुधा दोष रहित जिनेन्द्रेभ्योऽर्घ्यं...।

तृषा व्यथित हैं तीन लोक के, हाय सभी प्राणी।
नेक भाँति के पेय पिये पर, तृप्ती ना जाणी॥
प्यास अशेषं नाशी है सो, जो अर्चे बाबा।
मिटे पिपासा धन वैभव की, पाता सुख खासा॥५३॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं बड़े बाबा अर्हं नमः तृषा दोष रहित जिनेन्द्रेभ्योऽर्घ्यं...।

जर-जर होती देह सभी की, पुष्ट नहीं होवे।
फिर भी पौष्टिक खाकर हा-हा, भेद ज्ञान खोवे॥
जरा नशी है आयेगी ना, भूल कभी बाबा।
चरणों शीश नमाते मिटता, कर्मों का धावा॥५४॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं बड़े बाबा अर्हं नमः जरा दोष रहित जिनेन्द्रेभ्योऽर्घ्यं...।

आँख-नाक के पेट पीठ के, रोगों ने घेरा।
औषध खाई पर ना बाबा, रोग मिटा मेरा॥
आतंकों के पार गये तुम, वन्दूँ तुम चरणा।
आधि-व्याधि में कष्टों में बस, तुम ही हो शरणा॥५५॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं बड़े बाबा अर्हं नमः रोग दोष रहित जिनेन्द्रेभ्योऽर्घ्यं...।

देव नरों के, नारक तिर्यग, भव में जन्मा हूँ।
मानस तन के आकस्मिक भी, दुख को सहता हूँ॥
जन्म श्रृंखला टूटी बाबा, अब ना जन्मोगे।
भव्यों पूजो क्षणभर भी तो, नाहीं भटकोगे॥५६॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं बड़े बाबा अर्हं नमः जन्म दोष रहित जिनेन्द्रेभ्योऽर्घ्यं...।

भाव मरण कर प्रतिपल मैंने, कर्मों को बाँधा।
इसीलिए तो मर-मर पाई, कारागृह बाधा॥
पण्डितपण्डित मरण किया सो, सिद्धालय उपजे।
बाबा भवदिय चरण जजे तो, ना आपद निपजे ॥५७॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं बड़े बाबा अर्हं नमः मरण दोष रहित जिनेन्द्रेभ्योऽर्घ्यं...।

लोकत्रय के भ्रमणों से हा, डरकर मैं आया।
कोई ना है थान चित्त में, मुझको जो भाया॥
निर्भय बाबा पूजक तेरा, सातों भय नाशे।
कुछ वर्षों में पा जायेगा शिव के सुखखाशे ॥५८॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं बड़े बाबा अर्हं नमः भय दोष रहित जिनेन्द्रेभ्योऽर्घ्यं...।

छोटी-मोटी चीज देखकर, अचरज आया है।
क्योंकी मुझको अक्ष विषय ही, अब तक भाया है॥
तीन लोक को तीन काल को, बिन बाधा जानो।
बाबा तुमको विस्मय ना हो, मेरे अघ हानो ॥५९॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं बड़े बाबा अर्हं नमः विस्मय दोष रहित जिनेन्द्रेभ्योऽर्घ्यं...।

नन्त पदारथ में से भी तो, कुछ नाहीं भावे।
आप चरण को छोड़ जिनेश्वर, और कहाँ जावे॥
बाबा रतिया शेष नहीं सो, सब ही आते हैं।
इसीलिए बस मुझको तो तुम, चरण सुहाते हैं ॥६०॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं बड़े बाबा अर्हं नमः रति दोष रहित जिनेन्द्रेभ्योऽर्घ्यं...।

मन भावन में इष्ट वस्तु में, चेतन ललचाया।
किया राग सो उनको पाने, पापों लिपटाया॥
राग रहित हो बाबा फिर भी, सब कुछ मिलता है।
देख आपकी वीतरागता, आनन खिलता है ॥६१॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं बड़े बाबा अर्हं नमः राग दोष रहित जिनेन्द्रेभ्योऽर्घ्यं...।

बैर विरोधी झगड़ालू से, दूर सदा भगता।
निकट बसे यदि आकर के तो, चित्त नहीं पगता॥
द्वेष-भाव का नाम बचा ना, सो द्वेषी आते।
लखकर तेरी छवि को बाबा, मन वाँछित पाते॥६२॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं बड़े बाबा अर्हं नमः द्वेष दोष रहित जिनेन्द्रेभ्योऽर्घ्यं...।

ये मेरा है, ये तेरा है, पक्षपात नाहीं।
कर्त्तापन को छोड़ बने हो, निज आतम साँई॥
सब द्रव्यों से मोह मिटाकर, बाबा राजत हो।
किन्नर छम-छम नाच-नाचकर, महिमा गावत औ॥६३॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं बड़े बाबा अर्हं नमः मोह दोष रहित जिनेन्द्रेभ्योऽर्घ्यं...।

दर्शनावरणी मिटा तभी तो, निद्रा भागी है।
तव दर्शन की बाबा हममें, तृष्णा जागी है॥
चक्री-शक्री खगधर, विद्याधर भी पूजे हैं।
सब देवों को तजकर हम तो, तुममें रीझे हैं॥६४॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं बड़े बाबा अर्हं नमः निद्रा दोष रहित जिनेन्द्रेभ्योऽर्घ्यं...।

दरश मोह ना चरित मोह ना, अंतराय भागा।
निर अम्बर हो निर आभूषण, मन चेतन पागा॥
गृह-गृहिणी को छोड़ चले तो, चिन्ता काहे की।
तीन लोक में मात्र आपके, चरणा भावे जी॥६५॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं बड़े बाबा अर्हं नमः चिन्ता दोष रहित जिनेन्द्रेभ्योऽर्घ्यं...।

औदारिक यह उत्तम तन है, स्वेद कहाँ आवे।
रहा पसीना देह मैल है, किसके मन भावे॥
धन्य हुए हैं आज दर्श कर, बाबा चरणों के।
तुमको लखकर पापी जन भी, रहते शरणों में॥६६॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं बड़े बाबा अर्हं नमः स्वेद दोष रहित जिनेन्द्रेभ्योऽर्घ्यं...।

कोई अच्छा बुरा करे तो, खेद नहीं करते।
कारण जग की सही व्यवस्था, ज्ञानों में धरते॥
नहीं किसी से अपनापन है, ना अपना मानो।
मिटे खेद जो भक्ति करेगा, ये निश्चित जानो॥६७॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं बड़े बाबा अर्हं नमः खेद दोष रहित जिनेन्द्रेभ्योऽर्घ्यं...।

इष्ट वियोगं होता ना है, आप अकेले हैं।
शोक मिटा है शौक बढ़ा है, सो हम चेले हैं॥
कुण्डलपुर के मोठे बाबा, शोक मिटाते हैं।
हम तो तुमरे भक्त बने, अब अर्घ चढ़ाते हैं॥६८॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं बड़े बाबा अर्हं नमः शोक दोष रहित जिनेन्द्रेभ्योऽर्घ्यं...।

क्या अच्छा क्या अच्छा ना है, आपेक्षित सारे।
आप जानते तभी आपके, नाहीं मद खारे॥
आप मदों के नाशक बाबा, पूजा रचवाये।
उसके मद की कारण विधियाँ, कैसे बच पावे॥६९॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं बड़े बाबा अर्हं नमः मद दोष रहित जिनेन्द्रेभ्योऽर्घ्यं...।

(गीता) (लय–नवदेवता...)

दुख दातृ चारों घाति नाशे वन्द्य श्रीधर केवली।
फिर चतुर्अघाती नाशने को, आय गुरुवर केवली॥
इस क्षेत्र पर ही सिद्ध पद को, पा लिया औ आपने।
हम अर्घ लेकर आपके पद, पूज करने आवते॥७०॥

ॐ ह्रीं सिद्ध पद प्राप्त श्री श्रीधर केवलिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

श्री आदि अजित श्रेयांस जिन श्री शांति पार्श्व अरनाथ के।
श्री चन्द्र सुविधि शीतल जिनेश्वर वीर नेमी नाम के॥
औ पूज्य मंदिर साठ अठ है क्षेत्र कुण्डलपुर जहाँ।
मैं अर्घ देता सर्व को जिन, पूज से हो विधि कहाँ॥७१॥

ॐ ह्रीं कुण्डलगिरिस्थित सर्व जिनालयेभ्यो सर्व जिनबिम्बेभ्यो नमः अर्घ्यं...।

पूर्णार्घ्य

(घत्ता)

ये सर्व जिनालय, सुख के आलय, बाबा के चहुँ ओर रहे।
सब वीतराग के, आत्म पाग के, दर्शक के मद तोड़ रहे॥
ये शिखर बद्ध औ, फिर न बन्द हो, श्रद्धा से जो नमते हैं।
वसु अर्घ संजोके, वसु मद खोके प्रतिपल तुमको भजते हैं ॥७२॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं बड़े बाबा अर्हं नमः पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जाप्य—ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं बड़े बाबा अर्हं नमः-१०८ बार करें।

जयमाला

(दोहा)

जयमाला भव खेव की, कुण्डलगिरि के देव।
गाऊँ बाबा आपकी, भक्त बना गुण सेव॥

(ज्ञानोदय)

यह सिद्धक्षेत्र है श्रीधर स्वामी, चार अघाती नाश किये।
अष्टम वसुधा जाय विराजे, शिव ललना के पास जिये॥
इस ही गिरि पर अतिशय वाला, एक बिम्ब है बाबा का।
जिनके दर्शन सुमरण से ही, बन जाते सब काम अहा॥१॥

सहस-सहस अयनों से बाबा, लाखों-लाखों लोग यहाँ।
राजा श्रेष्ठी धार्मिक जन ने, पूज करी तिस पार कहाँ॥
पुरातत्त्व से इतिहासों से, जाने जाते आप यहाँ।
कैसे लाये कब लाये थे, कैसा मंदिर आज रहा॥२॥

सपना आया एक व्यक्ति को, बैल रथों में जा करके।
ले जाओ ना भूल कभी तुम, देखो पीछे मुड़ करके॥
गाड़ी वाला प्रतिमा गाड़ी, में रख करके दृढ़ता से।
चला पटेरा नगर दिशा में, बाबा के प्रति ममता से॥३॥

आगे-आगे गाड़ी चलती, उसके पीछे बाजों की।
संगीतों की ढोल मजीरे, पग के घुँघरु नाचों की॥
ध्वनियों साथे महामहोत्सव, यहाँ किसी ने रचवाया।
देखे बिन ना उत्सव को वह, गाड़ी वाला रह पाया॥४॥

जैसे ही वह पीछे मुड़कर लगा देखने बाजों को।
वहीं रुकी थी गाड़ी इक डग, आगे ना बढ़ पाये औ॥
बाबा तो बस यहीं रहेंगे, सोच यही सब भव्यों ने।
मंदिर बनवा विराजमान कर, दर्श किये थे श्रव्यों[१] के ॥५॥

लोगों में यह वर्षों वर्षों से प्रचलित शुभ गाथा है।
इसके ही बल श्रद्धा से सब, आय नमाते माथा है॥
और सुनो इतिहास नाथ का, दूजा मैं बतलाता हूँ।
मुनिवृन्दों से जुड़ा हुआ है, उनके गुण नित गाता हूँ॥६॥

कई दिनों जब सुरेन्द्र कीर्ति मुनि, जिनदर्शन ना कर पाये।
भोजन-पानी त्याग दिये थे, प्रभु भक्ती से अकुलाये॥
बिहार करते संघ आपका, नगर हिण्डोरी[२] जब आया।
कहा सभी ने कुछ दूरी पर, इक पर्वत है गुरुराया॥७॥

उस पर भूगत एक बिम्ब है, उनके दर्शन आप करें।
और दान का अवसर देकर, हमको भी कृतकाज करें॥
सुनकर लोगों की ये बातें, सूरीश्वर जी जल्दी से।
कुण्डलगिरि पर पहुँचे तब ही, सबने मिलकर फुरती से॥८॥

बाबा का औ बिम्ब निकाला, दरश कराये गुरुवर को ।
दरशन करके बाबा तेरे नाच उठे थे मुनिमन औ॥

१. पूजनीय, २. हिण्डोरिया ग्राम

उनके ही श्री नेमिदत्त जी, ब्रह्मचारी थे सज्ज्ञानी।
सेवा पूजन करते प्रभु की, लोक मध्य थे सन्नामी॥९॥

उनने नृपवर छत्रशाल को, दरशन करने स्वामी के।
बुलवाया सो बाबा तेरी, भक्ति करी सुखदानी रे॥
उसके फल में गया राज्य भी, वापस उसने पा लीना।
खुश होकर के सुन्दर मन्दिर, बनवाया था भवभीना॥१०॥

अब कहता मैं पापी जन की, कीने जिनने उपसर्गम्।
दुष्फल पाकर शरण गही सो, तत्क्षण पाये सुखवर्गम्॥
आकर के औरंगजेब ने, बाबा तुम्हें मिटाने की।
प्रतिमा खण्डित करने तेरी, महिमा पूर्ण हटाने की॥११॥

लिया हथौड़ा पटका पग पर, दुग्ध धार आ निकल पड़ी।
देख अचम्भा हुआ सभी को, कल्पन नृप की विकल पड़ी॥
बतलाती थी मानो प्रभु के, तन में जनमों से ही हाँ।
क्षीर समा ही श्वेत रक्त था, तीर्थंकर का अतिशय वा॥१२॥

एक बार तो इक पापी ने, विघ्न किया इह आकर के।
मधुमक्खी के यूथों ने झट, उसे भगाया खाकर के॥
आदि-आदि है चमत्कार जो, तेरे सबको दिखते हैं।
श्रद्धा से आ चरण आपके, क्या-क्या ना पा सकते हैं॥१३॥

उनको लिखना कैसे संभव, वे तो गणनातीत रहे।
जो भी जितना माँगे मिलता चिन्तन से अघरीत भये॥
देश-विदेशों सभी प्रदेशों, जैन अजैनी सब आते।
तुमरे दरशन करके उनको, फिर ना कोई मन भाते॥१४॥

और कहूँ क्या विद्यासागर, गणनायक गुरु आये थे।
पच्चिस सौ बत्तीस वीर के, मोक्ष समय गुण गाये थे॥

जूने मंदिर में से बाबा, तुमको जब ले जाना था।
नूतन मंदिर में तब मांसाहारी मानव आया था॥१५॥

बाबा किंचित हिले नहीं तो, चिंता गुरु को उपजी रे।
नहीं खिसकते भगवन् सो क्या, नहीं हमारी भक्ती है॥
उसको बुलवा पूछा क्या तुम, खोटा-भोजन करते हो।
उसने उठकर जल्दी से गुरु, चरणों में सिर धरके औ॥१६॥

त्याग किया फिर जाकर तुमको, उठा लिया ज्यों फूल रहें।
वा-वा-वा-वा जय-जय-जय-जय, करते सब ही झूल उठें॥
जैसे ही जब सिंहासन पर, आप तिष्ठ कर राजे थे।
गुरुवर का तो अद्भुत अनुभव, आनन पर ही लागे रे॥१७॥

गुरु आशिष का फल था यह सब, दुनिया ने वा देख लिया।
धन्य हुआ मम रम्य हुआ मम, बाबा तुमको देख जिया॥
आदिनाथ या नेमिनाथ या, महावीर है अतिवीरा।
वन्द्य बड़े बाबा हैं मेरे, पूज्य अर्च्य गुण गम्भीरा॥१८॥

बाबा हैं ये मोठे बाबा पूज्य बड़े बाबा जी हैं।
हम तो पूजे चौबिस घण्टे, इसमें ही मन राजी हैं॥
पृथ्वी कागज अर्णव जल को स्याही कर लूँ जिनवर के।
सब वृक्षों की कलम बनाकर लिखता जाऊँ मनभर के॥१९॥

गुण गाऊँ मैं कैसे बाबा, नन्त-गुणों के आगर हैं।
जीवन पूरा होगा गुण ना, छोटेंगे सुखसागर के॥
अल्पबुद्धि से बिन्दु समा ये, गुण गाये बस मैंने हैं।
भक्ति भार में मूक बना हूँ, शोध पढ़े जे पैने हैं॥२०॥

पूर्ण करूँ अब मौन धरूँ मैं, लज्जा अनुभव करता हूँ।
हे स्वामी मैं क्षमा माँगकर, चरणों में सिर धरता हूँ॥

कर्म नाश हो दुःख नाश हो, बोधि समाधि प्राप्त करूँ।
यही प्रार्थना करता मैं तो, तुम सम प्रभुवर आप्त बनूँ॥२१॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं बड़े बाबा अर्हं नमः जयमाला पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

आशीर्वाद

कुण्डलगिरि का श्रीधर स्वामी, पूज्य बड़े बाबा का जो।
विधान करता भाव भक्ति से द्वय भव दुखड़ा मिटता औ॥
सुरनर किन्नर विद्याधर के, सौख्य सहज ही मिलते हैं।
परम्परा से मोक्षमहल के, सुख भी उसको फलते हैं॥

परिपुष्पाञ्जलिं क्षिपेत् / क्षिपामि।

श्री आदिनाथ विधान

पीठिका

(दोहा)

तीर्थंकर आदीश के, विधान की जो श्रेष्ठ।
कहूँ पीठिका आज मैं, पाने को फल ज्येष्ठ ॥१॥

(ज्ञानोदय)

अलकापुर में नृप अतिबल का, पुत्र महाबल नामी था।
स्वयंबुद्ध था मन्त्री जिससे, प्रेम रहा अतिभारी था॥
एक माह की आयु बची तब, समाधिपूर्वक मरण किया।
सुख में दुख में हानि-लाभ में, समता का ही वरण किया ॥२॥

फलतः दूजे सुर में जा ललितांग नाम का देव हुआ।
इन्द्रिय सुख को भोगा फिर आ, धरती का भूदेव हुआ॥
वज्रबाहु का पुत्र रहा जो, वज्रजंघ मतिमान रहा।
रानी श्रीमति भाग्यवती जो, रूप गुणों की खान अहा ॥३॥

इक दिन दोनों ने जंगल में, ऋद्धीश्वर मुनिराजों को।
अशन दिया आहार कराकर, धन्य किया निज हाथों को॥
एक दिवस हा! सोते-सोते, मृत्युराज ने वरण किया।
दान दिया सो दोनों ने ही, भोगभूमि में जनम लिया ॥४॥

अहो भाग्य से वहाँ सुदुर्लभ, साधु युगल को देख अहो।
खिली चित्त की कलियाँ उनने, नमन किया सिर टेक अहो॥
फिर सुनकर उपदेश धर्म की, पहली सीढ़ी मानी जो।
सम्यग्दर्शन पाया ओहो, ये ही, मोक्ष निशानी औ ॥५॥

फिर दोनों मर स्वर्ग लोक में, देव हुए सुखधर्मी वे।
प्रेम रहा था दोनों में वे, दोनों ही शुभकर्मी थे॥

च्युत होकर के सुविधिनाम के, धरणीधर बन धरणी का।
पालन-पोषण करके आश्रय, लिया धर्ममय तरणी का॥६॥

बने दिगम्बर वस्त्राभूषण तज करके शुभ वनवासी।
करी तपस्या उग्र-उग्रतर, बन जाने को शिववासी॥
मरण किया था समाधि फलतः, कल्प रहा जो अन्तिम है।
अच्युत में जा उपजे स्वामी, बना सुजीवन सत्तम रे॥७॥

फिर आकर नृप वज्रसेन जो, तीर्थंकर दुखहारक थे।
पुत्र हुए श्री वज्रनाभि नृप, चक्रवर्ति भवहारक वे॥
पूज्य पिता से दीक्षा लेकर, षोडश भावन भायी थी।
तीर्थंकर पद बाँध धन्य हो, उपशम श्रेणी पायी थी॥८॥

शुद्ध भाव से मृत्यु हुई, सर्वार्थसिद्धि में भव पाया।
प्रवीचार का भाव नहीं सो, वीतराग सा सुख पाया॥
वर्षों-वर्षों भोजन की नहिं इच्छा उनके होती थी।
संयम धारण करने को ही, आत्मा उनकी रोती थी॥९॥

आयु पूर्ण कर नगर अयोध्या की माटी को धन्य किया।
नाभिराय अरु मरुदेवी के, घर आँगन को रम्य किया॥
दीक्षा लेकर केवल पाकर, समवसरण को पाया था।
दिव्य-देशना से भव्यों को, मोक्षमार्ग बतलाया था॥१०॥

अष्टापद कैलाशगिरी पर, ओहो ध्यानारूढ़ हुए।
शेष सभी शुभ कर्मों को भी, नाश किया सुख पूर हुए॥
ऐसे श्री श्री आदिनाथ की पूजा लिखकर चाहूँ मैं।
तव आशिष से पूरी करके, अब तो भव नहिं पाऊँ मैं॥११॥

परिपुष्पांजलिं क्षिपामि/क्षिपेत्

पूजन प्रारम्भ

स्थापना

(ज्ञानोदय)

इस युग में जो धर्म ध्वजा को, फहराकर श्रीमान हुए।
आदि जिनेश्वर तीर्थंकर बन, सर्वप्रथम भगवान हुए॥
ऐसे मेरे पिता पितामह, त्रिभुवन भू के भूप रहे।
आज बुलाकर पूजूँ स्वामी, तुम ही शिवसुख कूप कहे॥

(दोहा)

आओ-आओ हे प्रभो, करता मैं आह्वान।
सन्निधि थापन पूजना, सुख का है वरदान॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री आदिनाथ जिनेन्द्र अत्र अवतर-अवतर संवौषट् इति आह्वाननं। ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री आदिनाथ जिनेन्द्र अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं। ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री आदिनाथ जिनेन्द्र अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणं!

अष्टक

(लय—कहाँ गये चक्री.....)

पयस पूर्ण ये कलशा लेकर, तुम्हें चढ़ाता हूँ।
जन्म मिटाने शिव पथ पर मैं, कदम बढ़ाता हूँ॥
आदिनाथ श्री वृषभदेव तव, पूजा करता हूँ।
अष्टम वसुधा पाने तेरे, पद में झुकता हूँ॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री आदिनाथ-जिनेन्द्राय नमः जन्म-जरा-मृत्यु-विनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

चन्दन लेकर चरण चढ़ाकर, चर्चा मेटूँगा।
चारों गति की पाप-ताप की, निज से भेटूँगा॥
आदिनाथ श्री...॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री आदिनाथजिनेन्द्राय नमः संसारतापविनाशनाय चंदनं...।

अक्षत की यह चम-चम करती, थाली भर लाया।
तुम्हें चढ़ाऊँ क्योंकि आपने, अक्षय पद पाया॥
आदिनाथ श्री वृषभदेव तव, पूजा करता हूँ।
अष्टम वसुधा पाने तेरे, पद में झुकता हूँ॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री आदिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान्...।

पुष्प चढ़ाकर तुमको फूला, नहीं समाया हूँ।
काम जीतने काम विजेता के पद आया हूँ॥
आदिनाथ श्री...॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री आदिनाथजिनेन्द्राय नमः कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं...।

भूल कभी भी भूख आपके, पास न आएगी।
तब तो नैवज लेकर दुनिया, चरण चढ़ाएगी॥
आदिनाथ श्री...॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री आदिनाथजिनेन्द्राय नमः क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं...।

ज्ञान प्रकाशक! रत्नदीप ये, पद में लाया हूँ।
केवलज्ञान सुपाने पूजा, कर हरषाया हूँ॥
आदिनाथ श्री...॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री आदिनाथ-जिनेन्द्राय नमः मोहान्धकार-विनाशनाय दीपं...।

दस धर्मों की प्राप्ति हेतु ये, धूप दशांगी ले।
पूजन करने आया मैं तो, चरण शिवांगी के॥
आदिनाथ श्री...॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री आदिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अष्टकर्मदहनाय धूपं...।

दाख छुहारा किसमिस काजू, पिस्ता लाऊँ मैं।
भेंट करूँ फल नाना विधि के, शिव को पाऊँ मैं॥
आदिनाथ श्री...॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री आदिनाथजिनेन्द्राय नमः महामोक्षफलप्राप्तये फलं...।

दीप धूप फल नैवज चन्दन, अक्षत पानी ले।
अर्घ बनाकर चरण चढ़ाऊँ, शिव वरदानी के॥
आदिनाथ श्री...॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री आदिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अनर्घपदप्राप्तये अर्घ्यं...।

प्रत्येक-अर्घ्य

(दोहा)

पूजा जल फल आदि से, अब पूजूँ ले अर्घ।
तेरी पूजा से प्रभो!, मिट जावे उपसर्ग॥

इति मण्डलस्योपरिपुष्पाञ्जलिं क्षिपामि/क्षिपेत्

जन्मातिशय के १० अर्घ्य

(ज्ञानोदय)

वृषभदेव तव देह यष्टि में, स्वेद कभी नहिं आता है।
क्लान्तिरहित यह कान्तिमान तन, सबके मन को भाता है॥
जन्में उसके पहले ही सुर, रत्नवृष्टि कर हरषाये।
सम्यक् रत्नत्रय निधि पाने, अर्घ चढ़ाने हम आये॥१॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं निःस्वेदत्व-जन्मातिशय-गुणधारक श्री आदिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

नवद्वारों से मल नहिं बहता, निर्मलता भरपूर रही।
देह वृषभ की आँख नाक के, मल से भी अतिदूर कही॥
तन में भी जब मल नहिं है तो, अघमल इनके क्यों आवें।
इसीलिए तो भक्त आपको, अर्घ चढ़ाकर सुख पावे॥२॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं निर्मलत्व-जन्मातिशय-गुणधारक श्री आदिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

हंस वर्ण का खून बना है, रक्त वर्ण को तजकरके।
उसका कारण तीर्थंकर पद, बाँधा प्रभु को भज करके॥

बनूँ अदेही इसी भाव से, आदिनाथ के गुण गाऊँ।
अर्घ चढ़ाने पाद-पद्म में अष्ट-द्रव्य लेकर आऊँ॥३॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं क्षीरगौररुधिरत्व-जन्मातिशय-गुणधारक श्री आदिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

मनमोहक तव मनहारक तन, मनोज्ञता का मन्दिर है।
फिर भी मद नहिं सुन्दरता का, सो चेतन तव सुन्दर है॥
वृषभदेव की बजा-बजाकर, ढोल नगाड़े शहनाई।
पूजूँ तेरे जैसा बनने, बारी मेरी अब आई॥४॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं सौरूप्य-जन्मातिशय-गुणधारक श्री आदिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

सौरभ मण्डित वपुषा तेरी, खुशबू की भण्डार रही।
गुलाब पंकज और चमेली, उसके आगे हार गयी॥
ऐसी सौरभ वाला कोई, द्रव्य नहीं मिल पाया है।
फिर भी चेला अर्घ हाथ में, लेकर पद में आया है ॥५॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं सौगन्ध्य-जन्मातिशय-गुणधारक श्री आदिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

एक सहस वसु लक्षण वाला, तन भी सुन्दर लगता है।
अहमिन्द्रों के चक्रवर्ति के, तन की शोभा हरता है॥
पिता-पितामह अहो आपकी, पूजन कर मैं हरषाया।
सुना आपका हुआ पदार्पण, अर्घ उठाकर पद आया ॥६॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं सौलक्षण्य-जन्मातिशय-गुणधारक श्री आदिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

तीर्थंकर तुम प्रथम रहे संस्थान प्रथम ही तेरा है।
इसीलिए तो सुन्दरता ने, आकर डाला डेरा है॥
जन्मोत्सव करने को सुरगण, स्वर्गलोक से आये थे।
मनुज लोक के मानव हम भी, अर्घ चढ़ाने लाये हैं ॥७॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं समचतुरस्रसंस्थान-जन्मातिशय-गुणधारक श्री आदिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

संहनन तन का सबसे उत्तम, तीर्थंकर ये उत्तम हैं।
दर्शन करके एक बार में, भक्त बने हम सत्तम हैं॥
वृषभ चिह्न हैं वृष के ध्वज को, भारत भू पर फहराया।
उस ही ध्वज की छाया पाने, आप शरण में मैं आया ॥८॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं वज्रवृषभनाराच-संहनन-जन्मातिशय-गुणधारक श्री आदिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...॥

वृषभनाथ प्रभु वचन आपके ऐसे मीठे लगते हैं।
छप्पन व्यञ्जन के रस भी तो, उससे फीके पड़ते हैं॥
प्रियवादी तुम मिष्ट वचन से, सबके मन को हर लेते।
पूजा करके भक्त आपकी, पाप कर्म को दल देते॥९॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं प्रियहितवादित्व-जन्मातिशय-गुणधारक श्री आदिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...॥

अतुलनीय बल तेरे तन में, नहीं शक्ति का पार रहा।
जहाँ आपकी पूजा होती, नहिं आती है हार वहाँ॥
षट् कर्मों को सिखा प्रजा के, दुख दर्दों को मेट दिया।
हमने भी आ प्रसन्नता से, अर्घ चरण में भेंट किया ॥१०॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं अप्रमितवीर्य-जन्मातिशय-गुणधारक श्री आदिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

केवलज्ञानातिशय के १० अर्घ्य

(दोहा)

सौ-सौ योजन तक रहे, सुभिक्ष चारों ओर।
वृष से मेरी हे प्रभो! बंध जावे अब डोर॥
मनहर सांगानेर में, आदिनाथ भगवान।
आशा तज मैं पूजता, बनने को गतमान॥११॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं गव्यूतिशत-चतुष्टय-सुभिक्षत्व-घातिक्षय-जातिशय-गुणधारक श्री आदिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

गगन गमन को देखकर, अचरज का नहिं पार।
रहा हमारे सो प्रभो!, आये तेरे द्वार॥
पूज्य क्षेत्र बावनगजा, खड्गासन आदीश।
पूजे तो भव पार हो, नवा-नवाकर शीश॥१२॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं गगनगमनत्व-घातिक्षय-जातिशय-गुणधारक श्री आदिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

नहीं मरे नहिं पा सके, पीड़ा कोई जीव।
तुमसे तो क्यों ना मिटे, भवसागर की पीर॥
क्षेत्र चाँदखेड़ी जहाँ, हीरे सम जिनराज।
अतिशयधारी वृषभ हैं, पहने शिव का ताज॥१३॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं अप्राणिवधत्व-घातिक्षय-जातिशय-गुणधारक श्री आदिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

भोजन पानी खाद्य की, नहीं स्वाद्य की बात।
बची तभी तो वृषभ को मिला मुक्ति का साथ॥
गिरिवर गोलाकोट में, सुन्दर गोलमटोल।
बिम्ब रहा तीर्थेश का, नहिं हो सकता तोल॥१४॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं भुक्त्यभाव-घातिक्षय-जातिशय-गुणधारक श्री आदिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

बाधा नहिं उपसर्ग हो, तुम पर हे तीर्थेश।
अतिशय पाया पूजते, तुमको आ चक्रेश॥
सुर पूजित थूबौन में, आदीश्वर निष्काम।
फिर भी पूजक के बने, मनमाने सब काम॥१५॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं उपसर्गाभाव-घातिक्षय-जातिशय-गुणधारक श्री आदिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

मुख दिखते चारों दिशि, वृषभ आपके श्रेष्ठ।
समवसरण में इन्द्र सो, आकर पूजें ज्येष्ठ॥
भीण्डर नगरी में रहे, मरुदेवी के लाल।
पूजा करके नित्य मैं जीतूँगा अब काल॥१६॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं चतुर्मुखत्व-घातिक्षय-जातिशय-गुणधारक श्री आदिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

दासी बन आयी सभी, विद्याएँ तव पास।
अर्चा कर श्री वृषभ की, भक्त बने हम खास॥
कुण्डलपुर नाभेय के, चमत्कार की बात।
कह नहिं सकते देव भी, पूजूँ हे जगतात!॥१७॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं सर्वविद्येश्वरत्व-घातिक्षय-जातिशय-गुणधारक श्री आदिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

छाया भी तव तेज से, छुपकर भागी दूर।
भवि आये इतने तदा, आया हो जलपूर॥
सागर नगरी में रहा, मन्दिर काकागंज।
श्रद्धा पूर्वक पूज ले, नहिं होवेगा रंज॥१८॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं अच्छायत्व-घातिक्षय-जातिशय-गुणधारक श्री आदिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

हिलती डुलती ना कभी, तेरी पलके देव।
तब तो माने आपको, देवों के अधिदेव॥
एक शतक वसु हाथ का, बिम्ब आपका देव।
मांगीतुंगी में रहा, शक्री करते सेव॥१९॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं अपक्ष्मस्पन्दत्व-घातिक्षय-जातिशय-गुणधारक श्री आदिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

नख केशों की वृद्धि यह, रुककर कहती आज।
घाति कर्म के नाश से, वृषभ बने जिनराज॥

आबू अरु साकेत में, कीर्तिमान विख्यात।
आदिनाथ के बिम्ब को सुर पूजें दिनरात॥२०॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं समान-नखकेशत्व-घातिक्षय-जातिशय-गुणधारक श्री आदिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

देवकृत अतिशय के १४ अर्घ्य

(छन्द-नरेन्द्र)

महा अठारह भाषा में अरु, सात शतक लघु भाषा।
में खिरती है वाणी जिसको, लगा सौख्य की आशा॥
सुनकर पापी जन भी ओहो, होते पानी-पानी।
मैं भी वाणी सुनकर तेरी, पाऊँ शिवरजधानी॥२१॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं सर्वार्धमागधी-भाषा-देवोपनीतातिशय-गुणधारक श्री आदिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

सबको सुख हो दुख मिट जावे, पूर्व भवों में भायी ।
श्रेष्ठ भावना उसके फल में, मैत्री दौड़ी आयी॥
अतिशयधारी आदिनाथ ही, जग में मोक्ष निशानी।
मैं भी मैत्री भावन भाकर, पाऊँ शिवरजधानी॥२२॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं सर्वजनमैत्रीभाव-देवोपनीतातिशय-गुणधारक श्री आदिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

सर्दी में तो आम फले, अरु गर्मी में भी द्राक्षा।
आदीश्वर जी जहाँ पधारे, फलती सारी आशा॥
कर्म नाशकर अहो बने तुम, सबसे उत्तम दानी।
पूजा करके स्वामी मैं भी, पाऊँ शिवरजधानी॥२३॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं सर्वर्तुफलादिशोभिततरु-परिणाम-देवोपनीतातिशय-गुणधारक श्री आदिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

झग-झग करती भू रत्नों सम, सबके मन को भाती।
मानो तेरे समवसरण की, यशस्कीर्ति को गाती॥

वृषभदेव तव दर्शन से मति, होती शान्त सुहानी।
चर्चा अर्चा करके पद की, पाऊँ शिवरजधानी ॥२४॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं आदर्शतलप्रतिमारत्नमयी-देवोपनीतातिशय-गुणधारक श्री आदिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...॥

बिहार होगा जहाँ वहाँ अनुकूल चलेगी वायु।
जो पूजेगा अकाल में फिर, नष्ट न होगी आयु॥
तेरे पद की भक्ति रचाने, आते राजा रानी।
समवसरण में भक्ति रचा मैं, पाऊँ शिवरजधानी ॥२५॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं विहरण-मनुगतवायुत्व-देवोपनीतातिशय-गुणधारक श्री आदिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...॥

आनन्दित हो नाच उठेंगे, तुम्हें देख मन केकी।
क्योंकि मानकर हार मोह ने, अपनी रोटी सेंकी॥
मात-पिता को छोड़ा है सो, अहो बने तुम ज्ञानी।
अर्चा करके मैं भी तो अब, पाऊँ शिवरजधानी ॥२६॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं सर्वजनपरमानन्दत्व-देवोपनीतातिशय-गुणधारक श्री आदिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...॥

वायु देव आ कण्टक कंकर, दूर करेंगे धूलि।
आप भक्त के मोक्षमहल से, नहीं रहेगी दूरी॥
सौ इन्द्रों का मण्डल आकर, करता तव अगवानी।
मैं भी तेरी अगवानी कर,पाऊँ शिवरजधानी ॥२७॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं वायुकुमारोपशमित - धूलि - कण्टकादि-देवोपनीतातिशय-गुणधारक श्री आदिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

छोटी-छोटी जल बूँदों को, करके खुशबू वाली।
बरषाते हैं चारों दिशि में, मना-मना खुशहाली॥
आदिनाथ तव भक्तों के घर, देव भरेंगे पानी।
नाच-नाचकर पूजाकर मैं, पाऊँ शिवरजधानी ॥२८॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं मेघकुमारकृत-गन्धोदक-वृष्टि-देवोपनीतातिशय-गुणधारक श्री आदिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

परम सुगन्धित स्वर्ण पद्म को, आप चरण के नीचे।
रख करके वे देव भक्तिमय, मेघपुष्प[1] से सींचे॥
समकित खेती सो उनके तुम, बन जाते वरदानी।
वृषभ-वृषभ की माला जप मैं, पाऊँ शिवरजधानी ॥२९॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं पादन्यासे-कृत-पद्मानि-देवोपनीतातिशय-गुणधारक श्री आदिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...॥

शालिधान के खेत फसल से, नम्रनीत हो जाते।
वृषभ आपका मिले समागम, मद मत्सर मिट जाते॥
तेरे पथ की श्रद्धा से हो, पाप कर्म की हानि।
पूजा करके आठ पहर मैं, पाऊँ शिवरजधानी ॥३०॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं फल-भार-नम्र-शालि-देवोपनीतातिशय-गुणधारक श्री आदिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

शरद काल में जैसे नभतल, स्वच्छ सुनिर्मल होता।
धूलि चढ़ा तव पद की सिर पर, बीज शान्ति के बोता॥
आ जावेगी याद मोह को, भक्ति करे तो नानी।
वृषभ भक्ति कर मैं भी जिनवर, पाऊँ शिवरजधानी ॥३१॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं शरत्कालवन्निर्मल-गगनत्व-देवोपनीतातिशय-गुणधारक श्री आदिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...॥

दुन्दुभि बाजे मधुर ध्वनि में, बजकर कहते आओ।
वृषभदेव से वृष पाने को, आओ-आओ-आओ ॥
सुनकर नयनों भर आया है, हर्ष भाव का पानी।
ढोल बजाकर अर्घ चढ़ा मैं, पाऊँ शिवरजधानी ॥३२॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं एतैतैतिचतुर्निकायामर - परस्पराह्वानन-देवोपनीतातिशय-गुणधारक श्री आदिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

---

१. पानी

देख आपको दशों दिशाएँ, मल वर्जित हो जाती।
और भव्य की सभी दशाएँ, दुख वर्जित हो भाती॥
सब द्रव्यों की सही व्यवस्था, तुमने क्षण में जानी।
रत्नत्रय को धारण कर मैं, पाऊँ शिवरजधानी॥३३॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं शरन्मेघवन्निर्मल-दिग्विभागत्व-देवोपनीतातिशय-गुणधारक श्री आदिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

धर्म चक्र ये घाति चक्र के, मिटने से ही पाया।
भक्ति करे तो आदिनाथ का, बना रहेगा साया॥
अघ को तजते सुख से भरते, सुनकर तेरी वाणी।
सेवा करके मैं भी तेरी, पाऊँ शिवरजधानी॥३४॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं धर्मचक्र-चतुष्टय-देवोपनीतातिशय-गुणधारक श्री आदिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

अष्ट प्रातिहार्य के ८ अर्घ्य

(लय—मुनि सकलव्रती...)

तरु शोक रहित हो जाता, वह प्रातिहार्य कहलाता।
श्री वृषभ शोक के जेता, शिव पथ के आप प्रणेता॥३५॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं अशोकवृक्ष-प्रातिहार्य-धारक श्री आदिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

सुर पुष्प वृष्टि से जग को, भर देते प्रभु के पथ को।
जब समवसरण तव आता, जग हरा-भरा हो जाता॥३६॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं सुरपुष्पवृष्टि-प्रातिहार्य-धारक श्री आदिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

ये रजतमयी हैं चामर, नहिं पा सकता है पामर।
प्रभु आदिनाथ ने पाए, हम सेवा करने आए॥३७॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं चतु:षष्ठि-चामर-प्रातिहार्य-धारक श्री आदिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

तव तन की निर्मल आभा, वह भामण्डल की शोभा।
नहिं कह सकता सुर स्वामी, मरुदेवी सुत जगनामी ॥३८॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं भामण्डल-प्रातिहार्य-धारक श्री आदिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

सुर खूब बजाते बाजे, श्री तीर्थंकर जब आते।
हम बनकर तव अनुरागी, बन जायें झट गतरागी ॥३९॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं दुन्दुभि-प्रातिहार्य-धारक श्री आदिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

ये छत्र शीश पर सोहे, जो कहते आनन्द होवे।
तूँ कर ले प्रभु की सेवा, पा जावे शिव सुख मेवा ॥४०॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं छत्रत्रय-प्रातिहार्य-धारक श्री आदिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

जब दिव्य देशना खिरती, सुन खोटी विधियाँ फिरती।
मैं आया दर पर तेरे, सो भाग्य खुले हैं मेरे ॥४१॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं दिव्यध्वनि-प्रातिहार्य-धारक श्री आदिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

सिंहासन सबसे ऊँचा, जो कहता शासन सच्चा।
इन नाभिपुत्र का आओ, तुम पालन कर सुख पाओ ॥४२॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं सिंहासन-प्रातिहार्य-धारक श्री आदिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

पंच कल्याणक के ५ अर्घ्य

(लय—शान्तिनाथ मुख......)

आषाढ़ी की कृष्णा दूजी।
गर्भ पधारे आदीश्वर जी॥
छोड़ा था सर्वार्थसिद्धि को।
पूजूँ मुझको मोक्ष सिद्धि हो ॥४३॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं गर्भकल्याणकमण्डित श्री आदिनाथजिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

चैत्र कृष्ण की नवमी आई।
जन्म लिया था प्रभु ने भाई॥
नगर अयोध्या तीर्थ कहाया।
अर्घ चढ़ाऊँ मन हरषाया ॥४४॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं जन्मकल्याणक-मण्डित श्री आदिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

दीक्षा वन सिद्धार्थ रहा था।
जन्मदिवसको खास कहा था॥
छह महिने का योग सुधारा।
पूजक पावे शिव का द्वारा॥४५॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं तपःकल्याणक-मण्डित श्री आदिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

फाल्गुन कृष्णा ग्यारस प्यारी।
चार घाति की तोड़ी क्यारी॥
समवसरण में धर्म बताया।
अर्घ चढ़ा मम मन मुस्काया ॥४६॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं ज्ञान-कल्याणक-मण्डित श्री आदिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

माघ कृष्ण की चौदस आयी।
शिवांगना तब दौड़ी आयी॥
अष्टापद पर विधि को नाशा।
वन्दूँ पाऊँ निज का वासा॥४७॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं निर्वाण-कल्याणक-मण्डित श्री आदिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

अनन्त चतुष्टय के ४ अर्घ्य

ज्ञानअमिट जब प्रकट हुआ था।
ज्ञानावरणी निकल गया था॥
मुनि चौरासी सहस पूजते।
वृषभ भक्ति से पाप सूखते॥४८॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं अनंत-ज्ञान-गुणमण्डित श्री आदिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

अनन्त दर्शन जब विलसाया।
कर्म दूसरा बच नहिं पाया॥
वृषभसेन थे पहले गणधर।
पूजा करके पाऊँ शिवघर॥४९॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं अनंत-दर्शन-गुणमण्डित श्री आदिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

सुख पाया जो पार कहाँ है।
मिल पाएगा किसे यहाँ है॥
उसको पाया वृषभनाथ ने।
अर्घ चढ़ाते चरणदास ये॥५०॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं अनंत-सुख-गुणमण्डित श्री आदिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

शक्ति वीर्य है तुममें जितना।
कह नहिं पावे वह है कितना॥
वृषभधर्म के आप प्रणेता।
अर्चूं वन्दूँ हे युग नेता॥५१॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं अनंत-वीर्य-गुणमण्डित श्री आदिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

१८ दोष से रहित के १८ अर्घ्य

(लय–कहाँ गये चक्री...)

क्षुधा रोग का नाम निशाना, बच नहिं पाया है।
तब तो त्रिभुवनपतियों ने तव यश को गाया है॥
नहीं बुभुक्षा नहीं तितिक्षा, तृप्ति सु पायी है।
वरमाला पहनाने शिव की,ललना आयी है ॥५२॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं क्षुधा-दोष-रहित श्री आदिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

प्यास न लगती कण्ठ तालु तव, सूख न सकते हैं।
शक्री चक्री नारायण भी, तब तो झुकते हैं॥
भोगों की अब प्यास मिटे मम, आदिनाथ वन्दूँ।
अर्घ चढ़ाकर मैं भी अब बन, जाऊँ सुख सिन्धु ॥५३॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं तृषा-दोष-रहित श्री आदिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

भय उसको लग सकता जिसके, पास परिग्रह हो।
परिग्रहों से मूर्च्छा तोड़ी, तो कैसे भय हो॥
भय मिट जावे निर्भय बनने, पूजूँ तुमको मैं।
वृषभदेव प्रभु तेरे पथ पर, आस्था मुझको है ॥५४॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं भय-दोष-रहित श्री आदिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

नहीं द्वेष है किसी वस्तु से, शत्रु न कोई है।
तब तो पुरुवर तुम्हें पूजने, जनता आई है॥
वृषभेश्वर के चरण कमल की, पूजा करते जो।
शाश्वत पद को पाने शिवमय, वनिता वरते वो ॥५५॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं द्वेष-दोष-रहित श्री आदिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

राग सुबढ़ता चेतन में जो, पर में रमता है।
पर द्रव्यों से दूर हुए तुम, बची न ममता है॥

राग रोग सा उसे मिटाने, अर्घ चढ़ाता हूँ।
तीर्थेश्वर श्री आदिनाथ को, शीश झुकाता हूँ ॥५६॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं राग-दोष-रहित श्री आदिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

मोह शत्रु से पिण्ड छुड़ाकर, अखण्ड पद पाया।
इसीलिए तो मोक्षमहल में, चेतन सरसाया॥
गुणनिधि हे गुणवन्त आपकी, पूजा कर हरषे।
निर्धनता का डेरा उठता, लक्ष्मी नित बरषे ॥५७॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं मोह-दोष-रहित श्री आदिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

निज चिन्तन से चिन्ता तेरे, पास न आएगी।
भक्त बना सो मेरी नैया, तट पर जाएगी॥
आदिनाथ के चरण-कमल का, भ्रमर बना हूँ मैं।
अष्ट द्रव्य ले भक्ति भाव से, पूज रचाऊँ मैं ॥५८॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं चिन्ता-दोष-रहित श्री आदिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

देह न धारो कोई भी अब, वृद्ध न होओगे।
शिव में जाओ, सुख को पाओ, लौट न आओगे॥
अहो अजर हो, अहो अमर हो, आदीश्वर स्वामी।
अर्घ चढ़ाकर चाहूँ मैं भी, बनूँ मोक्षगामी ॥५९॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं जरा-दोष-रहित श्री आदिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

जन्म-मरण के रोग लगे हैं, उनको नाश किया।
फलतः पाकर अजर-अमर पद, शिव को पास किया॥
अहो आप निःस्वार्थ वैद्य हैं, रोग मिटाने में।
निशदिन तेरे दर पर आऊँ, पाप हटाने मैं ॥६०॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं रोग-दोष-रहित श्री आदिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

(लय—हे वीर महाअतिवीर...)

तुम मरण रहित वृषभेश, अन्तक दास बना।
मैं आकर पद धर्मेश, चेला खास बना॥
हे वृषभ सौख्य भण्डार, वृष से पूर्ण हुए।
हम आए तेरे द्वार, सो अघ चूर्ण हुए॥६१॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं मरण-दोष-रहित श्री आदिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

नहिं आता कभी पसेव, निर्मल तन पाया।
वह दोष मिटा सो देव, चरणों मैं आया॥
हे वृषभ सौख्य ...॥६२॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं स्वेद-दोष-रहित श्री आदिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

जो खतरनाक है दोष, वो ही खेद रहा।
तुम मार बने गुणकोष, सो निरखेद अहा॥
हे वृषभ सौख्य ...॥६३॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं खेद-दोष-रहित श्री आदिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

मदमातों के सब मान, क्षण में दूर हुए।
तव दर्शन से भगवान, सुख के पूर बहे॥
हे वृषभ सौख्य ...॥६४॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं मद-दोष-रहित श्री आदिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

रग-रग से रति को देव, तुमने अलग किया।
सो रति से त्रिभुवनपूज्य, निज को विलग किया॥
हे वृषभ सौख्य ...॥६५॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं रति-दोष-रहित श्री आदिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

नहिं अचरज की है बात, विस्मय दोष मिटा।
जब पूजे तेरे पाद, मेरा हृदय खिला॥
हे वृषभ सौख्य ...॥६६॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं विस्मय-दोष-रहित श्री आदिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

क्यों निद्रा आवे द्वार, जागृत आप रहें।
सो पाया शिव का सार, महिमा कौन कहे॥
हे वृषभ सौख्य ...॥६७॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं निद्रा-दोष-रहित श्री आदिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

तुम कभी न लोगे जन्म, जन्मातीत हुए।
तव अर्चा करके वंद्य, हम भवभीत हुए॥
हे वृषभ सौख्य ...॥६८॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं जन्म-दोष-रहित श्री आदिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

मैं बड़े शौक से आज, शोक विजेता के।
पद आया तजकर काज, मार्ग प्रणेता के॥
हे वृषभ सौख्य ... ॥६९॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं शोक-दोष-रहित श्री आदिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

(घत्ता)

हे आदि जिनेश्वर, तुम सर्वेश्वर, त्रिभुवन से अभिवन्द्य रहे।
जो पूजे गावे, भक्ति बढ़ावे, नहीं पाप की गन्ध रहे॥
तुम अष्टापद से, वसु आपद से, छूट गए सो धन्य हुए।
हम दर आवेंगे, सुख पावेंगे, अर्घ चढ़ा हम रम्य हुए॥७०॥

ॐ ह्रीं अष्टापद कैलाशगिरि सिद्धक्षेत्रभ्यो नमः अर्घ्यं...।

(ज्ञानोदय)

आदिनाथ के बिम्ब मनोहर, मंजुल सरस सलौने हैं।
उनकी पूजा करके हमको, बीज सौख्य के बोने है॥
अतः बनाकर उत्तम-उत्तम, सब द्रव्यों को आज मिला।
पूजा करके अर्घ्य चढ़ाऊँ, हृदय कमल मम आज खिला॥७१॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री आदिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

पूर्णार्घ्य

जल चन्दन अक्षत पुष्प दीप, नैवेद्य धूप फल लाया हूँ।
दर्शन करके आह्लादित हो, तुम्हें चढ़ाने आया हूँ॥
पूजा यदि नहिं कर पाया तो, जीवन मेरा व्यर्थ रहा।
इसीलिए हे वृषभदेव तव, पूजन से भव सार्थ हुआ ॥७२॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री आदिनाथ-जिनेन्द्राय नमः पूर्णार्घ्यं...।

जाप्य– ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री आदिनाथ-जिनेन्द्राय नमः।

(९/२७/१०८)

जयमाला

(दोहा)

जयमाला गतमान की, शीघ्र मिटाती मान।
सो गाकर के हे प्रभो! पाऊँ शाश्वत स्थान॥१॥

(ज्ञानोदय)

आदिनाथ तुम धरती पर सर्वार्थसिद्धि से आए थे।
नगर अयोध्यावासी तेरे, दर्शन कर हरषाए थे॥
असि मसि आदिक षट्कर्मों का, प्रजाजनों को ज्ञान दिया।
खाना-पीना सिखला उनको, सौख्य शान्ति का दान दिया ॥२॥

करते - करते नृत्य मरी जब, सुरांगना तब देख प्रभो।
विरत भाव से घर को तजकर, दीक्षा लेकर धन्य विभो॥
चले गये थे कानन में फिर, छह महिने तक योग लिया।
चर्या पर जब निकले भोजन, का नहिं महिनों योग मिला॥३॥

धैर्य धरा पर ध्यान लगाकर, क्षुधा परीषह जीत लिया।
तन ममता तज समता धरकर, अन्तक को भयभीत किया॥
सहस वर्ष तक कठिन-कठिन तप, करके जग को दिखा दिया।
मोह कर्म यह कैसे क्षय हो, भव्य जनों को सिखा दिया॥४॥

देख तपस्या अहो मोह जब, बोरी बिस्तर ले करके।
हुआ रवाना तब तो सुनलो, शेष घाति भी डर करके॥
पीछे-पीछे भागे उसके, चारों ही वे बेचारे।
मृत्यु गोद में पहुँच गये तो, केवलनिधि आ तव द्वारे ॥५॥

हुई समर्पित तब तो दर्शन, सुख वीरज भी आए थे।
दर्शन करने तेरे तब तो, स्वर्गी भी ललचाए थे॥
तत्क्षण रचकर समवसरण के, बारह कोठे धन्य हुए।
और देशना सुनकर तेरी रम्य हुए सब धन्य हुए॥६॥

वृषभसेन थे गणधर श्रोता, चक्रवर्ति था भरत महा।
ब्राह्मी माँ थी प्रमुख अर्जिका और असंख्यों देव वहाँ॥
आये उनने ज्ञान महोत्सव, करने बाजे बजवाए।
प्रातिहार्य का वैभव करके, मन ही मन में हरषाए॥७॥

मैं भी नाचूँ ढोल बजाऊँ, खुशियाँ खूब मनाऊँ मैं।
पूजा करने का अवसर पा, शत-शत शीश नवाऊँ मैं॥
झुन-झुन झुनिया बजा-बजाकर घुँघरू बाँधू पैरों में।
नृत्य करूँ मैं ऐसा अब तक, किया नहीं हो औरों ने॥८॥

झूम-झूमकर मुलक-मुलककर, ठुमक-ठुमककर ठुमका दूँ।
कटि मटकाकर हरष-हरषकर, महिमा तेरी बतला दूँ॥
जिससे सब ही बिना बुलाए, तेरे दर पर आ जावे।
भक्ति करे वे नाचे-गावे, छोड़ तुम्हें फिर नहिं जावे ॥९॥

क्योंकि आदि प्रभु तेरे जैसा, कोई सच्चा देव नहीं।
और नहीं हितकारक जग में, और कहीं सर्वेश नहीं॥
भरत क्षेत्र में तुम ही सबसे, पहले वृष भरतार हुए।
दीक्षा लेकर स्वयं सिद्ध तुम, भव सागर से पार हुए॥१०॥

रानी नन्दा और सुनन्दा, आप चरण में आयी थी।
ब्राह्मी बिटिया और सुन्दरी, श्रमणी बन मन भायी थी॥
सभी पुत्र श्री चक्रवर्ति अरु, बाहुबली जो मदन रहे।
समवसरण में मुनि बन करके, अचल सुशाश्वत सदन गये॥११॥

पुत्र आपका अनन्त प्यारा वीर्य जगत विख्यात हुआ।
बाहुबली का तेरे पहले, मुक्ति पुरी में वास हुआ॥
कुण्डलपुर अरु भीण्डर गोलाकोट अयोध्या नगरी में।
सुनो चाँदखेड़ी अरु सांगानेर पुण्य की गगरी है॥१२॥

आदिनाथ के अतिशयकारी, मनमोहक जिन बिम्ब रहे।
उन सबकी मैं करूँ वन्दना, मेरे भी सब दम्भ हरे॥
प्रयाग प्रभु की तपोभूमि कैलाशगिरी शिवधाम रहा।
जन्मस्थल तव नगर अयोध्या, सुख मिलता निर्दाम जहाँ॥१३॥

पृथ्वीपति श्रेयांस सोम ने, सर्व प्रथम आहार दिया।
सेनापति जयसेन भव्य ने, गणधर पद को प्राप्त किया॥
तेरे शासन में ही ओहो, अरबों खरबों ऋषियों ने।
निज ध्याया था शिव पाया था, तेरे अनुचर शिष्यों ने॥१४॥

कनक वर्ण की वपुषा तेरी, पाँच शतक धनु ऊँची थी।
बतलाती थी आदिनाथ की, वाणी ही तो सच्ची थी॥
आठ-आठ ही रही सीढ़ियाँ, जिसके चारों ओर अहो।
अष्टापद है वहीं आपने, पाया भव का छोर अहो॥१५॥

यहीं भरत ने तीन काल की, चौबीसी के जिन मन्दिर।
बनवाए थे पूज्य बहत्तर, रत्न सुनिर्मित अति सुन्दर॥
वृषभ चिह्न है वृष के तुम ही, अतुल अमिट भण्डार रहे।
तब तो पूजा करके अब तक, भव्य पाप को टाल रहे॥१६॥

ऐसे आदिम तीर्थंकर की, महिमा गाऊँ कैसे मैं।
सहस किरणमय सूरज को ओ, कैसे दीप दिखाऊँ मैं॥
सुर गुरुवर अरु सरस्वती भी, तेरे गुण नहिं गा पावे।
हार मानकर वे बेचारे, मौन भाव को अपनावे॥१७॥

मुझमें फिर कुछ ज्ञान नहीं है, नहीं शब्द की शक्ति रही।
और नहीं है प्रज्ञा इतनी कर पाऊँ मैं भक्ति सही॥
किन्तु रही है अविचल श्रद्धा, तुझमें तेरी वाणी में।
सो पूजा रच पद में अर्पण, किया आज सुखदानी के॥१८॥

मन होता है दिवस-रात मैं, तेरे गुण का गान करूँ।
खाना-पीना सोना तजकर, धर्मामृत का पान करूँ॥
किन्तु क्षुधा का रोग लगा मैं मोह भाव में फँसा हुआ।
सो पूरी कर जयमाला ये, मेरा मन अब मौन हुआ॥१९॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री आदिनाथ-जिनेन्द्राय नमः जयमाला पूर्णार्घ्यं...।

आशीर्वाद

(ज्ञानोदय)

आदिनाथ की पूजा जो भी, भक्ति भाव से करते हैं।
स्वर्ग सुखों को पाकर के वे, शाश्वत सुख को वरते हैं॥

इत्याशीर्वादः परिपुष्पाञ्जलिं क्षिपामि/क्षिपेत्।

श्री अजितनाथ विधान

पीठिका

(दोहा)

पहले लिखकर पीठिका, फिर गाऊँ गुणगान।
अजितनाथ प्रभु आपके, पाने को सद्ज्ञान॥१॥

(चौपाई)

हे अजितनाथ तुम मंगल हो, तुम मेट चुके सब दंगल को।
जितशत्रु आपके जनक रहे, शुभ कनक वर्ण के आप रहे॥२॥

तव माता विजया रानी थी, जो श्रेष्ठ जगत में मानी थी।
तुम जन्में नगर अयोध्या में, तव वाणी नहीं अवद्या है ॥३॥

जब विजय अनुत्तर से आये, तब स्वप्न मात को दिखलाए।
वह सप्तपर्ण था वृक्ष जहाँ, तुम केवलज्ञान सु पाय वहाँ॥४॥

फिर समवसरण में विलसाए, सब दर्शन करके हरषाए।
नृप सिंहसेन दातार बना, वह शिव के लायक खास बना॥५॥

जब दीक्षा ले वन गमन किया, तब सुरनर सबने नमन किया।
इक सहस भूपवर साथ कहे, सौधर्म इन्द्र तब दास रहे॥६॥

सुर पूजे तुमको अहोरात, सो कहने की क्या रही बात।
नहिं कोई तुमको जीत सका, नहिं दे पाया था कभी दगा ॥७॥

सो अजितनाम तब सार्थ हुआ, तव पूजा सच्चा अर्थ रहा।
औ चक्रवर्ति जो सगर रहा, वह निशदिन तेरे चरण रहा॥८॥

जब आप गये थे मोक्ष सदन, तब हुए सभी के पाप दमन।
जो क्षेत्र रहा सम्मेदशिखर, वह चमक उठा था पूज्य प्रवर॥९॥

तब बना सिद्धवर कूट महा, जो हुण्ड काल का प्रथम रहा।
श्री चक्री ने तव चरणकमल, कर स्थापित पूजा लोक शरण ॥१०॥

मैं गुण गाकर के अजितनाथ, यह विधान रचना करूँ आज।
हे कृपासिन्धु तव आशिष से, मम भाव बना यह वाजिब है ॥११॥

सो कार्य बनेगा ये मेरा, जब रंग चढ़ेगा प्रभु तेरा।
तब मैं भी अघ को धोकर के, शिव जाऊँगा भव खोकर के ॥१२॥

परिपुष्पाञ्जलिं क्षिपामि/क्षिपेत्

पूजन प्रारम्भ

स्थापना

(ज्ञानोदय)

जीत सभी में पायी जिनसे, हार हारकर दूर गई।
तीन लोक आ हुए समर्पित, शरण मानकर पूर्ण सही॥
ऐसे श्री श्री अजितनाथ से, नगर अयोध्या तीर्थ बना।
और सिद्धवरकूट लोक में, सब क्षेत्रों में शीर्ष बना॥

(दोहा)

आह्वानन है स्थापना, सन्निधि का यह काम।
परम्परा से शीघ्र ही, पहुँचाता शिवधाम॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री अजितनाथ जिनेन्द्र अत्र अवतर अवतर संवौषट् इति आह्वाननं! ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री अजितनाथ जिनेन्द्र अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं! ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री अजितनाथ जिनेन्द्र अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणं!

अष्टक

(लय–मुनि सकल व्रती...)

मैं जल की झारी लाऊँ, दे धारा तुम्हें चढ़ाऊँ।
मम जन्म रोग मिट जाये, मम आतम शिव बन जावे॥
श्री अजितनाथ को वन्दन, जो माँ विजया के नन्दन।
मैं प्रतिपल तुमको ध्याऊँ, तव भक्ति करूँ हरषाऊँ॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री अजितनाथ-जिनेन्द्राय नमः जन्म-जरा-मृत्यु-विनाशनाय जलं...।

ले मलयागिरि का चन्दन, मैं चरण चढ़ाकर वन्दन।
जब पूजूँ कर मन चंगा, तब सुख की बहती गंगा॥
श्री अजितनाथ...॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री अजितनाथ-जिनेन्द्राय नमः संसार-ताप-विनाशनाय चंदनं...।

ये अक्षत मुक्ता जैसे, मैं लेकर आया ऐसे।
ज्यों सुर की होवे ज्योति, मैं अर्चूं हे शिव मोती॥
श्री अजितनाथ...॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री अजितनाथ-जिनेन्द्राय नमः अक्षय-पद-प्राप्तये अक्षतान्...।

जो काम हुआ है हावी, तुम जीत हुए सुखस्रावी।
हम पुष्प चरण में लाये, अब काम जीतने आये॥
श्री अजितनाथ...॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री अजितनाथ-जिनेन्द्राय नमः काम-बाण-विध्वंसनाय पुष्पं...।

ले नैवज भर-भर थाली, हम भेंट करें सुखमाली।
ये घृत के शुद्ध बनाये, अब भूख न हमें सतावे॥
श्री अजितनाथ...॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री अजितनाथ-जिनेन्द्राय नमः क्षुधा-रोग-विनाशनाय नैवेद्यं...।

शुभ रत्नमयी ले दीपक, हे मोक्षमार्ग संदीपक।
मैं करूँ आरती तेरी, अब सुलटे प्रज्ञा मेरी॥
श्री अजितनाथ को वन्दन, जो माँ विजया के नन्दन।
मैं प्रतिपल तुमको ध्याऊँ, तव भक्ति करूँ हरषाऊँ॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री अजितनाथ-जिनेन्द्राय नमः मोहान्धकारविनाशनाय दीपं...।

जब धूप दशांगी लाऊँ, तब भूल सभी कुछ जाऊँ।
वसु कर्म जले अब मेरे, उर चरण रहे बस तेरे॥
श्री अजितनाथ...॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री अजितनाथ-जिनेन्द्राय नमः अष्टकर्मदहनाय धूपं...।

बादाम सुपारी ऐला, ये भर-भर लाया चेला।
कर तुमको अर्पित स्वामी, मैं बन जाऊँ शिवगामी॥
श्री अजितनाथ...॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री अजितनाथ-जिनेन्द्राय नमः मोक्षफलप्राप्तये फलं...।

जल चन्दन नैवज लाऊँ, फल अक्षत पुष्प मिलाऊँ।
यह अर्घ बना कर प्यारा, पद भेंट करूँ शिवद्वारा॥
श्री अजितनाथ...॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री अजितनाथ-जिनेन्द्राय नमः अनर्घपदप्राप्तये अर्घ्यं...।

प्रत्येक-अर्घ्य

(दोहा)

अष्ट द्रव्य से पूजकर, देता हूँ मैं अर्घ।
कुछ गुणगण को पूजने, नमूँ नमूँ तज गर्व॥

इति मण्डलस्योपरिपुष्पाञ्जलिं क्षिपामि/क्षिपेत्।

जन्मातिशय के १० अर्घ्य

(ज्ञानोदय)

स्वेद कभी नहिं तेरे तन में, अजितनाथ जी आयेगा।
अतिशय यह है जन्म समय से, सुरनर सबको भायेगा॥
जो भी आकर पादपद्म में, तुमको अर्घ चढ़ायेगा।
पाप कर्म भी उसको निश्चित, दुःख नहीं दे पायेगा ॥१॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं निःस्वेदत्व-जन्मातिशय-गुणधारक श्री अजितनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

स्वर्ग लोक से प्राप्त अशन को अमृत से भी सुखकर जो।
खाते हैं पर्याप्त आप पर, मल नहिं बनता दुखकर सो॥
निर्मलता यह अतिशय ओहो, अजितनाथ ने पाया है।
इसीलिए तो भक्त लोक यह, पूजा करने आया है ॥२॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं निर्मलत्व-जन्मातिशय-गुणधारक श्री अजितनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

सिन्धु झाग सा श्वेत बना है, लाल रक्त भी तव तन का।
सब जीवों को सौख्य मिले यह, भाव रहा जो अन्दर का॥
उसके फल में अतिशय प्यारा, अजितनाथ में महकाया।
सुनते ही मैं अर्घ उठाकर, पूजा करने झट आया ॥३॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं क्षीरगौररुधिरत्व-जन्मातिशय-गुणधारक श्री अजितनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

सुन्दरता यह अजितनाथ की, अतुलनीय है शुभतम है ।
इनके जैसा रूप स्वर्ग में, मिल पाना अति दुर्लभ है॥
कामदेव अति लज्जित सा हो, बहुत दूर ही रहता है।
तब तो जग का हर प्राणी आ इनकी पूजा करता है ॥४॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं समचतुरस्र-संस्थान-जन्मातिशय-गुणधारक श्री अजितनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

संहनन तेरा सबसे पहला, वज्रवृषभनाराच रहा।
इससे ही पा सकता चेतन, मोक्षमहल का द्वार अहा॥
अजितनाथ को जो पूजेगा, हार कभी नहिं खायेगा।
और भक्तिमय नौका पाकर, भव सागर तिर जायेगा ॥५॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं वज्रवृषभनाराच-संहनन-जन्मातिशय-गुणधारक श्री अजितनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

जितनी सुन्दर रही वस्तुएँ, उन सब में से कण-कण-कण।
एकत्रित कर देह बनावे, तो न बनेगा तव सम तन॥
तव वपु सा लावण्य लोक में, सुरनर विद्याधर में भी।
मिल न सकेगा अजितनाथ जी, हम तो पूजे प्रतिपल जी ॥६॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं सौरूप्य-जन्मातिशय-गुणधारक श्री अजितनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

चन्दन केशर कपूरादि की, गन्ध कहाँ वह परिमल है।
तव तन की खुशबू के आगे, वह तो लगती बदतर है॥
पूर्वोपार्जित पुण्योदय से, अतिशय तुमको प्राप्त हुआ।
अजितनाथ को पूजा जिसने, उसके घर सुख वास हुआ ॥७॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं सौगन्ध्य-जन्मातिशय-गुणधारक श्री अजितनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

नीलकमल के दल सम प्यारे, नेत्र युगल मन मोह रहे।
चन्द्रकान्ति-सा मुखमण्डल यह, सबके मन में क्षोभ[१] करे॥
अंग-अंग यह ऐसा सुन्दर, सहज सलौना मृदुतम है।
महिमा गाकर अर्घ चढ़ाने, चेला लाया उत्तम ये ॥८॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं सौलक्षण्य-जन्मातिशय-गुणधारक श्री अजितनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

---

१. विस्मय

जग हितकारी सब सुखकारी, मनमोहक तव वाणी है ।
कर्ण युगल में अमृत जैसी, भाषा जग कल्याणी है॥
किस्मत उसका चमका जिसने, सम्मुख सुनकर सुख पाया।
मेरा मन तो यहीं बैठकर, पूजन करके हरषाया ॥९॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं प्रियहितवादित्व-जन्मातिशय-गुणधारक श्री अजितनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

तेरे जैसा तीन लोक में, शक्तिवन्त नहिं कोई है।
इसीलिए तो अजितनाथ का, नहीं रहा विद्रोही है॥
कर्म शत्रु का अहो आपने, ध्यान शस्त्र से घात किया।
भव दुःखों से घबरा हमने, पूजा कर मन शान्त किया ॥१०॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं अप्रमितवीर्य-जन्मातिशय-गुणधारक श्री अजितनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

केवलज्ञानातिशय के १० अर्घ्य

(लय—शान्तिनाथ मुख शशि...)

आधि-व्याधि नहिं भीति रहेगी।
न्याय-नीति अरु प्रीति रहेगी॥
सभी जगह हो सुभिक्ष प्यारा।
सो पूजेगा यह जग सारा॥११॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं गव्यूतिशत-चतुष्टय-सुभिक्षत्व-घातिक्षय-जातिशय-गुणधारक श्री अजितनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

गगनमार्ग में बिना मार्ग के।
चलते तुम हो सही मार्ग से॥
सप्तपर्ण तरु जिसके नीचे।
केवल पाया बनकर ऊँचे॥१२॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं गगनगमनत्व-घातिक्षय-जातिशय-गुणधारक श्री अजितनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

प्राणी वध की बात दूर है।
दुख भी नहिं हो धर्मदूत से॥
अजितनाथ की महिमा गाओ।
दुःख मिटेंगे अर्घ चढ़ाओ॥१३॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं अप्राणिवधत्व-घातिक्षय-जातिशय-गुणधारक श्री अजितनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

तेरा आनन सबको दिखता।
अपने-अपने सम्मुख लगता॥
सच्चे चतुरानन तुम ही हो।
पूजूँ तेरे भक्त सभी हो॥१४॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं चतुर्मुखत्व-घातिक्षय-जातिशय-गुणधारक श्री अजितनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

सब विद्याओं के तुम स्वामी।
तब तो उनको खुशियाँ भारी॥
केवल - विद्या हमको प्यारी।
पूजूँ अजितनाथ सुखकारी॥१५॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं सर्वविद्येश्वरत्व-घातिक्षय-जातिशय-गुणधारक श्री अजितनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

छाया कैसे अब पड़ सकती।
घाति कर्म की माया खिसकी॥
सो पूजेंगे दिवस रात हम।
कर्म क्षय का मिल जाये दम॥१६॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं अच्छायत्व-घातिक्षय-जातिशय-गुणधारक श्री अजितनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

भोजन की नहिं आवश्यकता।
तो भी बल नहिं कम हो सकता॥

विस्मयकारी बात यही है।
वीर्य मिलेगा पूज सही है ॥१७॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं भुक्त्यभाव-घातिक्षय-जातिशय-गुणधारक श्री अजितनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

कोई बाधा नहिं दे पाये ।
देने आये तो दुख पावे॥
नगर अयोध्या धन्य हुआ था।
अजित तुम्हें पा रम्य हुआ था ॥१८॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं उपसर्गाभाव-घातिक्षय-जातिशय-गुणधारक श्री अजितनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

पलके नहिं झपकेगी तेरी।
पलके नहीं झपकती मेरी॥
जब दर्शन मैं करूँ आपके।
सुख मिलता है अजित आपसे ॥१९॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं अपक्ष्मस्पन्दत्व-घातिक्षय-जातिशय-गुणधारक श्री अजितनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

केवलज्ञान सुपाया जब था।
सुख ही सुख वा बरसा तब था॥
नहीं बढ़े नाखून तुम्हारे।
केश वृद्धि रुक जाय हमारे ॥२०॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं समान-नखकेशत्व-घातिक्षय-जातिशय-गुणधारक श्री अजितनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

देवकृत अतिशय के १४ अर्घ्य

(नरेन्द्र)

अर्द्धमागधी भाषा तेरी धर्म बताती सच्चा।
जो नहिं करता श्रद्धा ऐसी, वो है जग में बच्चा॥

कूट सिद्धवर से ही तुमने, विधि सेना को मारी।
अर्घ चढ़ाकर अजित आपको, बनूँ मोक्ष अधिकारी ॥२१॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं सर्वार्धमागधी-भाषा-देवोपनीतातिशय-गुणधारक श्री अजितनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

छोड़ शत्रुता शत्रु वर्ग भी, बनते मित्र विशेषा।
देवेन्द्रों से किया गया यह, अतिशय तीर्थ जिनेशा॥
रहे दूसरे तीर्थनाथ सो, इन्द्र करे रखवाली।
पातक हन्ता! की पूजा कर, बनूँ मोक्ष अधिकारी ॥२२॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं सर्वजनमैत्रीभाव-देवोपनीतातिशय-गुणधारक श्री अजितनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

आम-रामफल फणस संतरा, साथ फलेगी द्राक्षा।
ढोल-मजीरे बजा-बजाकर पूजूँ तजकर कांक्षा॥
अजित विकारी भाव नाशकर, बने आत्म अधिकारी।
नाच-नाचकर पूजन कर मैं बनूँ मोक्ष अधिकारी ॥२३॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं सर्वर्तुफलादि-शोभिततरु-परिणाम-देवोपनीतातिशय-गुणधारक श्री अजितनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

जीवन तव आदर्श रहा सो, भू हो दर्पण जैसी।
आप समागम पा कर्मों की दशा बिगड़ती ऐसी॥
कोई कह नहिं सकता सो ही, बने आप सुखकारी।
अष्ट-द्रव्य मय अर्घ चढ़ा मैं, बनूँ मोक्ष अधिकारी ॥२४॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं आदर्शतल-प्रतिमा-रत्नमयी-देवोपनीतातिशय-गुणधारक श्री अजितनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

जिस-जिस दिशि में आप विहरते अनुचर बनती वायु।
अजितनाथ निःसंग वायु सम प्रतिपल अर्घ चढ़ाऊँ॥
लौट न आते कर्म शत्रु सो, नहीं रहे संसारी।
स्वयंबुद्ध की पूजा कर मैं, बनूँ मोक्ष अधिकारी ॥२५॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं विहरण-मनुगतवायुत्व-देवोपनीतातिशय-गुणधारक श्री अजितनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

आनन्दित हो पुलकित होते, प्रसन्नता से फूले।
भक्त आपके, पूजा करके, सुखसागर में झूले॥
पुत्र-पौत्र घर राजपाट अरु छोड़ा वैभव भारी।
चाँदी के ये थाल चढ़ाकर, बनूँ मोक्ष अधिकारी॥२६॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं सर्वजनपरमानन्दत्व-देवोपनीतातिशय-गुणधारक श्री अजितनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

वायु जाति के देव धूल अरु, कंकर पत्थर काँटे।
दूर करे त्यों अजित भक्त को, पाप-नाग नहिं काटे॥
पाकर अनुपम ऋद्धि-सिद्धियाँ, फिर छोड़ी थी सारी।
इसीलिए मैं पूजा करके, बनूँ मोक्ष अधिकारी॥२७॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं वायुकुमारोपशमित - धूलिकण्टकादि-देवोपनीतातिशय-गुणधारक श्री अजितनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

गंध सहित जल बरसाने को, मेघ देव आ जाते।
अजितनाथ के गुण की महिमा, सुरनर किन्नर गाते॥
जीत सभी के मन को ओहो, आप बने कर्मारि।
बीन बजाकर पूज आपको, बनूँ मोक्ष अधिकारी॥२८॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं मेघकुमारकृत-गन्धोदक-वृष्टि-देवोपनीतातिशय-गुणधारक श्री अजितनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

कनक सुनिर्मित कमल बिछाते, पाद युगल के नीचे।
अजित आपके पादपद्म ही मम समकित को सींचे॥
पिता रहे जितशत्रु आपकी, माता विजयारानी।
चिरंजीव तव पूजाकर मैं, बनूँ मोक्ष अधिकारी॥२९॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं पादन्यासेकृत-पद्मानि-देवोपनीतातिशय-गुणधारक श्री अजितनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

झाड़-झाड़ियाँ वृक्ष लताएँ तुम्हें देख मुस्काते।
फल-फूलों से गुल्म-पत्र से, धरती तक झुक जाते॥
दिव्य-देशना सुन भव्यों ने, जिनवर दीक्षा धारी।
अहो-रात तव पूजा कर मैं, बनूँ मोक्ष अधिकारी॥३०॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं फलभार-नम्र-शालि-देवोपनीतातिशय-गुणधारक श्री अजितनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

शंख बाँसुरी ढोल सुझुनिया और बजाकर वीणा ।
कहते आओ वृष का इनने, उठा लिया है बीड़ा॥
बनेडिया में अजितनाथ की, प्रतिमा है मनहारी।
चढ़ा अर्घ का थाल शीघ्र ही, बनूँ मोक्ष अधिकारी॥३१॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं एतैतैतिचतुर्निकायामर - परस्पराह्वानन-देवोपनीतातिशय-गुणधारक श्री अजितनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

जैसे निर्मल नभ हो जाता, शरद काल जब आता।
वैसा नभ हो वहाँ जहाँ पर, संगम तव हो जाता॥
गर्मी हो या वर्षा ऋतु यह, अतिशय होता भारी।
भाग्य जगा सो पूजा कर मैं, बनूँ मोक्ष अधिकारी॥३२॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं शरत्कालवन्निर्मल-गगनत्व-देवोपनीतातिशय-गुणधारक श्री अजितनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

पूर्व दिशा या दक्षिण पश्चिम, दशों दिशाएँ होती।
विकार वर्जित लगती मानों, चमक रही सुर ज्योति॥
सिद्धि वधू को वरने वाले, अजितनाथ भवहारी।
मैं भी तेरी पूजा कर अब, बनूँ मोक्ष अधिकारी॥३३॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं शरन्मेघवन्निर्मल-दिग्विभागत्व-देवोपनीतातिशय-गुणधारक श्री अजितनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

धर्मचक्र ये आगे-आगे, चलकर तव गुण गावे।
अघ नाशे सो तुम ही जग में, राग रहित कहलाए॥

हे प्रभु तुमने घाति नाशकर, भव की चाल सुधारी।
आप नाम की माला जप मैं, बनूँ मोक्ष अधिकारी ॥३४॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं धर्मचक्र-चतुष्टय-देवोपनीतातिशय-गुणधारक श्री अजितनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

अष्ट प्रातिहार्य के ८ अर्घ्य

(दोहा)

फूल-फलों से पत्र से, विकसित होता वृक्ष।
जिसके नीचे अजित जिन, बैठे वृष अध्यक्ष॥
बजा नगाड़े ढोल जो, कहता मैं हूँ दास।
मात्र अजित का तो मिले वैभव उसको खास ॥३५॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं अशोकवृक्ष-प्रातिहार्य-धारक श्री अजितनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

चित्ताकर्षक पुष्प को, बरसाते हैं देव।
अचरज उपजे चित्त में डण्ठल नीचे देख॥
अजित आपके भक्त की, होगी निश्चित जीत।
पूजे तो फिर आपदा, भागे हो भयभीत ॥३६॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं सुरपुष्पवृष्टि-प्रातिहार्य-धारक श्री अजितनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

आते चामर ढोरने, स्वर्गपुरी को छोड़।
कहते इनसे भव्य तूँ, अब तो नाता जोड़॥
अजितनाथ की भक्ति में, होकर के लवलीन।
अर्घ चढ़ा दे तो कभी, नहीं बनेगा दीन ॥३७॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं चतु:षष्ठी-चामर-प्रातिहार्य-धारक श्री अजितनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

कान्ति आपके देह की, मोहक है रमणीक।
मिले दर्श से शीघ्र ही, सुख पाने की सीख॥

हाथी तेरा चिह्न है, अजितनाथ है नाम।
मुद्रा देखी तो लगा बचा न मानों काम ॥३८॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं भामण्डल-प्रातिहार्य-धारक श्री अजितनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

शहनाई वीणा बजे, बजते ढम-ढम ढोल।
पूज्य आपकी पूज से, अघ हो जाते गोल॥
बनेड़िया इक गाँव जो, अजितनाथ तव धाम।
उड़कर आया आपका, मंदिर अति अभिराम ॥३९॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं दुन्दुभिप्रातिहार्य-धारक श्री अजितनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

मुक्ता लड़ियाँ हैं लगी, स्वर्ण सुनिर्मित छत्र।
कहते इनको छोड़कर, ना जाओ अन्यत्र॥
क्योंकि अजित शिवमार्ग के, नेता हैं उस्ताद।
पूजों सुख की फसल में, मिल जावेगा खाद ॥४०॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं छत्रत्रय-प्रातिहार्य-धारक श्री अजितनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

समवसरण में आपकी खिरी देशना दिव्य।
सात तत्त्व को जानकर, सुलट गये थे भव्य॥
बंधा जी इक क्षेत्र है, वहाँ आप ज्ञानीश।
शोभ रहे सो मैं नमूँ झुका-झुकाकर शीश ॥४१॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं दिव्यध्वनि-प्रातिहार्य-धारक श्री अजितनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

सिंहासन छविदार है, अधर विराजे आप।
अजित आपको तब मिला, घाति किये जब साफ॥
नगर अयोध्या शान से, चमक उठा जिननाथ।
जन्म हुआ जब आपका, मैं पूजूँ दिन-रात ॥४२॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं सिंहासन-प्रातिहार्य-धारक श्री अजितनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

पंच कल्याणक के ५ अर्घ्य

(लय—श्री वीर महा अतिवीर...)

वह ज्येष्ठ कृष्ण का अन्त, काला दिन आया।
माँ विजया ने तब स्वप्न, देखे सुख पाया॥
प्रभु अजित स्वर्ग को छोड़, भू पर आये थे।
हम उस दिन को कर याद, अर्घ चढ़ाते हैं ॥४३॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं गर्भ-कल्याणक-मण्डित श्री अजितनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

सुर ने बरसाये रत्न, पन्द्रह महिनों औ।
श्री माँ के आँगन नित्य, नन्दन क्यों नहिं हो॥
तब माघ माह की शुक्ल, दशमी आयी थी।
तुम जन्मे थे तीर्थेश, भू हरषायी थी ॥४४॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं जन्म-कल्याणक-मण्डित श्री अजितनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

वह माघ माह की शुक्ल, नवमी चमक उठी।
मिट गया भोग से राग, तृष्णा पूर्ण मिटी॥
आ लौकान्तिक स्वर्गीश, संस्तुति करते हैं।
हम मिथ्या पथ को छोड़, शिव पथ चलते हैं ॥४५॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं तपः-कल्याणक-मण्डित श्री अजितनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

वह पौष माह की शुक्ल, ग्यारस जब आयी।
तब घाति दिखाकर पीठ, भागे दुखदायी॥
प्रभु पाकर केवलज्ञान, भव से छूट गये।
हे अजित! चढ़ाकर अर्घ, हम सुख रूप हुए ॥४६॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं ज्ञान-कल्याणक-मण्डित श्री अजितनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

शुभ चैत्र माह की शुक्ल, पंचम तिथि आयी।
तब अजितनाथ ने शीघ्र, पंचम गति पायी॥
मैं छम-छम, छम-छम नाच तुमको पूजूँगा।
यह अर्घ चढ़ाकर आज, शिव में रीझूँगा ॥४७॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं मोक्ष-कल्याणक-मण्डित श्री अजितनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

अनन्त चतुष्टय के ४ अर्घ्य

(घत्ता)

पा अमितज्ञान को, रहित मान हो, समवसरण को पाया था।
वह ज्ञान प्रभाकर, तुमको पाकर, निश्छल हो हरषाया था॥
श्री अजित जिनेश्वर, हे सर्वेश्वर, मुकुलित होकर नमन करूँ।
हे त्रिभुवन वन्दित, हो आनन्दित, अर्घ चढ़ा मन चमन करूँ ॥४८॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं अनंतज्ञानगुणधारक श्री अजितनाथजिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

जब नष्ट हुआ था, भ्रष्ट हुआ था, आवरणी जो दर्शन का।
सो विलय हुआ वह, उदय हुआ तब, अहो अनन्त सुदर्शन का॥
प्रभु अजितदेव ये, पूज्य देव से, किन्नर खेचर चक्री से।
जो अर्घ चढ़ावे, वह भी पावे, पूजित पद जो शक्री से ॥४९॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं अनंतदर्शनगुणधारक श्री अजितनाथजिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

हे सुख भण्डारी, आपद टाली, पुनर्जन्म का कारण जो।
वह मोह सुविघटा, सौख्य सुप्रकटा, हुआ कर्म का वारण औ॥
तुम निकलेश्वर हो, ज्ञानेश्वर हो, अजितनाथ हो तीर्थंकर।
मैं अर्घ चढ़ाकर, तुमको ध्याकर, बन जाऊँ अब क्षेमंकर ॥५०॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं अनंतसुखगुणधारक श्री अजितनाथजिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

तव वीर्य अनोखा, लगता चौखा, अन्तराय के जाने से।
यह प्रकट हुआ जो, हेतु रहा वो, मोक्ष महल को पाने में॥
हे अक्ष विजेता! कर्म विभेत्ता, अर्घ चढ़ाऊँ अर्पित हो।
हे अजित जिनेश्वर, फल में ईश्वर, पाप हमारे कर्षित हो ॥५१॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं अनंत-वीर्य-गुणधारक श्री अजितनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

१८ दोष से रहित के १८ अर्घ्य

(लय—कहाँ गये चक्री जिन...)

भूख रोग से दुखी हुआ मैं, भोजन करता हूँ।
किन्तु क्षुधा नहिं मिट पायी सो, दुख ही सहता हूँ॥
भूख विजेता किन शब्दों में, महिमा गाऊँ मैं।
अष्ट-द्रव्य का अर्घ बनाकर, चरण चढ़ाऊँ ये ॥५२॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं क्षुधा-दोष-रहित श्री अजितनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

प्यास जीतने आत्मामृत को, पीकर तृप्त हुए।
तृषा मिटाने हम तो तेरे, पद आसक्त हुए॥
अजितनाथ जी सम्मेदाचल से भव पार हुए।
दर्शन करके पूजा के अब मेरे भाव हुए ॥५३॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं तृषा-दोष-रहित श्री अजितनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

भय भी हो भयभीत आपसे, भागा दूर कहीं।
उसका कारण शुक्लध्यानमय, पायी पुण्यमही॥
हर्षित हो मैं आनन्दित हो, पूजा करता हूँ।
पूजा करके लगता मैं, तो, शिव में रमता हूँ ॥५४॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं भय-दोष-रहित श्री अजितनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

शत्रु नहीं है, वैर नहीं है, किसी जीव से भी।
बचे हुए हैं द्वेष दोष से, और पीर से भी॥

अहो अयोध्या गौरव तेरी महिमा सुर गावे।
क्यों नहिं हम भी पूजा करने तेरे पद आवे ॥५५॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं द्वेष-दोष-रहित श्री अजितनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

किसी वस्तु की चाह नहिं, नहिं राग उपजता है।
पर द्रव्यों में अजितनाथ नहिं, चित्त हुलसता है॥
राग मिटा है तब तो मेरा, तव पद राग बढ़ा।
पूजा की तो मेरे ऊपर, तेरा रंग चढ़ा ॥५६॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं राग-दोष-रहित श्री अजितनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

यह मेरा है यह मेरा है, ऐसा नहिं लगता।
तव आतम सब तजकर केवल आतम में रमता॥
जितवैरी[१] के चिरंजीव को शचिपति पूज रहा।
पूजा करके पापों से मम, आतम दूर हुआ ॥५७॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं मोह-दोष-रहित श्री अजितनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

चिन्ता लगती उसको जिसकी, मूर्च्छा पर में हो।
परम दिगम्बर ग्रन्थ रहित मम, आस्था तुम में हो॥
हे निर्मोही अजितनाथ हम तेरे चरण रहें।
अर्घ चढ़ावे भव-भव में अब तेरी शरण रहें ॥५८॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं चिन्तादोषरहित श्री अजितनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

मृत्युराज की रही सहेली, जरा सताती है।
मौत तुम्हारी आने वाली, हमें बताती है॥
ज्ञानवृद्ध हो, वयोवृद्ध पर, जरा न आवेगी।
इसीलिए तो जनता आकर, अर्घ चढ़ायेगी ॥५९॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं जरा-दोष-रहित श्री अजितनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

औदारिक तन रोग पिटारा, पर तुम स्वस्थ हुए।
परमौदारिक देह बना सो, तुम आत्मस्थ हुए॥

---

१. जितारि (भगवान के पिता)

रोग दोष से अजितनाथ ने, पिण्ड छुड़ाया है।
निरोगता को पाने हमने अर्घ चढ़ाया है ॥६०॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं रोग-दोष-रहित श्री अजितनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

अन्तक का भी अन्त किया सो, अन्तिम गुण पाया।
और अन्त से रहित गुणों से, आतम विलसाया॥
जीत न पाए कर्म तभी तो अजित नाम भाया।
चक्रवर्ति के साथ अर्घ ले, तव पद मैं आया ॥६१॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं मरण-दोष-रहित श्री अजितनाथजिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

तन क्यारी से स्वेद निकलना, दोष हठीला है।
अजितनाथ का स्वेद रहित यह देह छबीला है॥
दोष कभी यह लौट न आवे, घातिकर्म जीते।
पूजूँ मेरा जीवन अब तो, तव पद में बीते ॥६२॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं स्वेद-दोष-रहित श्री अजितनाथजिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

खिन्न न होते खेद दोष का, कारण कोई ना।
हँसती सी तव प्रतिमा लगती जीवन मोती सा॥
हँसी-खुशी से अर्घ चढ़ाने, प्रतिदिन आयेंगे।
अजितनाथ को छोड़ किसी के, गुण नहिं गायेंगे ॥६३॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं खेद-दोष-रहित श्री अजितनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

मद नहिं है तव मान मिटा है, अहं भाव नाशा।
तेरी पूजा से ही मुझको, सुख उपजा खासा॥
अजितनाथ हे अजितनाथ तुम, प्राणों से प्यारे।
पूजूँ चिन्तित काम अचिन्तित बनते हैं सारे ॥६४॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं मद-दोष-रहित श्री अजितनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

नहिं रतियाँ नहिं अरति जगेगी, अजितनाथ में वा।
नाम जपेगा उसके घर में, सुख ही बरसेगा॥

दोष मिटा दो रतिमय मेरा, पातक मम छूटे।
तेरी पूजा से ही स्वामी, बन्धन अब टूटे ॥६५॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं रति-दोष-रहित श्री अजितनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

अचरज नहिं हो कभी आपको, सब कुछ जान रहे।
अनजाना नहिं रहा तभी हम, विस्मय मान रहे॥
मिटा दोष आश्चर्य आपके अजितनाथ ध्याऊँ।
अर्घ चढ़ाऊँ लौट न आऊँ सिद्धालय जाऊँ ॥६६॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं विस्मय-दोष-रहित श्री अजितनाथजिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

निद्रा दुश्मन रही जीव की, होश भुलाती है।
जाग्रत रहते तब तो जनता शीश झुकाती है॥
पापास्रव को पुण्यास्रव को, तुमने मेटा है।
इसीलिए तो भक्त आपके, चरणों बैठा है ॥६७॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं निद्रा-दोष-रहित श्री अजितनाथजिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

जन्म आपका अन्तिम था सो, फिर नहिं जन्मोगे।
देह न धारो अजितनाथ नहिं भव में भटकोगे॥
मैं भी अब तो जन्म न पाऊँ, कृपा करो स्वामी।
अजितनाथ तव पूजा कर मैं, बनूँ मोक्ष गामी ॥६८॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं जन्म-दोष-रहित श्री अजितनाथजिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

शोकाकुल हो अब तक हा-हा, दर-दर भटका मैं।
तेरे द्वारे आया जब से, और न दिखता है॥
शोक रहित इन अजितनाथ के, तीर्थंकर पद है।
दर्शन करके पूजा से ही मिटती आपद है ॥६९॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं शोक-दोष-रहित श्री अजितनाथजिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

(ज्ञानोदय)

सब कार्यों को सिद्ध किया था, अजितनाथ जिन स्वामी ने।
कूट सिद्धवर बना पूज्य वह, वहीं बने निर्नामी ये॥

शाश्वत अविचलधाम बनाया, सिद्धालय को चेतन का।
अर्घ चढ़ा मैं इसी कूट को, पात्र बनूँ शिवकेतन का ॥७०॥

ॐ ह्रीं श्री सम्मेदशिखर स्थित सिद्धवरकूटेभ्यो नमः अर्घ्यं...।

पीत सुवर्णी गज से चिह्नित, विजया माँ के नन्दन की।
सम्मेदाचल गिरि से जिनकी बनी चेतना चन्दन सी॥
ऐसे अजितनाथ प्रभु तेरे, बिम्ब जहाँ भी स्थापित हैं।
अर्घ चढ़ाकर नमन करे जो नहिं होवे सन्तापित वे ॥७१॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री अजितनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

पूर्णार्घ्य

ये त्रिभुवन ज्ञायक, शिव के लायक, दुर्ध्यानों के नाशक हैं।
सब क्षोभ मिटा है, सौख्य मिला है, शुक्लध्यान के माध्यम से॥
सो ही शिव नारी, महिमा भारी, गाकर तुमको वरती है।
तब जनता सारी, भर-भर थाली अर्घ सुअर्पण करती है॥७२॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री अजितनाथ-जिनेन्द्राय नमः पूर्णार्घ्यं...।

जाप्य :

ॐ ह्रीं श्री क्लीं ऐं अर्हं श्री अजितनाथ-जिनेन्द्राय नमः।

(९/२७/१०८)

जयमाला

(दोहा)

जयमाला जिनराज की, अजितनाथ सुख रूप।
गाऊँ दे दे ताल मैं, बनने को शिवभूप॥

(ज्ञानोदय)

सम्मेदाचल से प्रभु तुम ही सबसे पहले मोक्ष गये।
कूट सिद्धवर जहाँ पचासी, कर्म प्रकृति को सोख गये॥

अकल हुए तुम विमल हुए अविनाशी बन तुम अचल हुए।
घात अघाती अमिट चतुष्टय पाकर शाश्वत निकल हुए॥१॥

क्रोध जीतकर माया जीती, मान लोभ को जीत लिया।
अजित नाम यह सार्थक तेरा, अन्तक को भयभीत किया॥
तब तो यम का भय भी क्षण में, आप स्मरण से दूर हटे।
भय है किसका इससे ज्यादा, जो आकर दुख पूर भरे॥२॥

अहो आपकी भक्ति करे तो, कर्म शत्रु भी हारेगा।
आप योग से इक दूजे का, वैर भाव मिट जाएगा॥
इसीलिए तो जहाँ-जहाँ पर, बिहार तेरा होता है।
साँप, मोर को निकट देख भी, नींद चैन की सोता है ॥३॥

अहंकार को जीता शठता, जीत जितेन्द्रिय कहलाए।
ममता को भी मार दिया तुम, मोह जयी बन सुख पाए॥
चंचलता नहिं मन-वच-तन की, निश्चल पद में शोभ रहे।
अहो क्रोध भी क्रोधित होकर, भागा फिर क्यों क्षोभ करे॥४॥

अजितनाथ तव मुख शशधर से, अनेकान्त पीयूष झरे।
वो ही मेरे पाप कर्ममय, कालकूट को दूर करे॥
लाख बहत्तर पूर्व आपकी, आयु रही जो उत्तम थी।
दीक्षा लेकर वर्ष सुबारह, अहो तपस्या सत्तम की ॥५॥
फलतः केवलज्ञान सुपाकर, समवसरण भी पाया था।
एक लाख जो परम तपस्वी मुनि को धर्म सुनाया था॥
तीन लाख थे श्रावक चातक पक्षी सम वृष पीते थे।
इसीलिए तो जीवन के पल उनके सुख से बीते थे ॥६॥

कंचन जैसी आप देह की कान्ति रही अति सुखकर है।
अन्तिम सीमा तक पहुँचा लावण्य आपका शुभकर है॥

सिन्धु समा गाम्भीर्य जिसे नहिं, वचनों से हम कह सकते।
गुण रत्नों की खान अजित तव दूरी हम नहिं सह सकते॥७॥

मन होता है केवल तुमको, निरख-निरख कृतकृत्य करूँ।
इन नयनों को मानव भव में, इनका पाना सत्य करूँ॥
धर्म रसायन आप दर्श से, यह मैंने जब पाया है।
तो क्यों मिथ्या धर्म रुचे अब नवजीवन महकाया है ॥८॥

अब तक हा! हा!! मिथ्या वृषमय महागरल को अमृत सा।
मान पिया था, ग्रहण किया था, खुश होकर के उर में हा॥
लेकिन अब जो धर्मामृत यह तेरा मुझको प्राप्त हुआ।
भूल न पाऊँ, छोड़ न पाऊँ, फिर-फिर पाऊँ वही मुदा ॥९॥

आज आपके दर्शन करके, मुझको निज का भान हुआ।
श्रद्धा मेरी सत्य बनी सो आतम का कल्याण हुआ॥
अब मैं तुमको तजकर स्वामी और कहीं क्यों जाऊँगा।
पूजा कर सन्तुष्ट हुआ सो, क्यों अब भव भरमाऊँगा ॥१०॥

अजितनाथ के अतिशयकारी दो मन्दिर विख्यात रहे।
अतिशय कहता जो कि लोक में विस्मयकारी बात करे॥
प्रभो आपकी प्रतिमा को जब एक व्यक्ति रख गाड़ी में।
सुनो बेचने आया था तब बम्हौरी में गाड़ी रे ॥११॥

अचल हुई सो खिसकाना भी कठिन हुआ था उसको तो।
एक सेठ ने कहा 'बँधा' में करूँ विराजित इसको तो॥
झट से गाड़ी चली 'बँधाजी' जाकर के ही रुक पाई।
उसका अतिशय देख महत्ता जनता सारी हरषाई ॥१२॥

एक बार औरंगजेब ने खण्डित इसको कर दूँगा।
टुकड़े-टुकड़े कर डालूँ तब श्वास चैन की मैं लूँगा॥

यही सोचकर उठा हथौड़ा लगा पटकने तत्क्षण ही।
सुर ने उसके हस्त युगल को बाँध दिया था ऊपर ही ॥१३॥

बेचारे ने हाथ जोड़कर प्रभु से माँगी क्षमा यदा।
छूट सका था तभी सार्थ यह नाम हुआ था सुनो बँधा॥
और रहा जो बनेडिया में, अजितनाथ तव मन्दिर है।
गगन मार्ग से उड़कर आ यह, रुका यहाँ अति मनहर है ॥१४॥

अब तक भी नहिं नींव भरी है, और नहीं इक खम्भ रहा।
फिर भी है मजबूत वज्र सा, धर्मतीर्थ का स्तम्भ कहा॥
ऐसे-ऐसे अतिशयकारी, अनेक मन्दिर जग में हैं।
उनकी महिमा गाने में तो, सुरगुरुवर भी अक्षम है ॥१५॥

प्राज्ञ पुरुष भी, गणधर गुरु भी, गा नहिं पाये अब तक है।
फिर कैसे मैं गा पाऊँ मुझ अज्ञानी में अघतम है॥
अतः प्रभो मैं हस्त युगल को, मुकुलित करके शीश झुका।
प्रणाम करता आठ अंग को नमा चरण में आत्मसखा॥१६॥

आप दर्श से नयन युगल ये, पवित्र पावन आज हुए।
भक्ति आपकी मैंने की सो, वचन पुण्यमय साँच हुए॥
नाच-नाचकर पाद-युगल की, ताकत सार्थक आज करूँ।
बजा-बजाकर ढोल ढमाके, हाथों को मैं सार्थ करूँ ॥१७॥

जयकारा मैं इतनी दम से, करूँ लोक यह गूँज उठे।
दौड़े-दौड़े आवे सब ही, आप भक्ति में झूम उठे॥
गुण गाऊँ मैं इस विध जिसको, सुनकर अपने आप सभी।
नृत्य करें सब काम भूलकर, भूल न पावे तुम्हें कभी ॥१८॥

नाचे वे भी गावे उछले, प्रमुदित होकर नमन करे।
स्वर्गों जैसा सुख अनुभव कर, तव पद में ही रमण करे॥

अजितनाथ कुछ समझ न आता कैसे तेरे गुण गाऊँ।
शब्द न लगते कोई ऐसे, जिनसे उपमा दे पाऊँ ॥१९॥

इसीलिए हे स्वामी अब तो, चुप रहना ही सही लगे।
सो जयमाला पूरी करके, चुप होता हूँ मोक्ष सखे!॥
फिर भी अन्तिम क्षण तक स्वामी, याद करूँगा तुमको ही।
इससे जीवन सार्थक होगा, मोक्ष मिलेगा मुझको भी ॥२०॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री अजितनाथ-जिनेन्द्राय नमः जयमाला पूर्णार्घ्यं...।

आशीर्वाद

अजितनाथ का विधान जो भी, लौकिक वांछा छोड़ सभी।
कर लेता है एक बार भी, हार न सकता कहीं कभी॥
कुछ ही भव में और सुनो वह, कर्म शत्रु को जीतेगा।
मोक्ष महल में जाकर के फिर, शुद्ध आत्म में जीवेगा॥

इत्याशीर्वादः परिपुष्पाञ्जलिं क्षिपामि/क्षिपेत्।

श्री सम्भवनाथ विधान

पीठिका

(दोहा)

सम्भव जिन को नमन कर, गाऊँ उनका गान।
उन जैसा बनने लिखूँ, उनका पूज्य विधान ॥१॥

(ज्ञानोदय)

क्षेमपुरी जो कच्छ देश में, राजाओं की नगरी थी।
धन-धान्यों से फल-फूलों से, हरी-भरी सुख गगरी थी॥
भूप रहा था विमल सुवाहन, तीर्थंकर जो भावी था।
क्लेश भाव से रहित रहा वह, धर्मी जन में नामी था ॥२॥

इक दिन उसने सोचा कारण विरति भाव के तीन रहे।
उनको जाने बिना जीव ये, विषय भोग में लीन रहे॥
प्रथम रहा है मृत्युराज के, दाँतों के हा! मध्य पड़ा।
जीने की अभिलाषा करता, अन्धकार है यही बड़ा॥३॥

मैं भी अब तक अन्ध बना सा, भ्रमित हुआ हूँ भूल गया।
निज चेतन को, शिव केतन को, और पाप में झूल गया॥
कारण दूजा असंख्यात बस, समय मात्र की आयु रही।
पल-पल में क्षय होती है सो, आ जाती है मृत्यु यहीं ॥४॥

फिर भी इसको शरण मान, विश्वास किया था अब तक हा।
और मोह के पचड़े में पड़ गँवा दिया सब समय हहा!॥
तथा तीसरा इच्छित वस्तु, पाने की जो अभिलाषा।
उसी धूप से तप्त दुखी पर, पूर्ण हुई नहिं मम आशा॥५॥

यही सोच झट राज्य छोड़कर स्वयंप्रभः जिन स्वामी के।
चरणों में जा दीक्षा लेकर मुनि बनकर अभिरामी वे।

करी तपस्या तीर्थंकर पद हेतु कर्म को बाँध लिया।
और पधारे ग्रैवेयक में, लौकिक सुख सब साथ लिया ॥६॥

आयु पूर्ण कर श्रावस्ती जो, नाम जगत विख्यात रहा।
उस नगरी का भूप जितारि, विजय प्राप्तकर ख्यात रहा॥
उसकी रानी प्रिया सुषेणा, पुण्यवती थी शीलवती।
सम्भव प्रभु की माँ बनकर सौभाग्यवती बन पुत्रवती॥७॥

त्रय लोकों की माँ का गौरव, उसने पाया धन्य हुई।
जन्म सु देकर तीर्थंकर को, नारीगण में रम्य हुई॥
उसी सुषेणा माँ के नन्दन, सम्भव स्वामी तव अर्चा।
करने का शुभ भाव हुआ सो, लिखी पीठिका में चर्चा॥८॥

पूर्व काल का तव जीवन, आदर्श रहा जो मुनिगण में।
तीर्थंकर पद बाँधा था सो, पूज्य हुए हो त्रिभुवन में॥
आप कृपा से, आप भक्ति से, कार्य सफल यह हो जावे।
विधान करके भव्य आपका, पाप कर्म से बच जावे ॥९॥

परिपुष्पाञ्जलिं क्षिपामि/क्षिपेत्।

पूजन प्रारम्भ

स्थापना

(ज्ञानोदय)

आप्त सुशास्ता परमेष्ठी पद, ज्योति स्वरूपी सम्भव की।
विमल अमल अविकार परम जिन, तीर्थंकर श्री गतमल की॥
घोटक चिह्नी धवल कूट से, निकल बने जो गतदेही।
उनकी ही मैं पूजा करता, आओ - आओ गतस्नेही॥

(दोहा)

सम्भव बैठो हृदय के, सिंहासन पर आज।
भक्त बुलाता आपको, बनने को कृतकाज॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री सम्भवनाथ जिनेन्द्र अत्र अवतर अवतर संवौषट् इति आह्वाननं! ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री सम्भवनाथ जिनेन्द्र अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं! ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री सम्भवनाथ जिनेन्द्र अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणं!

अष्टक

स्वर्णिम कलशों में पानी भर, पद पंकज में लाऊँ मैं।
जन्म जरा के नाश हेतु तव, पूजा आज रचाऊँ मैं॥
शम सुख भोक्ता सम्भव स्वामी, शुद्ध गुणों के आलय हैं।
इसीलिए हम पूजा करने आते, नित्य जिनालय हैं॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री सम्भवनाथ-जिनेन्द्राय नमः जन्म-जरा-मृत्यु-विनाशनाय जलं...।

चन्दन कुन्दन चाँदी की इस झारी में भर लाया हूँ।
चारु चरण की चर्चा सुनकर, अर्चा करने आया हूँ॥
शम सुख भोक्ता...॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री सम्भवनाथ-जिनेन्द्राय नमः संसार-ताप-विनाशनाय चंदनं...।

अलि सम मैं तव पाद-पद्म का, चञ्चरीक बन आया हूँ।
तुम्हें चढ़ाकर तन्दुल मैं शिव पद पाने ललचाया हूँ॥
शम सुख भोक्ता सम्भव स्वामी, शुद्ध गुणों के आलय हैं।
इसीलिए हम पूजा करने आते, नित्य जिनालय हैं॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री सम्भवनाथ-जिनेन्द्राय नमः अक्षय-पद-प्राप्तये अक्षतं...।

लाल गुलाबी पीले नीले, कल्पवृक्ष के पुष्प चढ़ा।
देख आपके ब्रह्म भाव को काम भाव मम आज घटा॥
शम सुख भोक्ता...॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री सम्भवनाथ-जिनेन्द्राय नमः कामबाण-विध्वंसनाय पुष्पं...।

विविध भाँति के इष्ट-मिष्ट, नैवेद्य आपको अर्पित है।
भूख मिटाने जीवन केवल, तुमको पूर्ण समर्पित है॥
शम सुख भोक्ता...॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री सम्भवनाथ-जिनेन्द्राय नमः क्षुधारोग-विनाशनाय नैवेद्यं...।

मोहमयी इन कृष्ण घटाओं, ने श्रद्धा को छुपा दिया।
आस्था अविचल पाने तुमको, दीप चढ़ाकर पूज लिया॥
शम सुख भोक्ता...॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री सम्भवनाथ-जिनेन्द्राय नमः मोहांधकारविनाशनाय दीपं...।

खुशबू वाली सभी वस्तुएँ मिला धूप मैं ले आया।
कर्म धूप यह मुझे जलाती, उसे जलाने मैं आया॥
शम सुख भोक्ता...॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री सम्भवनाथ-जिनेन्द्राय नमः अष्टकर्म-दहनाय धूपं...।

काजू किसमिस लौंग सुपारी, सौ-सौ श्रीफल भेंट करूँ।
फलतः रत्नत्रय को पाकर, निज आतम में पैठ सकूँ॥
शम सुख भोक्ता सम्भव स्वामी, शुद्ध गुणों के आलय हैं।
इसीलिए हम पूजा करने आते, नित्य जिनालय हैं॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री सम्भवनाथ-जिनेन्द्राय नमः मोक्षफल-प्राप्तये फलं ...।

अक्षत नैवज जल-फल लेकर, मंगलमय यह अर्घ बना।
मंगलकारी चरण-युगल में आनन्दित हूँ आज चढ़ा॥
शम सुख भोक्ता सम्भव स्वामी, शुद्ध गुणों के आलय हैं।
इसीलिए हम पूजा करने आते, नित्य जिनालय हैं॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री सम्भवनाथ-जिनेन्द्राय नमः अनर्घ्यपद-प्राप्तये अर्घ्यं...।

प्रत्येक-अर्घ्य

(दोहा)

सम्भव प्रभुवर आपके, गुण का नहिं है पार।
कुछ गुण को मैं अर्घ दूँ, हे जीवन आधार॥

इति मण्डलस्योपरिपुष्पाञ्जलिं क्षिपामि/क्षिपेत्।

जन्मातिशय के १० अर्घ्य

(लय—श्री वीर महाअतिवीर.....)

तन औदारिक पर स्वेद, क्यों नहिं आता है।
है विस्मय की यह बात, मन भरमाता है॥
मैं सम्भव जिन की नित्य, पूजा रचवाऊँ।
श्री वीतराग को छोड़ पर को क्यों ध्याऊँ ॥१॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं निःस्वेदत्व-जन्मातिशय-गुणधारक श्री सम्भवनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

हे निर्मल संभव देह, मल नहिं उसमें है।
तव गुण गाने की देव, क्षमता किसमें है॥
मैं फिर भी तेरे गीत, गाकर धन्य हुआ।
सो अर्घ चढ़ाकर मित्र! जीवन रम्य हुआ ॥२॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं निर्मलत्व-जन्मातिशय-गुणधारक श्री सम्भवनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

है स्फटिक रत्न सा रक्त, तेरे तन में जो।
वह दिखलाता वात्सल्य, सम्भव उर में जो॥
हे प्रभुवर सो त्रय लोक, तुमको पूज रहा।
मैं अर्चूं अघ को रोक, तुम सम पूज्य कहाँ॥३॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं क्षीरगौररुधिरत्व - जन्मातिशय - गुणधारक श्री सम्भवनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

क्या तेरे जैसा रूप, जग में मिल पावे।
यदि देखेगा इक बार, मन में लज्जावे॥
हे सम्भव जिन तव पाद, त्रिभुवन अर्चित हैं।
जो पूजेंगे दिन-रात होंगे चर्चित वे ॥४॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं सौरूप्य-जन्मातिशय-गुणधारक श्री सम्भवनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

जो मिला श्रेष्ठ संस्थान, वह तो अनुपम है।
जो पूजें बारम्बार जग में निरुपम वे॥
हे सम्भव तव यह देह, तप में कारण है।
तव पूजा का यह कार्य, भव का वारक है ॥५॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं समचतुरस्रसंस्थान - जन्मातिशय - गुणधारक श्री सम्भवनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

तव तन से आती गन्ध[१], यह भी अतिशय है।
सो बने जगत में वन्द्य, पूजित गणधर से॥

---
१. सुगन्ध

मम वन्दन हो सौ बार, सम्भव पद युग में।
मैं पूजूँ शत-शत बार, मेरे भव सुधरे ॥६॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं सौगन्ध्य-जन्मातिशय-गुणधारक श्री सम्भवनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

ये धन्य हुए सब चिह्न, तव तन आश्रय ले।
श्री सम्भव सबसे भिन्न, गुण के आश्रय हैं॥
तुम उत्तम में भी देव, उत्तम - उत्तम हो।
तव पूजन से अवशेष, जीवन सत्तम हो ॥७॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं सौलक्षण्य-जन्मातिशय-गुणधारक श्री सम्भवनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

है संहनन तेरा तीर्थ, किसको मिल सकता।
यदि मिल जावे तो कौन, भव का क्षय करता॥
पा शक्ति आपने आज, जो उपयोग किया।
सो वन्दनीय हैं देव, हित का काम किया ॥८॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं वज्रवृषभनाराच-संहनन-जन्मातिशय-गुणधारक श्री सम्भवनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

जो शारीरिक तव शक्ति, किसमें हो सकती।
हे सम्भव अर्चा भक्ति, सबके अघ हरती॥
ये भूप जितारि नन्द, नन्दन करते है।
यदि भक्ति करे तो शीघ्र, पातक हरते हैं ॥९॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं अप्रमितवीर्य-जन्मातिशय-गुणधारक श्री सम्भवनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

तव वचन रहे हैं मिष्ट प्रिय हितकारक हैं।
वे लगे सुधा सम इष्ट, पाप निवारक है॥
सौभाग्य खुला मम आज, पूजा मनभायी।
ये वचन शक्ति है सार्थ, महिमा तव गायी॥१०॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं प्रियहितवादित्व-जन्मातिशय-गुणधारक श्री सम्भवनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

केवलज्ञानातिशय के १० अर्घ्य

(दोहा)

शतक चार सौ कोश तक, नहिं होवे दुर्भिक्ष।
सम्भव तुम ही लोक में, रहे सभी के इष्ट॥
सम्भव जिनवर लोक में, माने वृष के ईश।
नगरी श्रावस्ती रही, झुका आपको शीश॥११॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं गव्यूतिशत-चतुष्टय-सुभिक्षत्व-घातिक्षय-जातिशय-गुणधारक श्री सम्भवनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

बिना मार्ग आकाश में, होता आप विहार।
जिसे देख लगता अहो, चल आया शिवद्वार॥
मेघ नाश से आपको, आया था वैराग्य।
पूजा का अवसर मिला, जगे हमारे भाग्य॥१२॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं गगनगमनत्व-घातिक्षय-जातिशय-गुणधारक श्री सम्भवनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

भोजन तुम करते नहीं, फिर भी देह सुडोल।
घातिकर्म के नाश से, लगते गोलमटोल॥
सुरेन्द्र नृप ने था दिया, अहो प्रथम आहार।
फलतः उस ही जन्म से, पाया शिव का द्वार॥१३॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं भुक्त्यभाव-घातिक्षय-जातिशय-गुणधारक श्री सम्भवनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

प्राणी को बाधा कभी, हो नहिं सकती देव।
पाया केवलज्ञान सो, सम्भव जिन अधिदेव॥
तीन लाख श्रावक यदा, समवसरण में बैठ।
दिव्यध्वनि में धर्म सुन, अर्घ चढ़ाते भेंट॥१४॥

ॐ ह्लीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं अप्राणिवधत्व-घातिक्षय-जातिशय-गुणधारक श्री सम्भवनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

देव असुर मानव नहीं, कर पावे उपसर्ग।
सम्भव जिन को पूज ले, तो पावे अपवर्ग॥
ज्ञान सुकेवल पा लिया, तपकर चौदह वर्ष।
पूजा सबने द्रव्य से, मना-मनाकर हर्ष॥१५॥

ॐ ह्लीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं उपसर्गाभाव-घातिक्षय-जातिशय-गुणधारक श्री सम्भवनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

समवसरण में आपका, आनन चारों ओर।
भक्तों को दिखता रहे, सो हो सुख की भोर॥
देवपुरी[१] मोहक रही, उसको ही तो छोड़।
भू आए सो दर्श को, हम भी आए दौड़॥१६॥

ॐ ह्लीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं चतुर्मुखत्व-घातिक्षय-जातिशय-गुणधारक श्री सम्भवनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

मूर्त देह की भी प्रभो, छाया का नहिं नाम।
सम्भवप्रभु की भक्ति से, सध जाते सब काम॥
घोड़ा जिनका चिह्न है, सुख की जो है खान।
पूजूँ आठों याम मैं, बन जाऊँ गतमान॥१७॥

ॐ ह्लीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं अच्छायत्व-घातिक्षय-जातिशय-गुणधारक श्री सम्भवनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

चंचलता अवशेष ना, पलकों की हे नाथ।
अचरज मुझको तो लगे, सम्भव जिन भगवान॥
रही सुषेणा नाम की, माता लोक प्रसिद्ध।
जन्म सु देकर के किया नारी भव को सिद्ध॥१८॥

ॐ ह्लीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं अपक्ष्मस्पन्दत्व-घातिक्षय-जातिशय-गुणधारक श्री सम्भवनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

---
१. स्वर्ग

विद्या ऐसी कौन सी, जो नहिं आवे पास।
भाग्य मानकर आपकी, अहो बनी हैं खास॥
मुख्य रहा श्रोता अहो, सत्यवीर इक भूप।
पाया उसने आपसे, धर्मामृत का कूप॥१९॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं सर्वविद्येश्वरत्व-घातिक्षय-जातिशय-गुणधारक श्री सम्भवनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

नख केशों की वृद्धि का, बचा नहीं अब काम।
आप भक्ति से इष्ट सब मिल जाता निर्दाम॥
स्वर्ण वर्ण सम्भव रहे, समवसरण के ईश।
सोलहवानी शुद्ध तुम, बने, स्वर्ण जगदीश॥२०॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं समान-नख-केशत्व-घातिक्षय-जातिशय-गुणधारक श्री सम्भवनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

देवकृत अतिशय के १४ अर्घ्य

(नरेन्द्र)

अर्द्धमागधी दिव्यध्वनि में, महा अठारह भाषा।
और सात सौ लघु भाषाएँ सुनकर सुख हो खासा॥
देवों ने आ अतिशय करके, किया समर्थन तेरा।
सम्भव स्वामी अर्घ चढ़ाकर, आनन्दित मन मेरा॥२१॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं सर्वार्ध-मागधीभाषा-देवोपनीतातिशय-गुणधारक श्री सम्भवनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

शेर-गाय हो साँप-नेवला, या हो कुत्ता-बिल्ली।
होती मैत्री तथा वैर की, उड़ जाती है खिल्ली ॥
सम्भव तेरी अर्चा कर मैं, ध्यान करूँ जब तेरा।
आर्त्त-रौद्र दुर्ध्यान मिटे तब आनन्दित मन मेरा॥२२॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं सर्वजनमैत्रीभाव-देवोपनीतातिशय-गुणधारक श्री सम्भवनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

बसन्त हो या ग्रीष्म काल हेमन्त काल जब होवे।
सब ऋतुओं के फल-फूलों से भूमि सुशोभित होवे॥
इसका कारण है सम्भव सामीप्य मिला जो तेरा।
सम्भव स्वामी अर्घ चढ़ाकर, आनन्दित मन मेरा॥२३॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं सर्वर्तुफलादिशोभित-तरु-परिणाम-देवोपनीतातिशय-गुणधारक श्री सम्भवनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

पूरी धरती दर्पण जैसी पवित्र पावन होती।
निकट पधारो जब हे सम्भव बन जाती संतोषी॥
पूँछ उठाकर विधि मल भागे, ध्यान देखकर तेरा।
अनुपम महिमा देख आपकी, आनन्दित मन मेरा॥२४॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं आदर्शतल-प्रतिमारत्नमयी-देवोपनीतातिशय-गुणधारक श्री सम्भवनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

पवन आपका अनुयायी बन बहता है इस भाँति।
जैसे तेरी वाणी सुनकर, मिटे शिष्य की भ्रांति॥
सम्भव सार्थक अर्थवान यह नाम रहा है तेरा।
जिन शासक के दर्शन करके आनन्दित मन मेरा॥२५॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं विहरण-मनुगतवायुत्व-देवोपनीतातिशय-गुणधारक श्री सम्भवनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

प्रसन्नता की वृद्धि सदा हो, उत्फुल्लित सब होवे।
आपद-विपदा सभी विलय हो, बीज सौख्य के बोवे॥
सम्भव स्वामी भवों-भवों तक, मिले समागम तेरा।
शिवनायक की पूजा से है, आनन्दित मन मेरा॥२६॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं सर्वजन-परमानन्दत्व-देवोपनीतातिशय-गुणधारक श्री सम्भवनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

पवन जाति के देव यहाँ आ, कण्टक कंकर धूली।
दूर करेंगे जहाँ मिटेगी, समवसरण की दूरी॥

गणधर सौ अरु पाँच सदा, गुणगान करे प्रभु तेरा।
इसीलिए तो अर्घ चढ़ाकर, आनन्दित मन मेरा॥२७॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं वायुकुमारोपशमित - धूलिकण्टकादि-देवोपनीतातिशय-गुणधारक श्री सम्भवनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

गन्धोदक की वर्षा करते भू पर अमृतभोजी।
कहते आओ आज यहाँ पर आये चेतनभोगी॥
श्रावस्ती तब बनी छबीली योग मिला जब तेरा।
तुरंग चिह्नी नाम सुना तो, आनन्दित मन मेरा ॥२८॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं मेघकुमारकृत-गन्धोदकवृष्टि-देवोपनीतातिशय-गुणधारक श्री सम्भवनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

स्वर्णिम सुन्दर सरसीरुह[१] को, युगल पाद के नीचे।
रख देते पर प्रभु रहते चतु, अंगुल उनसे ऊँचे॥
सम्भव तेरे दर्श मात्र से, भक्त बना मैं तेरा।
मिथ्यातम मम मिटा अभी सो, आनन्दित मन मेरा॥२९॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं पादन्यासे-कृत-पद्मानि-देवोपनीतातिशय-गुणधारक श्री सम्भवनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

शालि धान्य की पकी फसल तब, झुककर भू को छूती।
समवसरण में भव्यात्माएँ, धर्मामृत को पीती॥
मैं तो भूला सब कुछ सम्भव, संगम पाकर तेरा।
सत्य धर्म को समझ गया सो, आनन्दित मन मेरा॥३०॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं फल-भार-नम्र-शालि-देवोपनीतातिशय-गुणधारक श्री सम्भवनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

तत्क्षण निर्मल नभ हो चाहे बरस रहा हो पानी।
आप समागम से पापी भी होता पानी-पानी ॥
श्रावस्ती वह पूज्य बनी जब जन्म हुआ था तेरा।
सम्भव जिन की पूजा करके, आनन्दित मन मेरा॥३१॥

---
१. कमल

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं शरत्कालवन्निर्मल-गगनत्व-देवोपनीतातिशय-गुणधारक श्री सम्भवनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

ढम-ढम-ढम-ढम बजकर मुझको करे सूचना बाजे।
सुन रे प्राणी सम्भव स्वामी, आये हैं दरवाजे ॥
सो जल्दी से घर के बाहर आकर बन जा चेरा।
सुनकर आकर पूजा है सो, आनन्दित मन मेरा॥३२॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं एतैतैतिचतुर्निकायामर - परस्पराह्वानन-देवोपनीतातिशय-गुणधारक श्री सम्भवनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

पूरब पश्चिम उत्तर दक्षिण, सुनो दिशाएँ सारी।
शरद काल सी मल वर्जित हो, लगती सबको प्यारी॥
उसका कारण हे सम्भव संयोग मिला जो तेरा।
दुर्लभतम तव शरण मिली सो, आनन्दित मन मेरा॥३३॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं शरन्मेघवन्निर्मलदिग्विभागत्व-देवोपनीतातिशय-गुणधारक श्री सम्भवनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

धर्मचक्र ये आगे चलकर तेरी महिमा गावे।
दस धर्मों के स्वामी हैं ये सबको सच बतलावे॥
कार्य असम्भव सम्भव होवे नाम रटे जो तेरा।
वृष चक्री की पूजा करके, आनन्दित मन मेरा॥३४॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं धर्मचक्र-चतुष्टय-देवोपनीतातिशय-गुणधारक श्री सम्भवनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

अष्टप्रातिहार्य के ८ अर्घ्य

(लय—मुनि सकलव्रती...)

वह कल्पवृक्ष बन जाता, जब सम्भव सन्निधि पाता।
गत शोक उसी को माना, तव भक्त बने मस्ताना॥३५॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं अशोकवृक्ष-प्रातिहार्य-धारक श्री सम्भवनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

सुर विविध पुष्प की वर्षा, वे करते तेरी अर्चा।

जब आतम से मन जोड़ा तब सम्भव ने भव छोड़ा ॥३६॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं सुर-पुष्पवृष्टि-प्रातिहार्य-धारक श्री सम्भवनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

जो चौंसठ चामर ढुरते, वे जन-जन का मन हरते।

जो सम्भव मार्ग पुजारी, बन जाता वह अविकारी ॥३७॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं चतुःषष्ठि-चामर-प्रातिहार्य-धारक श्री सम्भवनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

तव पीछे बनता घेरा, वह भामण्डल सुख डेरा।

मैं ढोल बजाकर आऊँ, श्री सम्भव के गुण गाऊँ ॥३८॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं भामण्डल-प्रातिहार्य-धारक श्री सम्भवनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

जो ध्वनियाँ हैं अलबेली, सुन मिटती सब बैचेनी।

वे अतिशय दुन्दुभि बाजे, सुन शक्र सुरासुर नाचे ॥३९॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं दुन्दुभि-प्रातिहार्य-धारक श्री सम्भवनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

जो तुम पर छत्र चढ़ावे, वे बन्धन से बच जावे।

ये धवल छत्र मनहारी, श्री सम्भव सुख भण्डारी ॥४०॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं छत्रत्रय-प्रातिहार्य-धारक श्री सम्भवनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

तव दिव्य ध्वनि जब होती, वह लगती ज्यों हो मोती।

हे सम्भव भविजन पाने, वे आते तव गुण गाने ॥४१॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं दिव्यध्वनि-प्रातिहार्य-धारक श्री सम्भवनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

है सिंहासन छवि वाला, यह मिला यदा अघ टाला।

हैं सम्भव शिव के माली, हो पूजा से खुशहाली ॥४२॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं सिंहासन-प्रातिहार्य-धारक श्री सम्भवनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

पंचकल्याणक के ५ अर्घ्य

ज्ञानोदय

फाल्गुन शुक्ला आठम के दिन, स्वर्ग लोक तज आये थे।
देवों द्वारा सज्जित नगरी, श्रावस्ती को भाये थे॥
स्वप्न देखकर माता ने भी, जान लिया श्री सम्भव जी।
गर्भ पधारे सो कल्याणक, पूजा सुर ने तत्क्षण ही॥

(दोहा)

हम भी पूजे आपका, कल्याणक यह आज।
कर्म नाश का और क्या, इससे बढ़कर काज॥४३॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं गर्भ-कल्याणक-मण्डित श्री सम्भवनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

ज्ञानोदय

जैसे ही श्री सम्भव प्रभु ने, इस भू पर अवतार लिया।
दुख के दिन तब फिरे शीघ्र थे, सबने तव गुणगान किया॥
दिन दूनी अरु रात चौगुनी, सुख की लहरें लहराई।
कार्तिक शुक्ला पूनम के दिन, सबने पूजा रचवाई॥

(दोहा)

जन्म महत्ता जब सुनी, ललचे मेरे नेत्र।
कल्याणक को देखने, आऊँ जन्म सुक्षेत्र॥४४॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं जन्म-कल्याणक-मण्डित श्री सम्भवनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

ज्ञानोदय

मगसिर का वह अन्तिम दिन था, अन्तिम गति को पाने की।
ठानी थी जब सम्भव जिन ने, निज स्वरूप में आने की॥
विघटन देखा मेघों का तो, भव भोगों की नश्वरता।
समझ सुदीक्षा धार तपों में, अहो बढ़ाई तत्परता॥

(दोहा)

मनमोहक यह अर्घ ले, मनमोहक के पाद।
अर्पण कर मैं चाहता, संभव प्रभु तव साथ ॥४५॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं तपः-कल्याणक-मण्डित श्री सम्भवनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

ज्ञानोदय

शाल वृक्ष के नीचे सम्भव, द्वन्द्व-फन्द से दूर हुए।
शुक्ल ध्यान के बल से घातक कर्म सभी चकचूर हुए॥
मैंने भी जब सुना आपने, ज्ञान पाँचवाँ पाया है।
मुँह में पानी भर आया सो, अर्घ चढ़ाने आया मैं॥

(दोहा)

कार्तिक कृष्णा चौथ को, चार घातिया नाश।
अमिट चतुष्टय प्राप्त कर किया मोक्ष को पास ॥४६॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं ज्ञान-कल्याणक-मण्डित श्री सम्भवनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

ज्ञानोदय

अहो अदेही अकल बने हैं, कल-कल भव की आज मिटी।
जन्म-जन्म की सभी तपस्या, सम्भव तेरे आज फली।
कर्म शत्रु अब भूल कभी आ, धावा बोल न पावेगा॥
भव्य तभी तो मोह मिटाने, गीत आपके गावेगा॥

(दोहा)

चैत्र शुक्ल षष्ठी रही, मोक्ष गये भगवान।
अष्ट गुणों को पा लिया, बनकर सिद्ध महान ॥४७॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं मोक्ष-कल्याणक-मण्डित श्री सम्भवनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

अनन्तचतुष्टय के ४ अर्घ्य

(लय—शांतिनाथ मुख.......)

मिटा घाति का बन्धन सारा।
तब पाया था ज्ञान सु प्यारा ॥
उसी ज्ञान का प्यासा आया।
तुम्हें पूज मन अति हरषाया ॥४८॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं अनन्तज्ञान-गुणधारक श्री सम्भवनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

अमित सुदर्शन पाया जैसा।
पा नहिं सकता कोई वैसा॥
तीन लोक आलोकित होते।
अर्घ चढ़ा हम पातक खोते ॥४९॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं अनन्तदर्शन-गुणधारक श्री सम्भवनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

पंचेन्द्रिय से नहीं उपजता।
कर्म नाश से ही जो मिलता॥
सम्भव तुमने वह सुख पाया।
सो मैं पूजन करने आया ॥५०॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं अनन्तसुख-गुणधारक श्री सम्भवनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

नहिं सीमित नहिं अन्त रहा है।
ऐसा तेरा वीर्य कहा है॥
छम-छम-छम-छम नाचूँ गाऊँ।
सम्भव तुमको अर्घ चढ़ाऊँ ॥५१॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं अनन्तवीर्य-गुणधारक श्री सम्भवनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

१८ दोष से रहित के १८ अर्घ्य

(छन्द-ज्ञानोदय)

इष्ट मिष्ट सब भोजन कर-कर, हार गया घबराया हूँ।
किन्तु क्षुधा नहिं शान्त हुई सो, शरण आपकी आया हूँ॥
भूख विजेता क्षुधा रोग को, जीत बने अरहन्त प्रभो।
सम्भव स्वामी पूजा कर मैं, बन जाऊँ गतबन्ध विभो॥५२॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं क्षुधादोष-रहित श्री सम्भवनाथजिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

प्यास दुःख से व्याकुल होकर, क्या-क्या अब तक पी डाला।
फल में लेकिन दुख ही पाये, जीवन करके हा! काला॥
तृषा रोग को आत्मामृत पी शान्त किया है तृप्त हुए।
त्रिभुवन पूजित सम्भव प्रभु तव पूजा से हम तृप्त हुए॥५३॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं तृषा-दोष-रहित श्री सम्भवनाथजिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

इहभव परभव आदिक सातों, भय भी हो भयभीत अरे।
भाग गये हैं नहिं लौटेंगे, अहो आप निर्भीक बने॥
सम्भव प्रभु ने देह स्नेह अरु, मूर्च्छा को भी छोड़ दिया।
तब तो हमने अर्घ चढ़ाकर, तुमसे मन को जोड़ लिया॥५४॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं भय-दोष-रहित श्री सम्भवनाथजिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

वैरी भी आ आप चरण में, हो जाता प्रणिपात अहो।
गतद्वेषी तव महिमा की हम, क्या कह सकते बात कहो॥
द्वेष नहीं सो द्वेष मिटाने, हम तो प्रतिदिन पूजेंगे।
वैरभाव तज अर्चेंगे तो, भव में क्यों हम जूझेंगे॥५५॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं द्वेष-दोष-रहित श्री सम्भवनाथजिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

पुत्र-पौत्र को परिजन पुरजन, सबको ही जब छोड़ दिया।
राग करेंगे किससे सम्भव, निज से निज को जोड़ लिया॥
मैं तो तेरे चरण-कमल का, भौंरे सा बन अनुरागी।
अर्घ चढ़ाकर मैं भी स्वामी, शिव जाऊँ बन गतरागी॥५६॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं राग-दोष-रहित श्री सम्भवनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

क्षोभ उपजता मोह उदय से, मोह उदय का नाम नहीं।
क्यों आवे फिर क्षोभ किसी पर, मूर्च्छा का कुछ काम नहीं॥
सम्भव-सम्भव रटता जाऊँ, सम्भव सम बन जाऊँगा।
अर्घ चढ़ाने पाद-पद्म में, निशदिन क्यों नहिं आऊँगा ॥५७॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं मोह-दोष-रहित श्री सम्भवनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

अभ्यन्तर अरु बाह्य परिग्रह, चेतन तथा अचेतन जो।
छोड़ दिये तो चिन्ता हो फिर, किसकी प्रभु तव चेतन को॥
चिन्तन से भी दूर हुए सो, सम्भव तुम भव त्यागी हो।
इसीलिए मैं अर्घ चढ़ाऊँ, आप चरण अनुरागी हो ॥५८॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं चिन्ता-दोष-रहित श्री सम्भवनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

नहीं पड़ेगी कभी झुर्रियाँ, जर-जर नहिं हो तन तेरा।
भरी जवानी जैसे वपु में, रहे हमेशा सुख डेरा॥
जरा दोष के नाशक सम्भव, तेरी पूजन करने से।
बने असम्भव कार्य शीघ्र ही, सम्भव के पद झुकने से॥५९॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं जरा-दोष-रहित श्री सम्भवनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

औदारिक इस तन में ही तो, रोग उपजते विविध हहा!।
सम्भव जिन का तन औदारिक, किन्तु न रोग उपजता वा!॥
अतः निरोगी आप चरण में, निरोगता पा जाने को।
अष्ट-द्रव्य का थाल चढ़ाऊँ, सिद्ध अवस्था पाने को ॥६०॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं रोग-दोष-रहित श्री सम्भवनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

बाल-बाल या बालमरण को, बाल सुपण्डित-पण्डित को।
नाश आपने प्राप्त किया है, मरण सुपण्डित-पण्डित ओ।
मृत्यु रहित हे मृत्यु विजेता!, अन्तक का भी अन्त करूँ।
इसी भाव से सम्भव तुमको, अर्घ सुअर्पण आज करूँ ॥६१॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं मरण-दोष-रहित श्री सम्भवनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

तव वपुषा से स्वेद कभी भी, नहिं आएगा जीवन में।
इसीलिए तो तव पूजा से, मिट जाते भव बन्धन है॥
सम्भव तुम ही महाऋषीश्वर, महायमीश्वर सुखमय हो।
महा-मनोहर अर्घ चढ़ाकर सुख पाऊँ मैं शिवमय हो ॥६२॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं स्वेद-दोष-रहित श्री सम्भवनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

नहिं मिलता है मन का यदि तो, खेद-खिन्न हो जाता है।
नहीं बचा है मन तेरे सो, खेद न दिल में आता है॥
खेद रहित है सम्भव स्वामी, कोटि-कोटिशः वन्दन है।
अर्घ चढ़ाऊँ पूज्यपाद मैं, जीवन हो मम चन्दन ये ॥६३॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं खेद-दोष-रहित श्री सम्भवनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

जाति ज्ञान कुल तन के मद को, तुमने मूल मिटाया है।
शेष मदों का नाम मात्र भी, अहो नहीं बच पाया है॥
इसीलिए हे सम्भव स्वामी, हमने तुमको पूजा है।
तव सम प्रभुवर तीन लोक में, कोई भी नहिं दूजा है ॥६४॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं मद-दोष-रहित श्री सम्भवनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

रति कषाय का नाश हुआ सो, तव पद में रति जागी है।
सम्भव जिन जी मोक्ष पधारे बन करके बड़भागी है॥
अहो आपके समक्ष रति की, दाल नहीं गल पायी है।
सो रति स्वामी ने भी आकर, पूजन शीघ्र रचायी है ॥६५॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं रति-दोष-रहित श्री सम्भवनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

चेतन की अरु जड़ पुद्गल की, पर्यायों को जान रहे।
विस्मय हो फिर किसे देखकर, आत्मामृत का पान करे॥
अनन्त गुण के कोष सुसम्भव, तुम सम जग में कौन रहा।
गुण गाने का विचार कर भी, होना पड़ता मौन हहा! ॥६६॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं विस्मयदोषरहित श्री सम्भवनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

निद्रा प्रचला, निद्रा-निद्रा, प्रचला-प्रचला स्त्यान रही।
सबको नाशा सम्भव प्रभु ने, तब पायी थी आत्ममही॥
रहे जागते सो स्वामी नहिं, नींद कभी भी आएगी।
मनभावन शुभ अर्घ चढ़ाओ शिव ललना मिल जाएगी ॥६७॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं निद्रा-दोष-रहित श्री सम्भवनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

गर्भ जन्म से जन्मे फिर भी, परमौदारिक देह हुआ।
सप्त-धातु से रहित बना सो, नहीं जन्म नहिं खेद कहा॥
जन्म दोष से रहित सुसम्भव रत्नत्रय से पूर्ण हुए।
जिसने पूजा एक बार भी, पाप कर्म सब चूर्ण हुए ॥६८॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं जन्म-दोष-रहित श्री सम्भवनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

नहीं इष्ट है अनिष्ट कोई, नहीं रहा प्रभु तेरा है।
वियोग हो फिर किसका किसके, निज में नित्य बसेरा है॥
सम्भव तेरे शोक कर्म का, उदय कभी नहिं होवेगा।
अर्घ चढ़ाकर भक्त आपका, मोक्ष बीज को बोवेगा ॥६९॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं शोक-दोष-रहित श्री सम्भवनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

धवल ध्यान से योग भाव भी, मृत्युराज की गोद गया।
वही स्थान अब धवलकूट बन, भव्यों के अघ सोख रहा॥
श्रावस्ती की शान लोक में, त्रिभुवन पूजित अर्चित है।
अर्घ चढ़ाऊँ अद्यावधि भी, तीन लोक में चर्चित हैं ॥७०॥

ॐ ह्रीं श्री धवलकूटेभ्यो नमः अर्घ्यं...।

स्वर्णासन पर हेमासन पर, रजतासन पर सम्भव के।
स्वर्ण बिम्ब कलधौत बिम्ब जो, सुखकारी हैं सुखमय हैं॥
उन सबके पद रजत थाल में, चित्ताकर्षक द्रव्य सजा।
तुम्हें चढ़ावें प्रभो हमारे हो, जावें अब पाप विदा ॥७१॥

ॐ ह्रीं श्री क्लीं ऐं अर्हं श्री सम्भवनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

पूर्णार्घ्य

(घत्ता)

हे सम्भव जिन जी, तुम ही शिव की, राह दिखाते हम सबको।
सो उस पर चलकर, भव को तजकर, पा जाते हैं शिव सुख को॥
जल अक्षत पावन, ले मनभावन, नैवज अर्घ बनाया है।
तव चरण चढ़ाने, पाप मिटाने, भक्त आपका आया है ॥७२॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री सम्भवनाथ-जिनेन्द्राय नमः पूर्णार्घ्यं...।

जाप्य—ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री सम्भवनाथ-जिनेन्द्राय नमः।

(९/२७/१०८)

जयमाला (दोहा)

जयमाला से जय मिले, कर्म शत्रु पर शीघ्र।
इसीलिए गाऊँ प्रभो, कषाय नहिं हो उग्र ॥१॥

(ज्ञानोदय)

धवलकूट पर सम्भव जिन ने, ध्यान सुधवल लगाया था।
अघाति रज को पूर्ण उड़ाकर, धवलिम पद को पाया था॥
योग क्रिया को रोक यहीं, गतयोग अवस्था पाई थी।
सिद्धि वधू तब आप गले, वरमाल डालने आई थी ॥२॥
तुमको पा कृतकृत्य हुई वह, छोड़ कभी नहिं जावेगी।
अमित काल तक बनी रहे नहिं, और किसी को चाहेगी॥
श्रावस्ती नगरी के गौरव, मात सुषेणा लाल रहे।
माणिक - मोती - हीरा - पन्ना, में नहिं ऐसा लाल अरे ॥३॥
अहो आपके जन्म मात्र से, भू पर सुख साम्राज्य हुआ।
इसीलिए तो सम्भव स्वामी, सार्थक तेरा नाम हुआ॥
कर्मराज के कलंक सारे, मिटा बने अकलंक प्रभो।
मोह मल्ल की सेना पर पा, विजय बने निकलंक विभो ॥४॥

भव के कारण मिथ्यात्वादिक, तीनों का दम नाश किया।
सम्यक्त्वादिक रत्नत्रय को, पूरा कर शिव पास किया॥
तीजे तीर्थंकर प्रभु तुमने, तीन लोक को जीत लिया।
त्रिभुवन विजयी मृत्युराज को, क्षण भर में भयभीत किया ॥५॥
देह स्वर्णमय भाव स्वर्णमय, सोने सम ही जीवन है।
इस कारण ही अब नहिं जन्मो, आप पुनः इस भव वन में॥
वेदनीय के साथ आयु अरु, नाम गोत्र जो कर्म रहे।
जली जेवड़ी सम कुछ नहिं ये, कर सकते हैं हर्ज अरे ॥६॥
सब कर्मों का परदादा जो, मोह न टाँग अड़ायेगा।
तो कैसे वह कर्म असाता, अपना रंग दिखायेगा॥
कर्म विनाशक शुक्ल ध्यान को देख कलेजा काँप गया।
धूल मिला सो बोरी बिस्तर, उठा बिचारा भाग गया ॥७॥
मोहराज की दशा देखकर, काँपा ज्ञानावरणी भी।
अन्तराय का अनुचर बनकर, दर्शन का आवरणी भी॥
मतलब तीनों घाति कर्म भी, मोह कर्म के साथ चले।
लौट न आवे क्योंकि सुनो अब, राग - द्वेष के पाँव गले ॥८॥
फल में केवलज्ञान दिवाकर, झग-झग करता प्रकट हुआ।
तीन लोक का अवलोकन भी, सम्भव प्रभु के सहज हुआ॥
क्षुधा तृषादिक दोष अठारह, झाँक न पावे भूल कभी।
परमौदारिक बनी देह सो, घट-बढ़ होगी नहीं कभी ॥९॥
सात ऋद्धि रस गारव तजकर, गौरव से परिपूर्ण हुए।
ज्ञानादिक मद जीत आपने, निर्मद हो अघ चूर्ण किये॥
मन वच तन के दण्डों को तज, पापों से नहिं दण्डित हो।
इसीलिए तो अदण्डधर से, सम्भव जिन तुम वन्दित हो॥१०॥
तीन अशुभ लेश्या से बचकर, शुभ लेश्या से दूर हुए।
अहो अलेश्यक बनकर ही तो, शाश्वत सुख के पूर हुए॥

अहो अलौकिक दीपक तुम हो, अहो अनोखे दीपक हो।
मोहमयी तुम अंधकार के, नाशक अद्भुत दीपक हो ॥११॥
तब तो सारे सन्त-साधु भी, नित्य आपके गुण गाते।
तथा आपके पाद-पद्म पा, पाप पंक से बच जाते॥
माया जेता मान विजेता, क्रोधानल के दाहक हो।
मन्मथ जेता! कामदेव के, मद के तुम संहारक हो ॥१२॥
कामधेनु सम होकर के भी, काम वेदना नाश करो ।
मदनदेव को जीत लिया सो, शिव ललना को पास करो॥
कल्पवृक्ष हो कल्पित देते, तथा अकल्पित भी मिलता।
अचरज है पर आप समागम, चित्त कल्पना को दलता॥१३॥
आप भक्ति ही कामदुही है, कामदाहिनी, कामजयी।
बनने की पा शक्ति आपसे, भक्त बनेगा मोक्षमयी॥
सोने सी तव काया जिसमें, लाल कमल से ओष्ठ रहे।
छवि देखूँ तो लगता तेरे, जैसा रूप न और रहे ॥१४॥
कृष्ण नाग से काले काले, घूँघर वाले केश रहे।
तीन लोक में तुमसे बढ़कर, सुन्दरता नहिं शेष अरे॥
लगता तेरे अंतरंग की, सभी कालिमा बाहर आ।
कहती है तुम शुद्ध हुए हो, बुद्ध हुए अविरुद्ध अहा ॥१५॥
नासा को तो मात्र देखकर, आशाएँ सब भाग चली।
निराश होकर बेचारी वे, आप चरण की दास बनी॥
सो नहिं उपजे कभी आपके, तीन-काल में आशाएँ।
धन्य-धन्य हो स्वामी मेरी मिट जाएँ सब आशाएँ ॥१६॥
कई बार हे प्रभो आपको, मैंने पूजा अर्चा की।
शीश झुकाकर गुण गाए, तव जीवन की ही चर्चा की॥
दर्शन करके गद्गद् होकर, वैभव सारा छोड़ दिया।
और तपस्या करके मैंने, तन से नाता तोड़ दिया ॥१७॥

लेकिन तेरे साथ हाय प्रभु रागी को भी स्थान दिया।
तब तो मुझको अब तक नहिं हा! सिद्धशिला का वास मिला॥
एक म्यान में दो तलवारें, नहीं रही नहिं रह पावे।
यदि रख दे तो दोनों में से, टूट सुनिश्चित इक जावे ॥१८॥
यही रहा है अकाट्य कारण, भव भटकन का मेरे हा!
जन्म-मरण का दुःख-दर्द का, मिथ्यातम के डेरे का।
मति जागी अब मुझमें सो मैं, उर से सबको अलग करूँ।
और आपकी श्रद्धा कर मैं, मिथ्यातम का वमन करूँ॥१९॥
अहो आज मैं धन्य हुआ हूँ, वीतराग के दर्श मिले।
वीतराग का मार्ग मिला सो, नयन युगल भी आज खिले॥
हृदय पटल पर केवल तेरी, वीतराग छवि अंकित कर।
तेरी श्रद्धा, तेरी अर्चा, करूँ भक्ति बस तेरी अब ॥२०॥
जब तक शिव की प्राप्ति न होवे, तब तक तेरे पाद युगल।
मेरे उर में रहे विराजित, भक्ति रहे बस आप चरण॥
इसी भाव से पूर्ण करूँ यह, जयमाला तव गुणगण की।
क्षमा करो कुछ गलत हुआ हो विनती है यह मम मन की॥२१॥
ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री सम्भवनाथ-जिनेन्द्राय नमः जयमाला पूर्णार्घ्यं...।

आशीर्वाद

सम्भव प्रभु की भक्ति भाव से, पूजा जो भी रचवावे।
भव-भव के सब दुःख नाशकर, निज में ही वह रम जावे॥
अन्तिम भव को पावे भव में, लौट नहीं वह आवेगा।
सिद्ध शुद्ध चैतन्य अवस्था शाश्वत सुख को पावेगा॥
इत्याशीर्वादः परिपुष्पांजलिं क्षिपामि/क्षिपेत्।

श्री अभिनंदननाथ विधान

पीठिका

(चौपाई)

तुम अमरपुरी के नाथ रहे, सब अमर आपके साथ रहे।
नृप संवर के तुम नंदन हो, तुम मेट रहे आक्रन्दन को ॥१॥

तव नाम रहा अभिनन्दन है, द्वय चरणों मेरा वन्दन हैं।
श्री सिद्धार्था तव मात रही, जो नारी में सिरताज कही ॥२॥

तुम विजय अनुत्तर से आए, सौ इन्द्र आपके गुण गाए।
जब साकेती में जनम हुआ, तब जीवन सबका चमन हुआ ॥३॥

सौधर्म इन्द्र तब आकर के, गिरि मेरु शिखर ले जा करके।
वसु सहस कलश से नहलाता, शुभ वृष के फल को बतलाता ॥४॥

जब दीक्षा लेने आप चले, नृप सहस आपके साथ चले।
उपवास पूर्ण जब तीन हुए, तुम आत्म ध्यान में लीन हुए ॥५॥

नृप इन्द्रदत्त दातार बना, दे अशन कमाया पुण्य घना।
तब वर्ष अठारह तप करके, चतुघाति कर्म का क्षय करके ॥६॥

शुभ उत्तम केवलज्ञान लिया, निज शुद्धातम का पान किया।
तब समवसरण में राजित हो, ज्यों नभ में रवि सम भासित हो ॥७॥

उपदेश दिया था भविजन को, हित मार्ग दिखाया जन-जन को।
त्रय लाख मुनीश्वर चरण रहें, त्रय लोक आपकी शरण रहे ॥८॥

त्रय अधिक शतक तव गणधर थे, जो आप मार्ग के अनुचर थे।
जब अचल तीर्थ पर आप गये, तब कर्म वहीं सब साफ हुये ॥९॥

फिर अमर हुए तुम अजर हुए, निर्नाम हुए निष्काम हुए।
निर्द्वन्द्व हुए गतमान हुए, निर्बन्ध हुए सुखवान हुए ॥१०॥

हे अभिनन्दन मैं नमन करूँ, मैं कषाय दल का दमन करूँ।
मैं आशिष लेकर आप चरण, यह विधान लिखकर आप शरण ॥११॥

मैं चलूँ आपके पथ पर ही, मैं रहूँ हमेशा निज पद ही।
मैं करूँ वन्दना कोटि बार, मैं पाऊँ वृष का पूर्ण सार ॥१२॥

परिपुष्पाञ्जलिं क्षिपामि/क्षिपेत्

विधान प्रारम्भ

स्थापना

(ज्ञानोदय)

सिद्धार्था माँ संवर पितु के, नयन सितारे अभिनंदन।
नगर अयोध्या इक्ष्वाकुकुल, गौरव का कर अभिनंदन॥
पूजा करने तुम्हें बुलाकर, उर आसन पर बिठलाऊँ।
आओ-आओ शीघ्र पधारो, पूजा करके हरषाऊँ॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री अभिनन्दननाथ जिनेन्द्र अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननं! ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री अभिनन्दननाथ जिनेन्द्र अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः! ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री अभिनन्दननाथ जिनेन्द्र अत्र मम सन्निहितो भव-भव वषट् सन्निधिकरणं!

अष्टक

स्फटिक रत्न की झारी में ये, उज्ज्वल जल भर लाया हूँ।
जन्म जरा मम मिट जावे यह, आशा लेकर आया हूँ॥
अभिनंदन तुम व्रत के बल से, जन्म - मरण के पार गये।
जल अर्पित कर तुमको पूजा, जल सम निर्मल भाव हुये॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री अभिनन्दननाथ-जिनेन्द्राय नमः जन्म-जरा-मृत्यु विनाशनाय जलं...।

कालागरु अरु मलयागिरि के चंदन से क्या मतलब है।
हे अभिनंदन आप चरण का मम जीवन में सम्बल है॥

फिर भी चंदन लेकर आया ताप भवों का मिट जावे।
और आप सम ताप रहित वह सौख्य ठिकाना मिल जावे॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री अभिनन्दननाथ-जिनेन्द्राय नमः संसार-ताप-विनाशनाय चंदनं...।

धवल सुसुन्दर अक्षत की मैं थाली भरकर ले आया।
आप चरण के दर्श किये तो, याद नहीं कुछ रह पाया॥
प्रभो भक्ति से पादपद्म की, पूजा कर हरषाया हूँ।
अभिनंदन जी धन्य हुआ मैं, धन्य हुआ हुलसाया हूँ॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री अभिनन्दननाथ-जिनेन्द्राय नमः अक्षय-पद-प्राप्तये अक्षतान्...।

कल्पवृक्ष के पुष्प गुच्छ ले तुमको अर्पित करता हूँ।
कामबाण के जेता जिनवर ब्रह्म भाव को वरता हूँ॥
सहस अठारह दोष रहित जो, रही अवस्था शैलेषी।
पूजा के फल में हे स्वामी बन जाऊँ बस तव भेषी॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री अभिनन्दननाथ-जिनेन्द्राय नमः कामबाण-विध्वंसनाय पुष्पं...।

मिष्ठान्नों को खा-खाकर भी, क्षुधा वेदना मिट न सकी।
भोजन नहिं तुम करते फिर भी, भूख व्याधि नहिं फटक सकी॥
हे जग आश्रय तब तो तुमको, नैवज अर्पित करता हूँ।
तन-मन यौवन जीवन सब कुछ, तुम्हें समर्पित करता हूँ॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री अभिनन्दननाथ-जिनेन्द्राय नमः क्षुधा-रोग-विनाशनाय नैवेद्यं...।

सहस-सहस मैं मणिमय दीपक, पाकर नहिं संतुष्ट हुआ।
ज्ञानमयी तव दीपक से मम, सम्यक् ज्ञान सुपुष्ट हुआ॥
दीपक अर्पित करके मैं अज्ञान तमस को मेट सकूँ।
और आप सम शाश्वत सुन्दर, प्रकाश से अब भेंट सकूँ॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री अभिनन्दननाथ-जिनेन्द्राय नमः मोहान्धकार-विनाशनाय दीपं...।

कर्मेन्धन को पूर्ण जलाने, भक्त चरण में आया है।
भक्ति गंध से अभिनंदन मम, मन-मंदिर महकाया है॥
सहज सुगंधित धूप बनाकर, आज चढ़ाऊँ तुमको मैं।
अष्टकर्म को जला दिया सो, शरण आप ही हमको है॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री अभिनन्दननाथ-जिनेन्द्राय नमः अष्टकर्म-दहनाय धूपं...।

काजू किसमिस खारक के ये, काँचन थाल भराते हैं।
आप भक्ति में झूम-झूमकर, भविजन चरण चढ़ाते हैं॥
मोक्ष महाफल की आशा में, भक्त आपको भेंट करे।
अभिनन्दन के पूजक ही तो, मुक्ति वधू से भेंट सके॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री अभिनन्दननाथ-जिनेन्द्राय नमः महा-मोक्षफल-प्राप्तये फलं...।

अक्षत चंदन दीपक पानी, पुष्प धूप फल नैवज को।
मिला बनाकर अर्घ्य मनोहर, चरण चढ़ाऊँ मैं अज[१] को॥
शाश्वत अक्षय अविनाशी पद में नियमित हे अभिनंदन।
मात्र प्रार्थना इतनी सुन लो, पूर्ण मिटे मम भव बन्धन॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री अभिनन्दननाथ-जिनेन्द्राय नमः अनर्घ-पद-प्राप्तये अर्घ्यं...।

प्रत्येक अर्घ्य

(दोहा)

पूजे आठों द्रव्य ले, अभिनंदन तव पाद।
कुछ गुण-गण को अर्घ दूँ पूर्ण करो मम साद॥

इति मण्डलस्योपरिपुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्/क्षिपामि

१. जो जन्म से रहित

जन्मातिशय के १० अर्घ्य

(लय—कहाँ गये चक्री.....)

तन है औदारिक पर तुमको, स्वेद न आता है।
तब तो अतिशय कहलाया यह, मुझे सुहाता है॥
छोड़ चरण मजबूरी से घर, जाना पड़ता है।
घर जाते ही तव पद आने, चित्त तड़फता है॥१॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं निःस्वेदत्व-जन्मातिशय-गुणधारक श्री अभिनन्दननाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं....।

निर्मल निर्मलतम है चेतन, तन भी निर्मल है।
वसुमदधारी भी पूजन कर, बनते निर्मद है॥
कुमुद खिले ज्यों देख चंद्र को, भविजन खिलते हैं।
अभिनंदन त्यों दर्श मात्र से, मानस खिलते हैं॥२॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं निर्मलत्व-जन्मातिशय-गुणधारक श्री अभिनन्दननाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं....।

दुग्ध फेन सा रक्त सभी में, प्रेम बताता है।
सबके हित की करी भावना, तब तो भाता है॥
अभिनंदन को दिवस - रात मैं, अर्चूं अर्चूंगा।
पूजा करके आठ पहर मैं, चर्चूं चर्चूंगा॥३॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं क्षीरगौररुधिरत्व-जन्मातिशय-गुणधारक श्री अभिनन्दननाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं....।

प्रथम कहा संस्थान देह का, उसमें चेतन जो।
रहा अमूर्तिक रूप नहीं है, सुख का केतन वो॥
तीर्थ शिरोमणि के चरणों जो, शीश झुकायेगा।
तीर्थंकर बन अभिनंदन सम, ईश कहायेगा॥४॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं समचतुस्त्र-संस्थान-जन्मातिशय-गुणधारक श्री अभिनन्दननाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं....।

सुंदरता है अनुपम अद्भुत, तीर्थंकर की जो।
हो नहिं सकती तीन लोक में, चाहे कोई हो॥
तीस पक्ष तक रत्न बरसते, माँ के आँगन में।
वीणा वादन कर जो पूजे, होगा नन्दन में॥५॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं सौरूप्य-जन्मातिशय-गुणधारक श्री अभिनन्दननाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं....।

कमल चमेली गुलाब की भी, खुशबू जीती है।
तब तो मृत्युञ्जयी आप में, जनता रीझी है॥
चुन - चुन लाऊँ कल्पवृक्ष के, पुष्पों के गुच्छे।
तीन लोक में अभिनंदन हैं, अच्छों में अच्छे॥६॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं सौगन्ध्य-जन्मातिशय-गुणधारक श्री अभिनन्दननाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं....।

एक सहस वसु लक्षण से तुम, सुन्दर लगते हो।
मुनिपालक हे गणनायक तुम, अघ को दहते हो॥
अंगूठे में स्थापित अमृत, पीते बचपन में।
अभिनंदन सो हम तो पूजे, बचपन-पचपन में॥७॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं सौलक्षण्य-जन्मातिशय-गुणधारक श्री अभिनन्दननाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं....।

नूतन कोंपल पल्लव से भी, कोमल कोमलता।
पर तव बल से तीन लोक की, हारी बलवत्ता॥
अभिनंदन तव चरण छोड़कर, कहीं न जाऊँगा।
जब तक शिव नहिं होगा तब तक, तव पद आऊँगा॥८॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं वज्रवृषभनाराचसंहनन जन्मातिशय गुणधारक श्री अभिनन्दननाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं....।

नाप नहीं है, तौल नहीं है, अमित वीर्य पाया।
दर्श किये तो दुःख दूर हो, चेतन महकाया॥

लँगड़ा भी तव अर्चा करके, पर्वत चढ़ता है।
अभिनंदन का भक्त पाप तज, शिव पथ बढ़ता है॥९॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं अप्रमितवीर्य-जन्मातिशय-गुणधारक श्री अभिनन्दननाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं....।

मीठी लगती, प्रिय भी लगती, तेरी वाणी जो।
मन हरती है क्योंकि आप ही, मोक्ष निशानी हो॥
जल फल आदिक उत्तम-उत्तम, द्रव्य सजा करके।
चरण चढ़ाऊँ अभिनंदन के, ढोल बजा करके॥१०॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं प्रियहितवादित्व-जन्मातिशय-गुणधारक श्री अभिनन्दननाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं....।

केवलज्ञानातिशय के १० अर्घ्य

(दोहा)

चारों दिशि में चार सौ, कोशों तक नहिं ईति।
नहिं होवे दुर्भिक्ष भी, और न होवे भीति॥
अभिनंदन अभिवन्द्य हो, अभिनंदन के योग्य।
अभिनंदन मैं नित्य कर, बनूँ मोक्ष के योग्य॥११॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं गव्यूतिशत-चतुष्टय-सुभिक्षत्व-घातिक्षय-जातिशय-गुणधारक श्री अभिनन्दननाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं....।

नभतल में हो आपका, गमन बिना आधार।
अतिशय केवलज्ञान का, अभिनंदन सुख द्वार॥
तीन लोक त्रय काल में, पूजित हो तुम पूज्य।
गणधर ऋषिगण साधु में, मान्य रहे अधिपूज्य॥१२॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं गगनगमनत्व-घातिक्षय-जातिशय-गुणधारक श्री अभिनन्दननाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं....।

नहीं भुक्ति का भाव सो, मुक्ति रमण हो जाय।
जो पूजेंगे भाव से, भाग्य चमन हो जाय॥

अभिनंदन तुम लोक में, रहे धर्म के प्राण।
मोक्षमार्ग में आप ही, कहे गये हैं त्राण॥१३॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं भुक्त्यभाव-घातिक्षय-जातिशय-गुणधारक श्री अभिनन्दननाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं....।

मरते नहिं प्राणी कभी, तुमसे हे परमेश!।
घाति कर्म सब मिट गये, बने तभी सर्वेश॥
अभिनंदन तेरे चरण, शरण रहे त्रय लोक।
करूँ वंदना आपकी, मिटे क्लेश मम शोक॥१४॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं अप्राणिवधत्व-घातिक्षय-जातिशय-गुणधारक श्री अभिनन्दननाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं....।

कर न सके उपसर्ग जो, वैरी भी आ जाय।
विघ्न करेगा तो वही, आकुल हो भरमाय॥
अभिनंदन आनंद से, करके तेरे दर्श।
सार्थ हुए मम नेत्र सो, उर में भारी हर्ष॥१५॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं उपसर्गाभाव-घातिक्षय-जातिशय-गुणधारक श्री अभिनन्दननाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं....।

मुख तो केवल एक है, पर दिखता चहुँ ओर।
तीर्थंकर को ही मिले, अतिशय सुख की भोर॥
अभिनंदन जिनराज का, कूट रहा आनंद।
मोक्ष पधारे जब सुना, हुआ हमें आनंद॥१६॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं चतुर्मुखत्व-घातिक्षय-जातिशय-गुणधारक श्री अभिनन्दननाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं....।

जितनी विद्या लोक में, पायी तुमने देव।
अब तो मेरी हे प्रभो!, नैय्या को तू खेव॥
नाच-नाच अभिनन्द की, भक्ति करूँ दिन - रात।
कोटि-कोटि वंदन करूँ, रहूँ आपके साथ॥१७॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं सर्वविद्येश्वरत्व-घातिक्षय-जातिशय-गुणधारक श्री अभिनन्दननाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं....।

तेरी छाया ना पड़े, फिर भी पावें छाँव।
अभिनंदन की तो मिले, शाश्वत अक्षय ठाँव॥
सुरनर विद्याधर सदा, पूजे तेरे पाद।
फल में पावे मार्ग का, जो माना हैं खाद॥१८॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं अच्छायत्व-घातिक्षय-जातिशय-गुणधारक श्री अभिनन्दननाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं....।

पल-पल पलकें नहिं चलें, नेत्रों की अभिनंद।
तब तो पूजक के मिटे, जन्म-मरण के द्वंद्व ॥
चक्री-शक्री आपसे, विनती करके रोज।
तव प्रसाद से मोक्ष का, पथ लेते वे खोज॥१९॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं अपक्ष्मस्पन्दत्व-घातिक्षय-जातिशय-गुणधारक श्री अभिनन्दननाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं....।

नहीं बढ़े नाखून अरु, नील रत्न सम केश।
पूजा करके मैं अभी, पाऊँ तुम सा वेष ॥
रहूँ पूजता आपको, हे जिनवर अभिनंद।
प्रतिपल मैं हर श्वास में, छोड़ जगत के द्वंद्व॥२०॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं समान-नख-केशत्व-घातिक्षय-जातिशय-गुणधारक श्री अभिनन्दननाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं....।

देवोपनीतातिशय के १४ अर्घ्य

(ज्ञानोदय)

भाषा जो सर्वार्धमागधी, सुनकर भविजन समझ गये।
अपने मन की शंकाओं का, समाधान पा सुलझ गये ॥
अभिनंदन की छत्रच्छाया, मैंने पायी किस्मत से।
मिथ्यातम की छाया भी अब दूर हुई मम जीवन से ॥२१॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं सर्वार्धमागधी-भाषा-देवोपनीतातिशय-गुणधारक श्री अभिनन्दननाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं....।

पापी हो या पुण्यात्मा हो सबमें मैत्री भाव बना।
अभिनंदन प्रभु तब तो तेरे समवसरण यह आज बना॥
अभिनंदन की छत्रच्छाया, मैंने पायी किस्मत से।
मिथ्यातम की छाया भी अब दूर हुई मम जीवन से ॥२२॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं सर्वजनमैत्रीभाव-देवोपनीतातिशय-गुणधारक श्री अभिनन्दननाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं....।

षट्ऋतुओं के फल लग जाते, इक ऋतु में इक साथ सभी।
आप पधारो वहाँ स्वयं ही, देव करेंगे अतिशय जी ॥
अभिनंदन की छत्रच्छाया...॥२३॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं सर्वर्तुफलादिशोभित-तरु-परिणाम-देवोपनीतातिशय-गुणधारक श्री अभिनन्दननाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं....।

दर्पण जैसी रत्नमयी यह, भू हो जाती अभिनंदन।
देव वृन्द यह अतिशय करके, शत-शत करते अभिवंदन॥
अभिनंदन की छत्रच्छाया...॥२४॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं आदर्श-तल-प्रतिमा-रत्नमयी-देवोपनीतातिशय-गुणधारक श्री अभिनन्दननाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं....।

विहार करते जहाँ-जहाँ पर, वायु सदा अनुकूल बहे।
तीर्थंकर की महिमा है सो, विपक्ष सारे दूर रहे॥
अभिनंदन की छत्रच्छाया... ॥२५॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं विहरण-मनुगत-वायुत्व-देवोपनीतातिशय-गुणधारक श्री अभिनन्दननाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं....।

देख आपको परम-परम, आनंद नंद ही होता है।
जो पूजे आनंदित होकर, बीज मोक्ष के बोता है॥
अभिनंदन की छत्रच्छाया...॥२६॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं सर्वजनपरमानंदत्व-देवोपनीतातिशय-गुणधारक श्री

अभिनन्दननाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं....।

पवन जाति के देव धूल अरु, कंकड़ कण्टक पत्थर को।
दूर करें सो पूजा करके, भक्त मेटता चक्कर को॥
अभिनंदन की छत्रच्छाया, मैंने पायी किस्मत से।
मिथ्यातम की छाया भी अब दूर हुई मम जीवन से॥२७॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं वायुकुमारोपशमित - धूलिकण्टकादि-देवोपनीतातिशय-गुणधारक श्री अभिनन्दननाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं....।

गंध उदक की रिमझिम-रिमझिम, वृष्टि देव आ करते हैं।
जित इन्द्रिय तव गरिमा गा-गा, चरणाम्बुज में रमते हैं॥
अभिनंदन की छत्रच्छाया...॥२८॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं मेघकृत-गंधोदकवृष्टि-देवोपनीतातिशय-गुणधारक श्री अभिनन्दननाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं....।

ढोल नंगाड़े शहनाई मिल, एक साथ सब बजते हैं।
तीन लोक के प्राणी प्रभु पद, आ जाओ यह कहते हैं॥
अभिनंदन की छत्रच्छाया...॥२९॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं एतैतैति - चतुर्निकायामर - परस्पराह्वानन-देवोपनीतातिशय-गुणधारक श्री अभिनन्दननाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं....।

फूल-फलों से पत्तों से झुक, जाते हैं तब वृक्ष सभी।
तीर्थनाथ तुम जहाँ पधारो, मिट जाते प्रतिपक्ष सभी॥
अभिनंदन की छत्रच्छाया...॥३०॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं फल-भार-नम्र-शालि-देवोपनीतातिशय-गुणधारक श्री अभिनन्दननाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं....।

सभी दिशाएँ निर्मल होकर, आकर्षित कर लेती हैं।
प्रभु पद पा मन निर्मलकर लो, संदेशा यह देती हैं॥
अभिनंदन की छत्रच्छाया...॥३१॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं शरत्काल-वन्निर्मल-दिग्विभागत्व-देवोपनीतातिशय-गुणधारक श्री अभिनन्दननाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं....।

एक सहस दल पंकज प्रमुदित, पद के नीचे खिले-खिलें।
जो पूजेगा तीर्थंकर को, जीवन उसका खुले खिले॥
अभिनंदन की छत्रच्छाया, मैंने पायी किस्मत से।
मिथ्यातम की छाया भी अब दूर हुई मम जीवन से॥३२॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं पादन्यासे-पद्मानि-कृत-देवोपनीतातिशय-गुणधारक श्री अभिनन्दननाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं....।

विकार मिटते गगनाँगन के, यह भी अतिशय सुर करके।
कहते विकृत भाव मिटा दो, इनके पद में झुक करके॥
अभिनंदन की छत्रच्छाया...॥३३॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं शरद्-मेघवन्निर्मलगगनत्व-देवोपनीतातिशय-गुणधारक श्री अभिनन्दननाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं....।

झग-झग करते धर्मचक्र जो, तेरे आगे चलते हैं।
मानों धर्म पताका इनसे, फहर रही यह कहते हैं॥
अभिनंदन की छत्रच्छाया...॥३४॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं धर्मचक्रचतुष्टय-देवोपनीतातिशय-गुणधारक श्री अभिनन्दननाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं....।

अष्ट प्रातिहार्य के ८ अर्घ्य

(श्री वीर महा अतिवीर...)

वह वृक्ष तजेगा शोक, जिसके नीचे जा।
तुम बैठोगे अभिनंद, पूजूँ पूज्य महा॥
यह प्रातिहार्य जग पूज्य, सबका चित्त हरे।
जो पूजेगा इक बार, तेरा शिष्य रहे॥३५॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं अशोकवृक्ष-प्रातिहार्य-मण्डित श्री अभिनंदननाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

ले कल्पवृक्ष के फूल, वर्षा सुर करते।
जब समवसरण अभिनंद, आता भू पर रे॥

हे तीर्थ शिरोमणि देव, अवसर पाया ये।
सो पूजा करके आज, भाग्य जगाया है॥३६॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं सुरपुष्पवृष्टि-प्रातिहार्य-मण्डित श्री अभिनंदननाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

ये चौंसठ चामर देव, तुम पर ढोर रहे।
जो चौंसठ ऋद्धि मुनीश, चरणों लोट रहे॥
मम अभिनंदन जग पूज्य, महिमा कौन कहे।
गुण गाते ऋषि अनगार, गाकर मौन रहे ॥३७॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं चतुःषष्ठि चामर-प्रातिहार्य-मण्डित श्री अभिनंदननाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

प्रभु भामण्डल छवि आज, मन को मोह रही।
ओ तुम सम आनंददाय, जग में कौन कहीं॥
मम भव मण्डल हो नाश, तेरी अर्चा से।
मिट जावे दुख संताप, तेरी चर्चा से॥३८॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं भामण्डल-प्रातिहार्य-मण्डित श्री अभिनंदननाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

शुभ दुन्दुभि बाजे आज, तव यश गाते हैं।
वे कहते आओ शीघ्र, पथ बतलाते ये॥
इस प्रातिहार्य को देख, मन ललचाया है।
सो अभिनंदन तव पाद, राग बढ़ाया है ॥३९॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं दुन्दुभि-प्रातिहार्य-मण्डित श्री अभिनंदननाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

तव छत्र रहे जो तीन, त्रिभुवन वैभव को।
ये बतलाते अभिनंद, निज के अनुभव को॥
पा मोक्ष गये जिनराज, लौट न आयेंगे।
जो लोट-पोट हो पाद, सुख को पायेंगे॥४०॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं छत्रत्रय-प्रातिहार्य-मण्डित श्री अभिनंदननाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

सुन दिव्यध्वनि का नाद, संशय हटता है।
तव वाणी सुनने चित्त, नित्य तरसता है॥
मम मन में है अति हर्ष, दर्शन पाये हैं।
अभिनंदन तेरे भक्त, अर्घ चढ़ाये ये॥४१॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं दिव्यध्वनि-प्रातिहार्य-मण्डित श्री अभिनंदननाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

यह सिंहासन है श्रेष्ठ, मणिमय कंचन का।
अभिनंदन अधर विराज, जीवन चंदन सा॥
तव डेरे में त्रय लाख, श्रावक भक्त रहे।
हम भक्ति करें दिन रात, पद आसक्त रहे॥४२॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं सिंहासन-प्रातिहार्य-मण्डित श्री अभिनंदननाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

पंचकल्याणक के ५ अर्घ्य

ज्ञानोदय

जैसे सूर्य उदय के पहले, मोहक लाली भू आती।
वैसे गर्भ सुधारण पहले, रत्नमयी भू हो जाती॥
और स्वप्न से मिले सूचना, आप गर्भ में आए हैं।
अहो अलौकिक अभिनन्दन की, हम सब पूज रचाए हैं॥

(दोहा)

शुक्ल छठी वैशाख की, गर्भ पधारे धीर।
अभिनंदन की अर्चना, मेटे भव की पीर ॥४३॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं गर्भ-कल्याणक-मण्डित श्री अभिनंदननाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

ज्ञानोदय

शंख ध्वनि से सिहंनाद से, भेरी के बज जाने से।
घण्टे की ध्वनि सुनकर चारों जाति सुरासुर जागे थे॥
आप जन्म की तीन लोक में, बधाइयाँ इक साथ बजी।
अभिनंदन पद अर्घ चढ़ाकर, कलियाँ उर की आज खिलीं॥

(दोहा)

बारस शुक्ला पूज्य थी, माह रहा था माघ।
जन्म देखकर लोक ने, पायी पुण्य पराग॥४४॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं जन्म-कल्याणक-मण्डित श्री अभिनंदननाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

ज्ञानोदय

देखा जब गंधर्व नगर का, नाश विरति का उदय हुआ।
माघ शुक्ल की बारस के दिन, दीक्षा ले मन सदय हुआ॥
एक सहस नृप चले साथ में, इन्द्रदत्त ने दान दिया।
वर्ष अठारह करी तपस्या, सिद्ध प्रभु को नमन किया॥

(दोहा)

कल्याणक यह तीसरा अभिनंदन का देख।
अर्घ चढ़ाऊँ पूज्य के पद में सिर को टेक॥४५॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं तपः-कल्याणक-मण्डित श्री अभिनंदननाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं....।

ज्ञानोदय

प्रकट हुआ था ज्ञान पाँचवाँ, धर्म सभा की रचना कर।
सफल बनाया कुबेर ने प्रभु, तुमको उर में अपनाकर॥
अभिनंदन का कल्याणक सुन, मन की कलियाँ खिल आई।
दर्शन करके पूजन की तो, चेतनता मम मुस्काई॥

(दोहा)

पौष शुक्ल की चौदशी, रहा सुसायंकाल।
पाया प्रभु ने ज्ञान को, पूजूँ दे दे ताल॥४६॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं ज्ञान-कल्याणक-मण्डित श्री अभिनंदननाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं....।

ज्ञानोदय

मोक्ष सुना अभिनंदन का तो, देव सुरासुर झट आए।
बजा-बजाकर ढोल ढमाके, नाच-नाचकर हर्षाए॥
महा महोत्सव रचवा सबने, कोटि-कोटिशः नमन किया।
और आप सम बनने हमने, आप मार्ग पर गमन किया॥

(दोहा)

वैशाखी शुक्ला रही, बनी सप्तमी पूज्य।
जिसने पूजा भव्य वह, बना लोक में पूज्य॥४७॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं मोक्ष-कल्याणक-मण्डित श्री अभिनंदननाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

अनंत-चतुष्टय के ४ अर्घ्य

(नरेन्द्र)

अमित ज्ञान को पाकर तुमने, अमिट अमित सुख पाया।
अभिनंदन सम ज्ञान सुपाने, भक्त चरण में आया॥
तीन काल त्रय लोक आपके, झलक गये सो ज्ञानी।
अर्घ चढ़ाकर भक्त आपका, बन जावे निर्मानी॥४८॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं अनंतज्ञान-गुण-धारक श्री अभिनंदननाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

अनंतदर्शन उदित हुआ जो, कभी न मिटेगा स्वामी।
कर्म दूसरा हार गया तब, आप बने जब ध्यानी॥

नौ भेदों को लेकर ऐसा, भागा लौट न देखा।
तब अभिनंदन आप भक्त को, नहीं पाप ने देखा ॥४९॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं अनंत-दर्शन-गुणधारक श्री अभिनंदननाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं....।

अक्ष रहित हैं कर्म अपेक्षा, नहिं जिसमें है बाकी।
वो ही आत्मिक अचल सौख्य है, ऐसी प्रभु की वाणी॥
हे अभिनंदन तेरे जैसा सुख, किसको मिल पावे।
एक बार मिल जावे तो फिर, क्यों भव में वह आवे ॥५०॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं अनंत-सुख-गुणधारक श्री अभिनंदननाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं....।

अतुल वीर्य है, पूर्ण वीर्य है, वीर्य आपका न्यारा।
तब तो दे उपदेश असंख्यों, भव्यों को था तारा॥
अभिनंदन हम वंदन करके, अर्घ चढ़ाने आये।
यही वीर्य मिल जावे हमको, विनती करने आये ॥५१॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं अनंत-वीर्य-गुणधारक श्री अभिनंदननाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं....।

१८ दोष से रहित १८ अर्घ्य

(लय—मुनि सकल व्रती बड़भागी...)

जब भूख दोष को नाशा, पी आत्मामृत को खासा।
श्री अभिनंदन जिनराजा, पूजक पाता सुख ताजा ॥५२॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं क्षुधा-दोष-रहित श्री अभिनंदननाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं....।

यह प्यास बड़ी दुखदाई, जब नाश हुई शिवराई।
तब अर्हत् पद को पाया, मैं अभिनंदन पद आया ॥५३॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं तृषा-दोष-रहित श्री अभिनंदननाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं....।

यदि परिग्रह होवे भारी, तो भय उपजे दुखकारी।
तुम मूर्च्छा से अतिन्यारे, श्री अभिनंदन सुखकारे॥५४॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं भयदोषरहित श्री अभिनंदननाथजिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं....।

नहिं रही द्वेष की बदबू, नहिं बची राग की खुशबू।
सो बजा-बजाकर ताली, अभिनंदन भक्ति शिवाली॥५५॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं द्वेषदोषरहित श्री अभिनंदननाथजिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

तुम गत इच्छा गत रागी, सो कालुषता सब भागी।
अभिनंदन शक्ति निराली, मैं पूजूँ हे शिवमाली!॥५६॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं रागदोषरहित श्री अभिनंदननाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

जब मोह प्रबल हो जावे, तब धर्म नहीं कर पावे।
श्री अभिनंदन शिवभागी, निर्मोही हे भवत्यागी॥५७॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं मोहदोषरहित श्री अभिनंदननाथजिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

क्यों आकर घेरे चिन्ता, तव सिद्धार्था माँ नंदा।
तब तो मैं नाचूँ गाऊँ, फिर अभिनंदन पद आऊँ॥५८॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं चिंतादोषरहित श्री अभिनंदननाथजिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

नहिं जरा आपकी आवे, नहिं दोष कदापि सतावे।
मैं प्रतिदिन पूज रचाऊँ, अभिनंदन पद में आऊँ॥५९॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं जरादोषरहित श्री अभिनंदननाथजिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

ये रोग यदा दुख देते, अभिनंदन नैया खेते।
गत रोग बने वह स्वामी, जिनपूजा जग अभिरामी॥६०॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं रोगदोषरहित श्री अभिनंदननाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

तुमने अन्तक को मारा, तब मिटा शीघ्र तन कारा।
हो अभिनंदन जग प्यारे, तुम मृत्यु दोष से न्यारे ॥६१॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं मरणदोषरहित श्री अभिनंदननाथजिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

हो स्वेद लिप्त तन क्यारी, तो पीड़ित होता प्राणी।
जो पूजेगा अभिनंदन, बन जावे वह शिव नंदन॥६२॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं स्वेददोषरहित श्री अभिनंदननाथजिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

जब खेद खिन्न हो चेतन, तब दुख का होता वेदन।
तव खेद रहा नहिं बाकी सो अभिनंदन शिवसाखी ॥६३॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं खेददोषरहित श्री अभिनंदननाथजिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

कुल जाति ऋद्धि यदि होवे, मदमत्त ज्ञान को खोवे।
अभिनंदन ने मद छोड़ा, हमने इनसे मन जोड़ा ॥६४॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं मददोषरहित श्री अभिनंदननाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

रति भाव हृदय में आवे, रति वृष से तब मिट जावे।
अभिनंदन वृष के स्वामी, पूजक होगा अभिरामी ॥६५॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं रतिदोषरहित श्री अभिनंदननाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

हो विस्मित वो ही जग में, जो अल्पबुद्धि शिवमग में।
मम विस्मय दोष विनाशो, अभिनंदन शिव में राजो ॥६६॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं विस्मयदोषरहित श्री अभिनंदननाथजिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

नहिं रही तुम्हारे निद्रा, नहिं बची आप में तन्द्रा।
मम मिट जावे यह निद्रा, श्री अभिनंदन जग चंदा ॥६७॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं निद्रादोषरहित श्री अभिनंदननाथजिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

जब जन्म मिटा शिवगामी, तब बने आप अभिरामी।
ये अभिनंदन जग त्राता, ये अभयदान के दाता ॥६८॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं जन्मदोषरहित श्री अभिनंदननाथजिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

नहिं शोक बचा शिव राजा, सो बजा-बजाकर बाजा।
जो अभिनंदन को पूजे, नहिं भव में फिर वह जूझे ॥६९॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं शोकदोषरहित श्री अभिनंदननाथजिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

(ज्ञानोदय)

अभिनंदन जी पीत वर्ण के, बंदर इनका चिह्न रहा।
चंदन सम है जीवन इनका, रहा अलौकिक भिन्न अहा॥

जहाँ-जहाँ पर जैसे-जैसे, तेरे अनुपम बिम्ब रहे।
अर्घ चढ़ाऊँ हे जिनेन्द्र! हम, बन जावे शिव खम्भ घने ॥७०॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री अभिनंदननाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं....।

कूट रहा आनंद जो कि श्री, अभिनंदन शिव धाम रहा।
शुक्ल ध्यान से बचे कर्म को, पूर्ण मिटाना काम कहा॥
तत्क्षण सुर इन्द्रों ने आकर, खुशियाँ खूब मनाई थी।
अर्घ चढ़ाऊँ सुख-दुख में प्रभु, बनना आप सहाई जी ॥७१॥

ॐ ह्रीं श्री आनंदकूटेभ्यो नमः अर्घ्यं....।

पूर्णार्घ्य (घत्ता)

हे जिन अभिनंदन, करके वंदन, सुरनर किन्नर शक्र सभी।
जो पद में आते, अर्घ चढ़ाते, ना करते वे पाप कभी॥
हम झूम-झूमकर, नाच-नाचकर, तव चरणों में आयेंगे।
अब वंदन करके, खुश हो करके, पूजा नित्य रचायेंगे ॥७२॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री अभिनंदननाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं....।

जाप्य—ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री अभिनंदननाथ-जिनेन्द्राय नमः।
(९/२७/१०८ बार)

जयमाला

पूजा की जयमाल दे, कर्म विजय की शक्ति।
जब तक शिव सुख ना मिले, तव पद में हो भक्ति॥१॥

(ज्ञानोदय)

रत्न सुसंचय पुर के राजा, पूज्य महाबल नामी थे।
दीक्षा लेकर परम दिगम्बर, बने आत्म के स्वामी थे॥
सोलह कारण भावन भाकर, तीर्थंकर पद बाँध लिया।
ग्यारह अंगों के पाठी बन, त्रय योगों को साध लिया॥२॥

दुष्कर-दुष्कर तप करके, फिर जन्म अनुत्तर में पाया।
अक्ष विषय को भोग रहे पर, मानस शिव में ललचाया॥
आयु भोग तैंतीस सिन्धु की, नगर अयोध्या के राजा।
रहे सुसंवर उनकी रानी, सिद्धार्था जो शुभ काजा॥३॥
माँ को स्वप्न दिखाकर आए, जन्म लिया फिर भूप बने।
प्रजाजनों के हित चिन्तक वे, सुख देते अनुरूप बने॥
इक दिन देखा मेघ दलों में, भिन्न-भिन्न आकार बने।
महल बगीचे मंदिर आदिक, सुंदर-सुंदर धाम बने॥४॥
और पलक में विघट गये सो, विरति भाव उर जाग उठा।
स्वयं बुद्ध वे नमः सिद्ध कह, दीक्षा ले सब पाप तजा॥
केवलज्ञान सुपाकर के सम्मेदाचल पर आए थे।
मोक्ष गये आनंद कूट से, सिद्ध क्षेत्र विलसाए थे॥५॥
ऐसे हे अभिनंदन! मैंने, कई बार तव अर्चा की।
शीश झुकाकर गुण गाए थे, आप नाम की चर्चा की॥
हृदय कमल पर किया विराजित, श्रद्धा से उर धारा था।
आप चरण की आराधन कर, पाप कर्म को टाला था॥६॥
लेकिन खोटी संगति पाकर, हाय आपको छोड़ दिया।
सत्य धर्म से सत्य देव से, गुरुवर से मुख मोड़ लिया॥
अपने हाथों से ही मैंने, हाय! कुल्हाड़ी मारी थी।
पैर काटकर अपने ही हा!, काम किया दुखकारी जी॥७॥
आँख खुली अब तव दर्शन से, सत्य समझ में सब आया।
मिथ्यामति मम मिटी आपकी, श्रद्धा से मन हरषाया॥
अब तो भूल न छोड़ आपको, और कहीं मैं जाऊँगा।
सपने में भी सरागियों को, माथा नहीं झुकाऊँगा॥८॥
भाग्य सितारा चमक उठा, सौभाग्य हमारा दमक उठा।
शरण आपकी पायी मैंने, जीवन में सुख महक उठा॥

अब पाऊँगा निश्चित अपने, शाश्वत अविचल चेतन को।
तो क्यों भूला कहलाऊँगा, भोगूँगा निज चेतन को॥९॥
शरण आप हैं शरण आप ही, शरणागत के शरण रहे।
आप बिना नहिं जग में कोई, मुक्तिरमा का वरण करे॥
तीन लोक में तीन काल में, मात्र आपका पथ सच्चा।
अभिनंदन ने बतलाया सो, रहे जानता हर बच्चा॥१०॥
भूतकाल में जितने अब तक, मोक्ष गये हैं जायेंगे।
आप शरण में आकर के ही, सिद्धालय को पायेंगे॥
देवों के भी देव आप देवाधिदेव कहलाते हो।
अहो आप ही भव्य जनों को, सत्यमार्ग दिखलाते हो॥११॥
नहिं रक्षक है जग में कोई, तुम ही जग में त्राता हो।
भाग्य विधाता आप हमारे, तुम ही मोक्ष प्रदाता हो॥
धन्य हुआ मैं तव प्रसाद से, सन्मति पाकर अभिनंदन।
और धन्य है मानुष भव ये, जिसमें पाया तव दर्शन॥१२॥
अब तो नाचूँ तेरे गुण गा, मन ही मन मुस्काऊँ मैं।
ढोल बजाऊँ शहनाई सी, मधुर ध्वनि में गाऊँ मैं॥
बजा-बजाकर खूब तालियाँ, झुन-झुन झुनिया आज बजा।
उमग-उमगकर हर्षित होकर, खुश होकर के आज मुदा॥१३॥
आप गुणों को, आप महत्ता, घर-घर जाकर बतलाऊँ।
एक-एक मानव को पशु को, कह-कह करके मैं आऊँ॥
आओ-आओ हे भव्यो तुम, अभिनंदन के पद आओ।
इनके जैसा देव लोक में, नहीं मिलेगा आ जाओ॥१४॥
ये ही सच्चे देव रहे हैं, तीन लोक में त्रिभुवन में।
ये ही सच्चा मार्ग दिखाते, ये ही नेता शिवपथ के॥
खूब मिठाई बाँटूं सबका, मुँह मीठा मैं करवाऊँ।
खाऊँ मैं अरु खिला सभी को, मुलक-मुलककर हरषाऊँ॥१५॥

इससे अच्छा और कौन सा, दिन हो सकता जीवन में।
तथा खुशी का कारण दूजा, हो सकता है कौन अरे॥
अतः आज मैं आप चरण में, क्या-क्या कर दूँ भेंट अभी।
ऐसी भक्ति रचा लूँ जिससे, भूल न पाऊँ तुम्हें कभी॥१६॥
किन-किन शब्दों में गुण गाकर, करूँ प्रशंसा मन भरके।
शब्द तुच्छ हैं भाव मेरु सम, बने आपके संगम से॥
तव गुण को मैं इस भव में क्या, भव-भव में नहिं कह पाऊँ।
वाचस्पति ने हार मान ली तो, फिर मैं क्या कर पाऊँ॥१७॥
इसीलिए यह जयमाला अब, पूर्ण करूँ पद शीश धरूँ।
चाहूँ मैं भी तेरे जैसी, शिव ललना को शीघ्र वरूँ॥
अल्प बुद्धि से मैंने किंचित्, गुण गाए अभिनंदन के।
विधि विधान का ज्ञान नहीं सो, क्षमा करो शिवनंदन हे!॥१८॥
हे ऋषिवर! हे परम कृपालु!, तुम्हें कोटिशः नमन करूँ।
तीन लोक से अर्चित तुमको त्रय योगों से नमन करूँ॥
गणधर मुनिवर विद्याधर से, चर्चित तुमको नमन करूँ।
जब तक मुक्ति न होवे तब तक, तेरी पूजा सतत करूँ॥१९॥

ॐ ह्रीं श्री क्लीं ऐं अर्हं श्री अभिनंदननाथ-जिनेन्द्राय नमः जयमाला पूर्णार्घं...।

आशीर्वाद

अभिनंदन का विधान निशदिन, भक्ति भाव से करता जो।
उसके घर आनंद रहे नित, सुख पूर्वक ही रहता वो॥
श्रेष्ठ मनुज हो, श्रेष्ठ देव हो, तब गुरु संगति मिलती है।
परम्परा से मुक्ति वधू भी, उसको निश्चित वरती है॥

इत्याशीर्वादः परिपुष्पाञ्जलिं क्षिपामि/क्षिपेत्

❑ ❑ ❑

श्री सुमतिनाथ विधान

पीठिका

(दोहा)

अनुपमेय प्रभु श्रेष्ठ हो, सुमतिनाथ भगवान।
मम मति भी अब सुमति हो, गाऊँ मैं गुणगान॥१॥

(ज्ञानोदय)

तीन लोक में सुमतिनाथ तव, मति ही केवल सन्मति है।
शेष सभी को मिली, मिलेगी, मात्र आपसे शुभमति है॥
खण्ड धातकीद्वीप रहा है, पूर्व दिशा की ओर जहाँ।
देश पुष्कलावती रहा है, सुख की होती भोर वहाँ॥२॥

उसका पालक राजा श्री रतिषेण पुण्य की गगरी था।
वैभव इतना जितना नहिं हो, स्वर्ग लोक की नगरी का॥
प्रजाजनों का नयन सितारा, उदार चेता दानी था।
निर्धन जन के, दुखी जनों के, जीवन में वरदानी था॥३॥

इक दिन सोचा अहो भोग ये, क्षणभंगुर हैं नश्वर हैं।
धन-वैभव का पुत्र-पौत्र का, विघटन होता पलभर में॥
धर्म लोक में शरण रहा है, धर्म जीव का चिरसाथी।
धर्म बिना कुछ सार नहीं है, ऐसा ही जिनश्रुति गाती ॥४॥

अतः मुझे मुनि धर्म धारकर, मानव भव का फल पाना।
रत्नत्रय को पूर्ण प्राप्त कर, मोक्षमहल में अब जाना॥
यही सोचकर अर्हद्नन्दन, मुनि के पद में दीक्षा ली।
सोलहकारण भावन भाकर, तीर्थंकर पद बाँधा जी॥५॥

समाधिपूर्वक मरण किया सो, वैजयन्त में स्वर्गी बन।
फिर आकर के नगर अयोध्या, पाया था सुखवर्गीपन॥

अहो मंगला जननी ने तब, माना अपना जन्म सफल।
धन्य हुयी थी पाकर के श्री सुमतिनाथ सा पुत्र प्रवर॥६॥

नगर हुआ कृतकृत्य अयोध्या, छटा निराली तब उसकी।
लगती मानों स्वर्गपुरी ही, भारत भू पर आ उतरी॥
गर्भ जन्म में तप आदिक में आये इतने देव यहाँ।
लगता अमरपुरी ही सारी, आयी हो स्वयमेव यहाँ॥७॥

पाँचों कल्याणक को पाकर, सिद्ध शिला पर पहुँच गये।
अनन्त अक्षय सुख सागर पा, निज आतम में विलस रहे॥
ओहो पंचम प्रभु ने पंचम, गति पायी सब छोड़ अहो।
उसकी महिमा तीन लोक में, गा सकता है कौन कहो॥८॥

ऐसे प्रभु श्री सुमतिनाथ की, पूजा विधान रचने को।
नमन करूँ मैं आप चरण में, सफल काम अब बनने को॥
तव आशिष से पूर्व भवों के, पाप शेष नहिं बच पाये।
मम आतम भी भव बन्धन तज, मोक्ष शिला पर बस जावे॥९॥

परिपुष्पाञ्जलिं क्षिपामि/क्षिपेत्

विधान प्रारम्भ

स्थापना

(ज्ञानोदय)

अविचल से जो अचल बने सब, चंचलता को तजने से।
योगों का सब काम रुका था, शुक्लध्यान में रचने से॥
उन ही श्री श्री सुमतिनाथ को, स्थापित करके मन्दिर में।
आज बुलाऊँ गद्‌गद्‌ होकर, पूजा करने निज उर में॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री सुमतिनाथ जिनेन्द्र अत्र अवतर अवतर संवौषट् इति आह्वाननं! ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री सुमतिनाथ जिनेन्द्र अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं! ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री सुमतिनाथ जिनेन्द्र अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणं!

अष्टक

(लय–कहाँ गये चक्री...)

स्वच्छ सुनिर्मल प्रासुक जल के, कलशा लाता हूँ।
कर्म मलों को धोने पावन, चरण चढ़ाता हूँ॥
सुमति प्रदायक सुमतिनाथ की, अर्चा करता हूँ।
सर्वोत्तम मति पाने लौकिक, चर्चा तजता हूँ॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री सुमतिनाथ-जिनेन्द्राय नमः जन्म-जरा-मृत्यु-विनाशनाय जलं...।

चन्दन लेकर चढ़ा आपके पद में नमता हूँ।
क्लेश भाव को तजकर भव, आक्रन्दन तजता हूँ॥
सुमति प्रदायक...॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री सुमतिनाथजिनेन्द्राय नमः संसारतापविनाशनाय चंदनं...।

छाँट-छाँटकर मोती जैसे, अक्षत लाया हूँ।
निर्मल बनने तुमसा, अरजी करने आया हूँ॥
सुमति प्रदायक...॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री सुमतिनाथजिनेन्द्राय नमः अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान्...।

कल्पवृक्ष के लाल गुलाबी, सुमन चढ़ाऊँ मैं।
काम विजेता बनने स्वामी, तव पद आऊँ मैं॥
सुमति प्रदायक सुमतिनाथ की, अर्चा करता हूँ।
सर्वोत्तम मति पाने लौकिक, चर्चा तजता हूँ॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री सुमतिनाथजिनेन्द्राय नमः कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं...।

शुद्ध सुनैवज अभी बनाकर, थाली भर लाया।
सुना आपने क्षुधा जीत ली, सो मन ललचाया॥
सुमति प्रदायक...॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री सुमतिनाथजिनेन्द्राय नमः क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं...।

जगमग करते रत्नदीप की पंक्ति बनाई है।
तुम्हें चढ़ाना मोह रोग की श्रेष्ठ दवाई है॥
सुमति प्रदायक...॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री सुमतिनाथजिनेन्द्राय नमः मोहान्धकारविनाशनाय दीपं...।

खुशबू वाली सब चीजों की, धूप बनाऊँगा।
तुम्हें चढ़ाकर मोहकर्म की शक्ति जलाऊँगा॥
सुमति प्रदायक...॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री सुमतिनाथजिनेन्द्राय नमः अष्टकर्म-दहनाय धूपं...।

काजू किसमिस लौंग सुपारी, कितने लाऊँ मैं।
समझ न आता सो केवल भर थाल चढ़ाऊँ मैं॥
सुमति प्रदायक...॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री सुमतिनाथजिनेन्द्राय नमः मोक्षफल-प्राप्तये फलं...।

अक्षत चन्दन धूप दीप फल, पुष्प मिलाये हैं।
अर्घ चढ़ाकर अनर्घ पद को पाने आये हैं॥
सुमति प्रदायक...॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री सुमतिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अनर्घपदप्राप्तये अर्घ्यं...।

प्रत्येक-अर्घ्य

(दोहा)

चढ़ा चरण में आठ ये, भिन्न-भिन्न शुभ द्रव्य।
अर्घ चढ़ा पूजूँ उन्हें, जो हैं जग में रम्य॥

इति मण्डलस्योपरिपुष्पाञ्जलिं क्षिपामि/क्षिपेत्।

जन्मातिशय के १० अर्घ्य

(लय—शान्तिनाथ मुख शशि उनहारी...)

स्वेद न आता तेरे तन में।
अतिशय है यह जन्म समय से॥
सुमति सुमति मैं रटता जाऊँ।
पूजा करके समता पाऊँ॥१॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं निःस्वेदत्व-जन्मातिशय-गुणधारक श्री सुमतिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

अमरपुरी का भोजन करते।
तीर्थंकर यह पदवी धरते॥
तब तो मल नहिं बनता तन में।
अर्घ चढ़ाकर खुश हूँ मन में॥२॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं निर्मलत्व-जन्मातिशय-गुणधारक श्री सुमतिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

सबको मानो तुम अपना सो।
क्षीरसिन्धु सम रुधिर बना औ॥
भरे लबालब वत्सलता से।
हम पूजेंगे निश्छलता से॥३॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं क्षीरगौररुधिरत्व - जन्मातिशय - गुणधारक श्री सुमतिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

शिव पाने के लायक तेरी।
शक्ति बनी है आकर चेरी॥
तब तो पूजे शक्तिमान भी।
सुमति रहे हैं धर्मप्राण जी॥४॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं वज्रवृषभनाराच-संहनन-जन्मातिशय-गुणधारक श्री सुमतिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

सुमतिनाथ तुम कितने सुन्दर।
नहीं बुद्धि है मेरे अन्दर॥
कहने की सो मौन भाव से।
अर्घ चढ़ाऊँ बड़े चाव से॥५॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं समचतुरस्र-संस्थान-जन्मातिशय-गुणधारक श्री सुमतिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

रूप सलोना मनहर मोहक।
पूजूँ बजा-बजाकर ढोलक॥
सुमतिनाथ का अन्तिम क्षण तक।
रूप रहेगा ये ही सुखकर॥६॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं सौरूप्य-जन्मातिशय-गुणधारक श्री सुमतिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

महक मनोहर मनभावन है।
तव तन में जो सुख सावन है॥
चकवा तेरा चिह्न रहा है।
मार्ग आपका सत्य कहा है॥७॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं सौगन्ध्य-जन्मातिशय-गुणधारक श्री सुमतिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

शुभ-शुभ लक्षण होते जो-जो।
तव वपु में हैं सुन्दर वो-वो॥

बनी अयोध्या गौरवशाली।
जन्मे जब ये शिवसुखमाली ॥८॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं सौलक्षण्य-जन्मातिशय-गुणधारक श्री सुमतिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

अतुल-अतुल तव बल को स्वामी।
कह न सकेगा हो जगनामी॥
छोड़ अनुत्तर सुमति पधारे।
अर्घ चढ़ा हम पाद पखारे॥९॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं अप्रमितवीर्य-जन्मातिशय-गुणधारक श्री सुमतिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

हितकारक अरु मित भी होते।
सुमति वचन दुख चर्चा खोते॥
मात मंगला मंगलमय तब।
बनी गर्भ में आए तुम जब ॥१०॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं प्रियहितवादित्व-जन्मातिशय-गुणधारक श्री सुमतिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

केवलज्ञानातिशय के १० अर्घ्य

(ज्ञानोदय)

सौ-सौ योजन दूर-दूर तक, सुभिक्षता हो जाती है।
सुमतिनाथ का मिले समागम, जनता सुख ही पाती है॥
ईति-भीतियाँ मिट जावे नहिं, पाप शृंखला उदित रहे।
जो पूजेगा भक्ति-भाव से, चेतन उसका मुदित रहे ॥११॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं गव्यूतिशत-चतुष्टय-सुभिक्षत्व-घातिक्षय-जातिशय-गुणधारक श्री सुमतिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

भू से पाँच सहस धनु ऊपर, समवसरण जब आता है।
गगन बिहारी नभपथचारी, सुमति नाम मन भाता है॥

छत्र चँवर भामण्डल भारी, दुन्दुभि बाजे बजते हैं।
तेरी अर्चा करने वाले, शिवपथगामी बनते हैं ॥१२॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं गगनगमनत्व-घातिक्षय-जातिशय-गुणधारक श्री सुमतिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

गमन आपका होता रहता, लेकिन बाधित नहिं होगा।
कोई प्राणी सुमति आपसे, केवल सबको सुख होगा॥
दुखद कर्म जो घाति आपके, मिले खाक में आज अहो।
इसीलिए यह अतिशय पाया, अर्घ चढ़ाऊँ तुम्हें विभो! ॥१३॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं अप्राणिवधत्व-घातिक्षय-जातिशय-गुणधारक श्री सुमतिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

लड्डू पेड़ा घेवर बाबर, शरबत पानी ठण्डाई।
आवश्यकता नहीं किसी की, भोजनशाला शरमाई॥
उसका कारण अहो प्रभु लाभान्तराय का नाश किया।
जिसने चाहा सुमतिनाथ को, शिव ललना को पास किया ॥१४॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं भुक्त्यभाव-घातिक्षय-जातिशय-गुणधारक श्री सुमतिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

किञ्चित् बाधा दे न सकेगा, वैरी भी हो भव-भव का।
क्योंकि आपने ध्यानलीन हो, पान किया है निजपन का॥
अतः सुमति मैं मन-वच-तन से, कोटि कोटिशः नमन करूँ।
अर्घ चढ़ाकर स्वैर भाव का, पंचेन्द्रिय का दमन करूँ॥१५॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं उपसर्गाभाव-घातिक्षय-जातिशय-गुणधारक श्री सुमतिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

समवसरण के बारह कोठों में जितने भी प्राणी है।
तव आनन वा! दिखे सभी के मिटती पाप निशानी है॥
सुमति सुमति हे सुमतिनाथ जी, सुमति बने अब मेरी भी।
करूँ सदा मैं जिससे स्वामी, पूजन केवल तेरी ही॥१६॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं चतुर्मुखत्व-घातिक्षय-जातिशय-गुणधारक श्री सुमतिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

महा रही या छोटी भी हो, सब विद्याएँ आकर के।
नहीं ऊबती दिवस-रात वे, आप गुणों को गाकर के॥
भूप मेघ के अहो लाड़ले, चरम शरीरी तीर्थंकर।
सुमतिनाथ तव पूजा करके, बन जाऊँ मैं क्षेमंकर॥१७॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं सर्वविद्येश्वरत्व-घातिक्षय-जातिशय-गुणधारक श्री सुमतिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

मानव का यह तन है फिर भी, छाया भू पर नहिं पड़ती ।
उसका कारण घातिकर्म की, बची न छाया यह कहती॥
सुमतिनाथ ने अन्तिम धी को, पाया सुनकर मैं भी ये।
भक्ति-भाव से अर्घ चढ़ाने आया तेरे चरणों में॥१८॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं अच्छायत्व-घातिक्षय-जातिशय-गुणधारक श्री सुमतिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

नहिं हिलती हैं नहिं नीचे हो, कभी न होती ऊपर हैं।
तव आँखों की पलकें स्वामी, नहीं झपकती सुखकर हैं॥
मैं तो सुनकर दंग रहा सो, अर्घ सुलेकर आया हूँ।
स्वीकारों हे सुमतिनाथ जी, भक्त बना हरषाया हूँ॥१९॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं अपक्ष्मस्पन्दत्व-घातिक्षय-जातिशय-गुणधारक श्री सुमतिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

कर्म बन्ध अब रुका तभी तो, नख केशों की वृद्धि रुकी।
और तभी तो तीन लोक की सभी शक्तियाँ चरण झुकी॥
आपद हो या विपदा होवे, खुशियों से भरपूर रहे।
सुमति-सुमति यदि रटता जावे, अष्टकर्म चकचूर करे॥२०॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं समान-नखकेशत्व-घातिक्षय-जातिशय-गुणधारक श्री सुमतिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

देवकृत अतिशय के १४ अर्घ्य

(दोहा)

भाषा तेरी हे प्रभो, अर्द्धमागधी श्रेष्ठ।
सुमति आपकी जो सुने, पद पावेंगे ज्येष्ठ॥
जग जननी माँ मंगला, बनी सुमंगल रूप।
उसके आँगन सुमति जब, आये त्रिभुवन भूप॥२१॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं सर्वार्धमागधी-भाषा-देवोपनीतातिशय-गुणधारक श्री सुमतिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

बढ़ जाती है मित्रता, सब जीवों से नाथ।
पूजा से प्रभु आपकी, मिटती दुख की रात॥
मति श्रेष्ठ पा आपने, किया सुसार्थक नाम।
सुमतिनाथ तुम पूज्य जिन,मिटा दिये सब पाप॥२२॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं सर्वजनमैत्रीभाव-देवोपनीतातिशय-गुणधारक श्री सुमतिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

अनार अन्नानास सब, नहिं हो ऋतु अनुकूल।
फिर भी जामुन मौसमी, फल जाते अमरूद।
जनवत्सल पंचम प्रभो, अतिशय यह गम्भीर॥
तुम सम मुझको भी मिले, भवोदधि का तीर॥२३॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं सर्वर्तुफलादि-शोभिततरु-परिणाम-देवोपनीतातिशय-गुणधारक श्री सुमतिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

जीवन तव आदर्श सो, भू हो ज्यों आदर्श।
रत्नत्रय की नाव में, बैठ बनूँ गतहर्ष॥
क्षमा देखकर सुमति का, भागा हाथों हाथ।
मोह कर्म सो चाहते, सभी आपका साथ॥२४॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं आदर्शतल-प्रतिमा-रत्नमयी-देवोपनीतातिशय-गुणधारक श्री सुमतिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

जैसा-जैसा आपका, होता पूज्य बिहार।
वैसा-वैसा ही रहे, मारुत का संचार॥
धर्म पताका सुमति हैं, धर्म ध्वजा वृष रूप।
सुमति आप ही लोक में, अनन्तसुख के कूप॥२५॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं विहरण-मनुगतवायुत्व-देवोपनीतातिशय-गुणधारक श्री सुमतिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

प्रसन्नता का पार ना, रहता तब भूपाल।
समवसरण जब आपका, आता वृष आधार॥
दर्शनीय प्रियदर्श तव, बिना साज श्रृंगार।
इसीलिए तो सुमति तुम, जग में गुण भण्डार॥२६॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं सर्वजनपरमानन्दत्व-देवोपनीतातिशय-गुणधारक श्री सुमतिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

वायु देव आ हर्ष से, कंकर करते दूर।
सुमतिनाथ का आगमन, भाग्य करे अनुकूल॥
सुमति हृदय के हार हैं, हम भक्तों के देव।
आप भक्ति से शीघ्र ही, मिटती अघ की टेव॥२७॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं वायुकुमारोपशमित - धूलिकण्टकादि-देवोपनीतातिशय-गुणधारक श्री सुमतिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

गन्धोदक की वृष्टि जो, करते मेघ कुमार।
सुमतिनाथ के चरण में, नमते बारम्बार॥
गणधर तेरे एक सौ, सोलह थे ऋषिराज।
वज्र आदि ने आपसे, जाना था वृषराज॥२८॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं मेघकुमारकृत-गन्धोदक-वृष्टि-देवोपनीतातिशय-गुणधारक श्री सुमतिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

खिले - खिले जो सुरभि से, महका दे भू लोक।
पद्म रखें सुर आपके, चरण तले तज शोक॥

मित्रवर्य श्रोता रहा, आप चरण का भक्त।
अलि सम पी तव देशना, हुआ कर्म से मुक्त॥२९॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं पादन्यासेकृत-पद्मानि-देवोपनीतातिशय-गुणधारक श्री सुमतिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

गर्मी सर्दी शिशिर हो, बसन्त का हो काल।
वृक्ष लता पर फूल फल, फल जाते प्रति डाल॥
सुमति आपकी देह ये, लगती गोल मटोल।
कर्म कालिमा शीघ्र ही, हो जावे अब गोल॥३०॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं फलभार-नम्र-शालि-देवोपनीतातिशय-गुणधारक श्री सुमतिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

बिजली बादल से रहित, निर्मल हो आकाश।
सुमति नाम ही मम बने, जीवन की हर श्वास॥
नहिं देते वरदान तुम, नहिं देते अभिशाप।
फिर भी पूजक के बने, मन के सारे काम॥३१॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं शरत्कालवन्निर्मल-गगनत्व-देवोपनीतातिशय-गुणधारक श्री सुमतिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

शीघ्र पधारो आप सब, मिलकर इनके पाद।
समवसरण में सुमति के, बजा-बजाकर नाद॥
शुक्लध्यान से मोह का, खतम किया सब खेल।
फल में प्रभुवर आपने, पायी अमृत बेल॥३२॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं एतैतैति - चतुर्निकायामर - परस्पराह्वानन-देवोपनीतातिशय-गुणधारक श्री सुमतिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

दिशा-दिशा निर्मल बने, हे त्रिभुवन सम्राट।
सुमति नाम ही लोक में, भवसागर का घाट॥
अविचल से प्रभु आपने, पाया अविचल धाम।
पंचम जिनवर का यहाँ, सिद्ध हुआ सब काम॥३३॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं शरन्मेघवन्निर्मल-दिग्विभागत्व-देवोपनीतातिशय-गुणधारक श्री सुमतिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

धर्मचक्र सबको कहे, कर इनका संसर्ग।
पाप-ताप मिटकर मिले, स्वर्ग तथा अपवर्ग॥
खिला न पाए गुल कभी, कोई भी अब कर्म।
सुमति आपने पा लिया, शाश्वत सुख शिवशर्म॥३४॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं धर्मचक्र-चतुष्टय-देवोपनीतातिशय-गुणधारक श्री सुमतिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

अष्ट प्रातिहार्य के ८ अर्घ्य

(लय—मुनि सकलव्रती बड़भागी...)

फल पुष्प पत्र से भरता, तरु शोक रहित दुख हरता।
प्रभु सुमति नाथ का प्यारा, यह प्रातिहार्य सुखकारा॥३५॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं अशोकवृक्ष-प्रातिहार्य-धारक श्री सुमतिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

आ पुष्प देव बरसाते, वे गुण गा-गा हरषाते।
ये सुमति धर्म के राजा, तूँ पूजा करने आजा॥३६॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं सुरपुष्पवृष्टि-प्रातिहार्य-धारक श्री सुमतिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

सुर चँवर ढोरने आते, जब ऊपर उन्हें उठाते।
वे कहते पूजे जो भी, शुभ गति ही उसकी होगी॥३७॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं चतुःषष्ठी-चामर-प्रातिहार्य-धारक श्री सुमतिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

वह भामण्डल मन हरता, जो झग-झग झग-झग करता।
जो पूजे नाचें गावे, वह सुमति शीघ्र पा जावे॥३८॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं भामण्डल-प्रातिहार्य-धारक श्री सुमतिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

तब बाजे बज-बज कहते, ये सुमति पाप को हरते।
सो तूँ भी आजा - आजा, पा जावेगा सुख ताजा ॥३९॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं सुर-दुन्दुभि-प्रातिहार्य-धारक श्री सुमतिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

जो चम-चम चम-चम चमके, ये छत्र शीश पर दमके।
सब पाप कर्म के धाता, प्रभु पंचम भाग्य विधाता ॥४०॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं छत्रत्रय-प्रातिहार्य-धारक श्री सुमतिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

ध्वनि दिव्य आपकी खिरती, वह संशय सबका हरती।
ये सुमति धर्म संदेशी, तव भक्त बने गतद्वेषी ॥४१॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं दिव्यध्वनि-प्रातिहार्य-धारक श्री सुमतिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

जो सिंहासन छवि वाला, वा पहनी शिवसुख माला।
हे सुमति-सुमति के दाता, तुम त्रिभुवन के हो त्राता ॥४२॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं सिंहासन-प्रातिहार्य-धारक श्री सुमतिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

पंचकल्याणक के ५ अर्घ्य

(लय—कहाँ गए चक्री जिन...)

सावन शुक्ला दूजी तिथि में, माँ के उर आये।
व्यन्तर ज्योतिष भवनदेव, वैमानिक गुण गाये॥
सोलह सपने देखे माँ ने, फल को जाना सो।
हर्षित होकर सुमति आपको, अर्घ चढ़ाया ओ॥४३॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं गर्भकल्याणक-मण्डित श्री सुमतिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

उजली ग्यारस चैत्र माह की, तब धरती जन्मे।
वाद्य बजाकर नाचे सब ही, नारी नर हर्षे॥

नृप को देकर खूब बधाई, जनता हुलसाई।
जन्म महोत्सव मना-मनाकर, जगती हरषाई ॥४४॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं जन्म-कल्याणक-मण्डित श्री सुमतिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

शुक्ला थी वैशाखी जिसमें, घर को छोड़ा था।
घर कारा से, सुतदारा से, ममत्व तोड़ा था॥
गये सहेतुक वन में दीक्षा लेने शीश झुका।
सिद्धों के पद नमन किया हम, पूजें मोक्ष सखा ॥४५॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं तपःकल्याणक-मण्डित श्री सुमतिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

ध्यान देखकर घाति कर्म ने, मुख की खायी थी।
फलतः दर्शन आदिक निधियाँ, दौड़ी आयी थी॥
कुबेर ने तब सुमति आपका, वैभव बतलाया।
महिमा सुनकर मेरे मुँह में पानी भर आया ॥४६॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं ज्ञान-कल्याणक-मण्डित श्री सुमतिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

अचल क्षेत्र पर पहुँच गये तो, अविचल कूट बना।
सुमति बन्ध का हेतु योग भी, अब तो दूर खड़ा॥
जिससे पाकर अन्तिम गुण को, अन्तिम गति पायी।
पूजा करने तव पद में सौ सखियाँ मिल आयी ॥४७॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं मोक्ष-कल्याणक-मण्डित श्री सुमतिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

अनन्त चतुष्टय के ४ अर्घ्य

(छन्द-नरेन्द्र)

अंत न होगा नहीं मिटेगा, कल्पकाल भी बीते।
कारण पाँचों ज्ञानावरणी, प्रभो आपने जीते॥

सुमति आपकी महिमा गाने, शब्द कहाँ से लाऊँ।
सभी शब्द ही बौने हैं सो, तुमको अर्घ चढ़ाऊँ ॥४८॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं अनंत-ज्ञान-गुणमण्डित श्री सुमतिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

अनन्त दर्शन पाया जिसका, पार न कोई पावे।
फिर भी गणधर मुनिगण तेरे, गुण गाकर-हरषावे॥
क्योंकि सभी का चित्त उसी को, पाने को ललचावे।
हम भी उसको पाने चकवा, चिह्नी को ही ध्यावे॥४९॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं अनंत-दर्शन-गुणमण्डित श्री सुमतिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

सुख पाया है सुमति आपने, उसको ही हम चाहे।
शिवललना मिल जाती इससे, तो क्यों नहिं मन भावे॥
अहो हितैषी परम हितंकर, क्षेमंकर कल्याणी।
तीन लोक में मात्र रही है,हितकारक तव वाणी ॥५०॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं अनंत-सुख-गुणमण्डित श्री सुमतिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

लगा ठिकाने अन्तराय तब, वीर्य आपने पाया।
उसको कह पावे बतलाओ, किस माता का जाया॥
सुमति आपका नाम जपे तो, पिण्ड छोड़कर भागे।
कर्म महारिपु पुनः कभी नहिं, आ पावे तव आगे॥५१॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं अनंत-वीर्य-गुणमण्डित श्री सुमतिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

१८ दोष से रहित के १८ अर्घ्य

(लय—श्री वीर महा अतिवीर...)

जब भूख न लगती नाथ, भोजन क्यों खावे।
हम भक्त बने सो साथ, तेरा मन भावे॥

श्री सुमति सुमति दातार, सन्मति दायक हो।
हम पूजा कर जिनराज, शिव के लायक हो ॥५२॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं क्षुधा-दोष-रहित श्री सुमतिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

प्रभु मिटी पिपासा पूर्ण, गरज न पानी की।
सो पूजा करते नित्य, धर्म निशानी की ॥
श्री सुमति सुमति दातार...॥५३॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं तृषा-दोष-रहित श्री सुमतिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

भयभीत हुआ है आज, भय भी तेरे से।
सो आये लेकर अर्घ, बनने निर्भय ये ॥
श्री सुमति सुमति दातार...॥५४॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं भय-दोष-रहित श्री सुमतिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

मिट गया सभी में द्वेष, भव से विरत हुए।
हे वीतराग! हम भक्त, तुममें निरत हुए ॥
श्री सुमति सुमति दातार...॥५५॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं द्वेष-दोष-रहित श्री सुमतिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

यह राग जलाता नित्य, अग्नि जलाती ज्यों।
तव भक्तिमयी जलधार, राग बुझाती त्यों ॥
श्री सुमति सुमति दातार...॥५६॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं राग-दोष-रहित श्री सुमतिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

जब मोह गया परलोक, तुम निर्दोष हुए।
तब बन करके अरहन्त, गुण के कोष हुए ॥
श्री सुमति सुमति दातार...॥५७॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं मोह-दोष-रहित श्री सुमतिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

क्यों चिन्ता आवे पास, तुम निश्चिन्त हुए।
हम अर्घ चढ़ाकर आज, पद में लीन हुए ॥
श्री सुमति सुमति दातार...॥५८॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं चिन्तादोषरहित श्री सुमतिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

जब जरा सतावे देह, जर-जर होती है।
हे जरा विवर्जित देव, तव तन मोती है ॥
श्री सुमति सुमति दातार, सन्मति दायक हो।
हम पूजा कर जिनराज, शिव के लायक हो ॥५९॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं जरा-दोष-रहित श्री सुमतिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

हो भोगी को ही रोग, आप अभोगी हो।
जो पावे तेरा योग, शीघ्र निरोगी हो ॥
श्री सुमति सुमति दातार...॥६०॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं रोग-दोष-रहित श्री सुमतिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

जो मरण रहा दुख रूप, उसको मार अरे।
जब बने मोक्ष के भूप, क्यों फिर मरण करें ॥
श्री सुमति सुमति दातार...॥६१॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं मरणदोष-रहित श्री सुमतिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

जब बहता तन से स्वेद, चेतन दुखिया हो।
प्रभु स्वेद रहित को देख, सुख हो दुनिया को ॥
श्री सुमति सुमति दातार...॥६२॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं स्वेद-दोष-रहित श्री सुमतिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

नहिं उपजेगा अब खेद, तुम अरहन्त बने।
हम पूजा करके देव, तुम सम शुद्ध बनें॥
श्री सुमति सुमति दातार...॥६३॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं खेद-दोष-रहित श्री सुमतिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

तज ममता अरु मद मोह, निर्मद शुद्ध हुए।
जब पूजे हमने पाद, अघ अवरुद्ध हुए ॥
श्री सुमति सुमति दातार...॥६४॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं मद-दोष-रहित श्री सुमतिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

जब उपजे पर से राग, रति का भाव बने।
जो पूजे तज तन राग, पावे सौख्य घने ॥
श्री सुमति सुमति दातार, सन्मति दायक हो।
हम पूजा कर जिनराज, शिव के लायक हो ॥६५॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं रति-दोष-रहित श्री सुमतिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

हो विस्मय की वह बात, जिसको नहिं जाना।
हैं खुशियाँ आज अपार, तुमको सच माना ॥
श्री सुमति सुमति दातार... ॥६६॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं विस्मय-दोष-रहित श्री सुमतिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

जो कर देती बेहोश, वो ही निद्रा है।
तव बची नहीं यह शेष, सो नहिं बाधा है ॥
श्री सुमति सुमति दातार...॥६७॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं निद्रा-दोष-रहित श्री सुमतिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

कर पण्डित-पण्डित मृत्यु, शाश्वत धाम गये।
तो जन्मे क्यों फिर देव, तुम निर्नाम हुए॥
श्री सुमति सुमति दातार...॥६८॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं जन्म-दोष-रहित श्री सुमतिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

यह शोक रहा बलवान, उसको दूर किया।
कर मैंने तेरा ध्यान, सुख का द्वार लिया ॥
श्री सुमति सुमति दातार...॥६९॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं शोक-दोष-रहित श्री सुमतिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

(ज्ञानोदय)

धर्मनाथ अरु शान्तिनाथ के, बीच रहा जो कूट भला।
अविचल प्यारा इसी कूट से, टाली सारी कर्म बला॥

सुमतिनाथ ने सुमेरु सम निज ध्यान लगाया शुक्ल महा।
पूजा करने आये हम भी, सुन्दर लेकर अर्घ अहा ॥७०॥

ॐ ह्रीं श्री अविचल-कूटेभ्यो नमः अर्घ्यं...।

चक्रवर्ति प्रतिनारायण से हलधर विद्याधर नृप से।
पूजित जिनके चरणाम्बुज हैं, शत इन्द्रों से सुरनर से॥
समवसरण के मालिक ऐसे, सुमतिनाथ के बिम्ब जहाँ।
रहें विराजित पूजूँ मैं भी, पाकर अवसर आज यहाँ ॥७१॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री सुमतिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

पूर्णार्घ्य (घत्ता)

श्री सुमतिनाथ ये, रहें साथ में, भव्य जनों के निशदिन तो।
औ नहिं भटकेंगे नहिं अटकेंगे सुख पावेंगे हर क्षण वो॥
तव गुण गाने को, पद आने को मचल उठा मम चेतन सो।
मैं श्रीफल लाया, द्रव्य सजाया, भेंट करूँ सुख केतन को ॥७२॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री सुमतिनाथ-जिनेन्द्राय नमः पूर्णार्घ्यं...।

जाप्य मंत्र

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री सुमतिनाथ-जिनेन्द्राय नमः।

(९/२७/१०८)

जयमाला

जय-जय-जय जयवंत हो, जिनवर की जयमाल।
चाहूँ अघ का नाश हो, गाकर के मैं बाल॥

(ज्ञानोदय)

वीतराग हो फिर भी प्रभुवर राग करे जो तव पद से।
मुँह माँगा मिल जाता उसका, जीवन होता सुखप्रद है॥
जातिस्मरण से पूर्व भवों का, ज्ञान यदा हो आया था।
एक सहस भूपतियों को भी, शिवपथ ही मन भाया था॥१॥

भोग-रोग सम विषधर से भी, जहरीले भयकारक से।
लगे नाथ को तो आतम को, जोड़ लिया निज आतम से ॥
भायी बारह अनुप्रेक्षा तो, लौकान्तिक सुर आये थे।
विरतभाव की करी प्रशंसा, बार-बार गुण गाये थे ॥२॥

पुत्र-पौत्र को मात-पिता को, परिजन पुरजन सहचर को।
छोड़ दिया सो शक्री चक्री बने आपके अनुचर औ ॥
और आपने एक राज्य तज, तीन लोक का राज्य किया।
त्यागा है परिवार एक पर, सबको अपने पास किया ॥३॥

तभी अहो वसुधैव कुटुम्बम्, भाव आप में विलसाया।
तब तो तुमको भव्यों ने हित, उपदेशी कह सुख पाया ॥
सुमतिनाथ तव दर्शन से ही, मेरे उर त्यों हर्ष बढ़ा।
ज्यों निधि पाने से निर्धन के, दुखदायी सब कर्म हटा ॥४॥

आप जानते तीन लोक के, सब द्रव्यों की विविधाएँ।
अलोक भी आलोकित होता, लेकर सारी पर्यायें ॥
लेकिन तुमको स्वामी कोई, जान न सकता संसारी।
कारण कर्मोदय से अब तक, बना हुआ है अज्ञानी ॥५॥

महाध्यान से मोहमल्ल का, मातम तुमने मेट दिया।
निर्मोही बन मुक्ति अंगना से, पक्का अब मेल किया ॥
सो लौकिक सब महिलाएँ मिल, डिगा न पाएँ रंच तुम्हें।
काम विजेता देख हारकर, शीश झुकावे मात्र तुम्हें ॥६॥

शीत उष्ण का योग धारकर, करे तपस्या मनमानी।
उग्र-उग्र तप से मन को भी, कर देवें यदि गतमानी ॥
अंतरंग बहिरंग तपों से, धर्म ध्वजा को फहराए।
देवों से भी पूजित होकर, यशस्कीर्ति भी पा जाए ॥७॥

लेकिन पंचम प्रभुवर तेरे पद पंकज की भक्तिमयी।
चाबी यदि नहिं होगी तो क्या खोल सकेगा द्वार कहीं॥
मोक्ष महल का बन्द रहा जो, बहुत काल से अब तक है।
लगी हुई मजबूत अर्गला, जिसमें दृढ़तर दृढ़तम है ॥८॥

अतः प्रभो मैं आप चरण की, भक्ति करूँ पद नमन करूँ।
तेरे जैसे मैं भी पाँचों इन्द्रिय दल का दमन करूँ॥
नाचूँ गाऊँ झुन-झुन झुन-झुन, बजा-बजाकर झुनिया को।
कटि मटकाकर ठुमका दे दे बतलाऊँ मैं दुनिया को ॥९॥

गर्भ पधारे उसके पहले छह महिनों तक स्वर्गी ने।
माणिक मोती हीरे-पन्ने, बरसाकर सुखवर्गी के॥
आँगन को कर दिया रत्नमय, झग-झग करते दीपक सा।
इससे ही सब समझ गये थे, जन्मेंगे श्री प्रभुवर आ ॥१०॥

जन्मजात श्री सुमतिनाथ का, सुमेरुगिरि पर ले जाकर।
शचिपति ने प्रभु को नहलाया, क्षीर सिन्धु से जल लाकर॥
वस्त्राभूषण से शचि ने श्रृंगार किया जग पालक का।
लाकर माँ को सौंप इन्द्र ने नृत्य किया था ताण्डव वा! ॥११॥

दीक्षा ले जब एषण पाया, भूपति के घर आकर के।
दुन्दुभि बाजे रत्नवृष्टि अरु, सुगन्धयुत जल बरसा के॥
जय-जयकार किया दाता का, पात्र रूप श्री भगवन का।
ऐसे उत्सव कर करके सम्मान किया था गतमन का ॥१२॥

ज्ञान सुपंचम पाया तब श्री समवसरण जो बनवाया।
उसमें मानव देव-देवियाँ, तिर्यंचों ने सुख पाया॥
दिव्य देशना सुनकर वृष का, पान किया व्रत धारे थे।
भव्य जनों ने चित्त साफकर, मेटे भव दुख काले थे ॥१३॥

सिद्ध शुद्ध बन मोक्ष गये तब, महा - महोत्सव मना - मना।
माल मिठाई खायी सबने, सुख पाया था घना - घना॥
इसीलिए हे भव्यो तुम भी, आकर इनको झुक जाओ।
झुनिया झुन-झुन बजा - बजाकर, भक्ति-भाव को दरशाओ ॥१४॥

नाचो-गाओ आनन्दित हो, झूम - झूमकर नाचो रे।
प्रसन्न मन से आह्लादित हो, इनमें ही रम जाओ रे॥
ढोल नगाड़े की ध्वनियों से भर दो भूतल नभ को भी।
वीणा वादन करो खुशी से, रागों से मन हर लो जी॥१५॥

रैवासा की पावन भू में सुमतिनाथ जब अन्दर थे।
भव्य सुदर्शन को सपने में दर्श हुए थे जिनवर के॥
और यक्ष ने स्थान बता संकेत दिया प्रभु प्रतिमा का।
उसने अतिशय बतलाकर, सन्तुष्ट किया मन जनता का॥१६॥

सबने मिलकर निकाल प्रतिमा, दर्शन पाए सुखकर ये।
अब तक प्रभु के दर्शन सबको, श्रेयस्कर हैं शुभप्रद हैं॥
भक्ति बढ़ा ले ऐसी जो भव-भव में तेरे साथ रहे।
जब तक शिव नहिं पावे तब तक पाप दुःख संताप हरे ॥१७॥

क्या बतलाऊँ कैसे मैं बतलाऊँ प्रभु की महिमा को।
अनुपम गणनातीत गुणों की गा पाऊँ मैं गरिमा को॥
आजीवन मैं खाना-पीना सोना आना-जाना सब।
छोड़ आपके गुण को लिखता जाऊँ प्रभुवर रात दिवस ॥१८॥

भवों-भवों तक स्वामी तो भी छोर न गुण का आवेगा।
कलमें टूटे दुनिया की सब, समय नहीं बच पावेगा॥
स्याही भी हो समाप्त लेकिन अंश मात्र लिख पाऊँगा।
तन छूटेगा लेकिन मन को संवृत नहिं कर पाऊँगा ॥१९॥

अतः धार अब मौन भाव को, मन ही मन में मुस्काऊँ।
अल्पबुद्धि से गुण गाकर मैं, मात्र आप में रम जाऊँ॥
त्रुटि होवे यदि इसमें कोई, क्षमा करो हे सुमति प्रभो।
भव बन्धन को पूर्ण मिटाने सक्षम केवल आप विभो ॥२०॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री सुमतिनाथ-जिनेन्द्राय नमः जयमाला पूर्णार्घ्यं...।

सुमतिनाथ का विधान जो भी, एक बार कर लेता है।
पाप ताप सन्ताप सभी को, शीघ्र तिलाञ्जलि देता है॥
लौकिक सुख को पाकर अपना, जीवन सार्थक करता है।
मुनि बनता फिर कर्म नाशकर, मुक्ति वधू को वरता है॥

इत्याशीर्वादः परिपुष्पाञ्जलिं क्षिपामि/क्षिपेत्।

श्री पद्मप्रभ विधान

पीठिका

(दोहा)

पद्मप्रभ की अर्चना, करने शुभ-आरंभ।
कहूँ पीठिका पूर्व में, तजकर पापारम्भ॥१॥

(ज्ञानोदय)

नगर सुसीमा धन-धान्यों से, जैसे था परिपूर्ण अरे।
वैसे ही था अधिपति उसका, श्रेष्ठ कार्य को पूर्ण करे॥
नहीं पराजित हुआ तभी तो नाम रहा, अपराजित था।
जिनेन्द्र पूजा गुरु की सेवा, कर पद पाया अरिजित था॥२॥

दान दिया था इतना जिससे, नहीं दरिद्री शेष रहा।
नहीं दुखी था कोई भी सो, भाग्यवान वह देश कहा॥
इक दिन भव भोगों का उसके, विचार मन में जब आया।
पिहितास्रव जिनवर के पद में, दीक्षा लेकर सुख पाया॥३॥

फिर भायी थी सोलह कारण, भावन पावन मुनि बनकर।
तीर्थंकर शुभ कर्म बाँधकर, सुर पाया था सब सुखकर॥
अन्त समय में स्वर्ग छोड़ जब, भूमि पधारे आप तदा।
छह महिने पहले से रत्नों को बरसाया खूब यहाँ॥४॥

पौन वर्ष तक गर्भ विराजे, तब भी सुरमय जलधर[१] ने।
हीरा-पन्ना माणिक मोती, से भर दी थी भूमि अरे॥
जन्म हुआ तब श्वभ्रभूमि भी, क्षणभर को वा शुभ्र हुई।
नरक निवासी जीवों ने भी, श्वास ग्रहण की सौख्यमयी॥५॥

---

१. बादल

यौवन बीता तब तो इक दिन, बँधा देखकर गजवर को।
पूर्व भवों का ज्ञान हुआ वैराग्य हुआ सो जिनवर को॥
दीक्षा लेकर केवल पा फिर, समवसरण में शोभित हो।
दिव्य देशना देकर सबके मन को करके मोहित औ॥६॥

गाँव-गाँव में नगर-नगर में, भव्यों को उपदेश दिया।
बारह कोठों में बैठे सब, जीवों को संदेश दिया॥
तुम भी जल्दी वृष धारण कर मुक्ति रमा का वरण करो।
उसको पाने भूल कभी नहिं, पर द्रव्यों को ग्रहण करो॥७॥

यही देशना सुन करके तो, भव्य जीव कृतकाज हुए।
तेरा ही पथ अपनाया था, जिससे शिव का राज्य मिले॥
अहो आपका गमन देशना, चलना आदिक सहज हुए।
नहिं इच्छा नहिं फल की वांछा, नहीं कर्म के करण[१] हुए॥८॥

फिर सम्मेदाचल पर जाकर, योग क्रिया को तज करके।
शिव पाया था, सुख पाया था, निज में निज को भज करके॥
ऐसे श्रीमद् पद्मप्रभ के विधान की शुरुआत करूँ।
और पूर्ण कर तव प्रसाद से, मोक्ष महल को पास करूँ॥९॥

परिपुष्पाञ्जलिं क्षिपामि/क्षिपेत्

१. बन्ध के प्रत्यय

विधान प्रारम्भ

स्थापना

(ज्ञानोदय)

खिले कमल सम खिला हुआ ही पद्मप्रभ का आनन है।
चिह्न पद्म है वर्ण पद्म सा, सच्चे ये चतुरानन हैं॥
महामनोहर कूट सुमोहन, आप योग से श्रेष्ठ बना।
ऐसे पद्मप्रभ स्वामी तुम, तीन लोक में ज्येष्ठ महा॥

(दोहा)

छटवें प्रभु श्री पद्म का, आह्वानन है आज।
सन्निधि स्थापन मैं करूँ, पूजा करने आज॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री पद्मप्रभ जिनेन्द्र अत्र अवतर अवतर संवौषट् इति आह्वाननं! ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री पद्मप्रभ जिनेन्द्र अत्र तिष्ठ-तिष्ठ ठः ठः स्थापनं! ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री पद्मप्रभ जिनेन्द्र अत्र मम सन्निहितो भव-भव वषट् सन्निधिकरणं!

अष्टक (ज्ञानोदय)

जल लेकर के स्वर्ण कलश में, धारा देने आया हूँ।
जन्म-मरण की परम्परा को, आज मिटाने आया हूँ॥
पद्मप्रभ को मुदित पद्म सम चित्त लगाकर पूजूँगा।
सम्यक पाने हे स्वामी अब, मिथ्यातम को तज दूँगा॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री पद्मप्रभ-जिनेन्द्राय नमः जन्म-जरा-मृत्यु-विनाशनाय जलं...।

चंदन शीतल रहा सुगन्धित फिर भी ताप न मेट सका।
ताप मिटाने दुर्लभता से आज आपसे भेंट सका॥
पद्मप्रभ को मुदित...॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री पद्मप्रभ-जिनेन्द्राय नमः संसार-ताप-विनाशनाय चंदनं ...।

मोती सम ये छाँट-छाँटकर सुन्दर अक्षत लाया हूँ।
कर्म मेघ[१] छट जावे अक्षय पद पाने को आया हूँ॥
पद्मप्रभ को मुदित पद्म सम चित्त लगाकर पूजूँगा।
सम्यक पाने हे स्वामी अब, मिथ्यातम को तज दूँगा॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री पद्मप्रभजिनेन्द्राय नमः अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् ...।

पुष्प चढ़ाकर चाहूँ स्वामी, विषय वासना मिट जावे।
फलतः चेला अन्तिम क्षण तक, आप नाम बस रट पावे॥
पद्मप्रभ को मुदित...॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री पद्मप्रभजिनेन्द्राय नमः कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं...।

शुद्ध सुप्रासुक नैवेद्यों की, थाली भरकर ले आया।
प्रभो आपकी भक्ति बिना भी, क्षुधा रोग क्या मिट पाया॥
पद्मप्रभ को मुदित...॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री पद्मप्रभजिनेन्द्राय नमः क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं ...।

मणिमय दीपक से भी कोई, मतलब कुछ नहिं सिद्ध हुआ।
तुम्हें चढ़ाया सो स्वामी मम, ज्ञान दीप समृद्ध हुआ॥
पद्मप्रभ को मुदित...॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री पद्मप्रभजिनेन्द्राय नमः मोहान्धकारविनाशनाय दीपं...।

धूप दशांगी चढ़ा आपको, सोचा मन में अभी-अभी।
तव पूजा के बिना किसी को, मिल न सकेगा मोक्ष कभी॥
पद्मप्रभ को मुदित...॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री पद्मप्रभ-जिनेन्द्राय नमः अष्टकर्मदहनाय धूपं...।

नारिकेल बादाम सुपारी चिलगुंजा अरु ऐला ले।
दौड़ा आया आप नाम सुन, पूजा करने चेला ये॥
पद्मप्रभ को मुदित...॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री पद्मप्रभ-जिनेन्द्राय नमः मोक्षफलप्राप्तये फलं ...।

---

१. बादल

जल चन्दन अखरोट दीप अरु धूप सुअक्षत मिला लिये।
अर्घ बनाकर पूजा की सो, अघमल मेरे आज मिटे॥
पद्मप्रभ को मुदित पद्म सम चित्त लगाकर पूजूँगा।
सम्यक पाने हे स्वामी अब, मिथ्यातम को तज दूँगा॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री पद्मप्रभ-जिनेन्द्राय नमः अनर्घ-पद-प्राप्तये अर्घ्यं...।

प्रत्येक-अर्घ्य

(दोहा)

गुण कितने हैं आपमें, कह सकता है कौन।
फिर भी कैसे हे प्रभो, रख पाऊँ मैं मौन॥

इति मण्डलस्योपरिपुष्पाजलिं क्षिपामि/क्षिपेत्

जन्मातिशय के १० अर्घ्य

(लय—शांतिनाथ मुख शशि उनहारी...)

स्वेद उसी को आवे भारी।
पापी की हो यदि तन क्यारी॥
तुम सम कोई पुण्यवान ना।
पद्मप्रभ सा सुन्दर तन ना॥१॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं निःस्वेदत्व-जन्मातिशय-गुणधारक श्री पद्मप्रभ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

पद्म सरीखा निर्मल तन है।
पद्मप्रभ का निर्मल मन है॥
निर्मल मन-वच-तन से स्वामी।
अर्घ चढ़ाऊँ जग अभिरामी॥२॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं निर्मलत्व-जन्मातिशय-गुणधारक श्री पद्मप्रभ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

दया स्रोत जब हृदय बहा था।
सबके हित का भाव बना था॥

तब तो रक्त बना था गौरा।[1]
सो पद में मैं आया दौड़ा॥३॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं क्षीरगौररुधिरत्व-जन्मातिशय-गुणधारक श्री पद्मप्रभ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

अतुलनीय वह रूप रहा है।
जग में ऐसा रूप कहाँ है॥
पद्मप्रभ को नहिं मतलब है।
पूज बचूँ मैं अब गफलत से॥४॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं सौरूप्य-जन्मातिशय-गुणधारक श्री पद्मप्रभ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

गन्ध देह की अद्भुत अनुपम।
नहिं कह सकता कोई निरुपम॥
सुगन्ध देही विदेह बनने।
आये हम सब अघ से बचने॥५॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं सौगन्ध्य-जन्मातिशय-गुणधारक श्री पद्मप्रभ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

तेरे सुन्दर लक्षण से ही।
सामुद्रिक सब शास्त्र रहे जी॥
शुभ चिह्नों से चिह्नित तनधर।
पूजूँ अर्घ चढ़ाकर मनभर॥६॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं सौलक्षण्य-जन्मातिशय-गुणधारक श्री पद्मप्रभ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

पद्म शक्ति का नहीं पार है।
उसका ही तो लिया सार है॥
तब तो सबका हित ही करते।
अर्घ चढ़ाऊँ भव को हरने॥७॥

---
१. सफेद

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं वज्रवृषभ-नाराच-संहनन-जन्मातिशय-गुणधारक श्री पद्मप्रभ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

रहा अलौकिक रूप अनोखा।
भव तिरने को तुम ही नौका॥
पद्म आपका नाम रटेगा।
पंकज सम वह खिला रहेगा॥८॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं समचतुरस्त्र-संस्थान-जन्मातिशय-गुणधारक श्री पद्मप्रभ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

नहीं वीर्य का माप रहा है।
धन्य आपका नाम कहा है॥
पद्मप्रभ को भजले भजले।
पाप कर्म को दल दे दल दे॥९॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं अप्रमितवीर्य-जन्मातिशय-गुणधारक श्री पद्मप्रभ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

इष्ट-मिष्ट अरु शिष्ट बोलते।
सबके मन में सुधा घोलते॥
धरणराज के पुत्र पद्म को।
अर्घ चढ़ावें मोक्ष सद्म हो॥१०॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं प्रियहितवादित्व-जन्मातिशय-गुणधारक श्री पद्मप्रभ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

केवलज्ञान के १० अतिशय

(छन्द-ज्ञानोदय)

एक शतक योजन तक ओ हो, ईति-भीति का नाम हटे।
अनावृष्टि नहिं अधिक वृष्टि हो, नहीं पाप संताप बचे॥
सुभिक्षता हो वहाँ जहाँ पर, पद्मप्रभ जी गमन करें।
सब आकर के पूजा करके, अपना जीवन चमन करे॥११॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं गव्यूतिशत-चतुष्टय-सुभिक्षत्व-घातिक्षय-जातिशय-गुणधारक श्री पद्मप्रभ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

गगनांगन में पद्मप्रभ जब, बिहार करते अधर तदा।
लगता मानों पद्मरागमणि, पर्वत नभ में विहर रहा॥
चार घातिया नष्ट हुए सो, अतिशय तुमको सहज मिला।
अर्घ चढ़ाकर दर्श किये तो, चेतन मेरा आज खिला॥१२॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं गगनगमनत्व-घातिक्षय-जातिशय-गुणधारक श्री पद्मप्रभ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

खाद्य स्वाद्य अरु लेह्य पेय अब नहिं आवश्यक लगते हैं।
बिना भुक्ति के भी हे स्वामी खुले खिले ही दिखते हैं॥
पद्मप्रभ तव पाद-पद्म का भ्रमर बना रस पीकर के।
तुष्ट हुआ संतुष्ट हुआ सो, शीघ्र बनूँगा धीवर[१] मैं॥१३॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं भुक्त्यभाव-घातिक्षय-जातिशय-गुणधारक श्री पद्मप्रभ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

किसी जीव को अहो आपसे, बाधा किंचित् नहिं होती।
देह बना है परमौदारिक, जिससे फीकी सुर ज्योति॥
प्रकट हुई यह शक्ति आपके, घाति कर्म के जाने से।
पद्मप्रभ सो भाव हुए मम, चरणों अर्घ चढ़ाने के ॥१४॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं अप्राणिवधत्व-घातिक्षय-जातिशय-गुणधारक श्री पद्मप्रभ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

अब तो कोई वैरी भी नहिं, कर पावे उपसर्ग कभी।
वैर छोड़कर मित्र बने वे, शरण रहेंगे शीघ्र सभी॥
कौशाम्बीमय उदयाचल के, सूरज तेरी जय - जय हो।
अर्घ चढ़ाऊँ पद्मप्रभ तव, दर्शन मुझको भव - भव हो॥१५॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं उपसर्गाभाव-घातिक्षय-जातिशय-गुणधारक श्री पद्मप्रभ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

---

१. बुद्धिमान

जन्मजात या कुल की होवें अथवा कोई सिद्ध हुई।
सब विद्याएँ बिना परिश्रम, तुममें आकर वृद्ध हुई॥
हे विद्येश्वर! विद्याधर भी विद्येश्वर बन जाने को।
अर्घ चढ़ाते पद्म आपको, फिर से भव नहिं पाने को॥१६॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं सर्वविद्येश्वरत्व-घातिक्षय-जातिशय-गुणधारक श्री पद्मप्रभ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

समवसरण में चारों दिशि में, मुख दिख करके कहते हैं।
भव्य-जनों के चारों गति के, दुख को ये प्रभु दलते हैं॥
चिराग तुम इक्ष्वाकु वंश के, महिमा गावे रात - दिवस।
पूजूँ मुक्ति गमन का स्वामी, कब आवे वह पुण्य दिवस॥१७॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं चतुर्मुखत्व-घातिक्षय-जातिशय-गुणधारक श्री पद्मप्रभ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

छाया तेरी इस धरती पर, कभी न पड़ती है स्वामी।
उसका कारण अन्तिम प्रज्ञा, पायी तुमने शिवगामी॥
इन्द्रनीलमणि का जो सुर ने, समवसरण रच दिखलाया।
तीर्थंकर पद का वैभव सो, पूजा करके सुख पाया॥१८॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं अच्छायत्व-घातिक्षय-जातिशय-गुणधारक श्री पद्मप्रभ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

नील कमल से नयन आपके, झुके नहीं नहिं झपक रहे।
नहीं देखने की इच्छा नहिं, किसी वस्तु पर अटक रहे॥
पद्म आपका लाल-कमल यह, चिह्न बताता खिले-खिले।
भक्त आपका अर्घ चढ़ाये, सारी निधियाँ उसे मिले॥१९॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं अपक्ष्मस्पंदत्व-घातिक्षय-जातिशय-गुणधारक श्री पद्मप्रभ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

घुँघराले इन केशों की अरु नख की नहिं हो वृद्धि कभी।
जो भी पूजे उसके होगी, सौख्य शान्ति की वृद्धि सही॥

पद्मप्रभ तव लालवर्ण पर, बाल भ्रमर सम काले हैं।
अर्घ चढ़ावे उन पद में जो, भक्तों के रखवाले हैं॥२०॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं समान-नख-केशत्व-घातिक्षय-जातिशय-गुणधारक श्री पद्मप्रभ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

देवकृत अतिशय के १४ अर्घ्य

(दोहा)

वाणी तेरी मागधी, यह भी अतिशय देव।
तुमने पाया सो प्रभो, करते त्रिभुवन सेव॥
धरणीधर श्री धरण के, आप रहे हैं पूत।
पद्म आपका भक्त भी, बन जावे गुणपूत॥२१॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं सर्वार्ध-मागधीभाषा-देवोपनीतातिशय-गुणधारक श्री पद्मप्रभ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

रही मित्रता सर्व में, तो किससे हो वैर।
तव पूजा से शीघ्र हो, जावे अघ की खेर॥
नाम सुसीमा मात जो, गुण में सीमातीत।
पद्म उसी के लाड़ले, दुनियाँ गावे गीत॥२२॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं सर्वजन-मैत्रीभाव-देवोपनीतातिशय-गुणधारक श्री पद्मप्रभ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

सब ऋतुएँ इक साथ ही, आयी मानो आज।
पूजा कर मुझको लगा, पाया हो शिवराज॥
कौशाम्बी के सूर्य हो, कौशाम्बी के भूप।
परम हितैषी आप सो, सभी रहे अनुरूप॥२३॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं सर्वर्तुफलादि - शोभित - तरु - परिणाम-देवोपनीतातिशय-गुणधारक श्री पद्मप्रभ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

दर्पण सी निर्दोष हो, भूमि वहाँ की शीघ्र।
समवसरण आवे जहाँ, पाप न होंगे तीव्र॥

बाड़ा नगरी में रहे, पद्मप्रभ भगवान।
अभिमानी भी दर्श से, बन जाता गतमान॥२४॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं आदर्शतल-प्रतिमा-रत्नमयी-देवोपनीतातिशय-गुणधारक श्री पद्मप्रभ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

पवन चले अनुकूल ही, तो क्यों हो प्रतिकूल।
कोई भी इस भूमि पर, सो न चुभे अघशूल॥
पद्मप्रभ तव दर्श से, स्वर्णिम हुआ प्रभात।
अनाथ भी तव पूज से, होंगे शीघ्र सनाथ॥२५॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं विहरण-मनुगतवायुत्व-देवोपनीतातिशय-गुणधारक श्री पद्मप्रभ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

आनन्दित हो जीव सब, तज देते हैं पाप।
सन्निधि पा प्रभु पद्म की, सुख पाते निर्माप॥
मंगलपुर अधिराज ने, तुमको दे आहार।
मंगलमय जीवन बना, किया पाप संहार॥२६॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं सर्वजन-परमानंदत्व-देवोपनीतातिशय-गुणधारक श्री पद्मप्रभ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

कंकर-कण्टक धूल को, दूर करें सुरवृन्द।
पद्म आपकी भक्ति में, नाचें हम तज द्वन्द्व॥
मोह मेटकर पद्म जब, पहुँचे मोहन कूट।
बचे कर्म भी आपके, गये यहीं पर टूट॥२७॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं वायुकुमारोपशमित - धूलि - कण्टकादि-देवोपनीतातिशय-गुणधारक श्री पद्मप्रभ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

अहो सुगन्धित पयस की, रिमझिम रिमझिम वृष्टि।
मेघ जाति के देव कर, बदलें जीवन सृष्टि॥
पद्मप्रभ की भक्ति से, खिले पद्म सम भव्य।
निवास लक्ष्मी का बने, फिर पावे शिव रम्य॥२८॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं मेघकुमारकृत-गंधोदकवृष्टि-देवोपनीतातिशय-गुणधारक श्री पद्मप्रभ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

पाद युगल रखते जहाँ, पद्मप्रभ जिनराज।
स्वर्णकमल रख स्वर्ण सा, रचते जीवन खास॥
पद्म - पद्म रटता रहे, रात - दिवस तव नाम।
सब कार्यों में सफल हो, बन जावे गतमान॥२९॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं पादन्यासेकृत-पद्मानि-देवोपनीतातिशय-गुणधारक श्री पद्मप्रभ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

फल पुष्पों से पत्र से, बढ़ता है तरु भार।
सो झुककर मानो तुम्हें, नमन करें सौ बार॥
देख पद्मप्रभ आपको, नाच उठे मन मोर।
चाहे नहिं फिर देखना, और किसी की ओर॥३०॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं फल-भार-नम्र-शालि-देवोपनीतातिशय-गुणधारक श्री पद्मप्रभ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

नभ हो जाता साफ है, जब आवे जिनपाल।
पद्म दर्श से भव्य के, काम बने तत्काल॥
निरी छटा तव देह की, छठे छटे भगवान।
पद्मप्रभ का भक्त तो, बन जावे सुखवान॥३१॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं शरत्कालवन्निर्मल-गगनत्व-देवोपनीतातिशय-गुणधारक श्री पद्मप्रभ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

आओ - आओ भव्य तुम, सुर करते आह्वान।
पद्म पधारे भक्ति कर, बनो धर्म की शान॥
आप चरण को पूज कर, शीश चढ़ावे धूल।
पद्मप्रभ वह शीघ्र ही, पावे भव का कूल॥३२॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं एतैतैति - चतुर्निकायामर - परस्पराह्वानन-देवोपनीतातिशय-गुणधारक श्री पद्मप्रभ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

शरदकाल में ज्यों दिखे, सभी दिशाएँ साफ।
पद्म भ्रमर के त्यों सुनो, सुख हो अपने आप ॥
पद्म आपकी भक्तिमय, कर में ले जो ढाल।
पाप वार नहिं कर सके, मार न पावे काल ॥३३॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं शरन्मेघवन्निर्मल-दिग्विभागत्व-देवोपनीतातिशय-गुणधारक श्री पद्मप्रभ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

जहाँ-जहाँ पर पद्म का, होता श्रेष्ठ बिहार।
धर्मचक्र आगे चले, सुख की हो भरमार॥
रक्त वर्ण है पद्म का, पादयुगल भी लाल।
प्रतिपल पूजूँ चाव से, मात सुसीमा लाल ॥३४॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं धर्मचक्रचतुष्टय-देवोपनीतातिशय-गुणधारक श्री पद्मप्रभ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

अष्ट प्रातिहार्य के ८ अर्घ्य

(लय–कहाँ गये चक्री...)

पद्मदर्श जो पूजा का शुभ, शौक बढ़ाता है।
तथा पाप को कषाय रिपु को, भू लुढ़काता है॥
अशोक तरु यह आप समागम, पाकर फलित हुआ।
पूजा की सो पाप सत्व अब, सारा दलित हुआ ॥३५॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं अशोकवृक्ष-प्रातिहार्य-मण्डित श्री पद्मप्रभ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

पुष्प बरसते जिनकी खुशबू, दिशा-दिशा में जा।
कहती जल्दी इनकी पूजा, करले तूँ भी आ॥
हो जावेगा नौनिहाल फिर, कुछ नहिं चाहेगा।
पद्मप्रभ के चरण छोड़कर, कहीं न जावेगा ॥३६॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं सुरपुष्पवृष्टि-प्रातिहार्य-मण्डित श्री पद्मप्रभ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

दिविजों द्वारा चौंसठ चामर, निशदिन ढुरते हैं।
पद्म आपके ऊपर सो हम, पूजन करते हैं॥
आप भक्त को मतलब केवल, वीतराग से है।
राग विनाशक वीतराग मम, राग आप में है॥३७॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं चतुःषष्ठी-चामर-प्रातिहार्य-मण्डित श्री पद्मप्रभ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

भामण्डल की छवि से लाखों, सूरज लज्जाते।
आप शरण में आना ही, तब मानें अच्छा वे॥
सच में पद्मप्रभो आप सा, नहीं हितंकर है।
तीन लोक में कोई सो हम, पूजें जय करके॥३८॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं भामण्डल-प्रातिहार्य-मण्डित श्री पद्मप्रभ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

तुरही ढोल नगाड़े वीणा, आदिक बजते हैं।
पद्मप्रभ की यशस्कीर्ति को, विस्तृत करते हैं॥
अहो-अहो हे भव्यो आकर, इनके चरण पड़ो।
पूजा करके इनके पथ पर, तुम भी आज बढ़ो॥३९॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं सुरदुन्दुभि-प्रातिहार्य-मण्डित श्री पद्मप्रभ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

पंखा विजना हवामहल को, तुमने छोड़ा सो।
छत्रत्रय ने आकर तुमसे, नाता जोड़ा औ॥
पद्म आपकी छाँव मिली तो, क्यों संतापित हो।
मेरा तन-मन आप चरण में, नित्य समर्पित औ॥४०॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं छत्रत्रय-प्रातिहार्य-मण्डित श्री पद्मप्रभ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

वचन गुप्ति को मौन नियम को, तुमने पाला सो।
फल में दिव्य ध्वनि को पाकर, धर्म बताया औ॥

ऐसी ध्वनि प्रभु पद्म समा, तीर्थंकर पाते हैं।
इसीलिए अहमिन्द्र इन्द्र भी, अर्घ चढ़ाते हैं॥४१॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं दिव्यध्वनि-प्रातिहार्य-मण्डित श्री पद्मप्रभ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

सिंहासन यह अहो मेरुगिरि, से भी ऊँचा है।
कारण प्रभुवर मात्र आपका, शासन सच्चा है॥
यह बतलाने कुबेर ने आ, खुश हो रचना की।
अर्चा करके भव से अब तो, मुझको बचना जी॥४२॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं सिंहासन-प्रातिहार्य-मण्डित श्री पद्मप्रभ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

पंचकल्याणक के ५ अर्घ्य

(घत्ता)

वह माघ माह की, गर्भकाल की, छटवीं तिथि जो काली थी।
जो पद्म योग से, रहित शोक से, बनी भव्य रखवाली थी॥
तुम गर्भ सु आये मन हरषाये, पिता धरण अरु जननी के।
तब किया सुरों ने गृह नगरों में, उत्सव भारी धरती पे॥४३॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं गर्भ-कल्याणक-मण्डित श्री पद्मप्रभ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

जब जन्म सुपाया, शचिपति आया, भक्ति भाव से आप चरण।
तब गज पर बैठा, झट से ले जा, न्हवन किया था मेरु शिखर॥
वह शुक्ला तेरस, नमते हैं सब, कार्तिक का शुभ माह रहा।
हम तव गुण गाकर, अर्घ चढ़ाकर, पा जावे शिव राज्य अहा॥४४॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं जन्म-कल्याणक-मण्डित श्री पद्मप्रभ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

जब विरत भाव में, बड़े चाव से, लीन हुए थे जिनस्वामी।
तब लौकान्तिक आ आप चरण पा, करे प्रशंसा शिवगामी॥

औ कार्तिक शुक्ला, मन में हरषा त्रयोदशी को दीक्षा ली।
भव दुख से बचने, निज में रमने, मोक्षमार्ग की शिक्षा दी॥४५॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं तपः कल्याणक-मण्डित श्री पद्मप्रभ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

तब केवलज्ञानी, निज के ध्यानी, बने घातिया नाश हुए।
पा अर्हत् पद को, आतम रत हो, मोक्ष सदन के पास हुए॥
वह चैत्र माह का, दिवस खास था, जिसमें बन्धन विलय हुए।
हम अर्घ चढ़ाकर, भाव बढ़ाकर, आज पुण्य के निलय हुए॥४६॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं ज्ञान-कल्याणक-मण्डित श्री पद्मप्रभ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

शिव ललना आयी, अति हरषायी, तुमको पाकर धन्य हुई।
फिर क्यों छोड़ेगी, मन मोड़ेगी, तुमसे ओहो रम्य हुई॥
तब कृष्णा फाल्गुन, पा करके गुण, चौदस उजली कर डाली।
श्री पद्मप्रभ ने, शिव को वर के, फैला दी थी खुशहाली॥४७॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं निर्वाण-कल्याणक-मण्डित श्री पद्मप्रभ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

अनंत चतुष्टय के ४ अर्घ्य

(लय—मुनि सकलव्रती बड़भागी...)

जब घाति कर्म को चूरा, तब ज्ञान हुआ था पूरा।
वह पद्म आपने पाया, सो हमने अर्घ चढ़ाया॥४८॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं अनंत-ज्ञान-गुणमण्डित श्री पद्मप्रभ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

यह दर्श मिला जो तुमको, वो मिल जावे अब हमको।
ये दर्शन गुणगण धारी, श्री पद्म रहे सुखकारी॥४९॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं अनंत-दर्शन-गुणमण्डित श्री पद्मप्रभ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

नहिं मोहकर्म बच पाया, सो अमित सौख्य विलसाया।
यह नष्ट न हो अब तेरे, मैं पूजूँगा आ डेरे॥५०॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं अनंतसुखगुणमण्डित श्री पद्मप्रभजिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

जो अन्तराय दुखदायी, तुम जीत हुए शिवरायी।
मैं पद्मपाद को पूजूँ, तो भव में अब क्यों जूझूँ॥५१॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं अनंतवीर्यगुणमण्डित श्री पद्मप्रभजिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

१८ दोष से रहित के १८ अर्घ्य

(लय—श्री वीर महाअतिवीर...)

यह क्षुधा रोग दुःख रूप, उसको चूर्ण किया।
अति दुष्कर जो यह कार्य, तुमने पूर्ण किया॥
हे पद्म आपका नाम, आठों याम रटूँ।
मैं तजकर सारे काम, पूजन आज करूँ॥५२॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं क्षुधा-दोष-रहित श्री पद्मप्रभजिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

जो प्यास करे बेहोश, उसको नाश किया।
सो दर्शन करके पद्म, हर्षित आज जिया॥
हे तृषा विजेता देव, तेरी अर्चा से।
मम मिट जावे अब, शीघ्र भव की चर्चा ये॥५३॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं तृषादोष-रहित श्री पद्मप्रभ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

नहिं आप रहे हैं भीरु, भय का नाम नहीं।
है कारण भय की देव, तुमसे हार कही॥
हे पद्म भयों से मुक्त, तुम ही त्राता हो।
प्रभु पद्म हमारे आप, भाग्य विधाता हो॥५४॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं भय-दोष-रहित श्री पद्मप्रभ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

क्यों द्वेषी होगा पद्म, तुममें वत्सल है।
सो मित्र बने त्रय लोक, तेरे दर्शन से॥

जो दोष रहा है द्वेष, रास्ता नाप गया।
औ पूजा जिसने आज, उत्तम काम किया॥५५॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं द्वेष-दोष-रहित श्री पद्मप्रभ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

जब मन में आता राग, व्याकुल होता मैं।
पा संगति तेरी पद्म, रति को खोता मैं॥
तुम धरण भूप के पुत्र, नयन सितारे हो।
तव पूजन करके भव्य, सबसे न्यारे हो॥५६॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं राग-दोष-रहित श्री पद्मप्रभ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

जो अहंकार ममकार, उसको मोह कहा।
औ तुमने द्वय को नाश, पाया मोक्ष अहा॥
यह सिंहासन छविदार, अधर विराजित हो।
हम अर्घ चढ़ाकर पद्म, शिव में राजित हों॥५७॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं मोह-दोष-रहित श्री पद्मप्रभ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

तब चिंतित होता जीव, पर से स्नेह जगे।
तुम पर द्रव्यों से दूर, किसकी फिक्र लगे॥
मैं वंदन करके पद्म, तेरा स्मरण करूँ।
तव पूजा करके शीघ्र, अन्तिम मरण करूँ॥५८॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं चिंता-दोष-रहित श्री पद्मप्रभ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

तन होता नहिं तव जीर्ण, यौवन नित्य रहे।
है कारण उसका कर्म, घाति न पास कहे॥
जो इक्ष्वाकु श्रुत वंश, उसके दीपक हो।
हो कृपा आपकी पद्म, जीवन हित-मित हो॥५९॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं जरादोष-रहित श्री पद्मप्रभ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

यह देह रोग का पिण्ड, तो भी स्वस्थ हुए।
सो अहो निरोगी पद्म, तुम माध्यस्थ हुए॥

मम सभी तरह के रोग, स्वामी मिट जावे।
मैं पूजूँ अब तो आत्म-वैभव मिल जाये॥६०॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं रोग-दोष-रहित श्री पद्मप्रभ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

इस तन को बारम्बार, पाकर छोड़ दिया।
पर बना न मैं गतदेह, सो फिर मरण किया॥
प्रभु पद्म गये शिवलोक, अब नहिं जन्मेंगे।
हम नाच-नाच वसुयाम, तुमको अर्चेंगे॥६१॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं मरण-दोष-रहित श्री पद्मप्रभ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

जो मल की क्यारी देह, स्वेद सुझरता है।
तव तन है निर्मल देव, दुख को हरता है॥
सुर किन्नर आकर नित्य, महिमा गाते हैं।
हम पूजा करके पद्म, गरिमा पाते हैं॥६२॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं स्वेद-दोष-रहित श्री पद्मप्रभ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

जब बढ़ता मन में खेद, दुःख बढ़ाता है।
तब पूजन का यह भाव, पाप मिटाता है॥
श्री पद्म रहे निर्वेद, मोक्ष प्रणेता हैं।
मैं और कहूँ क्या अष्ट, कर्म विजेता है॥६३॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं खेद-दोष-रहित श्री पद्मप्रभ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

औ आठों मद को जीत, निर्मद आप हुए।
हे निर्दोषी जिनराज, रिपुदल साफ हुए॥
मैं मद तज करके आज, पूजा करता हूँ।
अब नहिं आवे उन्माद, पद में झुकता हूँ॥६४॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं मद-दोष-रहित श्री पद्मप्रभ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

रति हारी तुमसे पद्म, लौट न आवेगी।
सो चेतनता तज स्नेह, शिव में जावेगी॥

हे अभयंकर जिनदेव, तेरी पूजन से।
मम रति न बचे अवशेष, तव गुण कूजन से ॥६५॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं रति-दोष-रहित श्री पद्मप्रभ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

है जान लिए त्रय लोक, कुछ नहिं शेष रहा।
सो चकित न होते पद्म, विस्मय दोष गया॥
मैं हुआ अचम्भित देख, तेरी सुन्दरता।
हे पद्म तभी तो आज पूजा मंदिर आ ॥६६॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं विस्मय-दोष-रहित श्री पद्मप्रभ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

सब भूले भोला जीव, निद्रा जब आती।
तुम ओहो निद्रातीत, निधियाँ पद आती॥
मैं सबकी संगति छोड़, तव पद आया हूँ।
हा! जाना नहिं वृष सत्य, सो भरमाया हूँ ॥६७॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं निद्रा-दोष-रहित श्री पद्मप्रभ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

नव देह धारना हाय भ्रमण बढ़ाता है।
है स्मरण आपका मात्र जन्म मिटाता है॥
ये पद्म जन्म से दूर, भ्रमित न हो पावे।
सो श्रीफल के ले थाल, सेवक पद आवे ॥६८॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं जन्म-दोष-रहित श्री पद्मप्रभ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

रे शोक शत्रु के दाँत खट्टे कर डाले।
जो जग जीवों को हाय, देता दुख काले॥
तव पद्मरागमय देह, सबको भाता है।
सो पद्म आपका भक्त, अर्घ चढ़ाता है ॥६९॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं शोक-दोष-रहित श्री पद्मप्रभ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

(ज्ञानोदय)

मोह कर्म का नाश हुआ सो, दिव्य देशना दे करके।
भव्यों का कल्याण किया फिर, कूट सुमोहन जा करके॥

शेष अघाती कर्म मिटाकर, सिद्धालय में पहुँच गये।
उसी कूट को अर्घ चढ़ा हम, सार्थक जीवन आज करें ॥७०॥

ॐ ह्रीं सम्मेदशिखरस्थित मोहनकूटेभ्यो नमः अर्घ्यं ...।

द्वीप अढ़ाई मध्यलोक में, जहाँ-जहाँ जिन प्रतिमा है।
कुमकुम वर्णी पद्मप्रभ की, निरुपम अद्भुत प्रतिभा है॥
मन-वच-तन से उन सबको मैं, नमन करूँ शत बार अभी।
मेरे उर में और किसी की, श्रद्धा होगी नहीं कभी ॥७१॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री पद्मप्रभ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

पूर्णार्घ्य (घत्ता)

तव चिह्न कमल है, भाव अमल है, रत्नत्रय को पूर्ण किया।
जो कूट सुमोहन, हे जग सोहन, वहीं कर्म को चूर्ण किया॥
हे पद्म जिनन्दा, सुख के कन्दा, मुझको भव से पार करो।
मैं अर्घ चढ़ाऊँ, शीश नमाऊँ, मेरे अघ का भार हरो ॥७२॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री पद्मप्रभ-जिनेन्द्राय नमः पूर्णार्घ्यं...।

जाप्य मंत्र—ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री पद्मप्रभ-जिनेन्द्राय नमः।

(९/२७/१०८)

जयमाला (दोहा)

रही मनोहर माल ये, जयमाला गुणरूप।
गाऊँ प्रभु श्री पद्म की, बनने मैं शिवभूप ॥१॥

(ज्ञानोदय)

अहो अधीश्वर तुमने क्षण में, पाप पंक को धो डाला।
सो कैसे क्या कर पावे, उपसर्ग आप पर हा! काला॥
स्फटिक रत्न सम विशुद्ध तन में, सप्त-धातु का नाम नहीं।
इसीलिए तो नख केशों की, वृद्धि रुकी है आज सही ॥२॥

ध्यानमयी ले कुठार तुमने, घातिकर्म मय तरुवर को।
काट दिया सो अनन्तजित् यह नाम हुआ है जिनवर ओ॥
नहीं बुढ़ापा नहीं जन्म है, नहीं मृत्यु अब आयेगी।
इसीलिए तो मुक्ति रमा भी, तेरे ही गुण गायेगी॥३॥
मल से वर्जित तन है चेतन, राग-द्वेष से रहित हुआ।
अमल कहाते निर्मल तब तो, द्रव्य-भाव मल व्यथित हुआ॥
बिना किसी की सहायता के, मोक्षमार्ग को अपनाया।
अहो स्वयंभू स्वयंबुद्ध बन, ज्ञान ज्योति पा शिव पाया॥४॥
पद्मराग सम वर्ण आपका, लेकिन आँखें लाल नहीं।
कहे क्रोध को नाश किया सो पूज्य बनी तव चाल सही॥
तुमने सो ही पूज्य हुए तुम, क्षमावन्त मुनिराजों से।
क्षमाशील से, क्षमाझील से, क्षमासिन्धु ऋषिराजों से॥५॥
पद्म रहा जो लौकिक उस पर, लौकिक लक्ष्मी रहती है।
वह है नश्वर क्षणभंगुर है, आत्मिक सुख को हरती है॥
किन्तु पद्म तुम रहे अलौकिक, तभी अलौकिक लौकिक भी।
लक्ष्मी आकर चरण बसी पर, प्रेम न उससे किंचित् जी॥६॥
किला दुर्ग को छोड़ महल को, सघन वनों में तप धारा।
सो पाया यह समवसरण जो, शरण रहा है सुखकारा॥
आज्ञा देना छोड़ अहो तुम, स्वतंत्र अविचल एकाकी।
कानन में जा बसे तभी तो, आज्ञा सबने ही मानी॥७॥
उद्यानों का वृक्ष छाँव का, छाते आदिक सबका ही।
त्याग किया सो तीन छत्रमय, वैभव है यह इनका जी॥
आसन छोड़े सो सिंहासन, प्रातिहार्यमय आज मिला।
पद्मप्रभ तव वैभव देखा तो शिवपथ का राज[१] मिला॥८॥

१. रहस्य

अतिशयकारी बाड़ा नगरी, उसका जो इतिहास रहा।
उसको सुनलो जहाँ दर्श से बनते सारे काम अहा॥
एक व्यक्ति ने इक दिन आकर, विशिष्ट जन से पूछा यों।
जल का संकट भाई कैसे, मिट पायेगा आप कहो॥९॥
प्रश्न सुना तो बोला जब, श्री पद्मप्रभ भू आयेंगे।
निश्चित पानी खूब मिलेगा, दु:ख सभी मिट जायेंगे॥
कुछ ही दिन के बाद सुनो, श्री मूला नामक जाट रहा।
उसने ही तो भूमि खनन में, पाया था जिनबिम्ब यहाँ॥१०॥
देख कमल का चिह्न पद्मप्रभ, नाम सुयोजित कर जल्दी।
मंदिर बनवा स्थापित करके, अद्भुत अनुपम की भक्ति॥
तब से बाड़ा ग्राम पद्मप्रभ, क्षेत्र नाम से ख्यात हुआ।
अब तक कौन रहा है जिसके, मन का नहिं कुछ काम हुआ॥११॥
और रही जो लंका नगरी, रावण जिसका था स्वामी।
रहा विभीषण उसका भाई, भक्त आपका अभिरामी॥
उसने अपने राजमहल में आप बिम्ब को स्थापित कर।
पूजा की थी अर्चा की थी, कार्य किये सब पूजन कर॥१२॥
चैत्यालय बनवाया जिसमें, खम्भ हजारों लगवाए।
स्फटिक रत्न के स्वर्णमयी जो, रत्नों से थे जड़वाए॥
शिखर बनाया गगन चूमता, कलश चढ़ाया सोने का।
मन्दिर सुन्दर बनवाया जो, साधन था अघ धोने का॥१३॥
केसरिया ध्वज फहरा करके, श्रेष्ठ पताका लहराई।
घनी घण्टियाँ छोटी-छोटी, बजने वाली लगवाईं॥
रुन-झुन रुन-झुन बज करके वे, पद्मप्रभ का यशगाती।
उस मन्दिर पर पंचरंग की, विविध ध्वजाएँ लहराती॥१४॥
प्रभासगिरि पर अहो आपके कल्याणक तप ज्ञान हुये।
समवसरण भी बना यहीं पर, प्रातिहार्य शुभ आठ मिले॥

गंगा-यमुना दो नदियों के, बीच पहाड़ी एक यहीं।
जहाँ ललित घट आदि साधु ने, करी तपस्या पुण्यमही॥१५॥
वहीं हाय वे जल में डूबे, किन्तु न समता छोड़ी थी।
और देह से ममता तजकर, कर्म शृंखला तोड़ी थी॥
पद्म आपकी पूजा करके, सुरियाँ नाचें गावे रे।
छम-छम छम-छम घुँघरू वाली, पायल पहने आवे वे॥१६॥
खन-खन खन-खन चुड़ियों की खनकार चित्त को मोह रही।
आप भक्ति से प्राप्त खुशी ही, सब खुशियों को रोक रही॥
मैं भी नाचूँ खुश हो करके, कोटि-कोटिशः नमन करूँ।
नृत्य करूँ आनन्दित होकर, पूर्व पाप का शमन करूँ॥१७॥
ढोल बजाऊँ बंशी वीणा, भेरी बजवा हरषाऊँ।
ठुमक-ठुमककर उमग-उमगकर, भूल सभी को पद आऊँ॥
क्या बतलाऊँ कैसे अन्दर की बातें मैं बतलाऊँ।
किन शब्दों में किन छन्दों में, किस लय में मैं गुण गाऊँ॥१८॥
भाव जगे हैं असंख्यात पर, प्रज्ञा साथ न देती सो।
जयमाला मैं पूर्ण करूँ फल, शुद्ध भाव की खेती हो॥
अल्पबुद्धि के कारण स्वामी गलती इसमें जो कुछ हो।
क्षमा करो हे पद्मप्रभ जी! क्योंकि आप ही सब कुछ हो॥१९॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री पद्मप्रभ-जिनेन्द्राय नमः जयमाला पूर्णार्घ्यं...।

आशीर्वाद

पद्मप्रभ का विधान पूजन, जो भी करता निशदिन है।
खिला रहेगा पंकज जैसा, नहीं फँसेगा दुर्दिन में॥
इन्द्र बने फिर भूपति नृप के, भोग उसे भरपूर मिले।
परम्परा से शुक्लध्यान हो, उसके सारे कर्म गले॥

इत्याशीर्वादः परिपुष्पाञ्जलिं क्षिपामि/क्षिपेत्

श्री सुपार्श्वनाथ विधान

पीठिका

(दोहा)

परम पूज्य प्रभु पाद की, पूजा जो परमार्थ।
लिखकर उसकी पीठिका, गाऊँ में गुण सार्थ॥

(ज्ञानोदय)

पन्द्रह महिने माणिक मोती, हीरा पन्ना बरसाकर।
गर्भ महोत्सव किया सुरों ने, स्वर्ग लोक से भू आकर॥
जन्म हुआ यह जान शीघ्र, सौधर्म इन्द्र ले परिकर को।
शचि देवी के साथ बनारस, नगरी आकर सुखकर जो॥१॥

सुमेरु पर ले जाकर क्षीरोदधि के जल से न्हवन किया।
और नृत्य कर ताण्डव प्यारा, अपने मन को चमन किया॥
फिर सौंपा था माँ पृथ्वी को, बहुत-बहुत सत्कार किया।
तथा भूप श्रीसुप्रतिष्ठ के, मन का सारा काम किया॥२॥

बसन्त ऋतु की शोभा का जब, नाश नयन से देख लिया।
विरति भाव उर आया तब, लौकान्तिक सुर ने गान किया॥
आकर भूपर पूज्य प्रभु के, विरत भाव की श्लाघा की।
इसविध दीक्षा कल्याणक की, महिमा गायी गाथा भी॥३॥

ज्ञान सुकेवल पाया तब तो, समवसरण का ठाठ हुआ।
बारह कोठों में भव्यों ने, सत्य-धर्म का लाभ लिया॥
मोक्षपुरी में सुपार्श्व पहुँचे, सफल हुआ पुरुषार्थ तभी।
जन्म न धारे भव नहिं पावे, नहिं आवेंगे लौट कभी॥४॥

ऐसे पाँचों कल्याणक में, देवों ने सब काम किया।
ढोल नगाड़े बजा-बजाकर, जीवन को कृतकाज किया॥

अहो अलौकिक अद्भुत-अद्भुत, महिमा की थी तेरी जो।
जिसने देखी नयनों से धनि, आँखें तरसे मेरी तो॥५॥

मेरा तो हा पाप उदय से, पंचम युग में जन्म हुआ।
इसीलिए मैं देख न पाया, पंच महोत्सव नाथ यहाँ॥
नहिं देखा है गर्भ महोत्सव, नहीं जन्म तप देखा है।
समवसरण में जाकर स्वामी, मिटी न अघ की रेखा है॥६॥

नहीं मोक्षकल्याणक देखा, अतः चित्त मम दुखिया है।
शीघ्र मिले साक्षात् दर्श तो, मन हो जावे सुखिया ये॥
वर्तमान में जिनवाणी पढ़, गुरु के मुख से सुन करके।
अल्प मात्र जो जाना स्वामी, उसमें से कुछ कह करके॥७॥

भक्ति करूँ मन तृप्त करूँ मैं, थोड़े से गुण गा करके।
चाहूँ मिथ्यातम नश जावे, आप शरण को पा करके॥
उसी भक्ति का प्रतीक प्रभुवर, विधान तेरा रच करके।
अर्घ चढ़ा जयमाला गाऊँ, पुनः पुनः पद नम करके॥८॥

परिपुष्पाञ्जलिं क्षिपेत् / क्षिपामि

पूजन प्रारम्भ

स्थापना

(ज्ञानोदय)

बनारसी के सुपार्श्व स्वामी, सौ इन्द्रों से वन्दित हैं।
तीन लोक के भव्य जनों में, गाथा इनकी चर्चित है।
अतिशय पाये कल्याणक शुभ प्रातिहार्य से अर्चित हो।
मोक्ष पधारे सो त्रिभुवन से पूज्य पाद तव पूजित औ॥

(दोहा)

आह्वानन है स्थापना, सन्निधि करके आज।
पूजूँ स्वामी सिद्ध हो, कर्मक्षय का काज॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री सुपार्श्वनाथ जिनेन्द्र अत्र अवतर अवतर संवौषट् इति आह्वाननं! ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री सुपार्श्वनाथ जिनेन्द्र अत्र तिष्ठ-तिष्ठ ठः ठः स्थापनं! ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री सुपार्श्वनाथ जिनेन्द्र अत्र मम सन्निहितो भव-भव वषट् सन्निधिकरणं!

अष्टक

(लय—श्री वीर महाअतिवीर...)

ले सिन्धु झाग सा नीर, चरण चढ़ाऊँ मैं।
ये जन्म-मरण की पीर, अब नहिं पाऊँ मैं॥
हे सप्तम प्रभु तव पाद, त्रिभुवन अर्चित हैं।
तव गुणमणियाँ दिन-रात, सुर से चर्चित हैं॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री सुपार्श्वनाथ-जिनेन्द्राय नमः जन्म-जरा-मृत्यु-विनाशनाय जलं...।

शुभ मलयागिरि का श्रेष्ठ, चन्दन लाया हूँ।
मैं पाप-ताप से त्रस्त, होकर आया हूँ॥
हे सप्तम प्रभु...॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री सुपार्श्वनाथ-जिनेन्द्राय नमः संसार-ताप-विनाशनाय चंदनं ...।

मैं तन्दुल का ले पुंज, धवलिम उज्ज्वल जो।
हो अक्षय पद का राज्य, शुद्ध समुज्ज्वल जो॥
हे सप्तम प्रभु तव पाद, त्रिभुवन अर्चित हैं।
तव गुणमणियाँ दिन-रात, सुर से चर्चित हैं॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री सुपार्श्वनाथजिनेन्द्राय नमः अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् ...।

मैं घबरा करके कामविजयी पद आया।
ये पुष्प चढ़ाकर आज, आतम हरषाया॥
हे सप्तम प्रभु...॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री सुपार्श्वनाथजिनेन्द्राय नमः कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं...।

ये नैवज जो हैं शुद्ध, ताजा बनवाये।
पद अर्पित करके बुद्ध, फल में शिव पावे॥
हे सप्तम प्रभु...॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री सुपार्श्वनाथजिनेन्द्राय नमः क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं...।

यह जगमग करता दीप, अर्पित आज करूँ।
हो मोहमहातम नाश, तुम सम काम करूँ॥
हे सप्तम प्रभु...॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री सुपार्श्वनाथ-जिनेन्द्राय नमः मोहान्धकार-विनाशनाय दीपं ...।

ये धूप दशांगी श्रेष्ठ, चरणों लाता हूँ।
मम अष्ट-कर्म हो नष्ट, तुम्हें चढ़ाता हूँ॥
हे सप्तम प्रभु...॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री सुपार्श्वनाथजिनेन्द्राय नमः अष्टकर्मदहनाय धूपं ...।

बादाम सुपारी लौंग, मनभर लाता हूँ।
मैं पाने शिव का राज्य, प्रतिदिन आता हूँ॥
हे सप्तम प्रभु...॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री सुपार्श्वनाथजिनेन्द्राय नमः मोक्षफलप्राप्तये फलं...।

जल चन्दन अक्षत पुष्प, दीपक धूप मिला।
मैं अर्घ बनाकर पूज, पाऊँ सिद्धशिला॥
हे सप्तम प्रभु तव पाद, त्रिभुवन अर्चित हैं।
तव गुणमणियाँ दिन-रात, सुर से चर्चित हैं॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री सुपार्श्वनाथ-जिनेन्द्राय नमः अनर्घपदप्राप्तये अर्घ्यं...।

प्रत्येक-अर्घ्य

(दोहा)

सुपार्श्व तेरे चरण को, अष्टक से मैं पूज।
कुछ गुण को अब अर्घ दे, बनूँ मोक्ष का सूत्र॥

इति मण्डलस्योपरिपुष्पाञ्जलिं क्षिपामि/क्षिपेत्

जन्मातिशय के १० अर्घ्य

(लय—मुनि सकलव्रती...)

नहिं स्वेद कभी भी आवे, तव देह सभी को भावे।
जिस भव में अतिशय पाया, नहिं जन्म पुनः था पाया॥१॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं निःस्वेदत्व-जन्मातिशय-गुणधारक श्री सुपार्श्वनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

नहिं मूत्र विसर्जन होता, नहिं मल को तव तन ढोता।
यह अतिशय है प्रभु न्यारा, हो पूजक घर सुख प्यारा॥२॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं निर्मलत्व-जन्मातिशय-गुणधारक श्री सुपार्श्वनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

जो खून क्षीर सा तेरा, है तुममें गुण का डेरा।
जब सबके हित को भाया, सो मैं भी तव पद आया॥३॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं क्षीरगौररुधिरत्व - जन्मातिशय - गुणधारक श्री सुपार्श्वनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

है संहनन पहला अच्छा, प्रभु पाया तुमने सच्चा।
हे सप्तम जिन तव गाथा, मैं गाऊँ मोक्ष विधाता॥४॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं वज्रवृषभ-नाराच-संहनन-जन्मातिशय-गुणधारक श्री सुपार्श्वनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

तव रूप रहा अति सुन्दर, जो लगता सुख का मन्दिर।
हो वृष की आप पताका, मैं पद में अर्घ चढ़ाता॥५॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं सौरूप्य-जन्मातिशय-गुणधारक श्री सुपार्श्वनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

नहिं गन्ध जगत में ऐसी, है सुपार्श्व जिन तव जैसी।
मिट जावे भव की बाधा, बन पूजूँ वृष का प्यासा॥६॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं सौगन्ध्य-जन्मातिशय-गुणधारक श्री सुपार्श्वनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

संस्थान रहा तव उत्तम, वह पाया तुमने सत्तम।
हे कृपासिन्धु पद पूजूँ, तो भव में फिर क्यों जूझूँ॥७॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं समचतुरस्त्र-संस्थान-जन्मातिशय-गुणधारक श्री सुपार्श्वनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

जो लक्षण तेरे तन में, वे अच्छे लगते जग में।
प्रभु सप्तम तुमको ध्याऊँ, कर पूजा अर्घ चढ़ाऊँ॥८॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं सौलक्षण्य-जन्मातिशय-गुणधारक श्री सुपार्श्वनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

तुम अतुल शक्ति के धारी, पर तीन लोक हितकारी।
हो आप धर्म सन्देशी, मैं बनूँ आत्म अन्वेषी॥९॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं अप्रमितवीर्य-जन्मातिशय-गुणधारक श्री सुपार्श्वनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

है श्रुतिप्रिय तेरी वाणी, जो सबको है कल्याणी।
मैं आया भक्त पुजारी, प्रभु तुम ही भव दुखहारी॥१०॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं प्रियहितवादित्व-जन्मातिशय-गुणधारक श्री सुपार्श्वनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

केवलज्ञानातिशय के १० अर्घ्य

(ज्ञानोदय)

सुपार्श्व स्वामी मिले समागम, जहाँ आपका जिसको भी।
ईति-भीति की, दुःख दर्द की, बाधा होगी किसको जी॥
घाति कर्म का नाम निशाना, मिटा दिया सो अतिशय ये।
सुभिक्षतामय प्रकट हुआ शुभ, अर्घ चढ़ाऊँ निशदिन मैं॥११॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं गव्यूतिशत-चतुष्टय-सुभिक्षत्व-घातिक्षय-जातिशय-गुणधारक श्री सुपार्श्वनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

पाँच सहस धनु ऊपर चलते, निराधार ही नभतल में।
अचरज होता हमको तो भी, नहिं गिरते हैं भूतल में॥
सुपार्श्व आपने शुक्लध्यान से, महिमा ऐसी पायी है।
शिष्य मण्डली तब तो तुमको, अर्घ चढ़ाने आयी है॥१२॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं गगनगमनत्व-घातिक्षय-जातिशय-गुणधारक श्री सुपार्श्वनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

भोजन पानी बिना आपकी, काया शिथिल न होती है।
आत्मामृत का पान किया सो, शान्ति न पलभर खोती है॥
भुक्तिभाव का अभाव अतिशय, सुपार्श्वप्रभु को सहज मिला।
अर्घ चढ़ाकर पूजा की सो, मेरा मानस आज खिला॥१३॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं भुक्त्यभाव-घातिक्षय-जातिशय-गुणधारक श्री सुपार्श्वनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

जीव मात्र को सौख्य मिले यदि, आप चरण की धूल मिले।
बाधा नहिं हो कभी किसी को, पाप पंक का मूल मिटे॥
प्राणिघात नहिं होवे ऐसी, शक्ति न कोई पा सकता।
सुपार्श्व जैसा महामनस्वी, पाकर शिव में जा सकता॥१४॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं अप्राणिवधत्व-घातिक्षय-जातिशय-गुणधारक श्री सुपार्श्वनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

आनन तेरा एक रहा जो, भव के पातक दलता है।
चारों दिशि में कैसे दिखता, विस्मय हमको लगता है॥
धन्य-धन्य हे सुपार्श्व स्वामी, पूजा कर हम धन्य हुए।
अर्घ चढ़ाकर दर्श किये तो, दुःख मिटे हम रम्य हुए ॥१५॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं चतुर्मुखत्व-घातिक्षय-जातिशय-गुणधारक श्री सुपार्श्वनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

ऋद्धि-सिद्धियाँ जितनी जग में, बिना बुलाए आ करके।
हुई समर्पित भाग्य सराहें, तुम सम प्रभु को पा करके॥
लेकिन स्वामी तुमको इनसे, किंचित् भी नहिं मतलब है।
सुपार्श्व की जो पूजा करता, पड़ता नहिं वह गफलत में॥१६॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं सर्वविद्येश्वरत्व-घातिक्षय-जातिशय-गुणधारक श्री सुपार्श्वनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

व्यन्तर ज्योतिष असुर व्याघ्र भी, नहीं करें उपसर्ग प्रभो।
पंचम ज्ञानी तुम्हें देखकर, वैर भूल हों शान्त विभो॥
सुपार्श्व तेरे चरणों में गौ-सिंह साथ में खेल रहे।
अर्घ चढ़ाऊँ हे सर्वेश्वर, छूटे अघ का मैल अरे॥१७॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं उपसर्गाभाव-घातिक्षय-जातिशय-गुणधारक श्री सुपार्श्वनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

परमौदारिक तन की छाया, कैसे भू पर पड़ पावे।
छाया-माया मिटी प्रभो क्यों, काया से मम[१] रह जावे॥
सुपार्श्व अतिशय तुम जैसे श्री, तीर्थंकर को मिलता है।
पापी भी तव पूजा करके, पाप कर्म को दलता है॥१८॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं अच्छायत्व-घातिक्षय-जातिशय-गुणधारक श्री सुपार्श्वनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

तीर्थंकर पद उदित हुआ सो, रुका झपकना पलकों का।
भजन करूँ मैं अतः नित्य ही, सुपार्श्व प्रभु के चरणों का॥

---

१. ममता

ताल मंजीरे बजा-बजा मैं, नाच-नाचकर अर्घ चढ़ा।
वीतरागता देख आपकी, उर में मेरे हर्ष बढ़ा॥१९॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं अपक्ष्मस्पंदत्व-घातिक्षय-जातिशय-गुणधारक श्री सुपार्श्वनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

बाल न बढ़ते नख की भी तो, वृद्धि रुकी थी तीर्थंकर।
समवसरण में अर्हद् पद को, पाया था जब क्षेमंकर॥
तब पाकर के दिव्यदेशना, धन्य हुए कृतकाज हुए।
पूजा हमने सुपार्श्व को तो, शेष बचे सब काम हुए॥२०॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं समान-नख-केशत्व-घातिक्षय-जातिशय-गुणधारक श्री सुपार्श्वनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

देवकृत अतिशय के १४ अर्घ्य

(लय—श्री वीर महा...)

तव अर्धमागधी वाच, धर्म बताती है।
प्रभु पूजा तेरी साँच, पाप मिटाती है॥
जो पूजे देव सुपार्श्व, कूट प्रभास जहाँ।
हो उसके सुख का वास, दुख का नाम कहाँ॥२१॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं सर्वार्ध-मागधीभाषा-देवोपनीतातिशय-गुणधारक श्री सुपार्श्वनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

तब बनते सब ही मित्र, जब तुम आते हो।
हे प्रभो आप गतशत्रु, सबको भाते हो॥
जो पूजे देव...॥२२॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं सर्वजन-मैत्रीभाव-देवोपनीतातिशय-गुणधारक श्री सुपार्श्वनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

हैं ऋतु-ऋतु के सब फूल, फल भी फलते ओ।
वे खुले खिलेंगे जीव, तव पद रमते जो॥
जो पूजे देव...॥२३॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं सर्वर्तुफलादि - शोभित - तरु - परिणाम-देवोपनीतातिशय-गुणधारक श्री सुपार्श्वनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

हो धरती काँच समान, तेरा संग मिले।
तू रम जा प्रभु के पाद, भव का बन्ध मिटे॥
जो पूजे देव सुपार्श्व, कूट प्रभास जहाँ।
हो उसके सुख का वास, दुख का नाम कहाँ॥२४॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं आदर्शतल-प्रतिमा-रत्नमयी-देवोपनीतातिशय-गुणधारक श्री सुपार्श्वनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

तब वायु चले अनुकूल, डेरा तव आवे।
मिल जावे भव का कूल, तेरे पद ध्यावे॥
जो पूजे देव...॥२५॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं विहरण-मनुगतवायुत्व-देवोपनीतातिशय-गुणधारक श्री सुपार्श्वनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

हो परम-परम आनन्द, आप पधारो तो।
हे भव्यो पहुँचों पार, अर्घ चढ़ाओ तो॥
जो पूजे देव...॥२६॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं सर्वजन-परमानंदत्व-देवोपनीतातिशय-गुणधारक श्री सुपार्श्वनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

नहिं बचे वहाँ पर धूल, तव पद धूल मिले।
तू भज ले बनकर भक्त, अघ की धूल मिटे॥
जो पूजे देव...॥२७॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं वायुकुमारोपशमित - धूलि - कण्टकादि-देवोपनीतातिशय-गुणधारक श्री सुपार्श्वनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

औ खुशबू वाला नीर, रिमझिम गिरता है।
मिट जाय भूत की पीर, जो पद झुकता है॥
जो पूजे देव...॥२८॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं मेघकुमारकृत-गंधोदकवृष्टि-देवोपनीतातिशय-

गुणधारक श्री सुपार्श्वनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

रे आओ-आओ मित्र, पूजा आज करें।
ये आए त्रिभुवन ईश, अघतम नाश करें॥
जो पूजे देव सुपार्श्व, कूट प्रभास जहाँ।
हो उसके सुख का वास, दुख का नाम कहाँ॥२९॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं एतैतैति - चतुर्निकायामर - परस्पराह्वानन-देवोपनीतातिशय-गुणधारक श्री सुपार्श्वनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

ये कांचन निर्मित पद्म, प्रभुवर चरण तले।
रख देते सुरगण भव्य, पाते सौख्य भले॥
जो पूजे देव... ॥३०॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं पादन्यासेकृत-पद्मानि-देवोपनीतातिशय-गुणधारक श्री सुपार्श्वनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

झुक जाते फल से वृक्ष, सुरकृत वैभव है।
तुम शरण धर्म अध्यक्ष, मेरे जीवन में॥
जो पूजे देव...॥३१॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं फल-भार-नम्र-शालि-देवोपनीतातिशय-गुणधारक श्री सुपार्श्वनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

तब निर्मल हो दिग्भाग, विहरण जब होवे।
हम पूजेंगे तव पाद, फल में भव खोवें॥
जो पूजे देव...॥३२॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं शरन्मेघवन्निर्मल-दिग्विभागत्व-देवोपनीतातिशय-गुणधारक श्री सुपार्श्वनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

हो अभ्र रहित तब व्योम, तेरा संग मिले।
जो पूजे कर ले दर्श, उनके चित्त खिले॥
जो पूजे देव...॥३३॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं शरत्कालवन्निर्मल-गगनत्व-देवोपनीतातिशय-गुणधारक श्री सुपार्श्वनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

ये झग-झग करता चक्र, आगे चलता है।
वृष चक्रवर्ति का चिह्न, मन को हरता है॥
जो पूजे देव सुपार्श्व, कूट प्रभास जहाँ।
हो उसके सुख का वास, दुख का नाम कहाँ॥३४॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं धर्मचक्रचतुष्टय-देवोपनीतातिशय-गुणधारक श्री सुपार्श्वनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

अष्ट प्रातिहार्य के ८ अर्घ्य

(नरेन्द्र)

शिरीष तरु के नीचे तुमने, केवलज्ञान सुपाया।
अशोक उसका नाम हुआ मन, सुन करके हरषाया॥
अहो धर्म सम्राट आपको, स्वर्गपुरी के राजा।
पूजें मैं भी पूजूँ फल में, सौख्य प्राप्त हो ताजा॥३५॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं अशोकवृक्ष-प्रातिहार्य-मण्डित श्री सुपार्श्वनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

कल्पवृक्ष के खुशबू वाले, फूल देव बरषावें।
जिन्हें देखकर मिथ्यावादी, जन भी पद में आवें॥
पुष्पवृष्टि यह प्रातिहार्य है, किसके मन नहिं भावे।
तब तो सब जन मुलक-मुलककर, अर्घ चढ़ाने आवे॥३६॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं सुरपुष्पवृष्टि-प्रातिहार्य-मण्डित श्री सुपार्श्वनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

चौंसठ चामर ढुरते रहते, किन्तु न उनसे कोई।
मतलब तुमको क्योंकि आपने, कर्म कालिमा धोई॥
नाच-नाचकर हरषाऊँ मैं, आप भक्ति में गाऊँ।
पुत्र-पौत्र के साथ नित्य ही, पद में अर्घ चढ़ाऊँ॥३७॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं चतुःषष्ठि-चामर-प्रातिहार्य-मण्डित श्री सुपार्श्वनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

भामण्डल यह सुपार्श्व तेरे, आज बना जो पीछे।
उसके आगे सभी ज्योतियाँ, हो जाती हैं नीचे॥
दर्श किये तो मेरे उर में, आत्म ज्योति यह जागी।
अर्घ चढ़ाया सो हे स्वामी, आज बना बड़भागी॥३८॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं भामण्डल-प्रातिहार्य-मण्डित श्री सुपार्श्वनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

ढोल नगाड़े ताल मँझीरे, नाना विधि के बाजे।
बज-बज करके कहते आओ, सौख्य मिलेंगे ताजे॥
तुमको केवल इन प्रभु से ही, सो अर्पित हो जाओ।
अर्घ चढ़ाओ पूजा करके, दुर्गति को नहिं पाओ॥३९॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं दुन्दुभि-प्रातिहार्य-मण्डित श्री सुपार्श्वनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

छत्र तीन ये कहते जो भी, चाहे छत्रच्छाया।
सुपार्श्व की तो पूजो इनको, तज करके सब माया॥
प्रभास पर जब मोक्ष हुआ तो, उत्सव शीघ्र मनाया।
सुरनर विद्याधर ने आकर, पूजा शीश झुकाया॥४०॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं छत्रत्रय-प्रातिहार्य-मण्डित श्री सुपार्श्वनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

दिव्यध्वनि से सुपार्श्व तेरी, सबका हित ही होता।
एक बार भी सुन लेवें तो, भव-भव के अघ खोता॥
अष्ट द्रव्य का अर्घ बनाकर, पाद युगल में लाया।
मोक्षमहल के अधिपति की मैं, पूजा करने आया॥४१॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं दिव्यध्वनि-प्रातिहार्य-मण्डित श्री सुपार्श्वनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

सिंहासन पर अधर विराजे, सप्तम प्रभु तुम स्वामी।
रहा साथिया चिह्न आपका, आप रहे सुख खानि॥

सुपार्श्व के जब पास बैठकर, चरणों अर्घ चढ़ाया।
लगा चित्त में मानो मैंने, शाश्वत सुख को पाया॥४२॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं सिंहासन-प्रातिहार्य-मण्डित श्री सुपार्श्वनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

पंचकल्याणक के ५ अर्घ्य

(लय–कहाँ गये चक्री...)

भाद्र शुक्ल की छठवीं तिथि जब, गर्भ पधारे थे।
तब धरती के दुःखदर्द सब, स्वर्ग सिधारे थे॥
सुपार्श्व स्वामी ग्रैवेयक से, माँ उर आए थे।
उत्सव करने स्वर्गलोक तज, सुरगण आए थे॥४३॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं गर्भ-कल्याणक-मण्डित श्री सुपार्श्वनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

ज्येष्ठ शुक्ल की बारस ने भी, ठण्डक धारी थी।
सप्तम प्रभु ने जन्म लिया सो, भू उजियारी थी॥
नरकों में भी इक क्षण तब तो, सुख लहराया था।
चारों दिशि में जैन धर्म का, ध्वज फहराया था॥४४॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं जन्म-कल्याणक-मण्डित श्री सुपार्श्वनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

विरतिभाव का अंकुर बाहर, प्रभु के जब आया।
जन्म दिवस में पूज्यपाद के, मन में तप भाया॥
हे सुपार्श्व प्रभु तव दर्शन को, मैं भी झट आया।
जब से नाम सुना है मैंने, मन भी हरषाया ॥४५॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं तपःकल्याणक-मण्डित श्री सुपार्श्वनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

चार घातिया शत्रु दलों का, काम तमाम किया।
फाल्गुन कृष्णा छठ को, केवलज्ञान सुप्राप्त किया॥
समवसरण में सुपार्श्व प्रभु ने, हित उपदेश दिया।
अर्घ चढ़ावे भवसागर तर, निज का देश लिया॥४६॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं ज्ञान-कल्याणक-मण्डित श्री सुपार्श्वनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

कृष्णा सातम फाल्गुन की थी, अघाति नाशे थे।
अष्ट गुणों को पाकर तुम तो, निज में राजे थे॥
अकल अरूपी सुपार्श्व स्वामी, अब यह नाम नहीं।
मोक्ष सदन यह न्यारा-प्यारा, पाया धाम सही॥४७॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं निर्वाण-कल्याणक-मण्डित श्री सुपार्श्वनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

अनंत चतुष्टय के ४ अर्घ्य

(लय—वर्तमान को वर्धमान की...)

ज्ञान सुकेवल जिसको कोई, पा नहिं सकता है।
इसको पाये बिना न कोई, शिव जा सकता है॥
ज्ञान यही है अनन्त जिससे, सुपार्श्व शोभित हैं।
ये ही जग में उत्तम सच्चे, देव सुघोषित हैं॥४८॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं अनंत-ज्ञान-गुणमण्डित श्री सुपार्श्वनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

अनन्त दर्शन तेरहवें गुण[१] में जाकर पाते।
इसको पाले तो फिर भव में, लौट न वे आते॥
इसीलिए तो तव दर्शन को, मानस ललचा है।
पूजा करके सुपार्श्व तेरी, आतम हरषा है॥४९॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं अनंत-दर्शन-गुणमण्डित श्री सुपार्श्वनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

---

१. गुणस्थान

चक्रवर्ति अहमिन्द्र इन्द्र के, सुख नहिं चाहूँ मैं।
तुमने पाया उस ही सुख को, निशदिन ध्याऊँ मैं॥
अनन्तसुख के अधिपति की, जो अर्चा करते हैं।
प्रमुदित मन से पूजे वो तो, निज में रमते हैं॥५०॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं अनंत-सुख-गुणमण्डित श्री सुपार्श्वनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

कितनी कैसी शक्ति आप में, उपमा किससे है।
अन्तराय के क्षय से पायी, वो ही तुममें है॥
ऐसा बल पाने को मैं भी, पूजूँ दिन रजनी।
कृपा करो हे सुपार्श्वस्वामी, मेरी है अरजी॥५१॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं अनंत-वीर्य-गुणमण्डित श्री सुपार्श्वनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

१८ दोष से रहित के १८ अर्घ्य

(लय—शांतिनाथ मुख...)

आत्मामृत का पान किया सो।
क्षुधा रोग क्यों दुख देगा तो॥
भूख विजेता मार्ग प्रणेता।
अर्घ चढ़ाऊँ शिव पथ नेता॥५२॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं क्षुधादोष-रहित श्री सुपार्श्वनाथजिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

बिना पयस के तृषा मिटी है।
तब तो दुनिया चरण झुकी है॥
अहो पिपासा जीती तुमने।
पूजा करके हर्षित हम हैं॥५३॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं तृषादोषरहित श्री सुपार्श्वनाथजिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

दु:ख कल्पना से भय लगता।
तुम्हें देखकर भय भी भगता॥

श्री सुपार्श्व भयभीत नहीं है।
पूजूँ तव पद प्रीत बढ़ी है॥५४॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं भयदोषरहित श्री सुपार्श्वनाथजिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

द्वेषी से भी द्वेष न करते।
फलतः द्वेषी तव पद रमते॥
सुपार्श्व पद को नहीं तजूँगा।
सभी काम तज तुम्हें भजूँगा॥५५॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं द्वेष-दोष-रहित श्री सुपार्श्वनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

राग आग में तुम नहिं जलते।
वीतराग मय झरने झरते॥
पूजूँ - पूजूँ सुपार्श्व तुमको।
शरण मात्र हो तुम ही हमको॥५६॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं राग-दोष-रहित श्री सुपार्श्वनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

नहीं परिग्रह शेष रहा है।
चिन्ता का फिर काम कहाँ है॥
अहो - अहो निश्चिन्त आप हो।
अर्घ चढ़ाऊँ पूज्यपाद को॥५७॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं चिंतादोषरहित श्री सुपार्श्वनाथजिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

परिजन - पुरजन भार्या सुत से।
ममता छोड़ी सुपार्श्व तुमने॥
मोहजयी की पूजा करके।
निर्मोही बन जाऊँ भजके॥५८॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं मोह-दोष-रहित श्री सुपार्श्वनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

जरा आपको नहीं सताती।
श्रद्धा शिवपथ हमें बताती॥

सुपार्श्व सेवक शीघ्र तरेगा।
पूजा करके मुक्ति वरेगा॥५९॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं जरादोषरहित श्री सुपार्श्वनाथजिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

तन मन का सब रोग मिटाया।
निरोगता को फलतः पाया॥
रोग दोष अब फटक न पावे।
पूजे हम भव भटक न जावे॥६०॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं रोग-दोष-रहित श्री सुपार्श्वनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

अन्त किया है अन्तक का भी।
पण्डित-पण्डित मरण किया जी॥
पूजा करके सुपार्श्व तेरी।
खिली चित्त की कलियाँ मेरी॥६१॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं मरणदोषरहित श्री सुपार्श्वनाथजिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

स्वेद देह का मैल रहा है।
मैल रहित तव देह कहा है॥
आप भक्ति से स्वेद मिटेगा।
भक्त आपका नाम रटेगा॥६२॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं स्वेददोषरहित श्री सुपार्श्वनाथजिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

पाप उदय से खेद बढ़ेगा।
तव पूजा से खेद घटेगा॥
सुपार्श्व तेरा आराधक मैं।
क्यों दुख देंगे पातक अब ये॥६३॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं खेददोषरहित श्री सुपार्श्वनाथजिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

मद का नाम निशान नहीं है।
निर्मद तेरा काम सही है॥

सुपार्श्व मेटो मेरे मद को।
अर्घ चढ़ाऊँ मद का क्षय हो ॥६४॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं मद-दोष-रहित श्री सुपार्श्वनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

रति से ही तो भव बढ़ता है।
आप भक्ति से सुख मिलता है॥
सम्मेदाचल से शिव पाया।
तब तो सबने अर्घ चढ़ाया ॥६५॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं रति-दोष-रहित श्री सुपार्श्वनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

सुपार्श्व विस्मय-दोष-रहित हो।
पूजक का भव सौख्य सहित हो॥
समवसरण के साथ पधारे।
चमके अब तो भाग्य हमारे ॥६६॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं विस्मय-दोष-रहित श्री सुपार्श्वनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

निद्रा के वश कभी न होते।
निशदिन निज में रहते सोते॥
तन्द्रा आलस अब मिट जावे।
भक्त बने हम अर्घ चढ़ावे ॥६७॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं निद्रा-दोष-रहित श्री सुपार्श्वनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

आयु बन्ध नहिं करते स्वामी।
जन्म न होगा तब तो नामी॥
सुपार्श्व शिव के तुम राजा हो।
पूजे उसके सुख ताजा हो ॥६८॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं जन्म-दोष-रहित श्री सुपार्श्वनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

शोक भाव का नाम निशाना।
मिटा दिया सो प्रभो दिवाना॥
बना आज मैं अर्घ चढ़ाऊँ।
पूजा का बस शौक बढ़ाऊँ॥६९॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं शोक-दोष-रहित श्री सुपार्श्वनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

(ज्ञानोदय)

सम्मेदाचल गिरि पर राजित, कूट रहा जो न्यारा है।
पूजा करते प्रभास की हम, क्योंकि यही शिव द्वारा है॥
सप्तम प्रभुवर मोक्ष गए सो, धूल यहाँ की रोग हरे।
निरोग करती पापी को भी, अर्घ चढ़ावे भाग्य जगे॥७०॥

ॐ ह्रीं सम्मेदशिखरस्थित प्रभासकूटेभ्यो नमः अर्घ्यं ...।

सुपार्श्व तेरे बिम्ब सदा हम, स्वस्तिक से पहचान रहे।
आप दर्श से तम मिटता सो, पृथ्वी पर वरदान कहे॥
फण से युत भी मिलती प्रतिमा, पूज्य रही हैं त्रिभुवन में।
जैसी-जैसी जहाँ-जहाँ हो, अर्घ चढ़ा मम वन्दन है॥७१॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री सुपार्श्वनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

पूर्णार्घ्य

(घत्ता)

हे सप्तम प्रभुवर, तेरे युग पद, त्रिभुवन से नित अर्चित हैं।
तव उत्तम चर्या, सबमें वर्या, स्वर्गों में भी चर्चित हैं॥
सो सुरगण आते, अर्घ चढ़ाते, नाच-नाचकर मुदित हुए।
हम पूज रचाते, गुण गण गाते, भाग्य हमारे उदित हुए ॥७२॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री सुपार्श्वनाथ-जिनेन्द्राय नमः पूर्णार्घ्यं...।

जाप्य मंत्र–ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री सुपार्श्वनाथ-जिनेन्द्राय नमः।

(९/२७/१०८)

जयमाला

(दोहा)

पूजा की जयमाल ये, बन जावे वरदान।
अन्त बोधि के साथ हो, सुख पूर्वक अवसान॥१॥

(ज्ञानोदय)

नन्दिषेण नृप क्षेमपुरी का, सिद्धहस्त इक शासक था।
नीतिवान था न्यायवान सो, शेष न बाधक कारण था॥
विरति भाव जब मन में आया, पुरजन-परिजन को छोड़ा।
बन्धु वर्ग को मित्र जनों को, छोड़ मुक्ति से मन जोड़ा॥२॥

धनपति नामक ज्येष्ठ पुत्र को, राज्य सौंपकर दीक्षा ली।
अर्हन्नन्दन मुनि के पद में, मोक्षमार्ग की शिक्षा ली
ग्यारह अंगों के पाठी बन, तीर्थंकर पद पाने का।
बन्ध किया था पंच महोत्सव, पा करके शिव जाने का॥३॥

ओ हो पण्डित मरण किया सो, स्वर्ग लोक में जन्म लिया।
ग्रैवेयक का विमान मध्यम, सुभद्र उसको धन्य किया॥
वहाँ शुक्ल थी लेश्या तन दो, हाथ मात्र का सुन्दर था।
सहस्र सत्ताईस वर्ष के, बाद भाव हो भोजन का॥४॥

श्वास चार सौ पाँच दिवस के, बाद ग्रहण का योग रहा।
नाना विधि की उत्तम-उत्तम, सामग्री का भोग कहा॥
आयु पूर्ण कर माँ को सोलह, सपने देकर भू आए।
पृथ्वी जैसी क्षमाशील माँ, पृथ्वी के उर विलसाए॥५॥

बनारसी जो स्वर्गों से भी, सुन्दर अनुपम नगरी थी।
भूप प्रजा सब पुण्यवान सो, इन्द्रिय सुख की गगरी थी॥
दस अतिशय से युक्त देह में, एक सहस वसु लक्षण थे।
इनकी आज्ञा चक्रवर्ति भी, पालन करते तत्क्षण थे॥६॥

एक दिवस श्री सुपार्श्व गये थे, जल में क्रीड़ा करने को।
मित्र गणों के साथ बैठकर, नौका में सुख वरने को॥
तभी नाव के पीछे-पीछे, मगरमच्छ जो पुष्ट बड़ा।
भाग रहा था उछल-उछलकर, 'नौ[१]' के पीछे हाय पड़ा॥७॥

सभी सखा तब भय के कारण, थर-थर थर-थर काँप उठे।
करी प्रार्थना मित्र बचालो, रक्षक केवल आप रहे॥
लेकिन प्रभु तो नहीं डरे नहिं, किंचित् भी भयभीत हुए।
होकर के निर्भीक वीर वे, जल क्रीड़ा में लीन रहे॥८॥

तभी सुनो उस मगरमच्छ ने, आगे आकर नौका के।
सोचा मानो सुपार्श्व प्रभु को, नमस्कार का मौका है॥
इसीलिए वह मस्तक ऊँचा, करके दोनों पैरों को।
जल के बाहर निकाल ऐसे, दोनों कर को जोड़े हो॥९॥

भक्ति-भाव से प्रभु के पद में, नमन किया हो शीश झुका।
यह सब देखा तो सबके मन, भय का सारा भाव रुका॥
सुपार्श्व प्रभु ने स्नेह दृष्टि से, मगरमच्छ को देखा तो।
व्यक्त किया था रूप सु अपना, देव मच्छ बन आया जो॥१०॥

और बताया तेरे जैसे, तीर्थंकर की संगति से।
पाप सभी गल जाते क्षण में, मिलती उनको सद्गति है॥
यही सोच मैं क्रीड़ा करने, इस सरिता में आया हूँ।
साथ आपके क्रीड़ा करके, मैं भी अति हरषाया हूँ॥११॥

१. नौका

इस विध नाना भोग भोगते, जन्म महोत्सव जब आया।
बैठ हस्ति पर क्रीड़ा करने, निकले थे जब जिनराजा॥
वहीं सुनो इक तरु के पत्ते, सूख गये थे पतझड़ से।
गिरे भूमि पर तो वह तरु भी, सूख गया था तत्क्षण रे॥१२॥

उसी वृक्ष पर दृष्टि पड़ी तो, सत्य बात को समझ गये।
राज्य सम्पदा धन दौलत की, नश्वरता को परख गये॥
तभी हुआ वैराग्य भोग से, तन से, भव से, वैभव से।
राग छोड़कर स्नेह छोड़कर, राग किया निज चेतन से॥१३॥

नील वर्ण है नीलम से भी, नील रहे अति नील रहे।
स्वस्तिक का शुभचिह्न आपका, निज में निज आधीन रहे॥
नील गगन में बिहार हो तब, धर्म सुपाने चातक से।
भव्य देखते स्वाति बूँद सम, वृष पाने को बालक से॥१४॥

समवसरण में तीन लाख ऋषि, गणधर थे बलदत्त मुनि।
मीना आदिक रही श्रमणियाँ, पीती वृष पीयूष गुणि॥
दानवीर्य नृप श्रोता था जो, प्रश्न पूछ संतुष्ट हुआ।
उत्तर सुनकर प्रभु से उसका, विरत भाव संपुष्ट हुआ॥१५॥

प्रभास पर हे सुपार्श्व तुम जब, हुए प्रकाशित दिनकर सम।
सिद्ध अवस्था पाकर तुम गतदेह हुए थे शरणोत्तम॥
तब देवों ने पृथ्वीतल को, जय-जय-जय से पूर दिया।
बचे हुए नख केशों का संस्कार किया सुखपूर किया॥१६॥

आप गर्भ में आये भू पर, जन्म लिया तप धारा था।
ज्ञान सुपाकर तप के बल से, पाया शिव का द्वारा था॥
सभी कार्य ये भव्यों के कल्याणपरक थे सुखप्रद थे।
इसीलिए कल्याणक इनका, नाम हुआ था हितप्रद ये॥१७॥

बचपन में या पचपन में या, दीक्षा लेकर मुनिपन में।
यौवन में या किशोरपन में, जैसा जो भी जीवन में॥
घटित हुआ वह सबका सब ही, मौलिक शिक्षाप्रद ही था।
सुपार्श्व स्वामी नाम काम अरु, धाम आपका सुखप्रद था॥१८॥

इसीलिए तो मैंने प्रभुवर, पूजा आज रचा करके।
अर्घ चढ़ाए गुणगाये हैं, पाद निकट में आ करके॥
नभ के तारे गिन ले कोई, बालू के कण गिन पावे।
महासिन्धु को तैर करों से, उसके तट को पा जावे॥१९॥

सम्भव है यह सब तो लेकिन, आप गुणों को गाने का।
साहस वो भी नहिं कर पावे, अन्तिम गुण को पाने का॥
हे स्वामी फिर मैं तो कुछ भी, करने में नहिं सक्षम हूँ।
आप गुणों का अनन्तवाँ भी, भाग बताने अक्षम हूँ॥२०॥

अतः करूँ जयमाला पूरी शक्ति मुझे भी वह देना।
गुण गा पाऊँ या नहिं मुझको, मुक्ति प्राप्ति का वर देना॥
भक्तिवशी हो मैंने कोई गल्ती यदि कर डाली हो।
क्षमा करो तव चरण भक्ति ही, मम जीवन रखवाली हो॥२१॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री सुपार्श्वनाथ-जिनेन्द्राय नमः जयमाला पूर्णार्घ्यं...।

आशीर्वाद

सुपार्श्वनाथ की पूजा क्षण में, सब दोषों का नाश करे।
कामदेव के चक्रवर्ति के, सुख देकर शिव पास करे॥

इत्याशीर्वादः परिपुष्पाञ्जलिं क्षिपामि/क्षिपेत्

श्री चन्द्रप्रभ विधान

पीठिका

(दोहा)

चन्द्रप्रभ की जीवनी, कहो सुनो हे भव्य।
विधान की यह पीठिका, पढ़ो बनो तुम रम्य ॥१॥

(ज्ञानोदय)

श्रीवर्मा के भव में सुन उपदेश शीघ्र ही समकित पा।
देख मेघ की क्षणभंगुरता, दीक्षा लेकर सुर में जा॥
भू पर आकर अजितसेन श्री, चक्रवर्ति का पद पाया।
पूज्य स्वयंप्रभ तीर्थंकर के, समवसरण में वृष पाया ॥२॥

एक दफा बस इक हाथी को, ताड़ित करते देखा जब।
जग की सच्चाई को, दुख को प्रकट रूप से समझा तब॥
विरत भाव उर जाग गया गुरु गुणप्रभ स्वामी के पद में।
करी तपस्या उग्र-उग्रतम, दीक्षा लेकर जंगल में ॥३॥

फल में विमान अच्युत सुर का, 'शांतकार' जो प्यारा था।
जन्म लिया था इन्द्र बने थे, वैभव इनका न्यारा था॥
सुख भोगे अरु मध्यलोक में, पद्मनाभ इक भूप बने।
वश में करके इक हाथी को वीरों के अनुरूप बने ॥४॥

युद्ध क्षेत्र में एक बार इक, राजा को जब मारा था।
देखा उसके शिर को तो वा, करुण भाव उर जागा था॥
सोचा ओ हो इक हाथी के, कारण मैंने पाप किया।
युद्ध क्षेत्र में कितने जीवों का, मैंने हा! घात किया ॥५॥

करके पश्चाताप पाप का, राज्यभार सब छोड़ दिया।
दीक्षा लेकर परम दिगम्बर, निज से नाता जोड़ लिया॥

वह हाथी भी जिसको पाने, युद्ध हुआ था आपस में।
विरत हुआ था पद्मनाभ की, विरति देखकर आतम में ॥६॥

राग मिटा था भव भोगों से, सो अणुव्रत को धार लिया।
और उन्हीं के साथ-साथ रह, धर्म धुरन्धर काम किया॥
पद्मनाभ मुनि समाधि करके, वैजयन्त में इन्द्र बने।
तथा वहाँ से चय करके वे, चन्द्रपुरी के 'चन्द्र' बने ॥७॥

महासेन नृप मात लक्ष्मणा के, आँगन को धन्य किया।
पंच महोत्सव पाकर दर्शन, दे हमको कृतकृत्य किया॥
उन ही चन्द्रप्रभ स्वामी का विधान लिख उपयोग करूँ।
मानव भव का क्षयोपशम का, देह शक्ति शुभयोग धरूँ ॥८॥

सार यही है नरभव पाकर, चन्द्रप्रभ तव भक्ति करे।
नहिं तो जीने से क्या मतलब, व्यर्थ देह की शक्ति अरे॥
अतः आज मैं आप गुणों का,स्मरण करूँ अरु संस्तव भी।
करके नमन करूँ मैं तुमको, काम बने मम संस्तव[१] ही ॥८॥

इति परिपुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्

१. प्रशंसनीय

विधान प्रारम्भ

स्थापना

(ज्ञानोदय)

सोनागिरि के चंद्रपुरी के ललितकूट के स्वामी हैं।
धवल वर्ण के चन्द्रप्रभ श्री तीर्थंकर जगनामी हैं॥
सद्य बुलाकर हृदय कमल का आसन आज बना करके।
तुम्हें बिठाकर पूजा करता क्लेश भाव सब तज करके॥

(दोहा)

आह्वानन है स्थापना, सन्निधि का शुभ काम।
खुला भाग्य मम आज सो, पूजूँ हे सुखधाम॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री चन्द्रप्रभ जिनेन्द्र अत्र अवतर अवतर संवौषट् इति आह्वाननं! ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री चन्द्रप्रभ जिनेन्द्र अत्र तिष्ठ-तिष्ठ ठः ठः स्थापनं! ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री चन्द्रप्रभ जिनेन्द्र अत्र मम सन्निहितो भव-भव वषट् सन्निधिकरणं!

अष्टक

(लय—कहाँ गये चक्री जिन...)

रजतमयी झारी में पानी, लेकर आता हूँ।
भव के कल्मष धोने हेतु, चरण चढ़ाता हूँ॥
चन्द्रप्रभ की महिमा गाकर, पातक तजता हूँ।
प्रातः उठकर सबसे पहले पूजा करता हूँ॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री चन्द्रप्रभ-जिनेन्द्राय नमः जन्म-जरा-मृत्यु-विनाशनाय जलं...।

चंदन चाँदी के कलशों में, भरकर लाता हूँ।
पाप दाह मिट जावे मेरी, चरण चढ़ाता हूँ॥
चन्द्रप्रभ की महिमा...॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री चन्द्रप्रभजिनेन्द्राय नमः संसारतापविनाशनाय चंदनं ...।

वासमती के चावल लेकर थाल भराता हूँ।
तुमको अर्पित करके स्वामी, लोभ मिटाता हूँ॥
चन्द्रप्रभ की महिमा गाकर, पातक तजता हूँ।
प्रातः उठकर सबसे पहले पूजा करता हूँ॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री चन्द्रप्रभजिनेन्द्राय नमः अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् ...।

कल्पवृक्ष के रंग-बिरंगे फूल, सु लाता हूँ।
मन्मथ जेता काम जीतने, तुम्हें चढ़ाता हूँ॥
चन्द्रप्रभ की महिमा...॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री चन्द्रप्रभजिनेन्द्राय नमः कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं...।

शुद्ध सुताजा नैवेज लेकर, प्रतिदिन आऊँगा।
क्षुधा विजेता विषय भोग से, मैं बच जाऊँगा॥
चन्द्रप्रभ की महिमा...॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री चन्द्रप्रभजिनेन्द्राय नमः क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं ...।

जगमग करता मणिमय दीपक, अंधकार नाशे।
ज्ञानदीप! की पूजा जल्दी, अहंकार नाशे॥
चन्द्रप्रभ की महिमा...॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री चन्द्रप्रभजिनेन्द्राय नमः मोहान्धकारविनाशनाय दीपं...।

धूप दशांगी चढ़ा आपको, नाचूँ गाऊँ रे।
अष्ट कर्म का धूम्र उड़ाने, तुमको ध्याऊँ मैं॥
चन्द्रप्रभ की महिमा...॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री चन्द्रप्रभ-जिनेन्द्राय नमः अष्टकर्म-दहनाय धूपं ...।

काजू किसमिस लौंग सुपारी, लेकर चिलगुंजा।
हर्ष-हर्षकर पूजा करता, करके दिलचंगा॥
चन्द्रप्रभ की महिमा...॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री चन्द्रप्रभ-जिनेन्द्राय नमः मोक्षफल-प्राप्तये फलं ...।

अक्षत दीपक नैवज पानी, फल चंदन ऐला।
अर्घ बना ले भक्त चरण में, आया अलबेला॥
चन्द्रप्रभ की महिमा गाकर, पातक तजता हूँ।
प्रातः उठकर सबसे पहले पूजा करता हूँ॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री चन्द्रप्रभ-जिनेन्द्राय नमः अनर्घ-पद-प्राप्तये अर्घ्यं...।

प्रत्येक-अर्घ्य

(दोहा)

चन्द्रप्रभ है चन्द्रसम, निर्मल गुण के कोष।
कुछ गुण को मैं अर्घ दूँ, बनने को निर्दोष॥

इति मण्डलस्योपरिपुष्पाञ्जलिं क्षिपामि/क्षिपेत्

जन्मातिशय के १० अर्घ्य

(ज्ञानोदय)

परमौदारिक सप्तधातु से, रहित देह प्रभु तेरा है।
क्यों आयेगा स्वेद आपका, निज में नित्य बसेरा है॥
अहो चाँद की आभा भी तो, तेरे तन से लज्जित है।
अर्घ चढ़ाऊँ चन्द्रप्रभ जी, तीन लोक से अर्चित हैं॥१॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं निःस्वेदत्व-जन्मातिशय-गुणधारक श्री चन्द्रप्रभ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

मल वर्जित श्री चन्द्रप्रभ की, तन क्यारी यह सुंदर है।
दिखती मानव जैसी ही पर, निर्मलता की मंदिर है॥
यह अतिशय बस तीर्थंकर ही,पा सकते त्रय लोकों में।
आप अर्चना करके चाहूँ, फसूँ नहीं भव भोगों में॥२॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं निर्मलत्व-जन्मातिशय-गुणधारक श्री चन्द्रप्रभ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

खून बना है श्वेत देह का, वत्सलता के कारण ही।
केवल तेरा नाम स्मरण ही, बनता भव का वारण जी॥
चंद्रप्रभ की हर्षित होकर, जो पूजा रचवाता है।
उनके जैसा तीर्थंकर पद, वह भी जल्दी पाता है॥३॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं क्षीरगौररुधिरत्व-जन्मातिशय-गुणधारक श्री चन्द्रप्रभ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

तेरे जैसा रूप लोक में, मदनदेव नहिं पा सकते।
चंद्रप्रभ सम बनने हेतु, मात्र भावना भा सकते॥
चंद्रपुरी के गौरव की जो, महिमा गाए गायेगा।
अतिशय यह सौरूप्य आपका, पूजक को मिल जायेगा ॥४॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं सौरूप्य-जन्मातिशय-गुणधारक श्री चन्द्रप्रभ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

भाग्यवान के जितने जैसे, लक्षण जो-जो हो सकते।
वे सब लक्षण चन्द्रप्रभ जी, मिलकर तेरे तन बसते॥
अतिशय सौलक्षण्य आपका, देवों का भी मन हरता।
पूजा कर ले एक बार तो, कर्म नाश का दम मिलता ॥५॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं सौलक्षण्य-जन्मातिशय-गुणधारक श्री चन्द्रप्रभ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

आप शक्ति से तीन लोक की, सभी शक्तियाँ हीन रही।
चक्री-शक्री नारायण की, ताकत तव आधीन रही॥
संहनन जो ये प्रथम आपका, चन्द्रप्रभ तव महिमा है।
आप विराजे इस तन में सो, हमने गायी गरिमा है॥६॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं वज्रवृषभ-नाराच-संहनन-जन्मातिशय-गुणधारक श्री चन्द्रप्रभ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

गंध अतुल है अनुपम तेरे तन में यह भी अतिशय है।
महासेन के राजदुलारे, तव पद में हम तन्मय हैं॥

पाप गंध मिट जाये मेरी, वंदन करलूँ हे भगवन्।
श्रद्धा ज्ञान सुसंयममय हो, तव प्रसाद से यह जीवन ॥७॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं सौगन्ध्य-जन्मातिशय-गुणधारक श्री चन्द्रप्रभ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

शक्ति आप में कितनी है यह, तुलना नहिं हो पायेगी।
करने जावे तुलना यदि तो, प्रज्ञा ही भरमायेगी॥
चंद्रप्रभ में फिर भी बल का,मद नहिं सो हम विस्मित हैं।
कृपासिन्धु हे देव आपको, अर्घ्य चढ़ा हम सुस्मित हैं ॥८॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं अप्रमितवीर्य-जन्मातिशय-गुणधारक श्री चन्द्रप्रभ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

वाणी सुनकर लगता मानो अमृत शशि से झरता हो।
जिसको पीकर रोग-शोक सब, क्लेश भाव भी हरता औ॥
चंद्रप्रभ ने जन्मजात ही, ऐसी महिमा पायी है।
अर्घ चढ़ाऊँ शुभाशीष से, पूजन की मति आयी है ॥९॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं प्रियहितवादित्व-जन्मातिशय-गुणधारक श्री चन्द्रप्रभ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

रहा प्रथम संस्थान चंद्र का, सबके मन को खींच रहा।
और भक्त के अघनाशक बन, पुण्य कर्म को सींच रहा॥
अनुपम तेरा रूप देखकर, करे प्रशंसा कौन नहीं।
पूजन करके गुण गावे तो, पावे वैसा रूप सही ॥१०॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं समचतुरस्त्र-संस्थान-जन्मातिशय-गुणधारक श्री चन्द्रप्रभ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

केवलज्ञानातिशय के १० अर्घ्य

(दोहा)

चारों दिशि में सुभिक्ष हो, सौ योजन तक देव।
समवसरण आता यदा, होते सब निरखेद॥

क्षेत्र तिजारा चन्द्र को, भज ले रे इक बार।
भरे तिजोरी पुण्य की और खुले शिवद्वार ॥११॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं गव्यूतिशत-चतुष्टय-सुभिक्षत्व-घातिक्षय-जातिशय-गुणधारक श्री चन्द्रप्रभ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

गमन करें आकाश में, किन्तु न गिरते आप।
उसका कारण आपके, शेष रहा नहिं पाप ॥
अहो देहरा में रहा, चन्द्रप्रभ तव धाम।
भक्त बने यदि आपका, बच न सके कुछ काम ॥१२॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं गगनगमनत्व-घातिक्षय-जातिशय-गुणधारक श्री चन्द्रप्रभ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

भूख न लगती भोग की, इच्छा नहिं है शेष।
अतिशय केवलज्ञान का, घाति हुए निःशेष ॥
चन्द्रपुरी में जन्म ले, रहे चन्द्र सम श्वेत।
शरण आपकी आ गया, मिट जावे सब खेद ॥१३॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं भुक्त्यभाव-घातिक्षय-जातिशय-गुणधारक श्री चन्द्रप्रभ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

जीव घात ना हो कभी, चाहे होय विहार।
क्योंकि आपका नित्य ही, होता आत्म विहार॥
समवसरण में शोभते, ज्यों ऋक्षों में चाँद।
आप रहे अकलंक सो, पूज्य अलौकिक चाँद ॥१४॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं अप्राणिवधत्व-घातिक्षय-जातिशय-गुणधारक श्री चन्द्रप्रभ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

कर न सके उपसर्ग पशु, दानव नर या देव।
अर्हत् पद पाकर प्रभो, बने देव के देव॥
मात लक्ष्मणा आपकी, लक्ष्मी की भण्डार।
गर्भ विराजे आप सो, लगती जग में सार ॥१५॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं उपसर्गाभाव-घातिक्षय-जातिशय-गुणधारक श्री चन्द्रप्रभ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

आनन सबको यों दिखे, सम्मुख हों ज्यों आप।
तेरे सुख का लोक में, हो न सकेगा माप ॥
ललित कूट से चन्द्र ने, पाया था निर्वाण।
पूजा कर चाहूँ मिटे, अष्ट कर्म के बाण ॥१६॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं चतुर्मुखत्व-घातिक्षय-जातिशय-गुणधारक श्री चन्द्रप्रभ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

जितनी है त्रयलोक में, विद्याएँ सुख रूप।
उनको पाकर बन गये, सिद्धालय के भूप ॥
महासेन के लाड़ले, चंद्रपुरी युवराज।
राजा बन मुनिराज बन, बने मुक्ति सिरताज ॥१७॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं सर्वविद्येश्वरत्व-घातिक्षय-जातिशय-गुणधारक श्री चन्द्रप्रभ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

पलके नहिं झपके प्रभो, चंचल नहिं हैं नेत्र।
अतिशय केवलज्ञान का, ज्ञान मात्र तव नेत्र॥
छत्रच्छाया आपकी, मम सिर पर हो नित्य।
क्यों आवे फिर आपदा, नमूँ ज्ञान आदित्य ॥१८॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं अपक्ष्मस्पंदत्व-घातिक्षय-जातिशय-गुणधारक श्री चन्द्रप्रभ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

छाया तेरी नहिं पड़े, इन्द्रों के भी इन्द्र।
अतिशय सुनकर आपके, चरण झुके अहमिन्द्र ॥
सोनागिरि में चन्द्र का, आया सत्रह बार।
समवसरण जिसमें सुना, भव्यों ने श्रुत सार ॥१९॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं अच्छायत्व-घातिक्षय-जातिशय-गुणधारक श्री चन्द्रप्रभ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

रुकी आपके देह में, नख केशों की वृद्धि।
ऋषिवर पूजें आपके, चरण झुकीं सब ऋद्धि॥
ऋद्धि -सिद्धि सब चंद्र के, चरण समर्पित आज।
क्योंकि कर्म को नाशकर, पाया शिव का राज ॥२०॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं समान-नख-केशत्व-घातिक्षय-जातिशय-गुणधारक श्री चन्द्रप्रभ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

देवकृत अतिशय के १४ अर्घ्य

(लय—मुनि सकलव्रती बड़भागी...)

तव अर्ध मागधी वाणी सुन जुड़ते सबके पाणि।
हम चन्द्रप्रभ को नमके सुख पाएँ आतम भजके ॥२१॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं सर्वार्ध-मागधीभाषा-देवोपनीतातिशय-गुणधारक श्री चन्द्रप्रभ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

जो जन्मजात के वैरी, वे मिले लगे नहिं देरी।
ये चन्द्रप्रभ सुख स्वामी, हम भक्त बनेंगे नामी ॥२२॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं सर्वजन-मैत्रीभाव-देवोपनीतातिशय-गुणधारक श्री चन्द्रप्रभ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

सब ऋतुओं के फल आवे, जब समवसरण तव आवे।
यह अतिशय देवों द्वारा, हो चन्द्रप्रभ के न्यारा॥२३॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं सर्वर्तुफलादि-शोभित-तरु-परिणाम-देवोपनीतातिशय -गुणधारक श्री चन्द्रप्रभ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

हो दर्पण सम भू सारी, तब खुशियाँ छाएँ भारी।
है अतिशय जग में तेरा, तुममें मनमोहित मेरा॥२४॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं आदर्शतल-प्रतिमा-रत्नमयी-देवोपनीतातिशय-गुणधारक श्री चन्द्रप्रभ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

तब अनुगत वायु बहेगी, जब सन्निधि चन्द्र मिलेगी।
मैं ढम-ढम ढोल बजाऊँ, तुम पद में अर्घ चढ़ाऊँ ॥२५॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं विहरण-मनुगतवायुत्व-देवोपनीतातिशय-गुणधारक

श्री चन्द्रप्रभ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

आनंद सर्व दिशि होवे, तुमको पा अघ को खोवे।
हे चंद्र! शरण पा तेरी, मिट जाती पाप अंधेरी ॥२६॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं सर्वजन-परमानंदत्व-देवोपनीतातिशय-गुणधारक श्री चन्द्रप्रभ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

सुर सुगंध जल की वर्षा, करते मन में अति हर्षा।
जो करता पूजा तेरी, मिट जाती भव की फेरी ॥२७॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं मेघकुमारकृत-गंधोदकवृष्टि-देवोपनीतातिशय-गुणधारक श्री चन्द्रप्रभ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

वे देव दूर कर देवें, सब कण्टक धूल घनेरे।
हे चन्द्र आपको ध्याऊँ, मैं लौट न भव में आऊँ ॥२८॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं वायुकुमारोपशमित - धूलि - कण्टकादि-देवोपनीतातिशय-गुणधारक श्री चन्द्रप्रभ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

तव पाद युगल के नीचे, रख देते पद्म सुसच्चे।
हे त्रिभुवनपति तव सेवा, करके हम पाते मेवा ॥२९॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं पादन्यासेकृत-पद्मानि-देवोपनीतातिशय-गुणधारक श्री चन्द्रप्रभ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

फल-फूल सभी खिल जाते, जब चन्द्र समागम पाते।
हम नाच-नाचकर आवे, यह अर्घ चढ़ा गुण गावे ॥३०॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं फल-भार-नम्र-शालि-देवोपनीतातिशय-गुणधारक श्री चन्द्रप्रभ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

हो सर्दी में ज्यों नभतल, जब चन्द्र पधारे भूतल।
हो गगन साफ सुखकारी, तव महिमा जग में भारी ॥३१॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं शरत्कालवन्निर्मल-गगनत्व-देवोपनीतातिशय-गुणधारक श्री चन्द्रप्रभ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

सुर बजा-बजाकर बाजा, वो कहते आजा-आजा।
ये आये हैं शिव नायक, श्री चन्द्र रहे सब ज्ञायक ॥३२॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं एतैतैति - चतुर्निकायामर - परस्पराह्वानन-देवोपनीतातिशय-गुणधारक श्री चन्द्रप्रभ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

सब दिशा धूम से वर्जित, हो जाती जग में चर्चित।
जब योग मिला तव स्वामी, श्री चन्द्रप्रभ अभिरामी ॥३३॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं शरन्मेघवन्निर्मल-दिग्विभागत्व-देवोपनीतातिशय-गुणधारक श्री चन्द्रप्रभ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

तब धर्मचक्र भी चलते, जब विहरण भू तुम करते।
यह अतिशय हो सुर द्वारा, श्री चन्द्र नाम है न्यारा ॥३४॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं धर्मचक्रचतुष्टय-देवोपनीतातिशय-गुणधारक श्री चन्द्रप्रभ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

अष्ट प्रातिहार्य के ८ अर्घ्य

(लय—श्री वीर महा अतिवीर...)

तव आसन में है सिंह, पशु का राजा है।
खुश हो आकर के पाद, पायी साता है॥
हे चन्द्रपुरी के चन्द्र, त्रिभुवन अर्चित हो।
जो पूजेंगे इक बार, जग में चर्चित हो ॥३५॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं सिंहासन-प्रातिहार्य-मण्डित श्री चन्द्रप्रभ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

जो छत्र रजतमय तीन, तुम पर शोभ रहे।
त्रय लोकों में तुम पूज्य, तब तो मोह रहे॥
हे चन्द्रपुरी के...॥३६॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं छत्रत्रय-प्रातिहार्य-मण्डित श्री चन्द्रप्रभ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

शुभ चामर चौंसठ नित्य, सुरगण ढोर रहे।
भवि पूजा करके चित्त, अघ से मोड़ रहे॥
हे चन्द्रपुरी के...॥३७॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं चतुः षष्ठी-चामर-प्रातिहार्य-मण्डित श्री चन्द्रप्रभ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

जो भामण्डल भू-सार, तेरे पीछे है।
तब तो सब जग के देव, तुमसे नीचे हैं॥
हे चन्द्रपुरी के...॥३८॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं भामण्डल-प्रातिहार्य-मण्डित श्री चन्द्रप्रभ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

जो वाणी खिरती दिव्य, सुर नर सुनते हैं।
तब सहज रूप से नाथ, अघमल रुकते हैं॥
हे चन्द्रपुरी के...॥३९॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं दिव्यध्वनि-प्रातिहार्य-मण्डित श्री चन्द्रप्रभ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

ये ढम-ढम-ढम-ढम ढोल, दुन्दुभि बजते हैं।
तव पूजा सा नहिं काज, गणधर कहते हैं॥
हे चन्द्रपुरी के...॥४०॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं दुन्दुभि-प्रातिहार्य-मण्डित श्री चन्द्रप्रभ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

सुर कल्पवृक्ष के फूल, प्रतिदिन बरसाते।
तव समवसरण को देख, मानस खिल जाते॥
हे चन्द्रपुरी के...॥४१॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं सुरपुष्पवृष्टि-प्रातिहार्य-मण्डित श्री चन्द्रप्रभ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

जो शोक रहित है वृक्ष, शोक मिटाता है।
यह प्रातिहार्य है देव, सौख्य लुटाता है॥
हे चन्द्रपुरी के...॥४२॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं अशोकवृक्ष-प्रातिहार्य-मण्डित श्री चन्द्रप्रभ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

पंचकल्याणक के ५ अर्घ्य

(घत्ता)

प्रभु गर्भ पधारे, स्वर्ग सिधारे, पाप पंक सब क्षण भर में।
सो हर्षित होकर, अर्घ सुलेकर, दौड़ा आया तव पद में॥
तब सुर भी आये, मन हरषाये, नाच-नाचकर नहीं थके।
प्रभु तव अर्चा से, शुभ चर्चा से, पातक मेरे नहीं पके॥

(दोहा)

चैत्र कृष्ण की पंचमी, चन्द्र पधारे गर्भ।
तेरी पूजा से मिटे, मदमातों के गर्व ॥४३॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं गर्भ-कल्याणक-मण्डित श्री चन्द्रप्रभ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

जब जन्म दिया था, धन्य किया था, मात लक्ष्मणा ने जीवन।
तब देव इन्द्र आ, अष्टम प्रभु का, सुरगिरि पर जा करे न्हवन॥
हम जन्म महोत्सव, करते पल-पल, चन्द्रप्रभ का मिल करके।
यह अर्घ चढ़ाएँ, पूज रचाएँ, परम भक्त हम बन करके॥

(दोहा)

आयी ग्यारस कृष्ण की, माह रहा था पौष।
जन्म लिया प्रभु चन्द्र ने, देख मिटे दुख रोष ॥४४॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं जन्म-कल्याणक-मण्डित श्री चन्द्रप्रभ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

प्रभु घर को त्यागे, निज अनुरागे, लौकान्तिक भी आते हैं।
सुर उठा पालकी, धर्म ढाल की, कानन में ले जाते हैं॥
जिन दीक्षा लेते, इन्द्रिय जीते, परम दिगम्बर बनते हैं।
तब दुष्कर तप से, जड़-चेतन से, मोह भाव को तजते हैं॥

(दोहा)

पौष कृष्ण की ग्यारसी, तप धारा था संत।
मौन रहे त्रय माह वे, पाकर शिव का पंथ ॥४५॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं तपः कल्याणक-मण्डित श्री चन्द्रप्रभ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

वह ज्ञान प्रकटता, सौख्य विलसता, राग-द्वेष जब गलता है।
तब धनपति आकर, शीश झुकाकर,समवसरण को रचता है॥
यह कल्याणक है, चन्द्रप्रभ ने, घातिनाश से पाया है।
सो अर्घ मिलाकर, तव पद आकर, तुमको आज चढ़ाया है॥

(दोहा)

फाल्गुन कृष्णा सप्तमी, पाया पंचम ज्ञान।
दिव्यदेशना दे दिया, महा अभय सुखदान ॥४६॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं ज्ञान-कल्याणक-मण्डित श्री चन्द्रप्रभ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

सब कर्म नाश से, देख पास में, मुक्ति रमा आ वरती है।
तब शिव में जाते, फिर नहिं आते, आत्मा निज में रमती है॥
अब मोक्ष गये सो, वहीं रहें वो, सिद्धशिला का वास हुआ।
मैं अर्घ सुलेकर, पद में देकर, भक्त आपका खास हुआ॥
फाल्गुन शुक्ला सप्तमी, पाया था अपवर्ग।
कल्याणक यह पूजकर, पावे शिव का मर्म ॥४७॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं निर्वाण-कल्याणक-मण्डित श्री चन्द्रप्रभ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

अनंत चतुष्टय के ४ अर्घ्य

(नरेन्द्र)

चन्द्रप्रभ ने अमित ज्ञान को, पाकर सबको जाना।
ज्ञानावरणी कर्म मिटाया, सो दुनिया ने माना॥

रहे अनन्तानन्त काल तक, हीनाधिक नहिं होवे।
जो पूजेगा अर्घ चढ़ाकर, पाप पंक को खोवे॥४८॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं अनंतज्ञानगुणमण्डित श्री चन्द्रप्रभजिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

अनन्तदर्शन प्रकट हुआ जो, कभी न अब मिट पावे।
कर्म दूसरा नहीं बचा सो, नहीं घटे बढ़ पावे॥
चन्द्रप्रभ के पद-पंकज में, अलि सम बन हरषावे।
मोक्ष महल में जावे लौट न, कभी लोक में आवे ॥४९॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं अनंतदर्शनगुणमण्डित श्री चन्द्रप्रभजिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

पाया तुमने अनन्तसुख जो, रहा सुआत्मिक प्यारा।
अहमिन्द्रों के चक्रवर्ति के, सुख से भी है न्यारा॥
मोह कर्म यह तुमसे डरकर, भागा लेकर डेरा।
पूजा करके अब तो बन जा, चन्द्रप्रभ का चेला॥५०॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं अनंत-सुख-गुणमण्डित श्री चन्द्रप्रभ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

अंतराय के क्षय होने से, अमित वीर्य जो पाया।
अन्त रहित सब द्रव्यों को सो, दिव्यध्वनि में गाया॥
सभी जानते अनन्त बल से, नहिं थकते हो स्वामी।
इसीलिए मैं अर्घ चढ़ाऊँ, बनने तुम सम नामी॥५१॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं अनंतवीर्यगुणमण्डित श्री चन्द्रप्रभजिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

१८ दोष से रहित १८ अर्घ्य

(लय—शांतिनाथ मुख शशि...)

भूख न लग सकती है तुमको।
परम पूज्य तुम लगते हमको॥
भोजन आता स्वर्ग लोक से।
चन्द्र रहें निज आत्मलोक में॥५२॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं क्षुधा-दोष-रहित श्री चन्द्रप्रभ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

अरे पिपासा दुखदायी हा।
उसके जेता शिवदायी वा॥
प्यास न लगती चन्द्रप्रभ को।
पूजा करके खुश हैं हम तो॥५३॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं तृषा-दोष-रहित श्री चन्द्रप्रभ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

डरे वही जो मोही हा-हा।
चन्द्रप्रभ निर्मोही वा-वा॥
निर्भय तुमको नित्य जपूँगा।
कर्मों से अब नहीं दबूँगा॥५४॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं भय-दोष-रहित श्री चन्द्रप्रभ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

शत्रु आपका कोई क्यों हो।
नहिं कषाय का लेश बचा जो॥
चन्द्रप्रभ जी द्वेष मिटा दो।
मुझको भी अब शरण बुला लो॥५५॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं द्वेष-दोष-रहित श्री चन्द्रप्रभजिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

जिसको देखो राग उपजता।
तुम्हें देखकर पाप सिमटता॥
चन्द्रप्रभ जी राग नाशकर।
सुखी बने हैं पाप नाशकर॥५६॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं राग-दोष-रहित श्री चन्द्रप्रभजिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

मोह वशी हो पर को अपना।
प्रभुवर कहते वह है सपना॥
सपना अपना सब मिट जावे।
चन्द्रप्रभ की शरणा आवे॥५७॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं मोह-दोष-रहित श्री चन्द्रप्रभ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

चिंता तुमको कभी न लगती।
तव चिंतन से चिंता भगती॥
ललित कूट पर जाकर अर्चे।
चन्द्रप्रभ सा चेतन हर्षे॥५८॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं चिंता-दोष-रहित श्री चन्द्रप्रभ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

जरा दोष का नाम मिटाया।
तन से सारा स्नेह हटाया॥
चन्द्र! आपको अजर पूजते।
पूजन से सब पाप छूटते॥५९॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं जरा-दोष-रहित श्री चन्द्रप्रभ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

कोटि रोग का पिण्ड देह है।
चन्द्रप्रभ का नहीं स्नेह है॥
रोग मिटा है प्रेम हटा सो।
पूजूँ मेरे रोग मिटा दो॥६0॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं रोग-दोष-रहित श्री चन्द्रप्रभजिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

अन्तक का भी अन्त किया है।
तब तो शिव का पंथ लिया है॥
मृत्युराज का मरण शीघ्र हो।
पूजूँ शिव का वरण शीघ्र हो॥६१॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं मरण-दोष-रहित श्री चन्द्रप्रभ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

पाप कर्म चकचूर हुआ है।
स्वेद दोष तव दूर हुआ है॥
चन्द्रप्रभ को अब तो भज ले।
मिथ्यातम को अब तो तज दे॥६२॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं स्वेद-दोष-रहित श्री चन्द्रप्रभ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

खेद फटकता नहीं निकट में।
क्लेश भाव भी शीघ्र सिमटते॥
उसके जो भी चन्द्र भजेगा।
पाद-पद्म में पूर्ण रचेगा॥६३॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं खेद-दोष-रहित श्री चन्द्रप्रभ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

मान उदय से मद आता है।
जड़ चेतन सब मन भाता है॥
चन्द्रप्रभ के मान मिटा सो।
पूजूँ मेरा मान मिटा दो॥६४॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं मद-दोष-रहित श्री चन्द्रप्रभ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

रति उपजे यदि विषय भोग में।
वृद्धि पाप में होय रोग में॥
चन्द्रप्रभ जी रति को मारा।
तब तो जग को भव से तारा॥६५॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं रतिदोषरहित श्री चन्द्रप्रभ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

विस्मय से तुम दूर हुए हो।
आत्मिक सुख से पूर हुए सो॥
चन्द्रपुरी में आप पधारे।
सब जीवों के दुःख निवारे॥६६॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं विस्मय-दोष-रहित श्री चन्द्रप्रभ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

निद्रा मेटी जागृत रहकर।
निज में सोये पर से हटकर॥
नाचूँ गाऊँ खुशी मनाऊँ।
चन्द्र आपको अर्घ्य चढ़ाऊँ॥६७॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं निद्रा-दोष-रहित श्री चन्द्रप्रभ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

जन्म रोग से दूर हुए हैं।
कर्म घातिया चूर किए हैं॥
चन्द्रप्रभ सम नहिं तीर्थंकर।
तुम सा भू पर नहिं क्षेमंकर॥६८॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं जन्म-दोष-रहित श्री चन्द्रप्रभ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

शोक मिटा है तेरा सारा।
तब तो पाया शिव का द्वारा॥
चन्द्र चरण में जो आवेगा।
शोक कभी नहिं वो पावेगा॥६९॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं शोक-दोष-रहित श्री चन्द्रप्रभ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

(ज्ञानोदय)

सम्मेदाचल सिद्धक्षेत्र पर, ललित कूट जो न्यारा है।
रही चढ़ाई बड़ी कठिन पर, लगता सबको प्यारा है॥
इसी कूट से चन्द्रप्रभ ने, आठ गुणों को पाया है।
अष्टम वसुधा पाने चेला, अष्टद्रव्य ले आया है॥७०॥

ॐ ह्रीं सम्मेदशिखरस्थित ललितकूटेभ्यो नमः अर्घ्यं ...।

सोनागिरि में चन्द्रप्रभ का, समवसरण जब आया था।
बड़े-बड़े भूपों ने आकर, प्रभु को शीश झुकाया था॥
मुनि अनंग अरु नंग पूज्य ने, इस ही गिरि से शिव पाया।
और जिनालय जितने राजित, स्मरण किया मन हरषाया॥

(दोहा)

सबके चरणों में नमूँ, और चढ़ाऊँ अर्घ।
फल में स्वामी अब मिले, मुझको भी अपवर्ग॥७१॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री चन्द्रप्रभ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

पूर्णार्घ्य

चन्द्रकान्तमणि सूर्यकान्तमणि, हीरा पन्ना रजतमयी।
मणिमुक्ता के पाषाणों के, बिम्ब रहे जो कनकमयी॥
पद्मासन में खड्गासन में, जिनमंदिर में तलघर में।
कमलासन पर सिंहासन पर, शोभ रहे हैं सुखमय हैं॥

(दोहा)

सबको वन्दन मैं करूँ, अर्घ चढ़ाऊँ आज।
चन्द्र आप सम मैं बनूँ, तीन लोक सिरताज॥७२॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री चन्द्रप्रभ-जिनेन्द्राय नमः पूर्णार्घ्यं...।

जाप्य मंत्र—ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री चन्द्रप्रभ-जिनेन्द्राय नमः॥

(९/२७/१०८)

जयमाला (दोहा)

जयमाला गुण खान की, गाऊँ जिनवर चन्द्र।
फल में स्वामी मैं बनूँ, सिद्धशिला का इन्द्र॥

(ज्ञानोदय)

चन्द्र चिह्न है चन्द्र नाम है, प्रभा रही है चंदा सी।
चन्द्रपुरी मय नभ में राजित, ऋक्षों में तुम चंदा जी॥
चन्द्र चाँदनी में तो नेत्रों वाला करता काम सही।
आप भक्त यदि अन्धा भी हो पा जाता है धाम सही॥१॥
सुन्दर प्रभुवर सर्व अंग तो, क्यों आभूषण धारोगे।
विषय वासना जीती तो क्यों, वस्त्रों से तन ढाकोगे॥
वस्त्राभूषण बिन भी तुम आकर्षित सबको कर लेते।
नाम स्मरण से पापी भी तो, पातक सारे तज देते॥२॥
अहो किया श्रृंगार नहीं पर, तुम-सा सुन्दर कोई है।
दर्श किये हैं जिसने तेरे, भाग्यवान तो वो ही है॥

मेरा भी अब भाग्य सितारा, चन्द्र प्रभुवर चमक उठा।
दर्शन करने पाद युगल के, मानस मेरा फुदक उठा॥३॥
तुम्हें देखकर चित्त खिला मम, जैसे रवि से कमल खिले।
सभी अलौकिक लौकिक सुख भी, मानो मुझको आज मिले॥
कितना आनन्दित हूँ वह तो, मेरे अनुभव गम्य रहा।
दु:ख मिटे हैं सारे मेरे, जीवन मेरा रम्य हुआ॥४॥
अरे सोम तो घटता बढ़ता, लेकिन तेरा ज्ञान कभी।
नहीं घटेगा नहीं बढ़ेगा, कारण कुछ भी शेष नहीं॥
चन्द्र रहा है कहाँ प्रकाशक, तीन लोक त्रय कालों का।
चन्द्रप्रभ तव ज्ञान चन्द्रमा, दृष्टा सबकी चालों का॥५॥
रजनीपति तुम अपूर्व प्यारे, आप अलौकिक चन्द्र कहे।
आ जावे यदि आप चरण में, क्यों दु:खों के कन्द सहे॥
फिर कैसे मैं कहूँ चन्द्रमा, आप सदा अकलंक रहे।
और निशाकर रहा कलंकित, कैसे भवि के पाप हरे॥६॥
कोई कहता चन्द्रप्रभ की, भक्ति करो सब काम बने।
कोई कहता इनको वन्दन, करके हम निष्काम बने॥
भजन मात्र से इनके कोई, कहता अघ सब मिट जाते।
प्रणाम कर ले एक बार भी, जग के सब सुख मिल जाते॥७॥
लेकिन स्वामी लगता मुझको, कोई जाने अनजाने।
कथा करेगा मात्र आपकी, श्रद्धा से तो शिव जावे॥
मैं तो स्वामी स्मरण करूँ तव, भक्ति करूँ पद नमन करूँ।
करूँ वंदना प्रणाम करके, केवल तेरे चरण पडूँ॥८॥
जो कुछ भी हो सब कुछ करके, कार्य सिद्धि मम हो जावे।
भव सागर का भ्रमण प्रभो यह, इक पल भी नहिं बच पावे॥
मात्र यही उद्देश्य रहा है, कर्म नाश हो भव क्षय हो।
पण्डित-पण्डित मरण करूँ मैं, मुझको भी पद अक्षय हो॥९॥

सूरीश्वर श्री समन्तभद्र को, रोग हुआ जब भस्मक का।
शिव मंदिर में पहुँचे लेकिन, उनके उर में सम्यक था॥
भोग वस्तुएँ खाते - खाते, पुण्योदय से रोग घटा।
तो सामग्री शेष बची सो, भूपति का हा रोष बढ़ा॥१०॥
पोल खुली तब सारी जनता, शिव मंदिर में हाय डटी।
नृप ने धर्म परिक्षा करने, नमस्कार की बात कही॥
तब स्वामी ने जैनधर्म की, ध्वजा लोक में फहराने।
और शीघ्र शिवकोटि भूप को, सत्य धर्म ही बतलाने॥११॥
शिव पिण्डी को बँधवा करके, संस्तव जब प्रारम्भ किया।
तव पद की थुति करते-करते, आप बिम्ब वह प्रकट हुआ॥
आप कृपा से मिथ्यामत का, खण्डन होकर पाप मिटा।
धर्म ध्वजा तब लहर-लहरकर, बतलाती थी मोक्ष-दिशा॥१२॥
गर्भ जन्म तप ज्ञान महोत्सव, सभी हुए थे चन्द्रपुरी।
समवसरण भी यहीं लगा तब, बना नगर यह सौख्यपुरी॥
पुण्यमित्र राजा ने प्रभु को, सर्वप्रथम आहार दिया।
क्षीर अन्न को देकर उसने, जीवन को कृतकाज किया॥१३॥
गणधर श्री वैदर्भ आदि त्रय, अधिक बताए नब्बे थे।
रही श्राविका पाँच लाख त्रय, लाख सुश्रावक अच्छे थे॥
समवसरण में लाख पूर्व तक, अहो आपने विहरण कर।
दिव्य देशना से भव्यों को, मार्ग दिखाया था सुखकर॥१४॥
उन ही चन्द्रप्रभ का मंदिर, नगर तिजारा में प्यारा।
अतिशय इसका बड़ा निराला, सब क्षेत्रों में है न्यारा॥
भूत - प्रेत से पीड़ित कोई, चन्द्रप्रभ की भक्ति करे।
सब पीड़ाएँ क्षणभर में ही, करें पलायन दूर हटें॥१५॥
आर्थिक हो या मानस का हो, रोग-शोक का वेदन हो।
आ जावे यदि आप शरण में, करे शान्ति का वेदन वो॥

ऐसे ही श्री सोनागिरि में, खड्गासन शुभ प्रतिमा है।
चन्द्रप्रभ से तीर्थ बना यह, समवसरण की महिमा से॥१६॥
पाँच कोटि अरु अर्द्ध कोटि मुनि, मोक्ष गये थे इस भू से।
सिद्ध क्षेत्र यह बना तभी से, न्यारा-प्यारा शुभकर रे॥
बड़े-बड़े ऋषि गणधर स्वामी, पार न पाते गुणगण का।
तो फिर कैसे मैं गा पाऊँ, चन्द्रप्रभ तव गुण महिमा॥१७॥
जहाँ सूर्य की किरणों का जब, प्रकाश नहिं जा पाता है।
तो क्या दीपक लेकर ज्ञानी, नहिं प्रकाश कर पाता है॥
उसी भाँति मैं छोटे से इस, ज्ञानमयी शुभ दीपक से।
गुण गाकर के चाहूँ केवलज्ञान रूप जग दीपक मैं॥१८॥
अल्पबुद्धि से अतः आज तव, यशोगान कर अल्प यहाँ।
जयमाला यह पूरी करके, नमन करूँ मैं शीश झुका॥
गल्ती होवे जो भी स्वामी, क्षमा माँगता नित्य सदा।
क्षमा करो हे चन्द्रप्रभ तुम, क्षमा धर्म भण्डार महा॥१९॥
आप सदृश ही क्षमा भाव वह, मुझमें भी अब आ जावे।
क्रोध भाव हा ! दुखदायी जो, मेरे भी अब मिट जावे॥
आप भक्ति मम उर में तब तक, बनी रहे हे तीर्थंकर!।
जब तक मैं सब कर्म नाशकर, नहिं पाऊँ निर्वाण नगर॥२०॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री चन्द्रप्रभ-जिनेन्द्राय नमः जयमाला पूर्णार्घ्यं...।

आशीर्वाद

चन्द्र आपका भक्त लोक में, चन्दा सम ही चमक उठे।
सम्यग्ज्ञानी आप शरण में, आवे श्रद्धा दमक उठे॥
चक्रवर्ति के मदनदेव के, इन्द्रों के अहमिन्द्रों के।
सुख पाकर के भव्य शीघ्र ही, पूजित हो शत इन्द्रों से॥

इत्याशीर्वादः परिपुष्पाञ्जलिं क्षिपामि/क्षिपेत्

श्री सुविधिनाथ विधान

पीठिका

(दोहा)

नवविधि से कर वन्दना, सुविधि चरण में आज।
विधान की शुरुआत में, लिखूँ पीठिका खास॥१॥

(चौपाई)

सुविधिनाथ गुण सागर जय हो, मेरे प्रभु शिवनागर जय हो।
मंगल-मंगल मंगल जय हो, मेट दिये भव दंगल जय हो॥२॥

उत्तम में परमोत्तम जय हो, तीन लोक में सत्तम जय हो।
शरणागत के रक्षक जय हो, पापास्रव के भक्षक जय हो॥३॥

त्रिभुवन के हे गुरुवर जय हो, नवमें तीर्थंकर तुम जय हो।
रामा माता नन्दन जय हो, बार-बार हो वन्दन जय हो॥४॥

काकन्दी गुण खान सु जय हो, भारत भू की शान सु जय हो।
वीतराग गतराग सुजय हो, मिटा दिये सब दाग सु जय हो॥५॥

घाति कर्म के नाशक जय हो, जैनधर्म के शासक जय हो।
सत्य धर्म के शास्ता जय हो, बता दिया शिव रास्ता जय हो॥६॥

शिवललना के प्रियतम जय हो, मेट दिये सब अघतम जय हो।
पञ्चेन्द्रिय के जेता जय हो, कर्म मेरु के भेत्ता जय हो॥७॥

मुक्ति राज्य के राजा जय हो, तोड़ा सबसे नाता जय हो।
मिटा दिये भव शूल सु जय हो,पाए सुख के फूल सु जय हो॥८॥

सुप्रभ से शिव पाया जय हो, निज में निज को ध्याया जय हो।
राग-द्वेष से वर्जित जय हो, परम साम्य से सज्जित जय हो॥९॥

अष्ट कर्म को जीता जय हो, गाऊँ तेरी गीता जय हो।
नहीं बचा आक्रन्दन जय हो, जीवन तेरा चन्दन जय हो ॥१०॥
कृपा रहे प्रभु तेरी जय हो, मति सुलटे अब मेरी जय हो।
करूँ पीठिका पूरी जय हो, अष्ट कर्म के चूरी जय हो ॥११॥

परिपुष्पाञ्जलिं क्षिपामि/क्षिपेत्

विधान प्रारम्भ

स्थापना

(ज्ञानोदय)

सुविधि सुविधि कर्त्तार रहे श्री, पुष्पदन्त विख्यात रहे।
सुप्रभ से सब कर्म नाशकर, शिवललना के पास गए ॥
तीर्थंकर तुम नवमें स्वामी, नव कोटी से वन्दन कर।
करूँ अर्चना पूजा तेरा, बार-बार अभिनन्दन कर ॥

(दोहा)

आओ - आओ हे प्रभो, आह्वानन शत बार।
स्थापन कर पूजा करूँ, आकर तव दरबार ॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री सुविधिनाथ जिनेन्द्र अत्र अवतर-अवतर संवौषट् इति आह्वाननं! ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री सुविधिनाथ जिनेन्द्र अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं! ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री सुविधिनाथ जिनेन्द्र अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणं।

अष्टक

(ज्ञानोदय)

जल लाया हूँ निर्मल तेरे, चरण चढ़ाने आज प्रभो।
आप सरीखा निर्मल जीवन हो जावे मम शीघ्र विभो ॥
पुष्पदन्त का भक्त लोक में, पुष्पों सम ही खिल जावे।
काँटो जैसी आपद में भी, गीत आपके वह गावे ॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री सुविधिनाथ-जिनेन्द्राय नमः जन्म-जरा-मृत्यु-विनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा...।

चन्दन की भी खुशबू स्वामी, हमको अब नहिं भाती है।
अतः चढ़ाऊँ तुमको जग में आप दीप हम बाती हैं॥
पुष्पदन्त का भक्त लोक में, पुष्पों सम ही खिल जावे।
काँटो जैसी आपद में भी, गीत आपके वह गावे॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री सुविधिनाथ-जिनेन्द्राय नमः संसार-ताप-विनाशनाय चंदनं निर्वपामीति स्वाहा...।

श्वेत सुउज्ज्वल चावल ले मैं, पूजा करने आता हूँ।
अक्षय पद की आशा से प्रभु, पद में आज चढ़ाता हूँ॥
पुष्पदन्त का भक्त...॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री सुविधिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अक्षय-पद-प्राप्तये अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा...।

कल्पद्रुम के पुष्प चढ़ाऊँ, काम वेदना मिट जावे।
कामधेनु सम चरण पूज निष्काम अवस्था मिल जावे॥
पुष्पदन्त का भक्त...॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री सुविधिनाथ-जिनेन्द्राय नमः काम-बाण-विध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा...।

नैवज मीठे मनमोहक मनभावन तुम्हें चढ़ाता हूँ।
और भूख से रहित देव के, पथ पर कदम बढ़ाता हूँ॥
पुष्पदन्त का भक्त...॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री सुविधिनाथ-जिनेन्द्राय नमः क्षुधा-रोग-विनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा...।

बिना जलाये प्रकाश देने, वाला दीपक लाऊँगा।
चढ़ा आपको ज्ञान ज्योति पा, मैं भी शिव में जाऊँगा॥
पुष्पदन्त का भक्त...॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री सुविधिनाथ-जिनेन्द्राय नमः मोहान्धकार-विनाशनाय

दीपं निर्वपामीति स्वाहा...।

महक उठे यह त्रिभुवन जिससे, ऐसी खुशबू वाली मैं
धूप चढ़ाकर पूज्य आपको, बन जाऊँ शिवमाली मैं॥
पुष्पदन्त का भक्त लोक में, पुष्पों सम ही खिल जावे।
काँटो जैसी आपद में भी, गीत आपके वह गावे॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री सुविधिनाथ जिनेन्द्राय नमः अष्टकर्म-दहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा...।

लौंग सुपारी काजू किसमिस, कितने ही भर लाऊँ मैं।
कम ही लगते मोक्ष सु पाने, कैसे तुम्हें चढ़ाऊँ मैं॥
पुष्पदन्त का भक्त...॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री सुविधिनाथजिनेन्द्राय नमः महामोक्षफलप्राप्तये फलं...।

जल फल नैवज धूप सुचन्दन, अक्षत दीप सु आज लिया।
पुष्प मिलाकर अर्घ बनाकर, तव चरणों में भेंट किया॥
पुष्पदन्त का भक्त...॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री सुविधिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अनर्घपदप्राप्तये अर्घ्यं...।

प्रत्येक-अर्घ्य

(दोहा)

तेरी पूजा में प्रभो, द्रव्य चढ़ाए आठ।
अर्घ चढ़ा अब पूजता, मिले मोक्ष का ठाठ॥

इति मण्डलस्योपरिपुष्पांजलिं क्षिपामि/क्षिपेत्

जन्मातिशय के १० अर्घ्य

(लय-कहाँ गये चक्री...)

तेरे तन में किञ्चित् स्वामी, स्वेद न आता है।
भू आते ही शक्र आपके, गीत सुगाता है॥
सुविधि आपकी पूजा से सब, दुविधा मिटती है।
शिव पथ चलने वालों को, सब सुविधा मिलती है ॥१॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं निःस्वेदत्व-जन्मातिशय-गुणधारक श्री सुविधिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

नव मल द्वारों सहित देह पर, मल नहिं झरता है।
निर्मल तन है निर्मलता, मम मन में भरता है॥
भाग्यवान सौभाग्यवान भी, सुविधि बनाने को।
सुविधि आपके चरणों आते, अर्घ चढ़ाने को॥२॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं निर्मलत्व-जन्मातिशय-गुणधारक श्री सुविधिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घं निर्वपामीति स्वाहा...।

लाल रक्त है लेकिन धवलिम, कैसे आज हुआ।
सबके दुःख मिटाने का जो, मन में भाव हुआ॥
उसके फल में सुविधि आप में, अतिशय प्रकटा है।
जिसने पूजा उसने अघ का, मेटा खटका है॥३॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं क्षीरगौररुधिरत्व - जन्मातिशय-गुणधारक श्री सुविधिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

सुघड़ सुहाना दर्शनीय तव, देह गठीला है।
बिना साज शृंगार किये भी रूप छबीला है॥
सुविधि आपको जप-जप करके, जन्म मिटाऊँ मैं।
ऐसी आशा से ही तुमको, अर्घ चढ़ाऊँ मैं॥४॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं सौरूप्य-जन्मातिशय-गुणधारक श्री सुविधिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

भाग्यवान के पुण्यवान के, तन में जो रहते।
वे सब लक्षण तव आश्रय पा, सबका मन हरते॥
तीर्थंकर पद इसका कारण, सुविधि आप में है।
पूजे जो भी शीघ्र पहुँचते, सौख्य धाम में वे॥५॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं सौलक्षण्य-जन्मातिशय-गुणधारक श्री सुविधिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

तीन लोक की गन्धवती सब, चीजें देखी हैं।
लेकिन तव सम गन्ध न अब तक, मैंने देखी है॥
मन में आयी समझ आज तो, दौड़ा आया हूँ।
दुर्लभ दर्शन पाकर पूजा, कर हरषाया हूँ ॥६॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं सौगन्ध्य-जन्मातिशय-गुणधारक श्री सुविधिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

बलबूता है कितना तुममें, कह नहिं पायेंगे।
संहनन पाये बिना सु पहला, मोक्ष न जायेंगे॥
कर्म नाश के योग्य शक्ति पा, शिव को पाऊँ मैं।
सुविधिनाथ की पूजा करके, ध्यान लगाऊँ मैं ॥७॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं वज्रवृषभनाराच-संहनन-जन्मातिशय-गुणधारक श्री सुविधिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

दीप्तिवान द्युतिमान देह का, सौष्ठव कैसा है।
उपमा देकर कह नहिं पावे, इसके जैसा है॥
सुविधि आपकी सुन्दरता का, पार न जग में है।
पूजन के फल को कहने की, ताकत किसमें है ॥८॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं समचतुरस्रसंस्थान-जन्मातिशय-गुणधारक श्री सुविधिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

क्षयोपशम जो अंतराय का, उसके बल से ही।
अमित वीर्य का पुण्य सु पाया, पूर्व जन्म से ही॥
सुविधि आपके बल के आगे, महामल्ल हारे।
तेरे जैसे विशाल गुरु ही, भक्तों को तारे॥९॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं अप्रमितवीर्य-जन्मातिशय-गुणधारक श्री सुविधिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

हितकारक अरु श्रुतिप्रिय तेरी, सुन करके वाणी।
झुक जाते हैं मस्तक सबके, जुड़ जाते पाणी॥

सुविधि आपका अतिशय है यह, किसको नहिं भावे।
पूजा करके पुण्यवन्त भी, तेरे गुण गावे॥१०॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं प्रियहितवादित्व-जन्मातिशय-गुणधारक श्री सुविधिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

केवलज्ञानातिशय के १० अर्घ्य

(लय—शांतिनाथ मुख...)

नहीं पड़े दुर्भिक्ष वहाँ पर।
आवे प्रभुवर जहाँ-जहाँ पर॥
सुविधि मिटा दो खोटी विधियाँ।
मिल जावे अब निज की निधियाँ॥११॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं गव्यूतिशत-चतुष्टय-सुभिक्षत्व-घातिक्षय-जातिशय-गुणधारक श्री सुविधिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

बिहार नभ में होता जब-जब।
देख चित्त मम होता गदगद्॥
सुविधि आपकी कृपा दृष्टि से।
बदले मेरी दुःख सृष्टि ये॥१२॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं गगनगमनत्व-घातिक्षय-जातिशय-गुणधारक श्री सुविधिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

जीव जन्तु नहिं मरे कभी भी।
तुम्हें देख सुख वरे सभी ही॥
तीनलोक के ज्ञाता तुम हो।
सुविधि आपको पूजे खुश हो॥१३॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं अप्राणिवधत्व-घातिक्षय-जातिशय-गुणधारक श्री सुविधिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

भुक्ति भाव अब नहीं उपजता।
तब तो मम मन तुमको भजता॥

सुविधि बता दो विधियाँ सुख की।
पूजूँ मेटो घड़ियाँ दुख की॥१४॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं भुक्त्यभाव-घातिक्षय-जातिशय-गुणधारक श्री सुविधिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

बुरा न तेरा कर पावेगा ।
रिपुदल भी मिल पद आवेगा॥
कमठ झुका था ज्यों पारस को।
पूजूँ जन्म न अब वापिस हो॥१५॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं उपसर्गाभाव-घातिक्षय-जातिशय-गुणधारक श्री सुविधिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

मुख सरसिज चउदिशि में दिखता।
दर्शक का उर क्षण में खिलता॥
जैसे खिलते कमल सरोवर।
देख सूर्य को पूजूँ जिनवर॥१६॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं चतुर्मुखत्व-घातिक्षय-जातिशय-गुणधारक श्री सुविधिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

सुविधि आपके साथ रहेगी।
विद्याएँ सब खास बनेगी॥
उसका कारण ज्ञान भानु जो।
उदित हुआ मैं पूजूँ तुमको॥१७॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं सर्वविद्येश्वरत्व-घातिक्षय-जातिशय-गुणधारक श्री सुविधिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

छाया का नहिं पड़ना स्वामी।
अतिशय तेरा जग में नामी॥
अपना कर विधि पाप नाश की।
शिव पाया सो सौख्य श्वास ली॥१८॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं अच्छायत्व-घातिक्षय-जातिशय-गुणधारक श्री सुविधिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

पलकें झपके उसकी ही तो।
थक जावे जो जगवासी हो॥
आप न थकते अहो धन्य हो।
पूजें वो ही जगत मान्य हो॥१९॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं अपक्ष्मस्पन्दत्व-घातिक्षय-जातिशय-गुणधारक श्री सुविधिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

नख न बढ़ेंगे बाल न बढ़ते।
पूजे उसके पातक घटते॥
अर्हत् पद पा अतिशय पाया।
सुविधि चरण में अर्घ चढ़ाया॥२०॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं समान-नख-केशत्व-घातिक्षय-जातिशय-गुणधारक श्री सुविधिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

देवकृत अतिशय के १४ अर्घ्य

(लय—मुनि सकलव्रती बड़भागी...)

तव अर्धमागधी वाणी, जो कहलाती जिनवाणी।
जब समवसरण में पावे, तब भव्य जीव हरषावे॥२१॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं सर्वार्धमागधी-भाषा-देवोपनीतातिशय-गुणधारक श्री सुविधिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

अहि[१] मोर सिंह अरु हाथी, वे बन जाते हैं साथी।
जब सुविधिनाथ तुम आओ, मैं पूजूँ पाप हटाओ॥२२॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं सर्वजन-मैत्रीभाव-देवोपनीतातिशय-गुणधारक श्री सुविधिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

ऋतु आवे या नहिं आवे, सब पत्र पुष्प खिल जावे।
जब गमन आपका होवे, सब पाप पंक को धोवे॥२३॥

---

१. साँप

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं सर्वर्तुफलादि-शोभिततरु-परिणाम-देवोपनीतातिशय-गुणधारक श्री सुविधिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

आदर्श रहा ज्यों जीवन, त्यों हो जाती भू पावन।
मैं आह्लादित हूँ स्वामी, यह अर्घ चढ़ा जगनामी ॥२४॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं आदर्शतल-प्रतिमा-रत्नमयी-देवोपनीतातिशय-गुणधारक श्री सुविधिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

अनुचरण करेगा तेरा, वह पवन बहे नहिं टेढ़ा।
श्री सुविधि कर्म के जेता, सो बने मोक्षपथ नेता ॥२५॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं विहरण-मनुगत-वायुत्व-देवोपनीतातिशय-गुणधारक श्री सुविधिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

हम आनन्दित हैं इतने, प्रभु कह न सकेंगे कितने।
सो छम-छम छम-छम नाचे, हम अर्घ चढ़ाने आते ॥२६॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं सर्वजन-परमानन्दत्व-देवोपनीतातिशय-गुणधारक श्री सुविधिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

तब गन्धोदक बरसावें, जब सुविधिनाथ आ जावे।
मैं परिजन को ले आऊँ, तव पूजा कर शिर नाऊँ ॥२७॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं मेघकुमारकृत-गन्धोदक-वृष्टि-देवोपनीतातिशय-गुणधारक श्री सुविधिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

नहिं धूल वहाँ उड़ पावे, सुन जहाँ सुविधि प्रभु आवे।
यह काम करे जब स्वर्गी, तब पूजेंगे सब वर्गी ॥२८॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं वायुकुमारोपशमित - धूलिकण्टकादि-देवोपनीतातिशय-गुणधारक श्री सुविधिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

सुर कनक सुनिर्मित प्यारे, जो पद्म बनाकर न्यारे।
तव चरण कमल के नीचे, रख पाते सुख वे सच्चे ॥२९॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं पादन्यासेकृत-पद्मानि-देवोपनीतातिशय-गुणधारक श्री सुविधिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

फल पत्र फूल सब खिलते, श्री सुविधि दर्श जब मिलते।
वे झुक-झुककर बतलावे, नहिं बनो कभी मतवाले॥३०॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं फलभार-नम्रशालि-देवोपनीतातिशय-गुणधारक श्री सुविधिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

नभ निर्मल तब हो जाता, जब आप समागम पाता।
मैं सुविधि आपको ध्याऊँ, नहिं पुनः जन्म को पाऊँ॥३१॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं शरन्कालवन्निर्मल-गगनत्व-देवोपनीतातिशय-गुणधारकश्री सुविधिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

सुर वाद्य यन्त्र तब बजते, जब तुम भू लोक विहरते।
सुन आ जाते भवि प्राणी, हे सुविधि तुम्हीं सुखदानी॥३२॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं एतैतैतिचतुर्निकायामर - परस्पराह्वानन-देवोपनीतातिशय-गुणधारक श्री सुविधिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

हो निर्मल सभी दिशाएँ, तब बदले सभी दशाएँ।
सो सुविधिनाथ अब मेरा, मन ध्यान करे बस तेरा॥३३॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं शरन्मेघवन्निर्मल-दिग्विभागत्व-देवोपनीतातिशय-गुणधारक श्री सुविधिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

वृषचक्र चले तव आगे, तब भाग्य सभी के जागे।
वे प्राणी सुख पा जाते, जो सुविधि, चरण को ध्याते॥३४॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं धर्मचक्र-चतुष्टय-देवोपनीतातिशय-गुणधारक श्री सुविधिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

अष्टप्रातिहार्य के ८ अर्घ्य

(दोहा)

तज देता तब शोक को, जब पाता है साथ।
तरु अशोक यह नाम भी, बन जाता है सार्थ॥
काकन्दी के भूप तुम, बनकर मोक्ष स्वरूप।
सम्मेदाचल क्षेत्र पर, मिटा दिये दुख कूप॥३५॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं अशोकवृक्ष-प्रातिहार्य-धारक श्री सुविधिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

पुष्पवृष्टि कहती हमें, पुष्पदन्त को पूज।
पुष्पों सम जीवन बने, और बने तू पूज्य॥
सुविधि अर्चना से मिटे, दुख के झंझावात।
सो मैं अर्चूं आपको, अर्घ चढ़ा दिन-रात॥३६॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं सुरपुष्पवृष्टि-प्रातिहार्य-धारक श्री सुविधिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

चामर झुककर ये कहें, झुक-झुक करो प्रणाम।
जो पूजे इक बार भी, बने शीघ्र निर्नाम॥
पूज-पूज इन चरण को, शरण रहे ये खास।
आपद-विपदा सब मिटे, धन हो जावे दास॥३७॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं चतुःषष्ठी-चामर-प्रातिहार्य-धारक श्री सुविधिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

रहा अलौकिक तेज जो, तन का हे जिननाथ।
भामण्डल इस नाम से, जग में है विख्यात॥
रामा माँ से जन्म ले, राज रमा का साथ।
छोड़ बने प्रभु आप तो, मुक्ति रमा के नाथ॥३८॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं भामण्डल-प्रातिहार्य-धारक श्री सुविधिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

दुन्दुभि बजते नित्य ही, पुष्पदन्त के साथ।
तीर्थंकर का ये रहा, वैभव शुभ साक्षात्॥
नाच-नाच तू नाच ले, दर्शन करके आज।
कर्म कालिमा दूर हो, बने लोक सिरताज॥३९॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं दुन्दुभिप्रातिहार्य-धारक श्री सुविधिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

छत्रत्रय मण्डित हुए, पाया जब वह ज्ञान।
नहीं मिटेगा जो कभी, पूजूँ हे गतमान॥
धवल वर्ण तव देह का, धवल रहे तव भाव।
ध्याकर धवलिम ध्यान को, मेटे अघ के घाव ॥४0॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं छत्रत्रय-प्रातिहार्य-धारक श्री सुविधिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

दिव्य देशना जब सुनी, मिटे सभी के पाप।
प्रातिहार्य से युक्त औ, रहे सुविधि प्रभु आप॥
पुष्पदन्त तव नाम से, पुष्प बाण हो दूर।
सुमनो सम सज्जन बने, आवे सुख का पूर॥४१॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं दिव्यध्वनि-प्रातिहार्य-धारक श्री सुविधिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

सिंहासन पर आपकी, छवि सोहे ज्यों चाँद।
नक्षत्रों के बीच में, पूज मिटे दुख बाँध॥
सुविधि आपकी भक्ति से, राहु केतु शनि सोम।
भूत प्रेत अरु दुष्ट सब, हो जाते हैं मोम ॥४२॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं सिंहासन-प्रातिहार्य-धारक श्री सुविधिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

पंच कल्याणक के ५ अर्घ्य

(ज्ञानोदय-दोहा)

माँ ने देखे सोलह सपने, मानो कहते जननी को।
तेरा बेटा सोलहवानी, शुद्ध स्वर्ण सम स्वर्णिम हो॥
नहिं आवे अब पुनः किसी भी, मात गर्भ में कभी अरे।
इसीलिए इस गर्भ महोत्सव, की महिमा को कौन कहे॥

फाल्गुन नवमी कृष्ण की, पंचम गति के काज।
सुविधि पधारे गर्भ में, सो पूजूँ जिनराज ॥४३॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं गर्भकल्याणक-मण्डित श्री सुविधिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

जन्म लिया तब विद्रोही अरु, पापी के अघ शान्त हुए।
एक पलक भर नारक जन भी, दुःखों से अतिक्रान्त हुए॥
कल्याणक यह देवों ने आ, नाच-नाचकर पूर्ण किया।
मानव ने भी तीर्थंकर को देख पाप को चूर्ण किया॥
राजा श्री सुग्रीव के, घर जन्मे भगवान।
मगसिर शुक्ला की रही, प्रथमा तिथि सुखदान ॥४४॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं जन्म-कल्याणक-मण्डित श्री सुविधिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

देख तपस्या अहो आपकी, मिथ्यामत के साधक भी।
चरण झुके तज उल्टे वृष को, बने धर्म आराधक जी॥
राज रमा को, परिजन पुरजन, बान्धव सम्पद् वैभव को।
छोड़ बने थे परम दिगम्बर, पाने आतम वैभव को॥
बेला आयी जन्म की, सुविधि छोड़ घरबार।
बने आप स्वाधीन सो, तव पूजा है सार ॥४५॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं तपःकल्याणक-मण्डित श्री सुविधिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

शुक्ल ध्यान से शिवरोधक जब, मृत्यु गोद में घाति गये।
पाँच सहस धनु ऊपर गगनांगन में तुम स्वयमेव गये॥
वसु योजन के समवसरण में, महा दिव्य उपदेश हुआ।
सुविधिनाथ का सुनकर भवि ने, आप सरीखा वेष लिया॥

कार्तिक शुक्ला दूज का, जब आया शुभ काल।
ज्ञान सूर्य ने मेट दी, बाल[१] भाव की चाल ॥४६॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं ज्ञान-कल्याणक-मण्डित श्री सुविधिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

अन्तिम गुण में सभी कर्म की, सत्ता को निःशेष किया।
तब प्रभुवर श्री सुविधिनाथ ने, शाश्वत आतम देश लिया॥
कल्पकाल यदि अनन्त बीते, तो नहिं विकृत होवेंगे।
लौट न आवे सुविधिनाथ नहिं, जन्म-मरण को पायेंगे ॥
अष्टम दिन में आपने, नाशे कर्म सुआठ।
भाद्र शुक्ल में हे प्रभो!, पाया शिव का ठाठ ॥४७॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं मोक्ष-कल्याणक-मण्डित श्री सुविधिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

अनन्त चतुष्टय के ४ अर्घ्य

(छन्द-ज्ञानोदय)

क्षयोपशम से होने वाले सब, ज्ञानों का विलय हुआ।
ज्ञानावरणी के जाने से, पूर्ण ज्ञान का निलय हुआ॥
तव चेतन में नहीं बचा अज्ञान भाव का अंश अहा।
सो वन्दूँ हे सुविधिनाथ मम, मिट जावे सब द्वंद्व महा ॥४८॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं अनंत-ज्ञान-गुणमण्डित श्री सुविधिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

अनन्त दर्शन जिसमें तीनों, लोकों का अवलोकन हो।
वीतरागमय सुविधि आपको, शत-शत शत-शत वन्दन हो॥
कर्म दूसरे की जब दाल न, गल पायी थी तो स्वामी।
भाग गया सो पूज्य हुए तुम, पूजूँ त्रिभुवन सन्नामी ॥४९॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं अनंत-दर्शन-गुणमण्डित श्री सुविधिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

---

१. अज्ञान

बिना अक्ष के बिना चित्त के, सामग्री के बिना अहो।
सुख पाया जो उसका प्रभु अनुमान लगावे कौन कहो॥
अनन्तसुख है नाम उसी का, अनुपम सुख है अद्‌भुत है।
अष्ट द्रव्य से पूजे जो भी, पा जाते सुख निरुपम वे॥५०॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं अनंत-सुख-गुणमण्डित श्री सुविधिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

बाधक है जो दानादिक में, अन्तराय वह नष्ट हुआ।
फल में स्वामी वीर्य रहा जो, अनन्त तेरे प्रकट हुआ॥
इसीलिए हे सुविधि आपको, रोम-रोम से पुलकित हो।
अर्घ चढ़ाऊँ, फल में मुझको, अब तो क्षायिक समकित हो ॥५१॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं अनंत-वीर्य-गुणमण्डित श्री सुविधिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

१८ दोष से रहित के १८ अर्घ्य

(छन्द-नरेन्द्र)

क्षुधा रोग से व्यथित हुआ मैं, भोजन करता जाता।
तृप्ति न फिर भी हो पायी सो, तुमको अर्घ चढ़ाता॥
भूख विजेता सुविधिनाथ जी, गाथा गाऊँ तेरी।
तव प्रसाद से हे तीर्थंकर, मति सुलटे अब मेरी ॥५२॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं क्षुधादोषरहित श्री सुविधिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

प्यास न आती पास आपके, अहो पिपासा भागी।
तभी बना है तीन लोक यह, तेरे पद का रागी॥
जब तक श्वास रहेगी तब तक, भक्ति करूँ मैं तेरी।
पूजूँ अर्घ चढ़ाकर तुमको, मति सुलटे अब मेरी॥५३॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं तृषादोषरहित श्री सुविधिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

तव जीवन में भय की स्वामी, पड़ न सकेगी छाया।
इसीलिए तो पूजक के झट, मिट जाती है माया॥

ध्यान अग्नि में अहो जलाई, डाल कर्म की ढेरी।
सुविधि नमन हो सौ-सौ जिससे, मति सुलटे अब मेरी ॥५४॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं भयदोषरहित श्री सुविधिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

द्वेष न करते आप किसी से, नहिं कोई है द्वेषी।
पूजन करके सुविधि आपकी, बनूँ आप सम वेषी॥
भाया था कल्याण सभी का, सो न बचा है वैरी।
मैं भी तेरा भक्त बना सो, मति सुलटे अब मेरी ॥५५॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं द्वेष-दोष-रहित श्री सुविधिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

राग मिटाया तुमने क्योंकि, राग आग दुख देती।
सुविधि आपकी पूजा से ही, होती सुख की खेती॥
सुप्रभ के हे स्वामी नवमें, श्रेष्ठ भाव से तेरी।
उपासना कर शीश झुकाऊँ, मति सुलटे अब मेरी ॥५६॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं राग-दोष-रहित श्री सुविधिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

आप रहे सिरमौर तभी तो, भक्तजनों की टोली।
पूजें सो जल जाती उनके, पाप कर्म की होली॥
मोह रहित को पूजेगा तो, नहीं बनेगा स्वैरी।
सुविधिनाथ की अर्चा से ही, मति सुलटे अब मेरी ॥५७॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं मोहदोषरहित श्री सुविधिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

परिजन - पुरजन छोड़ दिये सो, चिन्ता नहीं सताती।
सुविधि आप निश्चिंत हुए हैं, सबको आज बताती॥
तव पूजा से अघ मिटने में, लगती नहिं है देरी।
पूजूँ अर्चूं शीश झुकाऊँ मति सुलटे अब मेरी॥५८॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं चिन्तादोषरहित श्री सुविधिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

अहो बुढ़ापा घेर न सकता, जिनवर उसके जेता।
मार्ग बताओ शिव का तुम ही, मोक्षमार्ग के नेता॥

अन्तिम क्षण तक भक्ति रचाऊँ, शान्त सन्त प्रभु तेरी।
सुविधिनाथ जी तव आशिष से, मति सुलटे अब मेरी ॥५९॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं जरादोषरहित श्री सुविधिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

वात पित्त कफ आदि धातु से रहित बना तन तेरा।
इसीलिए तो रोग न कोई डाल सकेगा डेरा॥
तब तो पूजक के घर स्वामी, बजे सौख्य की भेरी।
श्वास-श्वास में सुविधि रटूँ सो, मति सुलटे अब मेरी ॥६0॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं रोगदोषरहित श्री सुविधिनाथजिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

मृत्यु न होगी कभी आपकी, उसको तुमने मारा।
सुविधि आपका भक्त कभी भी, फिरे न मारा-मारा॥
इस भव में अरु परभव में भी, शरण रहूँगा तेरी।
जितमोही की करूँ वन्दना, मति सुलटे अब मेरी ॥६१॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं मरणदोषरहित श्री सुविधिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

सप्त धातु से रहित देह सो, स्वेद कहाँ क्यों आवे।
स्वेद रहित, तव अर्चा से तो, आपद सब मिट जावे॥
एक बार भी द्वन्द्व-फन्द तज, भक्ति करे अलबेली।
अघ छूटेंगे, मैं भी पूजूँ, मति सुलटे अब मेरी ॥६२॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं स्वेददोषरहित श्री सुविधिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

सुविधि रहे हैं तीन लोक में, उत्तम प्रतिभाशाली।
खेद नहीं सो भक्ति करेगी, भक्तों की रखवाली॥
अहो आपके खेद कर्म अब, करे न हेरा-फेरी।
दर्श मिले हैं तव पद के सो, मति सुलटे अब मेरी॥६३॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं खेददोषरहित श्री सुविधिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

मान मिटा सो सुविधिनाथ जी, नहिं होते मदमाते।
इस कारण ही तव पद के सौ इन्द्र सदा गुणगाते॥

मन्त्रमुग्ध हो अहोरात मैं, महिमा गाकर तेरी।
करूँ समर्पित जीवन तुमको, मति सुलटे अब मेरी ॥६४॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं मद-दोष-रहित श्री सुविधिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

दोष रहा है रति सो तुमने, नाश किया है सारा।
रति करले यदि तव पद से तो, मिल जावे मन चाहा॥
सुविधिनाथ के स्मरण मात्र से, मिटती मोह अँधेरी।
इसीलिए मैं करूँ प्रार्थना, मति सुलटे अब मेरी ॥६५॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं रति-दोष-रहित श्री सुविधिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

बात न ऐसी रही लोक में, कोई विस्मयकारी।
जो तुमको कर देवे विस्मित, आप रहे गतरागी॥
महिमा सुनकर बनी सुदुनिया, पुष्पदन्त की चेरी।
नाम आपका जपने से ही, मति सुलटे अब मेरी ॥६६॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं विस्मय-दोष-रहित श्री सुविधिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

अहो नींद की बाधा को तो, क्षणभर में ही रोका।
जो पूजेगा वीतराग को, नहिं खाएगा धोखा॥
सुविधिनाथ जी अहोरात मैं, करूँ अर्चना तेरी।
तीनों संध्या पूजूँ जिससे, मति सुलटे अब मेरी ॥६७॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं निद्रादोषरहित श्री सुविधिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

जन्म - जन्म नहिं लेगा तुममें, बने अजन्मा शास्ता।
हमें बताओ सुविधिनाथ जी, मोक्ष महल का रास्ता॥
रोम-रोम से पुलकित होकर, पूज रचाऊँ तेरी।
अष्ट द्रव्य से पूजा करता, मति सुलटे अब मेरी ॥६८॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं जन्मदोषरहित श्री सुविधिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

शोक रहे हैं जितने जग मैं, शेष बचे नहिं कोई।
तव चेतन में क्योंकि आपने, विधियाँ सारी धोई॥

बड़े शौक से पूजे यदि तो, समकित की हो खेती।
नाच-नाचकर पूजूँ तुमको, मति सुलटे अब मेरी॥६९॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं शोकदोषरहित श्री सुविधिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

(ज्ञानोदय)

श्रेष्ठ प्रभा से युक्त कूट का, सुप्रभ सुन्दर नाम रहा।
सुविधिनाथ के शिव जाने का, ये ही उत्तम धाम कहा॥
अष्ट कर्म अब नाश हुए सो, क्यों नहिं दुनिया गुण गाये।
हम भी अर्घ चढ़ाकर जल्दी, मोक्षनगर में बस जावे॥७०॥

ॐ ह्रीं सम्मेदशिखर स्थित सुप्रभ कूटेभ्यो नमः अर्घ्यं...।

वन कानन में राजमहल में, चौराहे पर शहरों में।
जहाँ कहीं भी सुविधिनाथ के, बिम्ब ग्राम में नगरों में॥
उन सबकी मैं करूँ वन्दना, करूँ अर्चना अर्घ चढ़ा।
इनके जैसा देव लोक में, नहिं मिल पावे कहीं यहाँ॥७१॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री सुविधिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

पूर्णार्घ्य

खदेड़ इतना दूर भगाया, मोह लौट नहिं आ पाये।
सोचा इसके रहते मुझको, शिव सुख कैसे मिल पाये॥
नहीं बचेगा बाँस कहो फिर, वंशी कैसे बज पावे।
इसीलिए तो सुरनर किन्नर, अर्घ चढ़ाने झट आवे॥७२॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री सुविधिनाथ-जिनेन्द्राय नमः पूर्णार्घ्यं...।

जाप्य—ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री सुविधिनाथ-जिनेन्द्राय नमः।

(९/२७/१०८)

जयमाला

(दोहा)

पूजा की जयमाल यह, गाने को तैयार।
हो जावे तो काल भी, उससे माने हार॥१॥

(ज्ञानोदय)

सुविधि आपने विधि को नाना, विध के ध्यान लगा करके।
नाश किये थे कर्म शत्रु को, अपना रोब दिखा करके॥
फलतः सबने तुम्हें देखकर, उत्तम विधियाँ सीखी थी।
जिनके आगे तीन लोक की, सारी विधियाँ फीकी थी ॥२॥

क्योंकि आपने बतलायी वो, विधियाँ उत्तम सत्य रही।
भव के दुःख मिटाने में वे, ग्रहण योग्य हैं पथ्य कही॥
भवनालय के इन्द्र रहे चालीस आपके चरण जजे।
व्यन्तर के बत्तीस इन्द्र जो, मात्र आपकी शरण रहें॥३॥
वैमानिक के सुनो कहे चौबीस, सूर्य अरु चन्दा हैं।
चक्रवर्त्ति अरु सिंहराज भी, बने आपके बन्दा है॥
ऐसे शत इन्द्रों से पूजित, वन्दनीय सम्मान्य रहे।
पूजनीय आराध्य सभी के, और लोक में मान्य कहे॥४॥

तेजवन्त तुम महिमामण्डित, तेज देखकर तेजस्वी।
लज्जित होकर पद नम करके, तज देते हैं तेज सभी॥
पुण्डरीक नगरी के राजा, महापद्म तुम दानी थे।
मुँह माँगा सब देते थे सो, जनता के वरदानी थे ॥५॥

इससे ही तुम बने यशस्वी, यश फैला था दिशा-दिशा।
और आपको देख मिली थी, मोक्षमार्ग की सही दिशा॥
सुना मनोहर वन में आये, धर्म शिरोमणि धर्मात्मा।
नाम रहा था धर्मशेष जो, तपोपूत थे पुण्यात्मा॥६॥

झट से उठकर नमन किया फिर, दल-बल लेकर पहुँच गए।
राज रानियाँ मंत्री आदिक, साथ उन्हीं के सहज गए॥
धर्मामृत को कर्णाञ्जलि से, खूब पिया पर तृप्ति नहीं।
हो पायी सो स्वयं धर्ममय, बनने तुमने कमर कसी॥७॥

पुत्र-पौत्र को रानीगण को, प्रिय पटरानी परिजन को।
कण्ठहार जो रत्नखचित थे, मुकुट स्वर्णमय मणिमय को॥
कनकजरी से जटित वस्त्र को, और सभी आभरणों को।
जीर्ण-शीर्ण तिनके सम क्षण में, छोड़ दिये आवरणों को॥८॥

अहो दिगम्बर तजकर अम्बर, संग छोड़ निःसंग हुए।
वस्त्र छोड़ निर्वस्त्र बने सो, तुम्हें देख सब दंग हुए॥
वस्त्राभूषण रहित देह पर, निर्विकार हे पापजयी!।
करती सबको आकर्षित पर, बने पूज्य तुम कामजयी॥९॥

मृदुतम नाजुक कोमल तन से, उग्र-उग्रतर तप करके।
हिला दिये थे सुर सिंहासन, अक्ष विजेता बन करके॥
फलतः तीर्थंकर पद पाने, अतिशय भारी पुण्य कमा।
समाधिपूर्वक मरण किया सो, स्वर्ग मिला था रम्य महा॥१०॥

आरण सुर से आकर के जो, काकन्दी के राजा थे।
रानी उनकी जयरामा के उर, आ त्रिभुवन राजा ये॥
ख्यात-हुए विख्यात हुए थे, देव सुरासुर मानव से।
पूज्य हुए सो आप चरण में, पहुँच गए थे दानव रे॥११॥
सुन करके उपदेश आपका, पाप पंक सब धो डाले।
बन करके वे भक्त आपके, मेटे भव की दुख चालें॥
यह सब सुनकर मेरे तन का, रोम-रोम सब पुलकित है।
फूला नहीं समाया मैंने, पाया मानो समकित है॥१२॥

स्वर्ण शिलाएँ, त्रयखण्डों का, छह खण्डों का वैभव भी।
मिल जाएगा तो भी मुझको, खुशी नहीं हो इतनी जी॥
जितनी स्वामी तव पूजन से, सहज रूप से आज मिली।
स्वर्णिम प्रातःकाल हुआ है, मन की कलियाँ आज खिली॥१३॥

अन्दर की इन खुशियों को मैं, किन शब्दों में प्रकट करूँ।
ढोल नगाड़े बजा-बजाकर, नाचूँ-गाऊँ नमन करूँ॥
भेरी बजवा नगर-नगर में, गाँव-गाँव में घर-घर में।
तेरी महिमा बतलाने सम्पर्क, करूँ मैं जन-जन से॥१४॥

कहूँ सभी से दुख से यदि तुम, बचना चाहो तो आओ।
घर के सारे काम-काज तज, जल्दी से तुम आ जाओ॥
ढूँढ़-ढूँढ़कर थक जाओ तो, नहीं मिलेगा इन सम रे।
वीतराग सर्वज्ञ हितंकर, पुष्पदन्त सा आप्त अरे॥१५॥

देखो इनके आगे माणिक, मोती हीरा पन्ना के।
थाल चढ़े पर नहीं देखने, की किंचित् भी इच्छा है॥
और नहीं कुछ इनके प्रति, आकर्षण इनमें हो सकता।
तथा भक्त को आशिष का नहिं, हाथ कभी भी उठ सकता॥१६॥

चाहे कोई नाच - नाच, अनमोल द्रव्य से पूजेगा।
या कोई ले पुष्ट हथौड़ा, इनके ऊपर पटकेगा॥
दोनों के प्रति इनमें कोई, रागद्वेष नहिं उपजेंगे।
नहिं देंगे वरदान कभी नहिं, शब्द रोषमय निकलेंगे॥१७॥
फिर भी स्वामी मैं तो तेरी, पूजा करके गुण गाऊँ।
श्रीफल ऐला चिलगुँजा की, थाली भर -भर मैं लाऊँ॥
भक्ति भाव से ताल मँझीरा, बजा-बजा जयकार करूँ।
दृम - दृम वीणा नाद करूँ, मैं घण्टे की टनकार करूँ॥१८॥

भक्ति करूँ मैं ऐसी जिससे, आसन सुर के काँप उठे।
पाप कर्म भी डरके मारे, रास्ता अपना नाप चले॥
क्योंकि आपकी भक्ति बिना भव, सागर पार न हो सकता।
और दुःख के कारण मिटकर, साथ मुक्ति का हो सकता॥१९॥

मन होता है रात-दिवस मैं, तेरी पूजन किया करूँ।
तव चरणों में बैठ आपकी, चर्चा करता जिया करूँ॥
लेकिन स्वामी भूख प्यास की, व्यथा सहन नहिं कर पाता।
अतः पूर्ण कर जयमाला यह, चरण झुकाता हूँ माथा॥२०॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री सुविधिनाथ-जिनेन्द्राय नमः जयमाला पूर्णार्घ्यं...।

आशीर्वाद

सुविधिनाथ का विधान जो भी, मन - वच - तन से करता है।
विधियाँ होती सीधी वह भी, पाप कर्म को दलता है॥
फल में जाता स्वर्गलोक में, इन्द्र बने अहमिन्द्र बने।
आकर के मुनि बनकर जल्दी, मोक्षमहल का इन्द्र बने॥

इत्याशीर्वादः परिपुष्पाञ्जलिं क्षिपामि/क्षिपेत्।

श्री शीतलनाथ विधान

पीठिका

(दोहा)

विधान की यह पीठिका, शीतल प्रभु भगवान।
गाऊँ मैं गुण आपके, बनने को भगवान॥१॥

(चौपाई)

हे दृढ़रथ नन्दन जय - जय हो, हे अनुपम चंदन जय - जय हो।
तव मात सुनन्दा जय - जय हो, हे सौख्य निकन्दा जय - जय हो॥२॥
इक्ष्वाकुवंश तव जय - जय हो, हे धर्म सुवंशी जय - जय हो।
मम पाप प्रणाशक जय-जय हो, शुभ पुण्य प्रकाशक जय - जय हो॥३॥
शत इन्द्र सुवंदित जय -जय हो, सब पातक खण्डित जय-जय हो।
शिव ललना स्वामी जय-जय हो, त्रय लोक सुनामी जय-जय हो॥४॥
भव भ्रमण मिटाया जय-जय हो, निज आतम ध्याया जय-जय हो।
तुम ज्ञान दिवाकर जय-जय हो, हे आत्म सुधाकर जय-जय हो॥५॥
नहिं क्षुधा शेष है जय-जय हो, निर्ग्रन्थ वेष है जय-जय हो।
हे पंचम ज्ञानी जय-जय हो, हे पुण्य निशानी जय-जय हो॥६॥
हे शीतल स्वामी जय-जय हो, हे शिव अभिरामी जय-जय हो।
सुख होता तुमसे जय-जय हो, मन जोड़ा शिव से जय-जय हो॥७॥
हे तीर्थंकर तुम जय-जय हो, हे शिव अंकुर तुम जय-जय हो।
हे चिंतामणि तुम जय-जय हो, हे तीर्थ शिरोमणि जय-जय हो॥८॥
दस धर्म विधायक जय-जय हो, पथ संवर दायक जय-जय हो।
हे पतितोद्धारक जय-जय हो, हे तीर्थोद्धारक जय-जय हो॥९॥
तुम कंचन काया जय-जय हो, सब त्यागी माया जय-जय हो।
तुम विरत देह से जय-जय हो, हे विगत स्नेह तुम जय-जय हो॥१०॥

कल्याण निकेतन जय-जय हो, तुम शुद्ध सु चेतन जय-जय हो।
मम शत-शत वन्दन जय-जय हो, मम कोटि सुवन्दन जय-जय हो॥११॥

इति परिपुष्पाञ्जलिं क्षिपामि/क्षिपेत्

विधान प्रारम्भ

स्थापना

(ज्ञानोदय)

मणिमुक्ता से हिमखण्डों से शीतल शीतल जिनवर हैं।
कल्पवृक्ष है चिह्न स्वर्णमय वर्ण आपका शुभकर है॥
ऐसे शीतल तीर्थंकर तव चरण धूल से तीर्थ बने।
पूजा करता जो भी तेरी तीन लोक का शीर्ष बने॥

(दोहा)

अतः बुलाकर स्थापना करके पूजूँ आज।
इससे बढ़कर लोक में क्या है उत्तम काज॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री शीतलनाथ जिनेन्द्र अत्र अवतर अवतर संवौषट् इति आह्वाननं! ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री शीतलनाथ जिनेन्द्र अत्र तिष्ठ-तिष्ठ ठः ठः स्थापनं! ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री शीतलनाथ जिनेन्द्र अत्र मम सन्निहितो भव-भव वषट् सन्निधिकरणं!

अष्टक

(लय—कहाँ गये चक्री जिन...)

क्षीर सिन्धु के जल से भरकर झारी सोने की।
जन्म नाश हो रही भावना कल्मष धोने की॥
लेकर आया तुम्हें चढ़ाने शीतल प्रभुवर जी।
शीतल होवे कर्म पटल हो चर्या तुम सम ही॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री शीतलनाथ-जिनेन्द्राय नमः जन्म-जरा-मृत्यु-विनाशनाय जलं...।

मलयागिरि का चंदन घिसकर लाया शीतल मैं।
स्वर्णमयी हो जीवन मेरा जो है पीतल रे॥
दाह मिटे मम पाप कर्म की तुमको अर्पित है।
रोम-रोम यह मात्र आपके चरण समर्पित है॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री शीतलनाथ-जिनेन्द्राय नमः संसार-ताप-विनाशनाय चंदनं ...।

थाली भरकर अक्षत सुन्दर मंदिर आऊँगा।
शीतल स्वामी तुम्हें चढ़ाकर सुख को पाऊँगा॥
शाश्वत पद हो प्राप्त शीघ्र ही अर्जी करता जो।
अक्षय बनता निज में रमता शिव को वरता वो॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री शीतलनाथ-जिनेन्द्राय नमः अक्षय-पद-प्राप्तये अक्षतान् ...।

ज्ञान शस्त्र से शीतल तुमने काम विनाशा है।
चार घातिया नाश किये सो शील प्रकाशा है॥
पुष्प चढ़ाऊँ शैलेषी तुम शील धुरन्धर हो।
अंतिम क्षण तक तव पद श्रद्धा मेरे अंदर हो॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री शीतलनाथ-जिनेन्द्राय नमः कामबाण-विध्वंसनाय पुष्पं...।

लाडू पेड़ा घेवर ने नहिं भूख मिटायी है।
क्षुधा विजेता देख आपमें भक्ति बढ़ायी है॥
मैंने नैवज भेंट किये ये भूख मिटाने को।
शीतल प्रभुवर तुमको पूजूँ शिव में जाने को॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री शीतलनाथ-जिनेन्द्राय नमः क्षुधारोग-विनाशनाय नैवेद्यं ...।

सौ-सौ मणिमय दीपक लेकर पूजन करता जो।
मिथ्यामत के अंधकार को तत्क्षण हरता वो॥

दीप चढ़ाऊँ शीतल मुझमें दीपक ज्ञान जले।
पूजा का फल मिले शीघ्र ही भव संताप टले॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री शीतलनाथ-जिनेन्द्राय नमः मोहान्धकार-विनाशनाय दीपं ...।

धूप दशांगी लेकर मैं तो निशदिन आऊँगा।
शीतल तुमको छोड़ कभी भी कहीं न जाऊँगा॥
जैसे कर्म जलाये तुमने कर्म जलाऊँ मैं।
नाच-नाचकर तव चरणों में अर्घ चढ़ाऊँ मैं॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री शीतलनाथ-जिनेन्द्राय नमः अष्टकर्म-दहनाय धूपं ...।

ऐला अरु बादाम सुपारी श्रीफल लाया हूँ।
दर्शन करके खुश हो पूजन करने आया हूँ॥
मोक्ष महाफल तुमने पाया मैं भी ललचाया।
शीतल तेरी शरण मिली तो चेतन हरषाया॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री शीतलनाथ-जिनेन्द्राय नमः मोक्षफल-प्राप्तये फलं ...।

जल चंदन फल अक्षत नैवज दीप धूप लाया।
अष्ट द्रव्य का थाल सजाकर चरणों में आया॥
अनर्घ पद की आशा से मैं चरण चढ़ाऊँगा।
और आपके पाद-पद्म में शीश झुकाऊँगा॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री शीतलनाथ-जिनेन्द्राय नमः अनर्घ-पद-प्राप्तये अर्घ्यं...।

प्रत्येक-अर्घ्य

(दोहा)

अष्ट द्रव्य से पूजकर, मन - वच - तन से आज।
कुछ गुण गण को अर्घ दूँ, तजकर सारे काज॥

इति मण्डलस्योपरिपुष्पाञ्जलिं क्षिपामि/क्षिपेत्

जन्मातिशय के १० अर्घ्य

(दोहा)

पसेव झरता देह से, लौकिक जन के नाथ।
अहो अलौकिक आप सो, लोक बना है दास॥
बर्फ शिला से भी रहे, शीतल तेरे पाद।
चक्रवर्ति भी पूजकर, पूरी करते साद॥१॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं निःस्वेदत्व-जन्मातिशय-गुणधारक श्री शीतलनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

मल मूत्रों से रहित है, औदारिक तव देह।
इस भव से ही आप तो, बने शीघ्र गत देह॥
तन से मन से वचन से, पूज लगाकर भाव।
भवसागर से तैरने, शीतल सुन्दर नाव॥२॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं निर्मलत्व-जन्मातिशय-गुणधारक श्री शीतलनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

वत्सलता से लाल भी, रक्त बना है श्वेत।
शीतल प्रभु के जन्म से, अतिशय यह सुख हेतु॥
नाच-नाचकर आपके, गुण गावे वसु याम।
धार्मिक जन के बीच में, बनता वह अभिराम॥३॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं क्षीरगौररुधिरत्व-जन्मातिशय-गुणधारक श्री शीतलनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

सुन्दर तुम सा लोक में, नहीं रहा संस्थान।
कामदेव पद में झुके, रूप सुअद्‌भुत मान॥
भद्दलपुर में जन्म ले, शीतलप्रभु जगदीश।
पहुँचे अघ को नाशकर, तीन लोक के शीश॥४॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं समचतुरस्र-संस्थान-जन्मातिशय-गुणधारक श्री शीतलनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

वज्रवृषभनाराच जो संहनन जग में उच्च।
कर्म नाशकर द्रव्य का, पाया तुमने सत्य॥
अरिष्टपुर नृप नंद ने, प्रथम दिया आहार।
पाकर पंचाश्चर्य वह, गया मोक्ष के द्वार ॥५॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं वज्रवृषभ-नाराच-संहनन-जन्मातिशय-गुणधारक श्री शीतलनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

एक सहस वसु चिह्न से, शोभित है तव देह।
शुभ लक्षण फिर भी नहीं, तुम्हें देह से नेह॥
शीतल सम शीतल रहा, नहीं लोक में द्रव्य।
ताप मिटाने कर्म का, वचन आपके श्रव्य॥६॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं सौलक्षण्य-जन्मातिशय-गुणधारक श्री शीतलनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

शीतल तेरे रूप का, रहा वर्ण शुभ पीत।
देह रहित फिर भी हुए, मिटी लोक की रीत॥
तीस कोश तक आपका, समवसरण फैलाव।
लिया उसी में बैठकर, भव्य जनों ने लाभ ॥७॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं सौरूप्य-जन्मातिशय-गुणधारक श्री शीतलनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

देह सुगन्धी से सभी, लज्जित होती गंध।
फिर भी शीतल आप में, नहीं गर्व की गंध॥
महाअचल सम्मेद में, विद्युतवर है कूट।
इसी क्षेत्र पर आपके, गए कर्म सब छूट॥८॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं सौगन्ध्य-जन्मातिशय-गुणधारक श्री शीतलनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

बल की उपमा मैं प्रभो, किससे कर लूँ आज।
जन्मजात यह वीर्य पा, पहना शिव का ताज॥

शीतल सम सर्वज्ञ नहिं रहा जगत में देव।
खेवटिया भव सिन्धु के मेरी नैया खेव॥९॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं अप्रमितवीर्य-जन्मातिशय-गुणधारक श्री शीतलनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

शीतल के प्रिय वचन को, सुनकर मिटते कष्ट।
तीन भुवन में आप-सा नहीं हमारा इष्ट॥
पद्मासन से ध्यान कर, शीतल पहुँचे पार।
सुनकर मेरे चित्त में खुशियों का नहिं पार॥१०॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं प्रियहितवादित्व-जन्मातिशय-गुणधारक श्री शीतलनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

केवलज्ञानातिशय के १० अर्घ्य

(ज्ञानोदय)

जहाँ पधारे शीतल स्वामी, सुभिक्षता ही रहती है।
समीपता तव ईति - भीति को, अनावृष्टि को हरती है॥
चार शतक कोशों तक कोई, नहीं दुखी नहिं त्रस्त रहे।
वहाँ आपकी चरण छाँव में, सभी सुखी संतुष्ट रहें॥११॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं गव्यूतिशत-चतुष्टय-सुभिक्षत्व-घातिक्षय-जातिशय-गुणधारक श्री शीतलनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

गगन विहारी नभतल सम ही, निर्मलतम ही शोभेंगे।
घातिकर्म सब चले गए सो, क्यों धरती को छूयेंगे॥
शीतल प्रभु का पूजक जग में, सुख पायेगा सुख पावे।
अर्घ चढ़ावे पूजा करके, सुर जाए फिर शिव जावे ॥१२॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं गगनगमनत्व-घातिक्षय-जातिशय-गुणधारक श्री शीतलनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

कोटि-कोटि वर्षों तक शीतल, भूख न लगती अहो कभी।
बिना अशन के दिखते ऐसे, किया सुभोजन आज अभी॥

अंतराय जो नाश हुआ सो, लाभ हुआ है ऐसा औ।
अतुलनीय है अनुपम केवलज्ञान सुअतिशय माना वो॥१३॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं भुक्त्यभाव-घातिक्षय-जातिशय-गुणधारक श्री शीतलनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

चाहे होवे विहार तेरा, चाहे होवे दिव्यध्वनि।
फिर भी प्राणीगण की तुमसे, नहिं होवेगी कभी क्षति॥
यह क्षमता हे शीतल जिनवर, घाति नाश से पायी है।
तुम सी बनने अर्घ साथ ले, जनता चरणों आयी है ॥१४॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं अप्राणिवधत्व-घातिक्षय-जातिशय-गुणधारक श्री शीतलनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

समवसरण के बारह कोठों, में जो बैठे भव्य अहो।
आगे-पीछे पार्श्वभाग में, मुख दिखता है धन्य विभो॥
घाति कर्म ने उठा लिया है, डेरा तब तो अतिशय ये।
प्रकट हुआ प्रभु शीतल तेरे, अर्घ चढ़ाऊँ अतिशय मैं॥१५॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं चतुर्मुखत्व-घातिक्षय-जातिशय-गुणधारक श्री शीतलनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

सभी ऋद्धियाँ, सभी सिद्धियाँ विद्याएँ सब आ करके।
शीतल तेरे पाद युगल में हुई समर्पित मन भरके॥
इसीलिए तो हे विद्येश्वर पूजन आज रचाई है।
पैर शक्ति को सफल बनाकर चेतनता हर्षाई है ॥१६॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं सर्वविद्येश्वरत्व-घातिक्षय-जातिशय-गुणधारक श्री शीतलनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

नहिं होता उपसर्ग आप पर, अर्हद् पद में विलस रहे।
केवलज्ञानी बने आप तो, कैसे हो उपसर्ग अरे॥
गा-गा करके शीतल तेरी, पूजा कर मुस्कायेगा।
अंत समय तक आप नाम का, उच्चारण कर पायेगा ॥१७॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं उपसर्गाभाव-घातिक्षय-जातिशय-गुणधारक श्री शीतलनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

धूप मिले यदि दिनकर की तो, छाया सबकी पड़ती है।
शीतल तेरी देह कांति से, सूरज आभा दबती है॥
तब तो तेरे तन की छाया, नहीं कभी भी पड़ती है।
अर्घ चढ़ाऊँ अतिशयता यह, मेरे मन को हरती है ॥१८॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं अच्छायत्व-घातिक्षय-जातिशय-गुणधारक श्री शीतलनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

जीव जगत के थक जावे तो, दोनों नयनों की पलकें।
झपक-झपक श्रम दूर करे सो, नहीं किसी का मन ललचे॥
लेकिन तेरी पलकें शीतल, नहीं झपकती ज्ञानमही।
तब तो मेरा मन ललचा सो, अर्घ चढ़ाऊँ द्रव्यमयी॥१९॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं अपक्ष्मस्पंदत्व-घातिक्षय-जातिशय-गुणधारक श्री शीतलनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

नहीं केश नख बढ़ते हैं सो, नहिं मिटती है सुन्दरता।
अतिशय केवलज्ञान प्राप्तकर,पाया शीतल! पुण्यफला॥
एक सहस नृप साथ आपके, दीक्षित होकर ज्ञानी बन।
शिव पाया सो अर्घ चढ़ा हम, सुख पावे विज्ञानी बन॥२०॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं समान-नख-केशत्व-घातिक्षय-जातिशय-गुणधारक श्री शीतलनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

देवकृत अतिशय के १४ अर्घ्य

(आल्हा)

भाषा तेरी अर्द्धमागधी।
तव पूजा ही मात्र सार जी॥
शीतल तुमने अतिशय पाया।
उमग-उमग कर अर्घ चढ़ाया ॥२१॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं सर्वार्ध-मागधीभाषा-देवोपनीतातिशय-गुणधारक श्री शीतलनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

बने मित्र सब वैरी जन भी।
आप समागम देता सुख ही॥
पूजूँ ध्याऊँ शीतल तुमको।
शरण मिली है तेरी मुझको ॥२२॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं सर्वजन-मैत्रीभाव-देवोपनीतातिशय-गुणधारक श्री शीतलनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

ऋतु नहिं होवे तो भी फलते।
फल-फूलों से वृक्ष सुलदते॥
शीतल कर दो पाप - ताप को।
हम पूजें दिन - रात आपको॥२३॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं सर्वर्तुफलादि - शोभित - तरु-परिणाम-देवोपनीतातिशय-गुणधारक श्री शीतलनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

निर्मल होती भू दर्पण सी।
तव पद जीवन यह अर्पण जी॥
भद्दलपुर में भू उतरे थे।
दर्शन करके भव सुधरे हैं॥२४॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं आदर्शतल-प्रतिमा-रत्नमयी-देवोपनीतातिशय-गुणधारक श्री शीतलनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

विहार करते शीतल जब-जब।
वायु चले तव संगत तब-तब॥
अच्युत सुर से माँ नंदा के।
उर में आए जग चंदा ये॥२५॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं विहरण-मनुगतवायुत्व-देवोपनीतातिशय-गुणधारक श्री शीतलनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

तीन लोक आनंदित होते।
दुःख शोक अरु पातक खोते॥
शीतल सबके उर में आये।
पूजन कर हम शीश झुकाए॥२६॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं सर्वजन-परमानंदत्व-देवोपनीतातिशय-गुणधारक श्री शीतलनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

पवन जाति के देव सु आते।
काँटे कंकड़ दूर हटाते॥
कुन्थु आदि इक्यासी गणधर।
आप चरण में रहते हरदम ॥२७॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं वायुकुमारोपशमित - धूलि - कण्टकादि-देवोपनीतातिशय-गुणधारक श्री शीतलनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

गंधोदक की वर्षा करते।
खुशबू से सब मन को हरते॥
शीतल स्वामी कर्म विजेता।
अर्घ चढ़ाऊँ शिव के नेता॥२८॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं मेघकुमारकृत-गंधोदकवृष्टि-देवोपनीतातिशय-गुणधारक श्री शीतलनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

आओ-आओ जल्दी आओ।
आकर शीतल के गुण गाओ॥
दुन्दुभि बजकर कहती सबको।
पूजो सौख्य मिलेगा तुमको॥२९॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं एतैतैति - चतुर्निकायामर - परस्पराह्वानन-देवोपनीतातिशय-गुणधारक श्री शीतलनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

धर्मचक्र तव आगे चलते।
शरणागत के पातक दलते॥

अहो - रात[1] मैं पूजूँ तुमको।
शीतल प्रभु ही शरणा हमको ॥३०॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं धर्मचक्र-चतुष्टय-देवोपनीतातिशय-गुणधारक श्री शीतलनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

स्वर्ण सु निर्मित कमल रचेंगे।
शीतल पद युग जहाँ रखेंगे॥
नवति धनुष थी तव ऊँचाई।
पूजक पावे शिव सुख भाई ॥३१॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं पादन्यासेकृत-पद्मानि-देवोपनीतातिशय-गुणधारक श्री शीतलनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

शरदकाल सम नभ हो निर्मल।
भक्त पूजकर बनते निर्मद॥
कल्पवृक्ष का चिह्न रहा है।
शीतल को शिव राज्य कहा है ॥३२॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं शरत्कालवन्निर्मल-गगनत्व-देवोपनीतातिशय-गुणधारक श्री शीतलनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

नम्रनीत हो जाते हैं तरु।
जब आते हैं त्रिभुवन के गुरु॥
समवसरण में लक्ष मुनीश्वर।
शीतल तुम सम नहिं परमेश्वर ॥३३॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं फल-भार-नम्र-शालि-देवोपनीतातिशय-गुणधारक श्री शीतलनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

दशों दिशाएँ शरद काल के।
नभ सम होती ग्रीष्म काल में॥
क्योंकि पधारे शीतल ओहो।
पूजा करके अघ को धोलो ॥३४॥

---

१. दिन - रात

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं शरन्मेघवन्निर्मल-दिग्विभागत्व-देवोपनीतातिशय-गुणधारक श्री शीतलनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

अष्ट प्रातिहार्य के ८ अर्घ्य

(लय—मुनि सकल व्रती बड़भागी...)

वह तरु अशोक बन जावे, जिसके नीचे प्रभु आवे।
यह प्रातिहार्य मनहारी, प्रभु शीतल महिमा प्यारी ॥३५॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं अशोकवृक्ष-प्रातिहार्य-मण्डित श्री शीतलनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

सुर पुष्प वृष्टि जब करते, तब डण्ठल नीचे रहते।
अघ नीचे उसके जावे, जो शीतल प्रभु को ध्यावे ॥३६॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं सुरपुष्पवृष्टि-प्रातिहार्य-मण्डित श्री शीतलनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

जब ढुरते चौंसठ चामर तब देख सुलटते पामर।
वे शीतल लगते ऐसे जल के झरने हों जैसे ॥३७॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं चतुःषष्ठी-चामर-प्रातिहार्य-मण्डित श्री शीतलनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

हे शीतल तव तन आभा वह भामण्डल मन भाया।
सब तेज छिपे इस आगे, तुमको लखकर दुख भागे ॥३८॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं भामण्डल-प्रातिहार्य-मण्डित श्री शीतलनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

जब बजते दुन्दुभि वादन, सब करते झुक अभिवादन।
जो दर्श मिले हैं तेरे सो खुले भाग्य अब मेरे ॥३९॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं दुन्दुभि-प्रातिहार्य-मण्डित श्री शीतलनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

जो तीन छत्र तव ऊपर, नहिं तुम सम कोई भू पर।
प्रभु शीतल सम नहिं दूजा तब तो हमने आ पूजा ॥४०॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं छत्रत्रय-प्रातिहार्य-मण्डित श्री शीतलनाथ-जिनेन्द्राय

नमः अर्घ्यं ...।

तव दिव्य देशना होती सबकी शंका को खोती।
हे शीतल हित उपदेशी तुम बने धन्य निजवेशी ॥४१॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं दिव्यध्वनि-प्रातिहार्य-मण्डित श्री शीतलनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

है स्वर्णमयी जो आसन वह बना तभी सिंहासन ।
जब आया शीतल डेरा[१] तब देख खिला मन मेरा ॥४२॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं सिंहासन-प्रातिहार्य-मण्डित श्री शीतलनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

पंचकल्याणक के ५ अर्घ्य

(ज्ञानोदय-दोहा)

स्वर्ग छोड़कर नंदा माँ को, सपने देकर तुम आए।
छप्पन सुरियाँ सेवा करके, अपनी किस्मत अजमाएँ॥
प्रश्न पूछकर माँ के मन को, बहलाती थीं खुश करती।
धन्य मात तुम जग की माता, कहकर अपना मद हरती॥
चैत्र कृष्ण की आठवीं, गर्भ पधारे आप।
रत्नमयी तब भू बनी, मिटे सभी संताप ॥४३॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं गर्भ-कल्याणक-मण्डित श्री शीतलनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

माणिक मोती हीरा पन्ना, मूँगा नीलम बरसाए।
जब तक जन्म न हुआ आपका मात उदर में विलसाए॥
जैसे ही तुम भू पर आए, सुर ने आकर नमन किया।
सुमेरुगिरि पर एक सहस वसु, कलशों से फिर न्हवन किया॥
शीतल जिनवर नाम का, उदित हुआ दिनमान।[२]
माघ कृष्ण बारस रही, पूर्ण हुए अरमान ॥४४॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं जन्म-कल्याणक-मण्डित श्री शीतलनाथ-जिनेन्द्राय

---

१. समवसरण, २. सूर्य

नमः अर्घ्यं ...।

जन्म समय तक अहो आपका, भोजन सुर से आता था।
ऐसा मीठा मधुर अशन नहिं, धरती पर मिल पाता था॥
लेकिन दीक्षा लेकर ओ आहार यहीं का करते थे।
इससे ही तो असंख्यात गुणश्रेणी से अघ हरते थे॥
जन्म दिवस में राग से, मिटा आपका राग।
शीतल तब तो आप में, बढ़ा जगत का राग॥४५॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं तपः कल्याणक-मण्डित श्री शीतलनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

शुक्लध्यान से डरकर चारों, घाति कर्म जब भाग गए।
व्यन्तर ज्योतिष भवनदेव अरु, वैमानिक भी जाग गए॥
समवसरण तब बना आपका, बारह कोठों में आए।
सुरनर विद्याधर के राजा, आनन्दित हो हरषाए॥
पौष कृष्ण चौदस रही, पाया केवलज्ञान।
भव्यों ने तब आपसे, किया धर्म रसपान॥४६॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं ज्ञान-कल्याणक-मण्डित श्री शीतलनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

अष्ट कर्म का नाम निशाना, मिटा दिया था जब सारा।
मुक्ति वधू ने आकर इनके, गले डाल दी वरमाला॥
शाश्वत निश्चल अचल स्थान जा, सिद्धशिला का आसन पा।
वहीं विराजे अमित काल तक, निज का निज पर शासन वा॥
अश्विन शुक्ला अष्टमी, निशारम्भ का काल।
शीतल प्रभुवर आपसे, हार गया था काल॥४७॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं निर्वाण-कल्याणक-मण्डित श्री शीतलनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

अनंत चतुष्टय के ४ अर्घ्य

(ज्ञानोदय)

ज्ञानावरणी नहीं मिटे तो, ज्ञान अनंत न आ सकता।
शुक्लध्यान के बिना कर्म यह, यमपथ[1] पर नहिं जा सकता॥
इसीलिए तो शीतल स्वामी, तुमने निज का ध्यान किया।
तब हमने भी तव चरणों में, अर्घ चढ़ाया नमन किया ॥४८॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं अनंत-ज्ञान-गुणमण्डित श्री शीतलनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

दर्शन का आवरणी नहिं सो, अनन्त दर्शन प्रकट हुआ।
अमितकाल तक नहीं मिटेगा शीतलप्रभु के निकट हुआ॥
ये ही दर्शन पाने मैंने, द्वन्द्व-फन्द को छोड़ सभी।
अर्घ चढ़ाया सो तुमको अब, नहिं जाऊँगा छोड़ कहीं ॥४९॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं अनंत-दर्शन-गुणमण्डित श्री शीतलनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

हे शीतल तव ध्यान अग्नि से, झुलस गया था खूब यदा।
परिजन-पुरजन पुत्र-पौत्र को, ले भागा था मोह तदा॥
उदित हुआ था अंतरहित सुख, तेरम गुण को पा करके।
अनंतसुख को पाने पूजूँ, पाद-पद्म में आ करके ॥५०॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं अनंत-सुख-गुणमण्डित श्री शीतलनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

जन्म जात ही वीर्य रहा पर नश्वर था वह क्षणिक रहा।
अंतराय के क्षय से पाया सो शाश्वत है अमिट कहा॥
इससे ही तो अजर हुए हो अमर हुए हो शिव पाया।
सुनकर महिमा मैं भी तुमको अर्घ चढ़ाने झट आया ॥५१॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं अनंत-वीर्य-गुणमण्डित श्री शीतलनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

---

१. मृत्यु

१८ दोष से रहित १८ अर्घ्य

(नरेन्द्र)

पीड़ित होकर क्षुधा रोग से, भटके जग का प्राणी।
आत्म सुधारस पीकर शीतल, हुए सत्य सुख स्वामी॥
क्षुधा मिटाने क्षुधा रोग से, रहित देव को पूजूँ।
फल में मिथ्या भाव मिटे तो क्यों मैं भव में जूझूँ॥५२॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं क्षुधादोषरहित श्री शीतलनाथजिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

व्याकुल होकर तृषा दुःख से पीता हूँ मैं पानी।
प्यास दोष को मिटा आपने पायी शिव रजधानी॥
प्यास मिटाने प्यास विजेता शीतल निशदिन पूजूँ।
फल में मिथ्या भाव मिटे तो क्यों मैं भव में जूझूँ॥५३॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं तृषा-दोष-रहित श्री शीतलनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

पर द्रव्यों से लगाव हो तो भय लगता है भारी।
तीन लोक के दृष्टा शीतल आप बने भयहारी॥
भय नाशक हे प्रभो आपको निर्भय बनने पूजूँ।
फल में मिथ्या भाव मिटे तो क्यों मैं भव में जूझूँ॥५४॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं भय-दोष-रहित श्री शीतलनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

द्वेष उसी से होता जिसका होता कोई वैरी।
द्वेष दोष तव नहीं बचा सो बजी प्रेम की भेरी॥
राग - द्वेष के नाशक शीतल जिन को हर पल पूजूँ।
फल में मिथ्या भाव मिटे तो क्यों मैं भव में जूझूँ॥५५॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं द्वेष-दोष-रहित श्री शीतलनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

यह अच्छा है भाव जगे तो, मन बनता है रागी।
अच्छा खोटा भाव मिटा सो, आप बने वैरागी॥
राग मिटा है शीतल प्रभु सो, अहर्निशा मैं पूजूँ।
फल में मिथ्या भाव मिटे तो क्यों मैं भव में जूझूँ॥५६॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं राग-दोष-रहित श्री शीतलनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

चेतन में ही रमण करो सो, वीतमोह कहलाओ।
परद्रव्यों में ममत्व क्यों हो, निज में निज को ध्याओ॥
मार दिया है मोह भाव को, राग मिटाने पूजूँ।
फल में मिथ्या भाव मिटे तो क्यों मैं भव में जूझूँ॥५७॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं मोह-दोष-रहित श्री शीतलनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

पर को अपना माने तो ही, चिंता लगती भारी।
चेतन में ही चित्त लगा सो, पूजें हम अघहारी॥
चिंता नाशी शीतल प्रभुवर, अंत समय तक पूजूँ।
फल में मिथ्या भाव मिटे तो क्यों मैं भव में जूझूँ॥५८॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं चिंतादोषरहित श्री शीतलनाथजिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

जरा मृत्यु की रही सहेली, याद दिलाती प्राणी।
जाग मरण अब आने वाला, बने वही सुखदानी॥
शीतल स्वामी जरा विनाशक, अमर हुए हैं पूजूँ।
फल में मिथ्या भाव मिटे तो क्यों मैं भव में जूझूँ॥५९॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं जरा-दोष-रहित श्री शीतलनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

असह्य दुखदा रोग युक्त है, यह औदारिक काया।
परमौदारिक देही शीतल, नहीं रोग नहिं माया॥
भव भटकन का रोग मिटे मम, त्रय योगों से पूजूँ।
फल में मिथ्या भाव मिटे तो क्यों मैं भव में जूझूँ॥६०॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं रोग-दोष-रहित श्री शीतलनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

जन्में जो भी वह मरता है, वही रहा संसारी।
पण्डित-पण्डित मरण करे तो, शिव पावे भवहारी॥
मरण दोष से रहित अजन्मा, रात-दिवस मैं पूजूँ।
फल में मिथ्या भाव मिटे तो क्यों मैं भव में जूझूँ॥६१॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं मरणदोषरहित श्री शीतलनाथजिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

अरे पसीना आता उसको, जो होवे संसारी।
तव तन में क्यों स्वेद बहेगा, ममता छोड़ी सारी॥
सिद्धालय में हुए सुशोभित, तीर्थंकर को पूजूँ।
फल में मिथ्या भाव मिटे तो क्यों मैं भव में जूझूँ॥६२॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं स्वेददोषरहित श्री शीतलनाथजिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

वियोग होवे कभी किसी का, खेद खिन्न हो जाता।
खेद दोष से रहित आपका, दर्शन मन को भाता॥
मेरे मन का खेद मिटे अब, दसवें प्रभु को पूजूँ।
फल में मिथ्या भाव मिटे तो क्यों मैं भव में जूझूँ॥६३॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं खेद-दोष-रहित श्री शीतलनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

मैं-मैं-मैं-मैं करता प्राणी, अहंभाव को पोषे।
ममता नाशी गर्व मिटाया, सो पातक को शोषे॥
शीतल प्रभुवर धन्य हुआ मैं, बार-बार पद पूजूँ।
फल में मिथ्या भाव मिटे तो क्यों मैं भव में जूझूँ॥६४॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं मददोषरहित श्री शीतलनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

इष्ट मिष्ट लगता है वो ही, अपना जिसको माने।
मानस रमता उसमें हा! हा!!, शाश्वत उसको जाने॥
आप रहित हैं रति से शीतल, नाथ नम्र हो पूजूँ।
फल में मिथ्या भाव मिटे तो क्यों मैं भव में जूझूँ॥६५॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं रति-दोष-रहित श्री शीतलनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

क्यों होगा आश्चर्य आपको, तीन लोक को जानो।
लेकिन मोह न बचा तभी तो, नहिं अपना तुम मानो॥
विस्मय दोष मिटाने शीतल, तीनों संध्या पूजूँ।
फल में मिथ्या भाव मिटे तो क्यों मैं भव में जूझूँ॥६६॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं विस्मयदोषरहित श्री शीतलनाथजिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

थक जावे तो निद्रा आवे, आप सदा ही जागे।
थकते नहिं हो नींद न आती, अतः कर्म सब भागे॥
निद्रा दोष मिटे अब मेरा, अष्ट द्रव्य से पूजूँ।
फल में मिथ्या भाव मिटे तो क्यों मैं भव में जूझूँ॥६७॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं निद्रादोषरहित श्री शीतलनाथजिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

गर्भ जन्म से भूपर आकर, जन्म दोष को नाशा।
पंचेन्द्रिय के विषय भोग की, तजकर पूरी आशा॥
शीतल तुमने जन्म लिया वह, पूज्य हुआ मैं पूजूँ।
फल में मिथ्या भाव मिटे तो क्यों मैं भव में जूझूँ॥६८॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं जन्मदोषरहित श्री शीतलनाथजिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

शोक उपजता यदि मिट जावे, जिसको दिल में चाहे।
नहीं चाहते आप किसी को, तब तो हम गुण गावें॥
शोक दोष को मूल मिटाया, सिद्धार्थी[१] को पूजूँ।
फल में मिथ्या भाव मिटे तो क्यों मैं भव में जूझूँ॥६९॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं शोकदोषरहित श्री शीतलनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

(ज्ञानोदय)

भद्दिलपुर में उदयगिरी में, नगर घुवारा में राजित।
शीतल प्रभु के रहे बिम्ब जो, मन को करते आकर्षित॥
शुभतम विदिशा नगरी में जो, उत्तम शीतल - धाम रहा।
साँची नगरी में भी प्यारा, शीतल जिन का धाम कहा॥
और जहाँ पर शीतल प्रभु के, बिम्ब रहे मनमोहक हैं।
सम्यग्दर्शन के कारण हैं, मिथ्यातम के रोधक हैं॥
सबको अर्घ चढ़ाऊँ थाली, भर-भरकर मैं आज यहाँ।
तव पूजा से पाप नष्ट हो, खुल जायेंगे भाग्य महा॥७०॥

---

१. जिनके सभी अर्थ सिद्ध हो चुके हैं।

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री शीतलनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

विद्युतवर सम्मेदशिखर से शीतलप्रभु ने शिव पाया।
चौदहवें गुणस्थान पहुँचकर शेष कर्म को दफनाया॥
इससे ही तो अहो आपने सिद्ध शिला को प्राप्त किया।
अर्घ चढ़ाऊँ तुमने तो वा आत्मामृत को सहज पिया ॥७१॥

ॐ ह्रीं सम्मेदशिखरस्थित विद्युत्वरकूटेभ्यो नमः अर्घ्यं ...।

पूर्णार्घ्य

(घत्ता)

हे शीतल जिनवर, पूजें गणधर, रात-दिवस तव चरण मुदा।
श्री ऋषिवर आकर, तव गुणगाकर, रहते तेरी शरण सदा॥
हम अक्षत चंदन, हे शिवनंदन, जल फल नैवज लाए हैं।
सब आर्त्त रौद्र तज, जैनधर्म भज, अर्चा करने आए हैं ॥७२॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री शीतलनाथ-जिनेन्द्राय नमः पूर्णार्घ्यं...।

जाप्य मंत्र—ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री शीतलनाथ-जिनेन्द्राय नमः।

(९/२७/१०८)

जयमाला (दोहा)

पूजन की जयमाल यह, गुणमाला सुखमाल।
गाऊँ शीतल आपकी, मिल जावे शिवमाल॥१॥

(ज्ञानोदय)

मोक्षमार्ग को दिखलाया सो, शिव पथ के तुम नेता हो।
अर्हत् पद में शोभित तुम ही, कर्म पटल के भेत्ता हो॥
वीतराग हो फिर भी तुमने, कैसे हित उपदेश दिया।
लगे अचम्भा शीतल स्वामी, परम दिगम्बर वेष लिया॥२॥
तीन लोक के सब जीवों के, दुःख मिटे सुख पान करे।
श्रेष्ठ भावना भायी थी सो, भव्यों को वरदान बने॥

तीर्थंकर पद बाँधा वो ही, फलित यहाँ पर आज हुआ।
दिव्य देशना खिरी सहज सो, अभयदान मय काम हुआ॥३॥
तीन लोक के सब द्रव्यों को, जान रहे पर राग नहीं।
प्रातिहार्यमय वैभव है पर, मान भाव की आग नहीं॥
जगत्पूज्य तुम जगत्मान्य हो, जगत्सेव्य सर्वेश रहे।
धर्म प्रकाशक पाप प्रणाशक, दसवें तुम तीर्थेश रहे॥४॥
कल्पवृक्ष तो करे कल्पना, तो ही कल्पित दाता है।
तव पूजा से भव्य सुकल्पित, और अकल्पित पाता है॥
कल्पवृक्ष का चिह्न रहा पर, रहे कल्पनातीत अहो।
तव अर्चा से बढ़कर जग में, बड़ी कौन-सी चीज कहो॥५॥
घने वृक्ष के नीचे बैठा, छाया को यदि माँगेगा।
मतलब क्या है उससे ओहो, शक्ति व्यर्थ गँवायेगा॥
अरे माँगता इष्ट-मिष्ट फल, तो लाभान्वित हो जाता।
लेकिन भोला ठगा गया सो, ठोकर दर-दर की खाता॥६॥
इसी भाँति हे शीतल स्वामी, आप चरण की छाया में।
आ पहुँचा तो क्यों माँगूगा, लौकिक सुख अरु माया मैं॥
मुझे मिले तव चरण भक्ति का, फल केवल शिवसाधन हो।
और अंत में तुम सम प्रभुवर, सिद्धालय में आसन हो॥७॥
सुरनर किन्नर विद्याधर भी, नित्य आपके चरण रहे।
मिथ्या गुरु भी सुख पाने में, तुमको ही बस शरण कहे॥
आप भक्ति से अनंत भव की, मिथ्या श्रद्धा नहीं बचे।
समकित सूरज आ जावे सो, फिर तो सारे काम बने॥८॥
कोई तुम पर वार करे, अपमान करे अवमान करे।
कुछ न बिगड़ता तेरा वो ही, भव-भव में दुखपान करे॥
अंगारों को फेंकेगा तो, प्रथम स्वयं के हाथ जले।
वेदन होवे मात्र असाता, फल में कुछ नहिं सार मिले॥९॥

इसी तरह हे शीतल प्रभुवर, जो तेरे प्रतिकूल चले।
किस्मत उसकी पापरूप बन, भव-भव में प्रतिकूल बने॥
और बने यदि भक्त नित्य ही, आकर तव गुणगान करे।
भक्ति करे अरु संस्तुति करके, तेरे प्रति बहुमान धरे॥१०॥
स्वयं पाप का नाश करे सुख, भोगे अगले भव में भी।
तथा अंत में आत्मिक सुख को, पाकर रहता निज में ही॥
धन्य आप तो दोनों में ही, द्वेष न करते राग नहीं।
नहिं देते वरदान भक्त को, वैरी को अभिशाप नहीं॥११॥
केवल ज्ञायक रहते ये ही, वीतरागता मान्य रही।
पूज्य रही है वंदनीय है, कर्मबंध को बाध रही॥
दर्पण सम तुम निर्विकार बन, विकृत किंचित् नहिं होते।
तब तो तेरी पूजा करके, बीज मोक्ष का हम बोते॥१२॥
माघ कृष्ण की बारस के दिन, जब देखा हिमनाश अहो।
विरतभाव उर उमड़ पड़ा तो, रह सकता क्या राग कहो॥
विषयभोग का, अक्ष विषय का, धन दौलत का परिजन का।
बन्धु वर्ग का, राज्य कार्य का, मित्र वर्ग का पुरजन का॥१३॥
इसीलिए तो क्षणभर में ही, राज्य पुत्र को देकर के।
भावन भाकर निकल पड़े तुम, वन में दीक्षा लेकर के॥
तीन वर्ष तक तप करके फिर, भद्दिलपुर के जंगल में।
घाति नाशकर केवलज्ञानी, बने रहे अब मंगल में॥१४॥
गर्भ जन्म तप ज्ञान महोत्सव, भद्दिलपुर में पूर्ण हुए।
सम्मेदाचल गिरि पर ओहो, शेष कर्म भी चूर्ण हुए॥
तत्क्षण सिद्धालय में जाकर, शाश्वत अविचल पद पाया।
लौट न आओ कभी जगत् में, अचल हुए हो शिव पाया॥१५॥
ढोल ढमाके बजा बजाकर, और बजाकर ताली मैं।
पूजा करके अर्घ्य चढ़ाऊँ, आज बहुत खुशहाली है॥

झुन-झुन झुनियाँ खूब बजाऊँ, वीणा वादन खूब करूँ।
ताल मंजीरे खूब बजाऊँ, नृत्य-गान मैं खूब करूँ॥१६॥
भाग्य सितारा चमका है सो, आप चरण के दर्श मिले।
स्मरण मात्र से शीतल प्रभुवर, दुखमय मेरे कर्म हिले॥
धन्य हुआ मैं, धन्य हुआ हूँ, धन्य हुआ मैं धन्य हुआ।
रम्य हुआ, मम जीवन पूरा, रम्य हुआ है, रम्य हुआ॥१७॥
तब तो सारे काम काज तज, तव मंदिर में आया हूँ।
अष्ट-द्रव्य के थाल चढ़ाकर, मन ही मन मुस्काया हूँ॥
दर्शन करके लौकिक बातें, भूल गया हूँ भूल गया।
निर्विकल्प हो अंदर में भी, आप भक्ति में झूल गया॥१८॥
चारों दिशि में सभी जगह पर, मात्र आप ही आप दिखे।
मात्र आप ही दिखते मुझको,रात-दिवस बस आप दिखे॥
क्या-क्या भेंट करूँ मैं अर्पण,क्या-क्या चरण चढ़ाऊँ मैं।
कैसा-कैसा द्रव्य सजाकर पूजन आज रचाऊँ मैं॥१९॥
समझ नहीं कुछ आता मुझको अतः पूर्ण कर जयमाला।
वाचं यम[१] को धारण करके, नमन करूँ हे सुखशाला॥
गल्ती होवे सुधार करके पूजा कर लें प्राज्ञ सदा।
शीतल स्वामी इस पूजक के, हो जावें सब पाप विदा॥२०॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री शीतलनाथ-जिनेन्द्राय नमः जयमाला पूर्णार्घ्यं...।

आशीर्वाद

विधान शीतल स्वामी का जो एक बार भी करता है।
अनंत भव के पाप नाशकर शिव ललना को वरता है॥

इत्याशीर्वादः परिपुष्पाञ्जलिं क्षिपामि/क्षिपेत्

१. मौन

श्री श्रेयोनाथ विधान

पीठिका

(दोहा)

लिखूँ पीठिका श्रेय के, विधान की यह आज।
श्रेयस तव आशीष से, सिद्ध बने मम काज॥१॥

(ज्ञानोदय)

क्षेमपुरी में कुशल रहा जो, श्रेय प्रजा का करने में।
तत्पर रहता पापी के भी, दुःख शोक को हरने में॥
नलिनप्रभ नृप नाम रहा था, नलिनी सा वह खिला रहे।
लोकपाल सम वैभव उसको, पुण्योदय से मिला अरे॥२॥

एक दिवस शुभ आम्र बाग में, अनन्त जिनवर आये हैं।
सुनकर कलियाँ खिली चित्त की, मन ही मन हुलसाये वे।
शीघ्र पहुँचकर पाद युगल में, भव संहारक धर्म सुना।
नश्वरता को समझ लिया सो, विरत भाव उत्पन्न हुआ॥३॥

ज्येष्ठ पुत्र को राज्य दिया फिर, वन में जा मुनिराज बने।
ग्यारह अंगों को पाकर के, भावी भगवन आप बनें॥
घोर तपस्या से कर्मों को, जला-जलाकर राख किया।
तन ममता को छोड़ आपने, निज आतम का ध्यान किया॥४॥

अन्त समय में समाधिपूर्वक, वपु को छोड़ा निश्चल हो।
अच्युत नामक स्वर्ग लोक में, पहुँच बने थे सुखमय वो॥
भोग-भोग बाईस सिन्धु तक, सिंहपुरी के राजा जो।
विष्णुभूप इक्ष्वाकुवंश के, पुण्यवान अधिराजा ओ॥५॥

उनकी रानी शीलवती जो, सर्वगुणों की खान रही।
तीन लोक की नारी गण में, अहो वही शिरताज कही॥

उसके आँगन में हाथी की, सूंड सरीखी मोटी सी।
धारा रत्नों की बरसा सुर, बने आत्म सन्तोषी जी॥६॥

जब जन्मे तब सिंहपुरी वह, स्वर्गपुरी सम देवमयी।
बनी तभी से तीर्थक्षेत्र बन, कहलायी थी पुण्यमही॥
इक दिन निकले क्रीड़ा करने, बसन्त का शुभ काल रहा।
पतझड़ के कारण वृक्षों से, पत्ते गिरते देख वहाँ॥७॥

सोचा यौवन धन वैभव सौभाग्य प्रजा अरु परिजन ये।
सब ही नश्वर क्षणभंगुर आरोग्य तेज बल पुरजन हैं॥
इसीलिए अब इन सबको तज, शाश्वत सुख को पाना है।
सो लौकिकता छोड़ मुझे ये, गीत मुक्ति के गाना है ॥८॥

विचार ऐसे उपजे तत्क्षण, लौकान्तिक सुर आए थे।
दीक्षा लेकर केवलज्ञानी, निज में ही विलसाए थे॥
ऐसे श्री श्री श्रेयनाथ की, पूजा आज रचाऊँ मैं।
पाप नाशकर शिव जाने का, केवल लक्ष्य बनाऊँ मैं ॥९॥

तव आशिष से श्रेयस्कर यह, कार्य सफल मम हो जावे।
भव के बन्धन जन्म-मरण के, दुःख शीघ्र ही मिट जावे॥
इस विध लिखकर श्रेष्ठ पीठिका, श्रेयनाथ को नमन करूँ।
तेरे पथ पर चलकर स्वामी, पाप कर्म का हनन करूँ ॥१०॥

परिपुष्पांजलिं क्षिपामि/क्षिपेत्

विधान प्रारम्भ

स्थापना

(ज्ञानोदय)

सम्यक् कुल में जन्म लिया फिर, संकुल से शुभ मोक्ष गए।
श्रेयस्कर जिन श्रेयनाथ जी, सिद्ध शिला पर शोभ रहे॥
गुणाधीश जो वृषाधीश श्री, शिवाधीश हैं तीर्थंकर।
ऐसे प्रभु की पूजा करने, शीश झुकाऊँ क्षेमंकर॥

(दोहा)

आह्वानन हैं स्थापना, सन्निधि करके आज।
अर्चूं चर्चूं आपको, हे त्रिभुवन सिरताज॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री श्रेयोनाथ जिनेन्द्र अत्र अवतर-अवतर संवौषट् इति आह्वाननं! ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री श्रेयोनाथ जिनेन्द्र अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं! ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री श्रेयोनाथ जिनेन्द्र अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणं!

अष्टक

(ज्ञानोदय)

पयस लिया है पावन ऐसा, पवित्र सबको कर डाले।
परम पूज्य तव पवित्र पद में, चढ़ा पूज्य हम बन जावे॥
श्रेयनाथ जो श्रेयप्रदाता, निःश्रेयस सुख पाया है।
श्रेयस्कर सुख पाने चरणों, भक्त निकटतम आया है॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री श्रेयोनाथ-जिनेन्द्राय नमः जन्म-जरा-मृत्यु-विनाशनाय जलं...।

चम-चम करती रत्न जटित शुभ, चाँदी की इस झारी में।
चन्दन भरकर लाया जीवन, होवे मम खुशहाली में॥
श्रेयनाथ जो...॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री श्रेयोनाथजिनेन्द्राय नमः संसारतापविनाशनाय चंदनं...।

लम्बे-लम्बे पतले-पतले, मोती जैसे धवल रहे।
तन्दुल लेकर तुम्हें चढ़ाऊँ, पाप-ताप को तरल करे॥
श्रेयनाथ जो श्रेयप्रदाता, निःश्रेयस सुख पाया है।
श्रेयस्कर सुख पाने चरणों, भक्त निकटतम आया है॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री श्रेयोनाथजिनेन्द्राय नमः अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान्...।

पुष्प लिये ये कल्पद्रुम के, कल्पद्रुम[1] के पद में ही।
अर्पित करने से हे स्वामी, मदन मिटेगा क्षण में ही॥
श्रेयनाथ जो...॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री श्रेयोनाथजिनेन्द्राय नमः कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं...।

सरस मधुर मनहारी व्यञ्जन, शुद्ध बनाये प्रासुक ये।
तुम्हें चढ़ावे भूख विजेता, भूख व्यथा से व्याकुल ये॥
श्रेयनाथ जो...॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री श्रेयोनाथजिनेन्द्राय नमः क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं...।

सूर्योदय से अंधकार सम, ज्ञानमयी तव दीपक से।
मोहमहातम पूर्ण मिटाने, दीप चढ़ाऊँ श्रीमत् ये॥
श्रेयनाथ जो...॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री श्रेयोनाथजिनेन्द्राय नमः मोहान्धकारविनाशनाय दीपं...।

आठ कर्ममय ईंधन को ज्यों, ध्यान अग्नि से राख किया।
धूप चढ़ाकर मैंने भी अब, मोक्ष महल को पास किया॥
श्रेयनाथ जो...॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री श्रेयोनाथ-जिनेन्द्राय नमः अष्टकर्म-दहनाय धूपं...।

लौंग सुपारी नारिकेल के, थाल चढ़ाऊँ घने - घने।
तेरी पूजा करने से ही, काम हमारे सभी बने॥
श्रेयनाथ जो...॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री श्रेयोनाथजिनेन्द्राय नमः महामोक्षफलप्राप्तये फलं...।

---

१. कल्पित पदार्थों को देने वाले

जल चन्दन अरु अक्षत दीपक, धूप पुष्प फल जोड़ लिए।
पूजा करके मैंने भी प्रभु, अशुभ कर्म सब तोड़ दिए॥
श्रेयनाथ जो श्रेयप्रदाता, निःश्रेयस सुख पाया है।
श्रेयस्कर सुख पाने चरणों, भक्त निकटतम आया है॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री श्रेयोनाथ-जिनेन्द्राय नमः अनर्घ-पद-प्राप्तये अर्घ्यं...।

प्रत्येक-अर्घ्य

(दोहा)

जल फल आदिक से प्रभो, पूजा मैंने आज।
गुणगण को अब पूजकर, चाहूँ निज का राज॥

इति मण्डलस्योपरिपुष्पाञ्जलिं क्षिपामि/क्षिपेत्...

जन्मातिशय के १० अर्घ्य

(नरेन्द्र)

रोम-रोम से स्वेद निकलता, सब जीवों के खारा।
तेरा भी है औदारिक तन, लेकिन स्वेद न आता॥
पुष्पोत्तर तज पुष्पों सी उस, सिंहपुरी में आए।
जिसका राजा विष्णु रहा था, उसके घर सुख पाए॥१॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं निःस्वेदत्व-जन्मातिशय-गुणधारक श्री श्रेयोनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

नयन युगल या कर्णयुगल या, द्वार रहा हो कोई।
श्रेय आपके तन में मल की, बात बची नहिं कोई॥
धन्य हुए थे वे ही जिनने, दर्श किये थे तेरे।
बड़े भाग्य से पूजन के ये, भाव हुए हैं मेरे॥२॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं निर्मलत्व-जन्मातिशय-गुणधारक श्री श्रेयोनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

तेरे तन के श्वेत रक्त की, रही अनोखी आभा।
कारण पर को दुःखप्रदायी, भाव आपने नाशा॥
इसीलिए अभिषेक हेतु सुर, क्षीरोदधि का पानी।
लाए थे तव जन्म समय सो, पूजूँ है भूशानी॥३॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं क्षीरगौररुधिरत्व-जन्मातिशय-गुणधारक श्री श्रेयोनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

शुभकर्मी तुम सत्कर्मी सो, तन पाया है ऐसा।
मिल नहिं पाये ढूँढ़े तो, सर्वार्थ सिद्धि में वैसा॥
यही रहा संस्थान प्रथम जो, श्रेय आपने पाया।
सुबह - सुबह सो तुम्हें पूजने, अर्घ बनाकर लाया ॥४॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं समचतुरस्रसंस्थान-जन्मातिशय-गुणधारक श्री श्रेयोनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

शक्तिमान शुभ बलिष्ठ तन यह, तेरा है बलवाला।
फिर भी पीड़ित कोई नहिं हो, सबका है रखवाला॥
श्रेय-श्रेय की माला जप मैं, निःश्रेयस सुख पाऊँ।
सभी काम तज सबसे पहले, अर्घ चढ़ाने आऊँ॥५॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं वज्रवृषभनाराच-संहनन-जन्मातिशय-गुणधारक श्री श्रेयोनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

आकर्षक मनभावन सुन्दर, तेरा देह रंगीला।
अन्तिम क्षण तक भी हे स्वामी, नहिं होता है ढीला॥
जिसे देखकर शक्रदेव भी, लज्जा से छुप जावे।
उसे देखने पूजा करने, पुनः - पुनः वह आवे॥६॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं सौरूप्य-जन्मातिशय-गुणधारक श्री श्रेयोनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

खुशबू ले ले एक बार भी, होश भूलती नाशा।
तब तो तेरी पूजा करने से मिट जाती आशा॥

सौरभमय तव देह देखकर, मैं तो सब कुछ भूला।
तेरी पूजा की तो मानो, स्वर्ग लोक में झूला ॥७॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं सौगन्ध्य-जन्मातिशय-गुणधारक श्री श्रेयोनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

अहो आपके तन में स्वामी, लक्षण कैसे-कैसे ।
कह न सकेगा पा न सकेगा, कोई जग में वैसे ॥
नमूँ-नमूँ हे श्रेय आपके, चरण नित्य ही पूजूँ ।
शरण मिली तव मुझे प्रभो तो, क्यों भव में अब झूलूँ ॥८॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं सौलक्षण्य-जन्मातिशय-गुणधारक श्री श्रेयोनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

श्रवण योग्य श्रवणीय आपके, वचन श्रेष्ठतम प्यारे।
त्रिभुवन में नहिं मैंने ऐसे, बोल सुने सुखकारे ॥
वेणु श्री के पुत्र आपका, बन करके मैं चेला।
धन्य हुआ हूँ अर्घ चढ़ाकर, पूजन की पा बेला ॥९॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं प्रियहितवादित्व-जन्मातिशय-गुणधारक श्री श्रेयोनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

तुलना नहिं है उपमा भी नहिं, नहीं रही है सीमा।
तेरे बल के आगे सबका, बल पड़ता है धीमा ॥
सुरनर विद्याधर गणधर भी, पद में शीश झुकाते।
द्वंद्व-फन्द तज अर्घ चढ़ाकर, तेरे ही गुण गाते ॥१०॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं अप्रमितवीर्य-जन्मातिशय-गुणधारक श्री श्रेयोनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

केवलज्ञानातिशय के १० अर्घ्य

(दोहा)

सुभिक्ष चारों ओर हो, जहाँ पधारो आप।
श्रेय नाम से पाप तो, भागे अपने आप ॥

सिंहनादपुर में प्रभो!, दीक्षा ले निर्ग्रन्थ।
स्नेहीजन के साथ में, छोड़ दिये सब ग्रन्थ॥११॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं गव्यूतिशत-चतुष्टय-सुभिक्षत्व-घातिक्षय-जातिशय-गुणधारक श्री श्रेयोनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

नभ में ऐसे विहरते, जैसे सूरज चाँद।
पातक रुकते त्यों प्रभो, दिया किसी ने बाँध॥
बसंत लक्ष्मी का अहो, जब देखा था नाश।
विरत भाव जागा तभी, किया निजातम वास॥१२॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं गगनगमनत्व-घातिक्षय-जातिशय-गुणधारक श्री श्रेयोनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

मर नहिं सकता एक भी, जीव वहाँ पर नाथ।
अनुभव करते सौख्य का, जहाँ मिले तव साथ॥
मोहमुक्त श्री श्रेय को, प्रमुदित मन से नित्य।
पूजूँ स्वामी शीघ्र ही, मिले ज्ञान आदित्य॥१३॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं अप्राणिवधत्व-घातिक्षय-जातिशय-गुणधारक श्री श्रेयोनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

खाने-पीने का मिटा, झंझट सारा देव।
उसका कारण आपके, मिटी घाति की टेव॥
त्रिभुवन गुरु प्रभु श्रेय को, वन्दन कर सौ बार।
पूजन की सो मोह की, निश्चित होगी हार॥१४॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं भुक्त्यभाव-घातिक्षय-जातिशय-गुणधारक श्री श्रेयोनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

बहुत दूर है आपको, दुख देने की बात।
दर्श मात्र से वैर मिट, पुलकित होते गात॥
गणधर सत्तर सात तव, प्रमुख रहे थे धर्म।
श्रेय आपकी शरण में नाश किये सब कर्म॥१५॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं उपसर्गाभाव-घातिक्षय-जातिशय-गुणधारक श्री श्रेयोनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

चतुरानन नहिं आप तो, क्यों दिखता चउ ओर।
आनन तेरा सो जजूँ, मिले जगत का छोर॥
बहुचर्चित मशहूर हैं, श्रेय रहे विख्यात।
तीन लोक में अर्चना, कर देती प्रख्यात॥१६॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं चतुर्मुखत्व-घातिक्षय-जातिशय-गुणधारक श्री श्रेयोनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

मिटी अविद्या आपके, नहीं कुविद्या शेष।
तब तो विद्या लोक की, पद आयी अवशेष॥
सुनन्द राजा ने किया, प्रतिग्रह फिर आहार।
देकर पंचाश्चर्य को, पाया वृष का सार॥१७॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं सर्वविद्येश्वरत्व-घातिक्षय-जातिशय-गुणधारक श्री श्रेयोनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

तन है फिर भी ना रहा, परछाँई का नाम।
पूजक छाया पाप की, मेटे पा निज धाम॥
वर्ण रहा कलधौत सा, देव बने हैं दास।
सो श्रेयस कंचनमयी, थाल चढ़ाऊँ खास॥१८॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं अच्छायत्व-घातिक्षय-जातिशय-गुणधारक श्री श्रेयोनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

चंचलता नहिं शेष तो, क्यों झपकेंगे नैन।
देख तुम्हें अनिमेष मैं, पाता हूँ सुखचैन॥
बुद्धि बने आराधिका, चरणाम्बुज की आज।
श्रेय मिले लौकिक उसे, और मिले शिवताज॥१९॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं अपक्ष्मस्पन्दत्व-घातिक्षय-जातिशय-गुणधारक श्री श्रेयोनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

ज्ञान सुपाया हे प्रभो, जैसे थे नख केश।
तब तक वैसे ही रहे, जब तक हो तन शेष॥
विमलप्रभा थी पालकी, बैठ गये थे श्रेय।
गये मनोहर नाम के, वन में ये जगप्रेय॥२०॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं समान-नखकेशत्व-घातिक्षय-जातिशय-गुणधारक श्री श्रेयोनाथ जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

देवकृत अतिशय के १४ अर्घ्य

(ज्ञानोदय)

भाषा जो सर्वार्धमागधी, जिसको सुरनर किन्नर भी।
पशु पक्षी वैमानिक ज्योतिष, भवन निवासी व्यन्तर भी॥
बारह कोठों में बैठे सब, सुनकर अघ को तजते हैं।
हम तो आठों पहर मात्र श्री, श्रेयनाथ को भजते हैं॥२१॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं सर्वार्धमागधी भाषा देवोपनीतातिशय गुणधारक श्री श्रेयोनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

साँप-नेवला कुत्ता-बिल्ली, वैरी हो या भव-भव के।
वैर भाव को छोड़ मित्र बन, नहिं भटकेंगे भव वन में॥
मैत्री का यह भाव आपकी, निर्मलता बतलाता है।
श्रेय-श्रेय की माला जप ले, ये ही सौख्य प्रदाता है॥२२॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं सर्वजनमैत्रीभाव-देवोपनीतातिशय-गुणधारक श्री श्रेयोनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

लाल गुलाबी फूलों से अमरूद आम से कटहल से।
हरित वर्ण के पत्र सुकोमल, आदि सभी से मनहर वे॥
बन जाते हैं सूखे तरु जो, श्रेय समागम पा करके।
अर्घ चढ़ाऊँ प्रातः उठकर शीघ्र, जिनालय आ करके॥२३॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं सर्वर्तुफलादि-शोभिततरु-परिणाम-देवोपनीतातिशय-गुणधारक श्री श्रेयोनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

पारद मणि सम रत्न जटित हो, भू दर्पण सी लगती है।
जिसे देखकर भव्य जनों की, सुप्त चेतना जगती है॥
श्रेयनाथ तव नाम सुना तो, मन पंछी यह उड़ करके।
पहुँच गया है समवसरण में, भक्ति भाव से पद नमने॥२४॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं आदर्शतल-प्रतिमा-रत्नमयी-देवोपनीतातिशय-गुणधारक श्री श्रेयोनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

पवन बहेगी उसी दिशा में, जिस दिशि में प्रभु गमन करें।
वैसे भवि जन तव अनुचर हो, अपना जीवन चमन करे॥
बच जावेगा दुष्कृत से वो, जो पूजेगा श्रेयस को।
स्वर्ग लोक के सुख पाकर के फिर पावे निःश्रेयस को॥२५॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं विहरण-मनुगतवायुत्व-देवोपनीतातिशय-गुणधारक श्री श्रेयोनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

विस्तृत हो आनन्द वहाँ पर, परमानन्दित हो जाते।
रोगी हो संतप्त शोक से, वो भी तेरे गुण गाते॥
नाम जपूँ तव पूजाकर मन, पाप रहित गतमान करूँ।
गैंडा चिह्नी अर्घ चढ़ा मैं, अष्ट कर्म का नाश करूँ॥२६॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं सर्वजन-परमानन्दत्व-देवोपनीतातिशय-गुणधारक श्री श्रेयोनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

मेघ देव सब काम छोड़कर, वर्षा करने आते है।
गन्धोदक की जहाँ श्रेय प्रभु, विहरण करते जाते हैं॥
सुख ही वर्षे उसके घर में, पाप छोड़ जो पूजेगा।
पाद पद्म में अर्घ चढ़ावे, फिर दुख से क्यों जूझेगा ॥२७॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं मेघकुमारकृत-गन्धोदक-वृष्टि-देवोपनीतातिशय-गुणधारक श्री श्रेयोनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

समतल होती स्वच्छ सुनिर्मल, धरा धूल से वर्जित हो।
जहाँ विचरते श्रेय वहाँ की, भूमि चित्त को हरती औ॥

ऐसे ही जो भक्ति करेगा, पाप कर्ममय कण्टक सब।
मिट जावे फिर जीवन हो, आदर्श बचे नहिं संकट तब॥२८॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं वायुकुमारोपशमित - धूलिकण्टकादि-देवोपनीतातिशय-गुणधारक श्री श्रेयोनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

सहस पत्र के खुले खिले जो, कमल सुकोमल मनहारी।
रखते हैं सुर जहाँ श्रेयप्रभु, रखें चरणयुग सुखकारी॥
सहस भवों के पाप कटेंगे, बना रहे वह खुला खिला।
पूजा करके समझे जो भी, स्वर्ण सुअवसर आज मिला॥२९॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं पादन्यासेकृत-पद्मानि-देवोपनीतातिशय-गुणधारक श्री श्रेयोनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

फल फूलों से लद जाते हैं, मानो आयी तरुणाई।
फिर भी झुकते नम्रनीत से, मानो महिमा तव गाई॥
यह सब होता मात्र आपकी, चरण धूलि के मिलने से।
अर्घ चढ़ाऊँ भाग्य खुला मम, पाप कर्म के हिलने से॥३०॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं फलभार-नम्रशालि-देवोपनीतातिशय-गुणधारक श्री श्रेयोनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

शरदकाल में जैसे बादल, बिजली मेघ विवर्जित हो।
गगनांगन त्यों सब ऋतुओं में, हो जाता अतिनिर्मल ओ॥
जहाँ पधारे श्रेयनाथ जिन, सुख ही सुख सब पावेंगे।
सो थाली भर अर्घ चढ़ाने, द्रव्य चरण में लावेंगे॥३१॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं शरन्मेघवन्निर्मल गगनत्व देवोपनीतातिशय गुणधारकश्री श्रेयोनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

जागो-जागो जल्दी उठकर, आओ-आओ आ जावो।
दुन्दुभि बाजे कहते इनको, पूजो तो दुख क्यों पावो॥
श्रेय बिना नहिं श्रेयस्कर है, तीन लोक में कोई भी।
अतः पूज लो इनने ही तो, कर्म कालिमा धोयी जी॥३२॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं एतैतैतिचतुर्निकायामर - परस्पराह्वानन-देवोपनीतातिशय-गुणधारक श्री श्रेयोनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

दशो दिशाएँ दाह लालिमा, रहित सुनिर्मल हो जाती।
मानों तेरी स्वच्छ कीर्ति को, जगह-जगह पर पहुँचाती॥
श्रेय आपकी करे अर्चना, दशा मिटेगी दुःखमयी।
और मिलेगी दिशा मोक्ष की, जिससे पावे सौख्यमही॥३३॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं शरत्कालवत्-दिग्विभागत्व-देवोपनीतातिशय-गुणधारक श्री श्रेयोनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

धर्मचक्र यह कर्म चक्र का, नाश किया सो पाया है।
तब तो दशविध साधुधर्म अरु, श्रावक वृष बतलाया है॥
विहार बेला में श्रेयस के, आगे-आगे चलता है।
तव चरणों का आराधक भी, मोहकर्म को दलता है॥३४॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं धर्मचक्र-चतुष्टय-देवोपनीतातिशय-गुणधारक श्री श्रेयोनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

अष्ट प्रातिहार्य के ८ अर्घ्य

(लय—कहाँ गये चक्री...)

अशोक तरु यह प्रातिहार्य शुभ, जग में पाता वो।
त्रिभुवन के सब दुख मिट जावे, भाव सु भाता जो॥
श्रेय भावना सोलह भाकर, भू पर आये थे।
अर्घ चढ़ाने दिव्य द्रव्य की थाली लाये हैं॥३५॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं अशोकवृक्ष-प्रातिहार्य-धारक श्री श्रेयोनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

रंग बिरंगे पुष्प बरसकर, कहते इनने ही।
भाव मिटाए विकृत सारे सो आ इनके ही॥
चरण पूजकर हो जा तू भी, पूर्ण समर्पित तो।
मुक्ति वधू भी तेरे पद में, होगी अर्पित ओ॥३६॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं सुरपुष्पवृष्टि-प्रातिहार्य-धारक श्री श्रेयोनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

भगवद् गुण की घातक विधि का, जब ये अंत करे।
अमर ढोरते चामर चौंसठ, वन्दन सन्त करें॥
अर्घ चढ़ा हम श्रेय आपके, आज दिवाने हैं।
क्योंकि हमें भी दुख के कारण, कर्म मिटाने हैं ॥३७॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं चतुःषष्ठी-चामर-प्रातिहार्य-धारक श्री श्रेयोनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

गोल चमकता निर्मल यह जो, पीछे दिखता है।
भामण्डल वह केवल तीर्थंकर को मिलता है॥
आभामण्डल श्रेय आपका, चहुँ दिशि फैला है।
मित्र बने सो कोई भी नहिं, आज अकेला है ॥३८॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं भामण्डल-प्रातिहार्य-धारक श्री श्रेयोनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

ढोल बजे थे बजी बाँसुरी, बजे नगाड़े थे।
कहती बज शहनाई इनने, भाव सुधारे थे॥
पूर्वकाल में इसीलिए तो, ढोलक बजती है।
श्रेय दर्श से कर्म कालिमा, क्षण में मिटती है ॥३९॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं दुन्दुभि-प्रातिहार्य-धारक श्री श्रेयोनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

भव भटकन के हेतु सभी दुर्भाव मिटाए हैं।
इसीलिए तो देवों ने त्रय, छत्र लगाए हैं॥
श्रेय आपकी छत्रछाँव में, जो भी रहता है।
दुःख क्लेश को रोग-शोक को, कभी न सहता है ॥४0॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं छत्रत्रय-प्रातिहार्य-धारक श्री श्रेयोनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

अनेकान्तमय अनुभय वाणी, तेरी खिरती है।
कापथगामी[1] की महिमा तब, क्षण में दबती है॥
सो वे भी आ भक्त सुबनते, मिथ्यामत तजते।
श्रेय-श्रेय यह रटना करके, कर्मों से बचते ॥४१॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं दिव्यध्वनि-प्रातिहार्य-धारक श्री श्रेयोनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

सिंहासन यह भले रखा हो, तुम नहिं छूते हो।
कारण चारों घाति कर्म से, आप अछूते हो॥
सुर का आसन नहिं सिंहासन, मैं अब मागूँगा।
सिद्धासन की आशा से बस अर्घ चढ़ाऊँगा ॥४२॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं सिंहासन-प्रातिहार्य-धारक श्री श्रेयोनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

पंच कल्याणक के ५ अर्घ्य

जब सुर को छोड़ा देव, कृष्णा ज्येष्ठी थी।
तब आये इन्द्र सुरेन्द्र, आये श्रेष्ठी भी॥
ये श्रेयनाथ शिवकार, शिवकरतार रहे।
सो पूज समझ दुखकार, पातक हार गये॥४३॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं गर्भकल्याणक-मण्डित श्री श्रेयोनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

जब पाया अन्तिम जन्म, फाल्गुन ग्यारस थी।
तब हुए सभी के पाप, नौ दो ग्यारह जी॥
ये श्रेयनाथ... ॥४४॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं जन्म-कल्याणक-मण्डित श्री श्रेयोनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

---

१. मिथ्यादृष्टियों की।

नहिं बचा भोग से राग, दीक्षा धारी थी।
वह ग्यारस फाल्गुन कृष्ण, रतियाँ हारी थी॥
ये श्रेयनाथ शिवकार, शिवकरतार रहे।
सो पूज समझ दुखकार, पातक हार गये॥४५॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं तपःकल्याणक-मण्डित श्री श्रेयोनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

जब घाति हुए गत प्राण, माघ अमावस थी।
तब हुआ प्रकट दिनमान, सुलझे दानव भी॥
ये श्रेयनाथ...॥४६॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं ज्ञान-कल्याणक-मण्डित श्री श्रेयोनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

वह रक्षाबन्धन पूज्य, शेष न बच पाये।
वे बचे बचाये कर्म, सो हम पद आये॥
ये श्रेयनाथ...॥४७॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं निर्वाण-कल्याणक-मण्डित श्री श्रेयोनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

अनन्त चतुष्टय के ४ अर्घ्य

(लय–श्री वीर महा अति...)

वह पावन पूत पवित्र, ज्ञान सु प्रकटाया।
सो पूजा करने थाल, चेला ले आया॥
ये श्रेयनाथ...॥४८॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं अनंत-ज्ञान-गुणमण्डित श्री श्रेयोनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

जब पाया दर्श अनन्त, आतम पुष्प खिला।
मिट गया कर्म का कार्य, शिव का राज्य मिला॥
ये श्रेयनाथ...॥४९॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं अनंत-दर्शन-गुणमण्डित श्री श्रेयोनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

नहिं दुःख रहा लवलेश, आत्मिक सौख्य जगा।
सो मेरा चेतन देव, तुममें आज रंगा॥
ये श्रेयनाथ शिवकार, शिव करतार रहे।
सो पूज समझ दुखकार, पातक हार गये ॥५०॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं अनंत-सुख-गुणमण्डित श्री श्रेयोनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

प्रभु प्रकटा तुममें वीर्य, वैसा और कहाँ।
जो पूजे क्षण भर पाद, हो आनन्द वहाँ ॥
ये श्रेयनाथ...॥५१॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं अनंत-वीर्य-गुणमण्डित श्री श्रेयोनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

१८ दोष से रहित के १८ अर्घ्य

(लय-शांतिनाथ मुख...)

नहीं स्वर्ग से भोजन आता।
दातारों का अशन न भाता॥
श्रेय भुक्ति के बिना पुष्ट हो।
पूजक के नहिं कभी कष्ट हो ॥५२॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं क्षुधा-दोष-रहित श्री श्रेयोनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

पेय वस्तु का पान न करते।
प्यास दोष को तुम ना वरते॥
तृषा दोष से रहित हुए हैं।
श्रेय शिवालय पहुँच गये हैं ॥५३॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं तृषा-दोष-रहित श्री श्रेयोनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

भीति नहीं सो प्रभु निर्भय हो।
आत्मलीन सो तुम चिन्मय हो॥
श्रेय आपका नाम रटेगा।
तेरे पथ पर भक्त डटेगा ॥५४॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं भय-दोष-रहित श्री श्रेयोनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

द्वेष दोष के नाशक तुम हो।
प्रभुवर निज के शासक तुम हो॥
त्रिभुवन के सब शासक, तब तो।
पाप प्रणाशक पूज बने ओ ॥५५॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं द्वेष-दोष-रहित श्री श्रेयोनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

राग भाव से पिण्ड छुड़ाया।
तभी लौटकर फिर नहिं आया॥
मैं तो बनकर तव अनुरागी।
शीघ्र बनूँगा शिव सुखभागी ॥५६॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं राग-दोष-रहित श्री श्रेयोनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

मूर्च्छा नहिं सो मोह रहित हो।
अनंतसुख से आप सहित हो॥
संकुल से प्रभु धवल ध्यान से।
आप सु पहुँचे मोक्ष धाम में ॥५७॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं मोह-दोष-रहित श्री श्रेयोनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

चिंता से तुम दूर हुए हो।
चिंतन के प्रभु पूर हुए हो॥
श्रेय जगत में रहे यशस्वी।
पूजूँ नमते तुम्हें तपस्वी ॥५८॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं चिन्ता-दोष-रहित श्री श्रेयोनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

तीर्थंकर हो जरा न आवे।
आप भक्ति मम जरा मिटावे॥
कार्य सहज में सब ही होते।
भक्त आपके सुख से सोते ॥५९॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं जरा-दोष-रहित श्री श्रेयोनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

रोग तुम्हें अब नहीं सतावे।
शिवपथ में हो आप सहारे॥
श्रेय प्रभु हैं शिवसुख क्यारी।
बने रहे हम तव आभारी ॥६०॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं रोग-दोष-रहित श्री श्रेयोनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

तुमने अन्तिम मरण किया है।
फलतः शिव का द्वार मिला है॥
नाचूँ-नाचूँ तव गुण गाऊँ।
श्रेय चरण में अर्घ चढ़ाऊँ ॥६१॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं मरण-दोष-रहित श्री श्रेयोनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

स्वेद कणों से नहिं रंजित हो।
श्रेय! कर्म नहिं अब संचित हो॥
तब तो शिव में शीघ्र पधारो।
भव्यो पूजो भाव सुधारो ॥६२॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं स्वेद-दोष-रहित श्री श्रेयोनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

खुद ही भागा खेद दोष तो।
श्रेय गुणों के आप कोष हो॥
गैंडा का है चिह्न बताया।
थाली भरकर अर्घ चढ़ाया ॥६३॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं खेद-दोष-रहित श्री श्रेयोनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

अष्ट मदों के पार गये हैं।
आठ गुणों के ठाठ रहे हैं॥
निर्मद को नमते मदमाते।
श्रेय आपके हम गुणगाते ॥६४॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं मद-दोष-रहित श्री श्रेयोनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

रति को तुमने नाश किया जब।
रति स्वामी भी पद आया तब॥
श्रेय आपके भक्त बने तो।
रति मिट जाती उसके भी औ ॥६५॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं रति-दोष-रहित श्री श्रेयोनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

अचरज तुमको छू नहिं पाता।
इसीलिए मैं तव गुण गाता॥
श्रेय जिनेश्वर पूर्ण सदय है।
पूजूँगा मैं नित्य हृदय से ॥६६॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं विस्मयदोषरहित श्री श्रेयोनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

निद्रा का जब नाम निशाना।
मिटा दिया सो बना दिवाना॥
मैं भी तेरा श्रेय नाथ जी।
अर्घ चढ़ाऊँ रहो साथ जी ॥६७॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं निद्रा-दोष-रहित श्री श्रेयोनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

मात उदर में नहीं पधारो।
श्रेय देवपद तुम नहिं धारो॥
सम्मूर्च्छन भी जन्म नहीं है।
पूजूँ तेरा मार्ग सही है ॥६८॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं जन्म-दोष-रहित श्री श्रेयोनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

तुमने दुख के कारण मेटे।
शोक दोष फिर क्यों हो तेरे॥
श्रेय आपका रंग चढ़ा है।
सो पूजा का शौक बढ़ा है ॥६९॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं शोक-दोष-रहित श्री श्रेयोनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

(ज्ञानोदय)

कूट रहा जो संकुल प्यारा, सम्बल के अति निकट रहा।
नाम गोत्र का वेदनीय का, जीवन जीना विकट किया॥
श्रेयनाथ ने इसी कूट पर, अन्तिम घड़ियाँ आयुष की।
पूरी करके भव बन्धन तज, पायी सुविधा शिवपथ की॥

(दोहा)

अर्घ चढ़ाऊँ कूट को, तथा श्रेय को आज।
धन्य-धन्य हो आपको, पहना शिव का ताज॥७०॥

ॐ ह्रीं सम्मेदशिखर स्थित संकुलकूटेभ्यो नमः अर्घ्यं...।

श्रेय आपके जहाँ-जहाँ पर, श्रेयस्कर शुभ आसन से।
रहे विराजित श्रेष्ठ बिम्ब जो, खड्गासन चतुरासन से॥
सबको वन्दन करता मैं नव, कोटि भाव से शीश नवा।
और चढ़ाऊँ अर्घ चरण मम, जीवन होवे पूर्ण नया ॥७१॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री श्रेयोनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

पूर्णार्घ्य

(घत्ता)

हे श्रेय जिनेश्वर-निज के ईश्वर, जग में तुम ही श्रेय करो।
सो शक्रेश्वर के, चकेश्वर के, तुम ही उत्तम श्रेय अहो॥
हम तुमको पाकर, गुणगणगाकर, अर्घ चढ़ावे आज यहाँ।
सबके दुख घटता, सुख ही बढ़ता, अहो विराजो आप जहाँ ॥७२॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री श्रेयोनाथ-जिनेन्द्राय नमः पूर्णार्घ्यं...।

जाप्य–ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री श्रेयोनाथ-जिनेन्द्राय नमः।

(९/२७/१०८)

जयमाला

(दोहा)

जयमाला में आपके , गुण की गाऊँ माल।
मुझसे भी अब हे प्रभो!, जीत न पाए काल॥१॥

(ज्ञानोदय)

बुद्धिशील मतिमन्त तथा जो, द्वादशांग के ज्ञाता हैं।
उनको भी बस श्रेय आपका, ज्ञान चित्त में भाता है॥
क्योंकि आपने घाति घातकर, केवलज्ञान सु पाया जो।
अविनश्वर है शाश्वत है वह, नष्ट नहीं हो पाता औ ॥२॥

चाहे दुनिया उलट पुलट हो, धरा धैर्य को खो करके।
काँप उठे पर ज्ञान आपका, नहिं कम्पित हो मोक्षसखे॥
जिसमें झलके तीन लोक की, सभी वस्तुएँ दर्पण सी।
चेतन हो या रही अचेतन, प्रतिबिम्बित हो अर्पण सी॥३॥

ऐसा महिमावंत ज्ञान जो, शुक्लध्यान के बिना अरे।
मिल नहिं सकता चाहे कोई, उग्र तपस्या खूब करे॥
उसी ध्यान को अहो आपने, बिना परिश्रम सहज किया।
तब तो शिव ललना का साथी, ज्ञान आपको प्रकट हुआ ॥४॥

उसी ज्ञान को पाने मुझमें, प्यास लगी सो दौड़ अभी।
आ पहुँचा हूँ तुम्हें पूजने, द्वन्द्व-फन्द को छोड़ सभी॥
नष्ट हुआ दानान्तराय सो, अभयदानमय फल पाया।
इसीलिए तो तुमसे स्वामी, कोई भी नहिं मर पाया ॥५॥

और सभी की रक्षा करने, तथा सुरक्षित रहने की।
दिव्यध्वनि में विधि बतलायी, दया सुपालन करने की॥
मूल मिटा लाभान्तराय तो, ऐसा तुमको लाभ हुआ।
बिना अशन भी भूख व्यथा का, तेरे पत्ता साफ हुआ॥६॥

सो तन तेरा नहीं सूखता, नहीं म्लान हो कान्ति मिटे।
तेज देखकर तेरे वपु का, तेजवान की कान्ति हिले॥
नाश हुआ भोगान्तराय सो, अतिशय-अतिशय भोग मिले।
पुष्प वृष्टि गन्धोदक वर्षा, जय-जय ध्वनि कर लोग खिले॥७॥

दुन्दुभि बाजे इस विधि बजते, उपमा हम नहिं दे सकते।
तीन लोक के वाद्य यन्त्र मिल, इस विधि से नहिं बज सकते॥
उपभोगों का अन्तराय जो, छित्तर-बितर हो भाग गया।
उसके फल में वैभव पाया, फिर भी इनसे राग कहाँ॥८॥

छत्र चँवर सिंहासन अनुपम, जैसे तुमको प्राप्त हुए।
वैसे अब तक इन्द्रों को अहमिन्द्रों को नहिं प्राप्त हुए॥
वीर्य मिला वीर्यान्तराय के उखड़ गये जब पाँव अहो।
तीन लोक को जान रहे पर, निज में ही आराम करो॥९॥

और नहीं तुम थकते स्वामी, नहिं करते विश्राम कभी।
धन्य आपकी शक्ति नमूँ मैं, वही मिले प्रभु मुझे अभी॥
तव दर्शन से तृप्ति मिली जो, उसका पारावार नहीं।
नहीं ओर है नहीं छोर है, नहीं रहा है पार कहीं॥१०॥

सीमा नहिं है उसकी तुलना, नहीं किसी से हो सकती।
सरस्वती भी कहना चाहे, जिह्वा उसकी भी थकती॥
अतः श्रेय मैं आनन्दित हो, ढ़ोल बजाऊँ ढम - ढम - ढम।
वीणा जैसी मधुर ध्वनि कर, नाचूँ मैं तो छम - छम - छम॥११॥

बजा-बजाकर झुन - झुन झुनिया, गा-गाकर संगीत प्रभो।
करते-करते आप भक्ति में, हो जाऊँ तल्लीन विभो॥
घर-घर में मैं गाँव-गाँव में, नगर-नगर में गली-गली।
जाकर के बतलाऊँ इनके, नहीं मोह की दाल गली॥१२॥

सो होकर हैरान बिचारा, मुँह लटकाकर जब भागा।
समवसरण यह मिला तभी, तो प्रेम श्रेय में मम जागा॥
इसीलिए मैं तुम्हें बुलाने, आया हूँ तुम झट आओ।
भव के दुख से बचना है तो, केवल इनके गुण गाओ॥१३॥

छोड़ो मिथ्यामति को मिथ्या, देवों की अब अर्चा को।
मिथ्या गुरु की आस्था को अरु, छोड़ो उनकी चर्चा को॥
जिससे छूटे मिथ्यातम जो, जन्म-मरण का कारण है।
इससे ही तो हाय जीव यह, करता भव को धारण है॥१४॥

अतः सभी हम मिलकर इनके, पादपद्म में अर्पित हो।
करे वन्दना करे अर्चना, जीवन करे समर्पित ओ॥
जिससे अपना हित हो जावे, भव के बन्धन टूट पड़े।
मोक्ष महल की पहली सीढ़ी, हम भी जल्दी आज चढ़े॥१५॥

माता इनकी वेणुश्री जो, वीणा जैसी मधुरिम थी।
पिता विष्णु नृप रहे सहिष्णु, उनकी चर्या निर्मल थी॥
रहे सत्तर गणधर जिनमें, धर्म प्रमुख वृष धारक थे।
चौरासी थे सहस मुनीश्वर, कर्मबन्ध के वारक थे॥१६॥

सिंहनाद थी नगरी जिसमें, रहा सुकानन मनहारी।
उस में जाकर दीक्षा लेकर, कर्म मिटाए दुखकारी॥
विजय नाम बलदेव आपके, चरण कमल का भ्रमर रहा।
पराग पीकर धर्मराज वह, तुष्ट हुआ सन्तुष्ट रहा॥१७॥

स्वर्णमयी तव तन की सौरभ, सुन्दरता का पार कहाँ।
गुणगाने की शक्ति लोक में, किसने पायी आज यहाँ॥
दक्ष धर्म निष्णात पुरुष या, अवधिज्ञान के धारी हो।
चौथा भी यदि ज्ञान सुपाया, तद्भव जो शिवगामी हो॥१८॥

वे भी तेरे गुण गा गाकर, थक-थक करके हार गये।
और मौन ले आत्म रमणकर, तव सम गुण को प्राप्त हुए॥
इसीलिए मैं चाहूँ आठों, पहर भक्ति में लीन रहूँ।
मात्र आपके गुण गाने में, रात-दिवस तल्लीन रहूँ॥१९॥

लेकिन स्वामी बंधा कर्म से, किंचित् नहिं स्वाधीन रहा।
पराधीन मैं तनकारा में, बन्द रहा अतिदीन हहा॥
इसीलिए अब जयमाला यह, पूरी करके नमन करूँ।
कृपा करो हे स्वामी फल में, मोक्षमहल में गमन करूँ॥२०॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री श्रेयोनाथ-जिनेन्द्राय नमः जयमाला पूर्णार्घ्यं...।

आशीर्वाद

श्रेय-श्रेय के दाता की जो, विधान पूजा नित्य करे।
श्रेयस्कर बन जाता जीवन में, उसके लालित्य रहे॥
चक्री शक्री मण्डलीक नृप, बनकर सुख को भोगेगा।
कुछ ही भव में शिव जाने से, कहो कौन अब रोकेगा॥

इत्याशीर्वादः परिपुष्पाञ्जलिं क्षिपामि/क्षिपेत्।

श्री वासुपूज्य विधान
पीठिका
(दोहा)

वासुपूज्य जिनराज की तीन योग से आज।
करूँ वंदना हे प्रभो! सिद्ध करो मम काज॥१॥

चौपाई

चम्पापुर में जन्म लिया था, सबके सुख का काम किया था।
जयावती के नयन सितारे, वासुपूज्य हो पूज्य हमारे॥२॥
बारहवें तुम तीर्थंकर हो, तीन लोक के क्षेमंकर हो।
दीक्षा लेकर निज को ध्याया, भव्य जनों का पाप मिटाया॥३॥
षट्खण्डी भी आकर झुकते, ऋषि-मुनि गणधर तुमको जपते।
चार घातिया घात किये हैं, ज्ञान सुदर्शन साथ लिये हैं॥४॥
सौख्य वीर्य भी अद्भुत तेरा, उठ जावे मम भव का डेरा।
आतम में ही जाग रहे हो, भव-सागर के पार गये हो॥५॥
वसु मद तजकर वसु गुण पाये, अष्टम वसुधा में महकाये।
आठ कर्म को मूल उखाड़ा, तुमने पाया सुख का द्वारा॥६॥
महाशुक्र से तुम आये थे, स्वर्ग लोक के सुख पाये थे।
बचपन में ही विरत हुए थे, आतम में ही निरत हुए थे॥७॥
तीन लोक में गौरव पाया, सबको शिव का पथ दर्शाया।
चेतन भूतल पर तुम रहते, शुद्ध-बुद्ध तुम निज में रमते॥८॥
छत्र चमर भामण्डल पाये, सुर नर किन्नर तुम पद आये।
सौ-सौ मेरे भाग्य खुले हैं, दुर्लभ तेरे दर्श मिले हैं॥९॥

कोटि-कोटि मैं वन्दन करता, श्रद्धा से मन चन्दन बनता।
अतः आपके चरण पड़ूँगा, केवल तेरी शरण रहूँगा॥१०॥

तुम्हें छोड़कर कहीं न जाऊँ, लौट न भव में फिर मैं आऊँ।
भक्ति आपकी पूरी करता, फिर-फिर चरणों में सिर धरता॥११॥

परिपुष्पाञ्जलिं क्षिपामि/क्षिपेत्

विधान पूजा

स्थापना

(ज्ञानोदय)

चम्पापुर मंदारगिरी से, जो भवदधि के पार गये।
वासव पूजित वासुपूज्य वे, भव्य जनों को तार गये॥
बचपन में ही असिधारा व्रत, ग्रहण किया था धन्य हुए।
उनकी पूजा करने स्वामी, भाव हमारे रम्य हुए॥
आह्वानन है आपका, स्थापन कर जिनराज।
सन्निधि करता पूजने, उदय हुआ सौभाग्य॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री वासुपूज्य जिनेन्द्र अत्र अवतर अवतर संवौषट् इति आह्वाननं! ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री वासुपूज्य जिनेन्द्र अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं! ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री वासुपूज्य जिनेन्द्र अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणं!

अष्टक

शुद्ध सुनिर्मल स्वच्छ सुपावन, जल के कलशा भर लाया।
चरण चढ़ाकर पूज्य आपके, चरण पूजने मैं आया॥
वासुदेव प्रतिवासुदेव भी, वासुपूज्य को पूज रहे।
वसुराजा के पुत्र आप में, गणपति सुरपति रीझ रहे॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री वासुपूज्य-जिनेन्द्राय नमः जन्म-जरा-मृत्यु-विनाशनाय जलं....।

कालागरु का मलयागिरि का, चंदन घिसकर लाया हूँ।
पाप-ताप को शीतल करने, पाद-पद्म में आया हूँ॥
वासुदेव प्रतिवासुदेव भी, वासुपूज्य को पूज रहे।
वसुराजा के पुत्र आप में, गणपति सुरपति रीझ रहे॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री वासुपूज्यजिनेन्द्राय नमः संसार-तापविनाशनाय चंदनं...।

खुशबू वाले वासमती के, तन्दुल थाली भर लाया।
तुम्हें पूजकर धन्य हुआ मैं, युगल चरण पा सुख पाया॥
वासुदेव प्रतिवासुदेव...॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री वासुपूज्यजिनेन्द्राय नमः अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान्...।

कल्पवृक्ष के रंग बिरंगे, खिले पुष्प ले आया हूँ।
बाल ब्रह्ममय तुम्हें चढ़ाकर, मन वश करने आया हूँ॥
वासुदेव प्रतिवासुदेव...॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री वासुपूज्यजिनेन्द्राय नमः कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं...।

लाडू पेड़ा घेवर बावर, प्रासुक शुद्ध बनायें हैं।
भूख मिटाने भक्त चरण में, थाली भरकर लाये हैं॥
वासुदेव प्रतिवासुदेव...॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री वासुपूज्यजिनेन्द्राय नमः क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं...।

मणिमय दीपक लेकर स्वामी, प्रतिदिन पद में आऊँगा।
मिथ्यातम मिट जावे मेरा, पूजा नित्य रचाऊँगा॥
वासुदेव प्रतिवासुदेव...॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री वासुपूज्यजिनेन्द्राय नमः मोहान्धकारविनाशनाय दीपं...।

धूप दशांगी खुशबू वाली, पाद युगल में भेंट करूँ।
ध्यान अग्नि में कर्म जलाकर, शिव ललना से भेंट सकूँ॥
वासुदेव प्रतिवासुदेव...॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री वासुपूज्य-जिनेन्द्राय नमः अष्टकर्मदहनाय धूपं ...।

ऐला गोला किसमिस काजू, उत्तम-उत्तम फल लाया।
लौकिकफल की चाह मिटी सो, मोक्षमहाफल मन भाया॥
वासुदेव प्रतिवासुदेव भी, वासुपूज्य को पूज रहे।
वसुराजा के पुत्र आप में, गणपति सुरपति रीझ रहे॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री वासुपूज्यजिनेन्द्राय नमः मोक्षफलप्राप्तये फलं ...।

चंदन पानी अक्षत दीपक, पुष्प धूप चरु फल लाया।
सभी मिलाकर अर्घ बनाकर, तुम्हें चढ़ाकर हरषाया॥
वासुदेव प्रतिवासुदेव...॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री वासुपूज्य-जिनेन्द्राय नमः अनर्घपदप्राप्तयेऽर्घ्यं ...।

प्रत्येक-अर्घ्य

(दोहा)

अष्टक देकर हे प्रभो! अष्टम वसुधा काज।
अर्घ चढ़ाऊँ चाव से, आप रहे शिवराज॥

इति मण्डलस्योपरि पुष्पाञ्जलिं क्षिपामि/क्षिपेत्।

जन्मातिशय के १० अर्घ्य

(लय—कहाँ गये चक्री जिन...)

स्वेद कभी ना आ पायेगा, स्वामी तुम तन में।
वासुपूज्य तव पाद-पद्म ये, भाये मम मन में॥
भूत प्रेत अब दिख न सकेंगे, देखा तुमको जो।
अहो अलौकिक नंद सु स्वामी, आया मुझको तो॥१॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं निःस्वेदत्व-जन्मातिशय-गुणधारक श्री वासुपूज्य-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

राध-रुधिर मल रहित देव तुम, निर्मल देही हो।
गणधर मुनिगण आप चरण में, आते स्नेही हो॥
वासुपूज्य को जो भी आकर, पूजे नाचेगा।

अष्टम वसुधा पाकर वो भी लौट न आवेगा॥२॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं निर्मलत्व-जन्मातिशय-गुणधारक श्री वासुपूज्य-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

लाल रक्त भी श्वेत बना है, तुम तन में स्वामी।
वत्सलता बतलाता तेरी, सबमें अभिरामी॥
वासुपूज्य जी तुम्हें देखकर, चेतन ललचाया।
सब कामों को छोड़ आपके, चरणों झट आया॥३॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं क्षीर-गौररुधिरत्व-जन्मातिशय-गुणधारक श्री वासुपूज्य-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

सुडौल सुंदर समुचित तन, को कैसे पाया है।
सब जीवों को सुख ही सुख हो, मन में भाया रे॥
मात्र आपकी अर्चा मेरे, हृदय समायी है।
इसीलिए तो वासुपूज्य की पूज रचायी है॥४॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं समचतुरस्र-संस्थान-जन्मातिशय-गुणधारक श्री वासुपूज्य-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

सुगंध वाली सभी वस्तुएँ, लज्जित हो जावें।
आप देह की सौरभ से तो, किसके मन भावे॥
वासुपूज्य की पूजा से तन ममता टूटेगी।
राग रंग की भाव कालिमा, जल्दी छूटेगी॥५॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं सौगन्ध्य-जन्मातिशय-गुणधारक श्री वासुपूज्य-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

महाबली की, महामल्ल की, ताकत फीकी[१] है।
ब्रह्मचर्य की कलालोक ने, तुमसे सीखी है॥
वासुपूज्य जी आप भक्त को, क्या-क्या मिलता है।
राहु-केतु भी शीश झुकाते मानस खिलता है॥६॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं वज्रवृषभनाराच-संहनन-जन्मातिशय-गुणधारक श्री

---

१. कमजोर

वासुपूज्य-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

अतुलनीय है, अनुपम भी है, वीर्य देह का ये।
पाया तुमने किन्तु न उसमें, भाव प्रेम का है॥
वासुपूज्य का चरण पुजारी, आतम बल पावे।
मोक्ष महल का बने निवासी, देह न फिर पावे॥७॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं अप्रमितवीर्य-जन्मातिशय-गुणधारक श्री वासुपूज्य-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

मीन साथिया शंख ध्वजा जो, लक्षण तन सोहे।
कहते इनका नाम जपो ये, जग में मंगल है ॥
अरुण-तरुण का तेज छुपेगा, तेरे तन आगे।
वासुपूज्य जी आप दर्श से, संकट सब भागे॥८॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं सौलक्षण्य-जन्मातिशय-गुणधारक श्री वासुपूज्य-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

मीठे हित-मित आकर्षक जो, आप बोलते हैं।
दीन दुखी के जीवन में भी, सौख्य घोलते हैं ॥
अतिशय माना जन्म समय से, महिमा गाऊँ मैं।
वासुपूज्य की पूजा करके, शिवगति पाऊँ मैं॥९॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐ अर्हं प्रिय-हित-वादित्व-जन्मातिशय-गुणधारक श्री वासुपूज्य-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

रंग रूप से सौष्ठवता से, देवों को जीता।
आत्मध्यान में लीन हुए तुम, अघ से हो रीता ॥
वासुपूज्य की पूजा करले, वासव पूजेंगे।
पुण्य बढ़ेगा दुःख मिटेगा, पातक रूठेंगे॥१०॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं सौरूप्य-जन्मातिशय-गुणधारक श्री वासुपूज्य-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

केवलज्ञानातिशय के १० अर्घ्य

(लय-शांतिनाथ मुख...)

सौ योजन तक धरती सारी, बन जाती है प्यारी-प्यारी।
सुभिक्ष होता देश-देश में, आप पधारे पूज्य वेश में॥११॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं गव्यूतिशत-चतुष्टय-सुभिक्षत्व-घातिक्षय-जातिशय-गुणधारक श्री वासुपूज्य-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

गगन विहारी भू ना छूते, वासुपूज्य के अघतम छूटे।
घातिकर्म के क्षय से पाया, अतिशय सबके मन को भाया॥१२॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं गगनगमनत्व-घातिक्षय-जातिशय-गुणधारक श्री वासुपूज्य-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

खाते-पीते कभी नहीं है, फिर भी काया पुष्ट रही है।
वासुपूज्य जी सबको तारो, भव्य जनों को पार उतारो॥१३॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं भुक्त्यभाव-घातिक्षय-जातिशय-गुणधारक श्री वासुपूज्य-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

विहार हो या दिव्य देशना नहिं होवेगी कभी वेदना।
किसी जीव को वासुपूज्य से, पूजक बनते जगत् पूज्य हैं॥१४॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं अप्राणिवधत्व-घातिक्षय-जातिशय-गुणधारक श्री वासुपूज्य-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

नर तिर्यग् या देव असुर भी, नहीं करे उपसर्ग कभी भी।
घाति नाश का अतिशय पाया, देख आपको मन हर्षाया॥१५॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं उपसर्गाभाव-घातिक्षय-जातिशय-गुणधारक श्री वासुपूज्य-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

समवसरण में सभी जीव को, आनन दिखता शोभनीय जो।
वासुपूज्य की महिमा गाऊँ, दरश आपके फिर-फिर पाऊँ॥१६॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं चतुर्मुखत्व-घातिक्षय-जातिशय-गुणधारक श्री वासुपूज्य-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

तीन लोक की विद्याएँ आ, पुलकित होती आप शरण पा।
वासुपूज्य के चरण पूजता, वैभव उसके चरण चूमता॥१७॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं सर्वविद्येश्वरत्व-घातिक्षय-जातिशय-गुणधारक श्री वासुपूज्य-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

परमौदारिक देह बना है, छाया का नहिं काम बचा है।
चार कर्म को नाश किया है, वासुपूज्य शिव पास किया है॥१८॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं अच्छायत्व-घातिक्षय-जातिशय-गुणधारक श्री वासुपूज्य-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

नहीं झपकती पलकें स्वामी, भक्त बनेगा पल में नामी।
वासुपूज्य जी ताल बजाऊँ, नाचूँ-गाऊँ अर्घ चढ़ाऊँ॥१९॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं अपक्ष्मस्पन्दत्व-घातिक्षय-जातिशय-गुणधारक श्री वासुपूज्य-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

वृद्धि रहित नाखून बाल हैं, पूजे मिलती सौख्य चाल है।
वासुपूज्य ने अतिशय पाया, महिमा सुन मैं चरणों आया॥२०॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं समान-नख-केशत्व-घातिक्षय-जातिशय-गुणधारक श्री वासुपूज्य-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

देवकृत अतिशय के १४ अर्घ्य

(दोहा)

दिव्य देशना जब खिरी, समझ गये सब जीव।
शंका सारी तब मिटी, मिटी सभी की पीर॥
चंपापुर में जन्म ले जयावती तव मात।
पूजें आठों याम हम, समझ तुम्हें निज तात॥२१॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं सर्वार्धमागधी-भाषा-देवोपनीतातिशय-गुणधारक श्री वासुपूज्य-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

मैत्री होती सर्व में, जन्म-जात भी वैर।
मिट जाता है, अर्चना, कर ले नहिं कर देर॥

बाल अरुण सा वर्ण है, बाल अरुण से देव।
नाच-नाचकर अर्घ दूँ नौ मेरी अब खेव॥२२॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं सर्वजन-मैत्री-भाव-देवोपनीतातिशय-गुणधारक श्री वासुपूज्य-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

षड्ऋतुओं के फूल से, फल से खिलते वृक्ष।
जहाँ विचरते पूज्य तुम, जैन धर्म अध्यक्ष॥
भारत भू की शान हो, वासुपूज्य भगवान।
अनुपम अद्भुत अर्घ ले, पूजूँ हे गतमान॥२३॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं सर्वर्तुफलादि-शोभित-तरुपरिणाम-देवोपनीतातिशय-गुणधारक श्री वासुपूज्य-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

धरती दर्पण सम करें, स्वर्गपुरी के देव।
अतिशय चौथा ये रहा, मिटे पाप की टेव॥
वासुपूज्य को पूजता, जपता इनका नाम।
विघ्न कष्ट सब दूर हो, सहज बने सब काम॥२४॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं आदर्शतल-प्रतिमारत्नमयी-देवोपनीतातिशय-गुणधारक श्री वासुपूज्य-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

समवसरण आता यदा, वायु बहे अनुकूल।
नहीं नाम दुख दर्द का, मिल जावे भवकूल॥
सास ससुर नहिं नार ना, चीजों की भरमार।
फिर भी त्रिभुवन नाथ हैं, वासुपूज्य सुख सार॥२५॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं विहरण-मनुगत-वायुत्व-देवोपनीतातिशय-गुणधारक श्री वासुपूज्य-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

जहाँ पड़े पद आपके, हर्ष बरसता नित्य।
जो पूजे सब काम तज, जीवन बनता सत्य॥
बजा - बजाकर वाद्य जो, पूजेगा दिन - रात।
वासुपूज्य को वो बने, तीन लोक का नाथ॥२६॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं सर्वजन-परमानन्दत्व-देवोपनीतातिशय-गुणधारक श्री वासुपूज्य-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

कण्टक-कंकड़ धूल से, रहित भूमि बन जाय।
चरण आपके जो पड़े, निज की सुध आ जाय॥
त्रिभुवनपति से पूज्य की, अर्चा है सुख सार।
वासुपूज्य की अर्चना, से खुलता शिवद्वार॥२७॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं वायुकुमारोपशमित - धूलि - कंटकादि-देवोपनीतातिशय-गुणधारक श्री वासुपूज्य-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

मेघ जाति के देव आ, गंधोदक की वृष्टि।
करते जो तव भक्ति तो, होती सुख की सृष्टि॥
वसु विधि मंगल द्रव्य ले, पूजे बनकर शिष्य।
कड़वा-मीठा छोड़कर, बन जावे वह शिष्ट॥२८॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं मेघकुमारकृत-गन्धोदकवृष्टि-देवोपनीतातिशय-गुणधारक श्री वासुपूज्य-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

रखते जाते देव आ, सहस पत्र के पद्म।
जहाँ चरण निक्षेप हो, आप रहे सुख सद्म॥
आत्म निकेतन में रहा, वासुपूज्य तव स्नेह।
पूजूँ तीनों काल मैं, उमड़ा तुममें स्नेह॥२९॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं पादन्यासेकृत-पद्मानि-देवोपनीतातिशय-गुणधारक श्री वासुपूज्य-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

फल फूलों से नम्र हो, झुक जाते हैं वृक्ष।
पूजा कर ले भव्य तूँ, मिट जावें दुख कक्ष॥
वासुपूज्य को देखकर, हर्षे पूजे आज।
आपद में भी भक्त के, नहिं आवेगी आँच॥३०॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं फल-भार-नम्र-शालि-देवोपनीतातिशय-गुणधारक श्री वासुपूज्य-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

शारद ऋतु सम शीघ्र ही, निर्मलतम आकाश।
जिसके उर में आप हो, पाप न आते पास॥
सूर्य उदय से ज्यों मिटे, अंधकार की श्वास।
वासुपूज्य की अर्चना, देती है सुख खास॥३१॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं शरत्कालवन्निर्मल-गगनत्व-देवोपनीतातिशय-गुणधारक श्री वासुपूज्य-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

आओ-आओ शीघ्र ही, यों कहते हैं वाद्य।
श्री जिनवर को पूज ले, मोक्ष बनाकर साध्य॥
देख चन्द्र को ज्यों खिले, कुमुद सरोवर शीघ्र।
वासुपूज्य को देखकर, होवे वृष में अग्र॥३२॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं एतैतैति - चतुर्निकायामर - परस्पराह्वानन-देवोपनीतातिशय-गुणधारक श्री वासुपूज्य-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

शरद काल में मेघ सम, सभी दिशाएँ शुद्ध।
स्वर्गी करते प्राज्ञजन, देख बने प्रतिबुद्ध॥
तरुण अरुण का तेज भी, कांतिहीन हो जाय।
वासुपूज्य को पूज ले, रिपु बान्धव बन जाय॥३३॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं शरन्-मेघवन्निर्मल-दिग्विभागत्व-देवोपनीतातिशय-गुणधारक श्री वासुपूज्य-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

झग-झग करते आपके, आगे धर्म सुचक्र।
चलते कहते पूज लो, मिट जावे भवचक्र॥
सेना साध्वी मुख्य थी, आप चरण की भक्त।
वासुपूज्य की भक्ति में मन मेरा आसक्त॥३४॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं धर्मचक्रचतुष्टय-देवोपनीतातिशय-गुणधारक श्री वासुपूज्य-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

अष्टप्रातिहार्य के ८ अर्घ्य

(घत्ता)

जो सिंहासन है, शिव आसन है, मोक्षपुरी का दाता है।
वह मोक्षपथी ही, पुण्यमती ही, पुरुषार्थों से पाता है॥
श्री वासुपूज्य ने, जगतपूज्य ने, आत्मलीन हो पाया है।
यह भक्त भाव से, बड़े चाव से, तुम्हें पूजने आया है॥३५॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं सिंहासन-प्रातिहार्य-मण्डित श्री वासुपूज्य-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

जब बाजे बजते, मन को हरते, तीन लोक के नायक के।
शुभ शिव में जाने, दुन्दुभि पाने, वासुपूज्य ही लायक हैं॥
वे ढम-ढम बाजे, झुनिया साजे, समवसरण जब बनता है।
जो अर्घ चढ़ाता, पाप मिटाता, सुख ही सुख में रमता है॥३६॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं दुन्दुभि-प्रातिहार्य-मण्डित श्री वासुपूज्य-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

गतशोक वृक्ष में, आप पक्ष में, अपना काल बितायेंगे।
हम आप चरण पा, आप शरण आ, तप के भाव जगायेंगे॥
सब सुरगण आकर, तुमको पाकर, ठुमक-ठुमककर नाच रहे।
जो अर्घ चढ़ा दे, भाव बढ़ा ले, आ सकती नहिं आँच अरे॥३७॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं अशोकवृक्ष-प्रातिहार्य-मण्डित श्री वासुपूज्य-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

जो चौंसठ चामर, ढोरे आकर, स्वर्गपुरी के देव अहो।
श्री वासुपूज्य पे, करूँ पूज मैं, इससे अच्छा काम कहो॥
क्या हो पायेगा, शिव जायेगा, आप बिना क्या कोई भी।
मैं अर्घ सुलाऊँ, चरण चढ़ाऊँ, जगे चेतना सोई जी॥३८॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं चतुःषष्ठि-चामर-प्रातिहार्य-मण्डित श्री वासुपूज्य-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

जो पीछे दिखता, सुख ही मिलता, उसे देखकर जीवों को।
वह भामण्डल है, सुख मण्डल है, देख मिटावे पीवों को ॥
हम पूजन करने, भव से बचने, वासुपूज्य पद आयेंगे।
फिर क्यों भटकेंगे, नहिं अटकेंगे, मनहर अर्घ चढ़ायेंगे॥३९॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं भामण्डल-प्रातिहार्य-मण्डित श्री वासुपूज्य-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

ये तीन छत्र हैं, आतपत्र हैं, आप शीश पर शोभ रहे।
वे रजतमयी हैं, सौख्यमही हैं, चंद्रकान्ति को रोक रहे ॥
वह प्रातिहार्य है, जगततार्य है, वासुपूज्य ने पाया है।
यह भक्त शरण ले, चरण कमल में, अर्घ चढ़ाने आया है॥४०॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं छत्रत्रय-प्रातिहार्य-मण्डित श्री वासुपूज्य-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

सुन आप देशना, पूज्य वेष ना, तीन लोक में हो सकता।
वह परम दिगम्बर, पूर्ण निरम्बर, धार पाप को खो सकता ॥
जो पद आवेगा, सुख पावेगा, पूजा नित्य रचावेगा।
जब छोड़े ममता, धारे समता, शीघ्र शिवालय जावेगा॥४१॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं दिव्यध्वनि-प्रातिहार्य-मण्डित श्री वासुपूज्य-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

तब पुष्पवृष्टि हो, सौख्य सृष्टि हो, वासुपूज्य जब आते हैं।
सुर कल्पवृक्ष के, विविध पक्ष के, देव पुष्प बरसाते हैं॥
हम अर्घ चढ़ाने, निज को पाने, आप चरण में आये हैं।
प्रभु तुमको पाकर, अर्घ चढ़ाकर, चित्त आज हरषाये हैं॥४२॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं पुष्पवृष्टि-प्रातिहार्य-मण्डित श्री वासुपूज्य-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

पंचकल्याणक के ५ अर्घ्य

(लय—मुनि सकलव्रती बड़भागी...)

आषाढ़ कृष्ण की आयी, जब तिथि छठवीं मन भायी।
तब गर्भ पधारे स्वामी, श्री वासुपूज्य जगनामी।।४३।।

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं गर्भकल्याणक-मण्डित श्री वासुपूज्य-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

वह चौदस फाल्गुन काली, तब फैल गयी खुशहाली।
भू आये जग के चंदा, श्री जयावती सुख नंदा।।४४।।

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं जन्म-कल्याणक-मण्डित श्री वासुपूज्य-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

वह जन्म दिवस की बेला, मन विरत भाव से खेला।
श्री वसुराजा के नंदन, मम मेटो भव के बंधन।।४५।।

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं तपः कल्याणकमण्डित श्री वासुपूज्य-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

जब माघ मास की दूजी, वह तिथि पा दुनिया रीझी।
तब केवलज्ञान सुपाया, सुर समवसरण रचवाया ।।४६।।

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं ज्ञान-कल्याणक-मण्डित श्री वासुपूज्य-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

शुभ शुक्ला चौदश आयी, वह भादव की सुखदायी।
श्री वासुपूज्य ने पाई, भव दुख से आज विदाई।।४७।।

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं मोक्ष-कल्याणक-मण्डित श्री वासुपूज्य-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

अनंत-चतुष्टय के ४ अर्घ्य

जहँ झलके सब पर्यायें, हम उसको पाने आये।
वह ज्ञान रहा दुखशोधी, श्री वासुपूज्य भवरोधी।।४८।।

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं अनन्तज्ञान गुणमण्डित श्री वासुपूज्य-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

जब केवल दर्शन पाया, शिव नारी को ललचाया।
मम वासुपूज्य निजभोगी, जो पूजे ना हो रोगी ॥४९॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं अनन्तदर्शन गुणमण्डित श्री वासुपूज्य-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

सुख अमिट अतुल प्रकटाया, तब लौकिक सुख विघटाया।
वह बाग मनोहर भाया, जह अक्षय सुख को पाया ॥५०॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं अनन्तसुख गुणमण्डित श्री वासुपूज्य-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

जो बल विस्मय उपजावे, वह अंत रहित कहलावे।
पा वासुपूज्य शिवशाला, मिट गया दुःख अब काला ॥५१॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं अनन्तवीर्य गुणमण्डित श्री वासुपूज्य-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

१८ दोष से रहित १८ अर्घ्य

(लय—शांतिनाथ के पद पंकज...)

क्षुधा रोग को जीत लिया है, अनशन तप से भारी।
शाश्वत सुख को पाया तब तो, मिली सौख्य की क्यारी ॥
पूज्यपाद की चरण वंदना, भव के दुख को मेटे।
वासुपूज्य का भक्त शीघ्र ही, शिवललना से भेंटे ॥५२॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं क्षुधा-दोष-रहित श्री वासुपूज्य-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

धर्मामृत का पान किया सो, तृषा वेदना भागी।
अर्घ चढ़ाने आया पूजन, अभिलाषा जो जागी ॥
वासुपूज्य की जीवन गाथा, स्वर लहरी में गावे।
उसके फल में सुख पाने को स्वर्गपुरी में जावे ॥५३॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं तृषा-दोष-रहित श्री वासुपूज्य-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

नहीं बुढ़ापा नहीं देह ही, जर-जर होती तेरी।
तभी आप में भक्ति बढ़ी है, वासुपूज्य जी मेरी ॥

आम्रमंजरी देख कोकिला, मधुर बोलती प्यारी।
आप चरण की पूजा कर ले, दुर्गति मिटती सारी ॥५४॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं जरा-दोष-रहित श्री वासुपूज्य-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

मृत्युराज को मार दिया सो, कभी न तुमको देखा।
पण्डित-पण्डित मरण करूँ मैं, मिट जावे अघ रेखा ॥
सौख्य-सम्पदा शुक्ल पक्ष के, शशि सम बढ़ती जावे।
वासुपूज्य का भक्त बने तो, विपदा लौट न आवे ॥५५॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं मरणदोषरहित श्री वासुपूज्य-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

जयावती की गोदी में आ अंतिम जन्म सु पाया।
इसीलिए अब कभी न जन्मों, निज में निज को ध्याया ॥
वासुपूज्य के पाद-पद्म की, पराग पीवे जो भी।
भ्रमर बना सा तव सम स्वामी, पद पावेगा वो भी ॥५६॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं जन्म-दोष-रहित श्री वासुपूज्य-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

देह रोग से घबरा करके, औषधि खाता जाता।
आत्मबोध के बिना नाथ मैं, दुख ही दुख को पाता ॥
रोग रहित हे वासुपूज्यजी, मेरा रोग मिटाओ।
अर्घ चढ़ाऊँ मुझको भी अब, वृष का पाठ पढ़ाओ ॥५७॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं रोग-दोष-रहित श्री वासुपूज्य-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

सातों भय का नाम निशाना, मेट दिया सो पूजूँ।
डर मिट जावे मेरा जिनवर, भव में अब नहिं जूझूँ ॥
लाख बहत्तर वर्ष आयु ले, इस धरती पर आये।
अंतिम-अंतिम मरण किया सो, वासुपूज्य सुख पाये ॥५८॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं भय-दोष-रहित श्री वासुपूज्य-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

विचित्र वस्तु को देख चित्त में, विस्मय सबको होता।
विस्मय दोष मिटा सो स्वामी, तव पद में मन खोता ॥

लाख अठारह बाल्यकाल में, देख सभी हरषाये।
बाल अरुण सम आभा वाले, मुलक-मुलक हम आवे ॥५९॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं विस्मयदोषरहित श्री वासुपूज्यजिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

चिदानंद को ध्याया है सो, रति न बची मैं ध्याऊँ।
रति मिट जावे तव पूजन से, मोक्षपुरी में जाऊँ॥
चाप[1] सुसत्तर ऊँचाई थी, वासुपूज्य के तन की।
भावों से यदि पूजे इच्छा, पूरी होती मन की ॥६0॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं रति-दोष-रहित श्री वासुपूज्य-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

इष्ट नहीं है, राग नहीं है, अनिष्ट लगता नाहीं।
धन्य-धन्य हो मेरा भी अब, राग मिटाओ साईं ॥
वासुपूज्य की पूजा कर ले, सुख पावेगा भारी।
क्योंकि इन्होंने शुक्ल ध्यान से, पायी पावन नारी ॥६१॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं राग-दोष-रहित श्री वासुपूज्य-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

वैरी में अरु शत्रु वर्ग में, द्वेष न तुमको होता।
रूप मनोहर देख आपका, मन का आपा खोता ॥
अष्ट-द्रव्य मय अर्घ बनाकर, वासुपूज्य को अर्चूं।
अष्ट गुणों को पाकर शिव के, सुख पाने को हर्षूं ॥६२॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं द्वेष-दोष-रहित श्री वासुपूज्य-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

मोह भाव से पागल सा बन, आतम को मैं भूला।
निर्मोही को देख भक्त यह, भक्ति-भाव से झूमा ॥
लौकिक सुख की आशा तजकर, प्रभु को पूजो भाई।
आत्मिक सुख को पाओ बनकर, मोक्षमहल के राई[2] ॥६३॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं मोह-दोष-रहित श्री वासुपूज्य-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

परिग्रहों का जाल रहे तो, चिंता लगती भारी।
अहो आप निःसंग रहे सो, पाई है सुख क्यारी ॥

---

१. धनुष, २. राजा

वासुपूज्य का भक्त सदा, निश्चिन्त रहेगा स्वामी।
मात्र जपे यदि नाम आपका, जग में होगा नामी ॥६४॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं चिन्ता-दोष-रहित श्री वासुपूज्य-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

तन में आता स्वेद यदा वह, सप्त धातु का होवे।
परमौदारिक देह बने जब, घाति कर्म को खोवे॥
वासुपूज्य के चार घातिया, अब तो स्वर्ग सिधारे।
सब कुछ भूला करुणानिधि जब उर में आप पधारे ॥६५॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं स्वेद-दोष-रहित श्री वासुपूज्य-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

निद्रा में जब आँखें होती, बंद तभी सब भूले।
जाग रहे तुम देख रहे पर, लालच में ना झूले ॥
वासुपूज्य ने निद्रा को तो, देश निकाला दीना।
नहिं पूजा यदि इनको तो हा! सार्थक है क्या जीना ॥६६॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं निद्रा-दोष-रहित श्री वासुपूज्य-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

कोई कर दे अपमानित तो, खेद - खिन्न हो जाता।
मान भाव से रहित आपका, अर्चन ही मन भाता ॥
वासुपूज्य ने मान तथा अपमान भाव को जीता।
तभी पूज्यवर उत्तम मंगल मम मन तुममें रीझा ॥६७॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं खेद-दोष-रहित श्री वासुपूज्य-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

मन-भावन का वियोग हो तो, शोक उपजता भारी।
शोक दोष से रहित आपकी, पूजा ही सुखकारी॥
वासुपूज्य से शोक दोष यह, बहुत दूर जा भागा।
तब तो मैंने आप दरश कर, मिथ्यातम को त्यागा ॥६८॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं शोक-दोष-रहित श्री वासुपूज्य-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

वस्तु तत्त्व को जान लिया तो, मान कभी नहिं आवे।
मदमाता हो जावेगा तो, निज स्वरूप बिसरावे ॥

वासुपूज्य ने आठ मदों को जीता, शिव पद पाया।
पुलकित होकर तब तो मैं भी, पूजा करने आया॥६९॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं मद-दोष-रहित श्री वासुपूज्य-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

(छन्द-ज्ञानोदय)

सिद्धक्षेत्र सम्मेदशिखर पर, वासुपूज्य के चरण बने।
संभवजिन अरु अभिनंदन के, बीच पाँच शुभ युगल बने॥
सौ-सौ मेरे भाग्य खुले सो, दरश आपके आज मिले।
मनहर सुन्दर अर्घ चढ़ाऊँ, ऐसा अवसर नित्य मिले॥७०॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री वासुपूज्य-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

चम्पापुर मंदारगिरी में, वासुपूज्य का जन्म हुआ।
पंचम कल्याणक भी इस ही, धरती पर सम्पन्न हुआ॥
गर्भ ज्ञान तप सब के सब ही, इस भू पर महकाये थे।
अर्घ चढ़ाऊँ स्वर्गी भी तव, पूजा करने आये थे॥७१॥

ॐ ह्रीं चम्पापुर मंदारगिरि सिद्धक्षेत्रेभ्यो नमः अर्घ्यं ...।

पूर्णार्घ्य

(घत्ता)

हे सुरनर अर्चित, सबमें चर्चित, तेरी महिमा न्यारी है।
यह अवसर आया, मन को भाया, तव पूजा अघहारी है॥
मैं अर्घ बनाकर, चरण चढ़ाकर, भाग्य जगाने आया हूँ।
मम भाग्य खुलेगा, मोक्ष मिलेगा, यही सोच हरषाया हूँ॥७२॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री वासुपूज्य-जिनेन्द्राय नमः पूर्णार्घ्यं...।

जाप्यमंत्र

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री वासुपूज्य-जिनेन्द्राय नमः।

(९/२७/१०८)

जयमाला

(दोहा)

गुणमाला गुणशील की, जो बारम तीर्थेश।
बाल ब्रह्मचारी बने, गाऊँ मैं तज क्लेश॥

(ज्ञानोदय)

वासुपूज्य तुम मानसरोवर, भव्य जीव हम हंस रहे।
धर्म रूप शुभ मोती चुगने, आये तुम सुखकंद रहे ॥
गर्भ-जन्म-तप कल्याणक पा, ज्ञान मोक्ष को पाया है।
शुद्धातम में लीन हुए सो, अमित सौख्य लहराया है॥१॥
चम्पापुर वह पूज्य बना जब, वासुपूज्य ने जनम लिया।
पूज्य बना मंदारशैल जब अंतिम-अंतिम मरण किया ॥
मात अलौकिक जयावती अरु, पिता पूज्य वसुराजा के।
आँगन आये वासुपूज्य तो, बजे सुरीले बाजा थे॥२॥
वसुमद मिटते, वसुगुण मिलते, वासुपूज्य की अर्चा से।
वासव पूजित होता तेरी समय बितावे चर्चा में ॥
वसुविधि मंगल द्रव्यों को ले, नाच-नाचकर पूजेंगे।
वासुपूज्य को उनके बन्धन, शीघ्र - शीघ्र ही छूटेंगे॥३॥
जयावती की गोदी को पा, सबमें विजयी आप हुए।
जिसने पूजा आप चरण को, उसके पातक साफ हुए ॥
बचपन में ही पचपन जैसे, आप गहन गम्भीर रहे।
बाल ब्रह्ममय वासुपूज्य जी, आप लोक के तीर गए॥४॥
भोग-रोग सम दिखे तभी तो, बाल्यकाल में छोड़ दिये।
योग्य विषय को पाकर भी तो, इन्द्रिय गज को मोड़ दिये॥
होता है कल्याण आपके गर्भ जन्म से तप से भी।
भव्य जनों का तीन लोक में, अघ मिटते तव जप से ही॥५॥

आप रूप को देख लोक की, सब आभाएँ झुक जाती।
लाल कमल की आभा भी तो, लज्जित होकर छिप जाती॥
शुक्लध्यान की अग्नि जलाकर, अष्ट कर्म मय ईन्धन को।
जला-जलाकर राख किया सो, बार-बार मम वन्दन हो॥६॥
बाल ब्रह्मचारी बनकर भी, मुक्ति नगर की कन्या से।
शादी करके मौज उड़ाओ, लीन हुए उस रम्या में॥
समता शुचिता वशिता क्षमता, आदि अनेकों ललनाएँ।
वासुपूज्य को पाकर प्रतिदिन, सेवा कर कर हरषाएँ॥७॥
करुणासागर शरणागत के, शरण आप ही अनुपम हैं।
दीन दुखी के दुःख मिटाने, रहे चिकित्सक निरुपम हैं॥
यौवन में ही वन में जाकर, जीवन सावन बना लिया।
तुम्हें पूजकर भव्य जनों ने, जीवन पावन बना लिया॥८॥
शुक्लध्यान जब तीजा ध्याया, योगों का अवरोध हुआ।
लेश्या भी तब पूर्ण मिटी सो, सौख्य शिवालय सौध हुआ॥
क्षुधा रोग को जड़ से तुमने, उखाड़ फेंका दूर कहीं।
सो पकवानों से नहिं मतलब, पाया वृष का सार सही॥९॥
तृषा उपजती पाप उदय से, मूल मिटाया सद्य विभो।
इष्ट-मिष्ट स्वादिष्ट पेय से, रिश्ता क्यों हो पूज्य विभो॥
रजतमालिका नदी किनारे, समवसरण को तज आये।
वेदनीय अरु नाम गोत्र को, नाश किया फिर शिव पाये॥१०॥
एक वर्ष की मात्र तपस्या से ही, अघतम नाश हुए।
समवसरण तब बना लोक के सब जीवों के पास हुए॥
छ्यासठ गणधर सहस बहत्तर मुनिवर धीरजवान रहे।
श्रावक थे दो लाख श्राविका चार लाख तव पाद कहे॥११॥
पूज्य लाख दस सहस अर्जिका, छह बतलाई जिनवर ने।
छह सौ सत्तर के ऊपर छह, भूप बने सह मुनिवर थे॥

वसुराजा के पुत्र आपकी, महिमा कैसे गा पाऊँ।
उत्साहित हो करके भी मैं, फिर-फिर पीछे हट जाऊँ॥१२॥
शान्त सन्त अर्हन्त आपके, गुण गाने की क्षमता तो।
सुरगुरु में भी नहीं रही पर, आप गुणों में ममता जो ॥
उपजी मुझमें इस कारण ही, गुणगाने तैयार हुआ।
गुड़ खाकर के गूँगे से ज्यों, रस बतलाने काम हुआ॥१३॥
सुमेरु जितने गुणगण तेरे, उसमें राई जितने भी।
वासुपूज्य जी कहने सुनने की ताकत है किसमें जी ॥
फिर भी कैसे चुप्पी साधूँ, आप दरश जो पाये हैं।
मन ही मन में हुलसित होकर, भाव उमड़ मम आये हैं ॥१४॥
सो स्वामी मैं बालक सम ही, लज्जा तज वाचाल हुआ।
भक्ति-भाव में भूल शक्ति को, मेरा मन यह बाल हुआ॥
इसीलिए कुछ भक्ति सुमन ये, किए समर्पित चरणों में।
वासुपूज्य फल मिले यही मैं, रहूँ मात्र तव चरणों में॥१५॥
विषय कषायों का बल मेरे, शीघ्र दूर हो जावे जी।
सौम्य भाव का, साम्य भाव का, पूर त्वरित आ जावे जी ॥
पूर्ण करूँ जयमाला मुझको, विजयमाल मिल जावे जी।
मोहराज की सेना मुझ पर, विजय नहीं अब पावे जी॥१६॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री वासुपूज्य-जिनेन्द्राय नमः जयमाला पूर्णार्घ्यं...।

आशीर्वाद

वसुराजा से, वासुदेव से, वासुपूज्य जिन अर्चित हैं।
स्वर्ग-लोक में मध्यलोक में, इन्द्रलोक में चर्चित हैं॥
ऐसे प्रभु का विधान जो भी, त्रय संध्या में करता है।
लौकिक सुख को पाकर के गतलौकिक सुख को वरता है॥

इत्याशीर्वाद पुष्पाञ्जलिं क्षिपामि/क्षिपेत्

श्री विमलनाथ विधान

पीठिका

(दोहा)

पूज्य पूजा की रही, अहो पीठिका श्रेष्ठ।
विमलनाथ आशीष से, विधान होगा ज्येष्ठ॥१॥

(ज्ञानोदय)

द्रव्य भाव नोकर्म मलों से, रहित हुए सो विमल अहो।
नाम रहा यह सार्थक तेरा, पूजूँ आठों याम विभो!॥
खण्डधातकी द्वीप जहाँ पर, आर्यखण्ड अतिश्रेष्ठ रहा।
देश रम्यकावती जहाँ का, पद्मसेन नृप श्रेष्ठ कहा॥२॥

कल्पवृक्ष सम इच्छित फल वह, प्रजाजनों को देता था।
नीतिशास्त्र का ज्ञाता था जो, अक्ष विषय का जेता था॥
सिद्ध करे पुरुषार्थ धर्म अरु, अर्थ काम जय भूप सदा।
फलतः राजा प्रजा सभी के, जीवन में सुख कूप रहा॥३॥

एक समय वह भूधर प्रीतिंकर वन में जब पहुँचा तो।
पुण्य योग से सर्वगुप्त श्री पूज्य केवली प्रभुवर को॥
नमन किया फिर दिव्य देशना, से सुनकर के धर्म महा।
और सुना, दो भव धारण कर, पाओगे शिव शर्म अहा॥४॥

प्रभु से अपना मोक्ष सुना तो, मन में अति आनन्द हुआ।
मानों पाया संग मुक्ति का, उससे परमानन्द हुआ॥
राज्य दिया था तत्क्षण सुत को, दीक्षा लेकर गुरुवर से।
बना दिशाओं को अम्बर वे, बने दिगम्बर गुणवर थे॥५॥
राज-रानियों, पुत्र-पुत्रियों, दास-दासियों परिजन को।
छोड़ सभी निर्ग्रन्थ लिंग जिन, धारा तजकर पुरजन को॥

जन्मजात औ यथाजात वे, शिशु सम किंचित् क्लेश नहीं।
नहीं उग्र थी अहो कषायें, और नहीं संक्लेश कहीं॥६॥

तप-तप करके देह यष्टि को, सुखा दिया था निर्मम हो।
कर्मदलों की शक्ति शोषकर, कृश कर डाली निर्मद हो॥
ऐसे उत्तम तप के फल में, ज्ञान सुग्यारह अंगों का।
पाकर बाँधा तीर्थंकर जो, कर्म रहा सुखवर्गों का॥७॥

जीवन के फिर अन्तिम क्षण में, समाधिपूर्वक मरण किया।
फलतः बारम सुर में उनने, लौकिक सुख का वरण किया॥
एक धनुष का देह अठारह सिन्धु आयु भी क्षणभर सी।
बीत गयी थी सुखसागर में, लीन लगी थी पलभर सी॥८॥

स्वर्ग छोड़कर कृतवर्मा की, रानी श्री जयश्यामा जो।
माँ बनने का भाग्य प्राप्त कर, पूज्य हुई अभिरामा वो॥
उसके आँगन आकर जग को पुण्योदय से वैभव जो।
मिलता उसको बतला करके, पाया शिव के वैभव को॥९॥

ऐसे प्रभु श्री विमलनाथ की, पूजा का जो भाव हुआ।
वो ही सार्थक जीवन का है, मेरे मन का काम हुआ॥
इसविध लिखकर श्रेष्ठ पीठिका, विधान की शुरुआत करूँ।
तव आशिष से कार्य सिद्ध कर, मुक्ति वधू से बात करूँ॥१०॥

परिपुष्पांजलिं क्षिपामि/क्षिपेत्

विधान प्रारम्भ

स्थापना

(ज्ञानोदय)

विपुल विमल हैं विपक्ष दल पर, विजयी बन जो विलस रहे।
जिनके आगे कामदेव के, काम-बाण भी विफल रहे॥
भू पर आकर पथ बतलाकर, लक्ष्य प्राप्ति में सफल हुए।
कर्म नाशकर अर्हत् पद पा, परमात्मा जो सकल हुए ॥

(दोहा)

ऐसे प्रभुवर विमल का, आह्वानन कर आज।
स्थापन करके मैं करूँ, पूजा का यह काज॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री विमलनाथ जिनेन्द्र अत्र अवतर-अवतर संवौषट् इति आह्वाननं! ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री विमलनाथ जिनेन्द्र अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं! ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री विमलनाथ जिनेन्द्र अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणं!

अष्टक

(ज्ञानोदय)

जल पूरित यह निर्मल झारी, लेकर आया पूज्य शरण।
पाप मलों के धोने में प्रभु, मात्र रहे हैं आप चरण॥
विमल! विमल गुण पाने तुमको, पूजूँ आठों याम सदा।
क्योंकि जन्म के दुःख मिटाने, तुम ही हो निर्दाम सखा!॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री विमलनाथ-जिनेन्द्राय नमः जन्म-जरा-मृत्यु-विनाशनाय जलं...।

चन्दन की यह खुशबू मुझको, अब अच्छी नहिं लगती है।
जब से दर्शन पाए तेरे आत्मा तुममें रमती है॥
विमल! विमल गुण...॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री विमलनाथजिनेन्द्राय नमः संसारतापविनाशनाय चंदनं...।

कुन्द पुष्प से धवल सुअक्षत, छटनी करके लाया हूँ।
सब देवों को अलग छाँटकर, तुम्हें पूजने आया हूँ॥
विमल! विमल गुण पाने तुमको, पूजूँ आठों याम सदा।
क्योंकि जन्म के दुःख मिटाने, तुम ही हो निर्दाम सखा!॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री विमलनाथजिनेन्द्राय नमः अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान्...।

काँटों में ज्यों गुलाब खिलते, त्यों जीवन तव महक रहा।
कामदेव को जीता सो मन, पूजा करके चहक रहा॥
विमल! विमल गुण...॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री विमलनाथजिनेन्द्राय नमः कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं...।

लाडू पेड़ा घेवर बाबर क्या-क्या लाऊँ अर्पण को।
क्षुधा मिटेगी मेरी निश्चित, जीवन करूँ समर्पण तो॥
विमल! विमल गुण...॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री विमलनाथजिनेन्द्राय नमः क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं...।

मणिमय या घृतदीप चढ़ाऊँ, भाव मात्र यह मेरा है।
मोहमयी अज्ञानभाव का, उठ जावे अब डेरा ये॥
विमल! विमल गुण...॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री विमलनाथजिनेन्द्राय नमः मोहान्धकारविनाशनाय दीपं...।

धूप दशांगी चढ़ा आपसे, केवल ये ही माँग करूँ।
शक्ति मिले अब ऐसी जिससे, अष्ट कर्म की राख करूँ॥
विमल! विमल गुण...॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री विमलनाथजिनेन्द्राय नमः अष्टकर्मदहनाय धूपं...।

दाख छुहारे काजू किसमिस, फीके सारे पड़ जावे।
भाग्य जगे जब मोक्ष प्राप्ति के, तुम्हें चढ़ाने हम आवे॥
विमल! विमल गुण...॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री विमलनाथ-जिनेन्द्राय नमः महा-मोक्षफल-प्राप्तये फलं...।

थाली भरकर अर्घ लिया पर, थाली खाली सी लगती।
अनर्घ पद की आशा पूरी, तव अर्चा ही कर सकती॥
विमल! विमल गुण पाने तुमको, पूजूँ आठों याम सदा।
क्योंकि जन्म के दुःख मिटाने, तुम ही हो निर्दाम सखा!॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री विमलनाथ-जिनेन्द्राय नमः अनर्घ-पद-प्राप्तये अर्घ्यं...।

प्रत्येक-अर्घ्य

(दोहा)

जल से फल तक मैं चढ़ा, अब पूजूँ दे अर्घ।
कल्याणक के नाथ को, पा जाऊँ अपवर्ग॥

इति मण्डलस्योपरिपुष्पाञ्जलिं क्षिपामि/क्षिपेत्...

जन्मातिशय के १० अर्घ्य

(नरेन्द्र)

औदारिक तन में भी ओहो, स्वेद कभी नहिं आता।
विस्मय उपजा आकर्षित कर, सबके मन को भाता॥
विमलनाथ जी तीर्थंकर सो, जन्म समय से पाया।
इसीलिए तो पूजा करने, स्वर्ग लोक भू आया ॥१॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं निःस्वेदत्व-जन्मातिशय-गुणधारक श्री विमलनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

निर्मल निर्मलतम है तेरी, वपुषा यह सुखकारी।
अमृतभोजी भोजन लेकर, सो आते हितकारी॥
पूजा करके विमलनाथ जी, विधियाँ नाशूँ खोटी।
तेरे पथ पर चलकर पाऊँ, तीन लोक की चोटी॥२॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं निर्मलत्व-जन्मातिशय-गुणधारक श्री विमलनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

लाल रंग का रक्त बना है, क्षीर सिन्धु सा गौरा।
कारण घर से ममता तजकर, सबसे नाता तोड़ा॥
और भावना भायी जग के, सुखी रहे सब प्राणी।
इसीलिए तो विमलनाथ हम, पूज बने गतमानी॥३॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं क्षीरगौररुधिरत्व - जन्मातिशय - गुणधारक श्री विमलनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

तव सुन्दरता देख स्वर्ग के, सुर गाते हैं गाथा।
और वहाँ से आकर तेरे, चरण झुकाते माथा॥
विमलनाथ तव पादपद्म की, रज को शीश चढ़ाते।
बने अरूपी अचल सुशाश्वत फिर नहिं गोते खाते॥४॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं सौरूप्य-जन्मातिशय-गुणधारक श्री विमलनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

रूप सलौना सुन्दर प्यारा, इन्द्र देव नहिं पावे।
तेरे जैसा, स्वर्ग छोड़ सो, तुम्हें देखने आवे॥
मन होता है मैं भी तव, साक्षात् रूप को देखूँ।
योग नहीं मिल पाया सो मैं, तव प्रतिमा में देखूँ॥५॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं समचतुरस्रसंस्थान - जन्मातिशय - गुणधारक श्री विमलनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

उत्तम परमोत्तम संहनन से, तुम तो हो बलशाली।
इसके बल से घातिकर्म की, अहो खैर कर डाली॥
विमलनाथ जी सिद्धालय के, आप रहे हो राजा।
पूजूँ मेरे अब तो शिव का, खुल जाए दरवाजा॥६॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं वज्रवृषभनाराच-संहनन-जन्मातिशय-गुणधारक श्री विमलनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

एक सहस वसु लक्षण तन के, करे घोषणा भारी।
जीवन तेरा सिद्ध शिला पर बना रहे निष्कामी॥

सुवीर प्यारा कूट बना जब, शुक्लध्यान को ध्याया।
अर्घ चढ़ाऊँ विमल आपने, सिद्ध शिला को पाया ॥७॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं सौलक्षण्य-जन्मातिशय-गुणधारक श्री विमलनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

खुशबू तन की कुमुद केतकी, कमल मालती जैसी।
कहती दुनिया, लेकिन कोई, कह न सके है कैसी॥
विमल आपके चरणों की जो, पूजा कर-कर झूमें।
शीघ्र आप सम निधियाँ पाकर, फिर नहिं भव में घूमे ॥८॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं सौगन्ध्य-जन्मातिशय-गुणधारक श्री विमलनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

मृदुभाषी तुम मधुर बोलते, जैसे हो गुड़धानी।
हित-मित वाणी सुनकर लगता, पायी सुर रजधानी॥
विमल चरण की पूजा से अघ, छू मन्तर हो जावे।
तीन लोक के जीव तभी तो, तेरे ही गुण गावे ॥९॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं प्रियहितवादित्व-जन्मातिशय-गुणधारक श्री विमलनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

बचपन में भी तेरे बल का, पार न कोई पावे।
इसीलिए तो चक्रवर्ति भी, आकर शीश झुकावे॥
विमल प्रभु ये राज रमा को, जर तृण वत ही माने।
तेरी पूजा करने वाला, सुख पावे मनमाने ॥१०॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं अप्रमितवीर्य-जन्मातिशय-गुणधारक श्री विमलनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

केवलज्ञानातिशय के १० अर्घ्य

(ज्ञानोदय)

तव प्रभाव से सुभिक्षता ही, सभी दिशाओं में होती।
सौ-सौ योजन तक की जनता, सुख के सागर में सोती॥

विमलनाथ प्रभु तुममें केवल ज्ञान सिन्धु जो लहराया।
अर्घ चढ़ाऊँ उसको पाने, मेरा चेतन ललचाया ॥११॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं गव्यूतिशत-चतुष्टय-सुभिक्षत्व-घातिक्षय-जातिशय-गुणधारक श्री विमलनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

गगनांगन में बिना मार्ग के, बिना परिश्रम जब चलते।
दाँतों नीचे अंगुलि दाबे, मात्र देखते हम रहते॥
केवल ज्ञानोत्सव से प्यारा, अतिशय वा! वा!! प्रकट हुआ।
जिसने पूजा विमल आपको, उसके शिवपथ सहज हुआ ॥१२॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं गगनगमनत्व-घातिक्षय-जातिशय-गुणधारक श्री विमलनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

एकेन्द्रिय या द्वी त्री इन्द्रिय, चतुरिन्द्रिय सुर मानव को।
तिर्यंचों को भी हे स्वामी, पीड़ा नहिं हो दानव को॥
जहाँ पधारो विमलनाथ तुम, सभी सुरक्षित हो जाते।
जो भी पूजे दुःख नाशकर, क्षणभर में ही सुख पाते॥१३॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं अप्राणिवधत्व-घातिक्षय-जातिशय-गुणधारक श्री विमलनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

लेह्य-पेय या खाद्य-स्वाद्य अब,नहिं आवश्यक तुमको है।
ऐसे प्रभु के दर्शन कर नहिं, कहो सुविस्मय किसको है॥
विमल आपका नाम मात्र ही, भूख व्यथा का नाश करे।
सत्य बात है पूजक के तो, मोक्ष महल को पास करे॥१४॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं भुक्त्यभाव-घातिक्षय-जातिशय-गुणधारक श्री विमलनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

कष्ट नहीं दे पावे कोई, यदि आवेगा देने को।
तो भी सुख को पायेगा वो, दुख नहिं पावे पैने ओ॥
इसका कारण विमल आपका, आभामण्डल प्यारा है।
ज्ञान प्राप्ति का अतिशय है यह, अर्घ चढ़ाऊँ न्यारा मैं ॥१५॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं उपसर्गाभाव-घातिक्षय-जातिशय-गुणधारक श्री विमलनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

एक वदन यदि चारों दिशि में, नहीं दिखेगा तो स्वामी।
सब जीवों को कैसे दर्शन, मिल पावेंगे वृष स्वामी॥
इसीलिए तो अतिशय तेरा, प्रकट हुआ हे विमल! अहो।
तव वाणी को सुन करके संतुष्ट हुए तब भव्य विभो॥१६॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं चतुर्मुखत्व-घातिक्षय-जातिशय-गुणधारक श्री विमलनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

विद्याओं के ईश्वरपन को, सहज रूप से प्राप्त हुए।
कर्म मलों को नाश किये सो, तुम ही सच्चे आप्त हुए॥
हे विद्येश्वर हे सर्वेश्वर, हे परमेश्वर पूज्य प्रभो।
पूजूँ मेटो नाश अविद्या, बन जाऊँ परमात्म विभो॥१७॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं सर्वविद्येश्वरत्व-घातिक्षय-जातिशय-गुणधारक श्री विमलनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

छाया पड़ती संसारी की, आप नहीं संसारी हैं।
घाति कर्म सब नष्ट हुए सो, विमल नहीं भवधारी हैं॥
तन की छाया तथा कर्म की, छाया भी नहिं पड़ पावे।
इस कारण ही शक्री-चक्री, मात्र आपके गुण गावे॥१८॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं अच्छायत्व-घातिक्षय-जातिशय-गुणधारक श्री विमलनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

द्वय नयनों की पलकें कैसे, अब झपकेगी प्रभुवर की।
क्योंकि बने अरहंत आप सो, बची न अघ की सत्ता भी॥
समवसरण में ऐसे लगते, नभतल में ज्यों चन्दा हैं।
रही सभाएँ तारों जैसी, पूजे आकर बन्दा ये॥१९॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं अपक्ष्मस्पन्दत्व-घातिक्षय-जातिशय-गुणधारक श्री विमलनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

रक्तवर्ण के नख की अब तो, वृद्धि रुकी है विमल प्रभो!।
और भ्रमर सम काले-काले, केश न बढ़ते कभी विभो!॥
विमलनाथ की महिमा गाने, सुरनर आते विद्याधर।
जो भी पूजे अर्घ चढ़ावे, मिट जाते हैं दिल के गम॥२०॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं समान-नखकेशत्व-घातिक्षय-जातिशय-गुणधारक श्री विमलनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

देवकृत अतिशय के १४ अर्घ्य

(लय—श्री वीर महा अतिवीर...)

जब होता तव उपदेश, सबका हितकारी।
सुन पाते अपना देश, भविजन सुखकारी॥
तुम त्रय लोकों से पूज्य, मैं भी पूज रहा।
सो विमल कहूँ क्या बात, अघदल दूर गया॥२१॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं सर्वार्धमागधी भाषा देवोपनीतातिशय गुणधारक श्री विमलनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

सब बन जावेंगे मित्र, चाहे वैरी हो।
जब पा जावे आशीष, तब क्यों देरी हो॥
मैं विमलनाथ का नित्य, ध्यान लगाता हूँ।
सो छूटे सारे वैर, समता पाता हूँ॥२२॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं सर्वजनमैत्रीभाव-देवोपनीतातिशय-गुणधारक श्री विमलनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

ऋतु-ऋतु के सारे फूल, फल भी फलते हैं।
वे तव वाणी सम मिष्ट, सबको लगते हैं॥
हम धन्य हुये हैं आज, तेरे दर्श मिले।
हे विमल हमारे पाप, जड़ से आज हिले॥२३॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं सर्वर्तुफलादि-शोभिततरु-परिणाम-देवोपनीतातिशय-गुणधारक श्री विमलनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

तव पूजक के हे तीर्थ, पातक झट हटते।
तब चमक उठे वह भूमि, जैसे मणि चमके॥
मम चमक उठा है भाग्य, सो शुभ भाव हुए।
जब विमल किये तव दर्श, पातक भाग गये॥२४॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं आदर्शतल-प्रतिमा-रत्नमयी-देवोपनीतातिशय-गुणधारक श्री विमलनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

नहिं बन सकता प्रतिकूल, चाहे वायु रहे।
फिर क्यों नहिं हो अनुकूल, मेरा भाग्य अरे॥
जब पूज लिया तो देव, अचरज क्यों होगा।
प्रभु मुझे लगा है आज, सुर का सुख भोगा ॥२५॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं विहरण-मनुगतवायुत्व-देवोपनीतातिशय-गुणधारक श्री विमलनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

हो सबको परमानन्द, कष्ट न बच पावे।
तुम विमल रहे सुखकन्द, हम भी पद आवे॥
हो जावेगा सुख चैन, उसके आँगन में।
जो पूजे आकर पाद, होगा नन्दन में॥२६॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं सर्वजनपरमानन्दत्व-देवोपनीतातिशय-गुणधारक श्री विमलनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

नहिं उड़े वहाँ पर धूल, विमल पधारे तो।
फिर बचे न अघ के शूल, भाव सुधारे तो॥
वह बनी कम्पिला तीर्थ, तुमको पाकर सो।
मैं आकर्षित हो अर्घ, चरण चढ़ाता औ॥२७॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं वायुकुमारोपशमित - धूलि - कण्टकादि-देवोपनीतातिशय-गुणधारक श्री विमलनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

वे समवसरण को देख वर्षा करते हैं।
सुर हर्षित होकर देव अघ को तजते है॥

मैं नाचूँ गाऊँ नित्य, तेरा नाम जपूँ।
फिर क्यों पाऊँ मैं कष्ट, तेरे चरण जजूँ ॥२८॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं मेघकुमारकृत-गन्धोदक-वृष्टि-देवोपनीतातिशय-गुणधारक श्री विमलनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

तुम जहाँ रखोगे पाद, स्वर्णिम पद्म रखे।
सुर आकर हे जिनराज, जीवन सार्थ करे॥
वह न्यारा कूट सुवीर, तेरा धाम बना।
इन विमलनाथ को पूज, मेरा काम बना ॥२९॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं पादन्यासेकृत-पद्मानि-देवोपनीतातिशय-गुणधारक श्री विमलनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

तब बज-बज करके, ढोल कहते आओ ना।
सब पातक होंगे गोल, इनको ध्याओ ना॥
ये त्रय लोकों के ईश, विमल सुहाने हैं।
सो हम भी आकर द्वार, बने दिवाने है ॥३०॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं एतैतैति - चतुर्निकायामर - परस्पराह्वानन-देवोपनीतातिशय-गुणधारक श्री विमलनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

तब मेघ रहित दिग्भाग, मन को हरता है।
बस विमल आपका नाम, पातक दलता है॥
मैं विमल चरण का भक्त, जाऊँ बलिहारी।
हो तव पद में आसक्त, बनता अघहारी ॥३१॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं शरन्-मेघवन्निर्मल-दिग्विभागत्व-देवोपनीतातिशय-गुणधारक श्री विमलनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

फल आने पर हो नम्र, तरुवर बेलें भी।
जो दर्श करे इक बार, बनते चेले जी॥
फिर विमल आपको छोड़, दूर न जाते वे।
सब तजकर घर के काम, तव गुण गाते हैं ॥३२॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं फल-भार-नम्र-शालि-देवोपनीतातिशय-गुणधारक श्री विमलनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

वह शरदकाल सम शुद्ध, नभतल हो जाता।
हो विमलनाथ का दर्श, अघमल धुल जाता॥
जब देखा घन का नाश, राग न शेष रहा।
श्री विमल गये निज पास, पूजूँ आज अहा ॥३३॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं शरत्कालवन्निर्मल-गगनत्व-देवोपनीतातिशय-गुणधारक श्री विमलनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

इस धर्मचक्र को देख मुझको लगता है।
ये दुःख विनाशक देव, ऐसा कहता है॥
मैं विमल-विमल यह नाम, रटता जाऊँगा।
तो भव के बन्धन काट, शिव को पाऊँगा ॥३४॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं धर्मचक्र-चतुष्टय-देवोपनीतातिशय-गुणधारक श्री विमलनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

अष्ट प्रातिहार्य के ८ अर्घ्य

(लय—शान्तिनाथ मुख...)

जिसके नीचे तुम जा बैठे।
अशोक बन वह दुख को मेटे॥
विमल आपके आवे द्वारे।
आपद फिर नहिं पाँव पसारे॥३५॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं अशोकवृक्ष-प्रातिहार्य-मण्डित श्री विमलनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

रंग-बिरंगे पुष्प बरसते।
जिन्हें देखकर पाप खिसकते॥
विमल गुणालय धर्मराज हैं।
पूजक बनते सिद्धकाज हैं॥३६॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं सुरपुष्पवृष्टि-प्रातिहार्य-मण्डित श्री विमलनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

चामर ढोरे सुरपति आकर।
नमते पद में तव गुण गाकर॥
मैं भी पूजूँ अर्घ चढ़ाऊँ।
विमलनाथ को नहीं भुलाऊँ॥३७॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं चतुः षष्ठी-चामर-प्रातिहार्य-मण्डित श्री विमलनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

आभामण्डल देह कान्ति है।
तव पूजा से मिटे क्लान्ति है॥
जग के सारे मण्डल आकर।
पूजें तुमको चित्त लगाकर ॥३८॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं भामण्डल-प्रातिहार्य-मण्डित श्री विमलनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

दुन्दुभि बाजे देव बजाते।
भाग्य मानते सुर हरषाते॥
प्रातिहार्य यह मिला आपको।
विमल जगत में मुक्त काम हो ॥३९॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं दुन्दुभि-प्रातिहार्य-मण्डित श्री विमलनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

छत्र शीश पर सुन्दर लगते।
शशि की द्युति को भी वे हरते॥
तीन छत्र ये हमको कहते।
रत्नत्रयधारी को मिलते॥४०॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं छत्रत्रय-प्रातिहार्य-मण्डित श्री विमलनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

दिव्य ध्वनि जब खिरती तेरी।
सुन उर कलियाँ खिलती मेरी॥
विमलनाथ से अघमल धुलते।
निरुपम सुख भी उसको मिलते ॥४१॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं दिव्यध्वनि-प्रातिहार्य-मण्डित श्री विमलनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

सिंहासन में लगे रत्न जो।
नहीं मिलेंगे त्रिभुवन में वो॥
आसन की मैं आशा तजकर।
शिव पाऊँ मैं तुमको भजकर ॥४२॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं सिंहासन-प्रातिहार्य-मण्डित श्री विमलनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

पंच कल्याणक के ५ अर्घ्य

(लय—कहाँ गये चक्री जिन...)

ज्येष्ठ माह की कृष्णा दसमी, उजली लगती है।
गर्भ पधारे विमल तभी से, अलग चमकती है॥
रत्न वृष्टि से सुर ने भू, को पूरा पूर दिया।
अर्घ चढ़ाकर हमने भी अब, अघ को चूर किया ॥४३॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं गर्भकल्याणक-मण्डित श्री विमलनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

शुक्ल धवल जो माघ माह की, चौथी तिथि आयी।
विमल तुम्हारे माँ के घर की, बगिया महकायी॥
जयश्यामा को लगा आज ही, राज्य सु पाया हो।
कौन भक्त है जिसको तेरा, पद नहिं भाया हो॥४४॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं जन्म-कल्याणक-मण्डित श्री विमलनाथ-जिनेन्द्राय

नमः अर्घ्यं...।

वही दिवस था जिसमें तुमने, जन्म सुपाया था।
विरत भाव को देख पूजने, सुरपुर आया था॥
लौकान्तिक भी करे प्रशंसा, विमलनाथ तेरी।
पूजूँ-पूजूँ अर्घ चढ़ा हो, विधि उत्तम मेरी॥४५॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं तपःकल्याणक-मण्डित श्री विमलनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

बसन्त ऋतु की शुक्ला तिथि जो, छटकर आयी थी।
छटवीं में ही केवलज्ञान सु निधि महकायी थी॥
विमल उसी क्षण सिंहासन पर, अधर विराजे थे।
पूजक के तो कल्मष सारे, स्वर्ग सिधारे थे॥४६॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं ज्ञान-कल्याणक-मण्डित श्री विमलनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

आठम थी आषाढ़ कृष्ण शिव, ललना ललचाई।
मोक्षमहल में ले जाने को तव पद में आई॥
विमल गये उस शाश्वत स्थल पर, लौट न आवेंगे।
तभी पूजकर सुरनर किन्नर, तव गुण गावेंगे॥४७॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं निर्वाण-कल्याणक-मण्डितश्री विमलनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

अनन्त चतुष्टय के ४ अर्घ्य

ज्ञान आपने जो पाया है, क्षायिक शाश्वत है।
उसी ज्ञान से विमलनाथ, तव चेतन भास्वत है॥
तीनकाल का, तीनलोक का, सब कुछ दिखता है।
पूजा करने वालों को ही, शिव सुख मिलता है ॥४८॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं अनंत-ज्ञान-गुणमण्डित श्री विमलनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

अनन्त दर्शन तुममें है सो, तेरी श्रद्धा से।
मिथ्यातम मिट जाता है सो, आया बन्दा ये॥
दर्शन करके विमल आपकी, पूजा करने को।
भोग भावना तज आया शिव ललना वरने को॥४९॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं अनंत-दर्शन-गुणमण्डित श्री विमलनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

जग के सारे सुख तो स्वामी, रहे पराश्रित है।
क्या मतलब है मुझको पाना, सुख जो स्वाश्रित है॥
कूट रहा जो सुवीर उससे, पिण्ड छुड़ाया था।
फल में अव्याबाध सौख्य पा, निज को पाया था॥५०॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं अनंत-सुख-गुणमण्डित श्री विमलनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

शक्ति आपने ऐसी पाई, जिससे नहिं हिलते।
कल्प काल यदि अनंत बीते, निज में ही रहते॥
सिद्ध शिला से लौट न आवे, वहीं विराजेंगे।
विमल भक्ति में लीन हुए हम, अर्घ चढ़ायेंगे॥५१॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं अनंत-वीर्य-गुणमण्डित श्री विमलनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

१८ दोष से रहित के १८ अर्घ्य

(दोहा)

क्षुधा जीत आहार की, संज्ञा का कर नाश।
भूख विजेता! भक्त तव, बन जाता है खास॥
विरति भाव उर में जगा, देख मेघ का नाश।
चरणाम्बुज की पूज से, मिटे पाप की श्वास॥५२॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं क्षुधा-दोष-रहित श्री विमलनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

तड़प-तड़प कर प्यास भी, होकर के निष्प्राण।
शान्त हुई तब विमल ने, पाया चेतन प्राण ॥
नन्दनपुर का भूप जो, जय राजा था नाम।
नव विधि से आहार दे, सिद्ध किया निज काम ॥५३॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं तृषा-दोष-रहित श्री विमलनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

भय के सिर पर जब चढ़ा, भय का हा! हा! भूत।
भागा तुमको छोड़कर, लेकर अपने दूत ॥
साठ लाख शुभ वर्ष की, आयु रही विमलेश।
साठ धनुष ऊँचा तनु, नमूँ-नमूँ परमेश ॥५४॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं भय-दोष-रहित श्री विमलनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

वैर नहीं है और ना, विरोध का भी भाव।
इसीलिए तो द्वेष का, तेरे हुआ अभाव॥
पूज्य विमलप्रभु आपके, क्षणभर रह ले साथ।
क्लेश मिटे संक्लेश सब, मिट जाते उत्पात ॥५५॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं द्वेष-दोष-रहित श्री विमलनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

प्रेमी नहिं है आपका, नहीं प्रेम का नाम।
तब तो स्वामी लोक में, नहिं होंगे बदनाम॥
खड्गासन से मोक्ष में, होकर के आसीन।
विमल कर्म से मुक्त हो, अहो हुए स्वाधीन ॥५६॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं राग-दोष-रहित श्री विमलनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

मोह मल्ल के प्राण ले, किया शीघ्र निर्जीव।
पूजक के शिवसौध की, भर जाती है नींव॥
विमलनाथ निर्मल बने, सभी मलों को नाश।
मोह मल्ल को नाशने, रहूँ आपके पास ॥५७॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं मोह-दोष-रहित श्री विमलनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

चिन्तन चिन्ता चित्त भी, नहीं बचा सो देव।
विमल भक्त के नहीं बचे, चिन्ता की अब टेव॥
एक लाख त्रय सहस थी, उनमें पद्मा जान।
मुख्य आर्यिका लीन हो, करती सम रस पान ॥५८॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं चिन्तादोषरहित श्री विमलनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

जरा हुई जर-जर यदा भागी हो हैरान।
विमल बने अरहन्त तब, किया सुखामृत पान॥
चार घातिया कर्म के, निकल गये जब प्राण।
बन करके अरहन्त औ, किया सभी का त्राण ॥५९॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं जरा-दोष-रहित श्री विमलनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

रोग रहित हो, अरुज हो, बने निरोगी सन्त।
पहुँचाता शिव तक तभी, केवल तेरा पन्थ॥
जन्म समय अभिषेक को, देखे बाँध कतार।
विमल आपकी देवगण, करते जय-जयकार ॥६0॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं रोग-दोष-रहित श्री विमलनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

मृत्यु गोद में मृत्यु को, ढकेल करके नाथ।
कमर कसी रहने प्रभो, मुक्ति वधू के साथ॥
सुवीर न्यारा कूट है, विमलनाथ का धाम।
मूल मिटाकर कर्म को, पूर्ण किया था काम॥६१॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं मरणदोषरहित श्री विमलनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

विगत धातु तव देह सो, नहीं टपकता स्वेद।
विमल तभी तो आपमें, विलस रहा निर्वेद ॥
पुरुषोत्तम था प्रमुख जो, श्रोता तेरे पाद।
पूज-पूजकर शीघ्र ही, पूरी करता साद ॥६२॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं स्वेद-दोष-रहित श्री विमलनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

खोद-खोदकर खेद को, किया अहो निर्मूल।
तब तो पाया आपने, लोक शिखर का चूल॥
नगर कम्पिला में हुआ, अहो विमल अवतार।
तब से नगरी वह बनी, मध्यलोक में सार॥६३॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं खेद-दोष-रहित श्री विमलनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

मद न बचा है शेष सो, वृत्ति रही है वीर।
निर्मद निर्मानी बने, विमल उच्च गुणधीर॥
तव सम कोई लोक में, कर सकता नहिं दान।
चटपट सारे काम हो, पूजे तजकर मान॥६४॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं मद-दोष-रहित श्री विमलनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

रति स्वामी भी आपकी, सेवा में लवलीन।
हुआ तभी जब दोष रति, पद आया बन दीन॥
त्रिभुवन पूजित आपके, शासन में बलदेव।
वर्म पूज तव पाद को, छोड़े अघ की टेव॥६५॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं रति-दोष-रहित श्री विमलनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

विस्मय भी विस्मित हुआ, तव समता को देख।
इसीलिए उसने अहो, डेरा लिया समेट॥
जयश्यामा तव मात थी, कृतवर्मा थे तात।
भक्ति करूँ तो मुक्ति क्यों, रहे न मेरे साथ॥६६॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं विस्मयदोषरहित श्री विमलनाथजिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

बारहवें गुणस्थान में, निद्रा का जब नाश।
हुआ तभी शिव अंगना, दौड़ी आयी पास॥
विमल आपके दर्श से, जाग गया मैं आज।
हुआ तभी विश्वास सब, सध जाएंगे काज॥६७॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं निद्रादोष-रहित श्री विमलनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

जन्म भले ही ले लिया, लेकिन अब तो देव।
जन्म न पावो सो सदा, दास बने सुरदेव॥
विमल आपको पूजते, सौ सौ धरणीपाल।
क्योंकि आपने जन्म का, मिटा दिया जंजाल॥६८॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं जन्मदोषरहित श्री विमलनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

मारा जाऊँ शीघ्र मैं, सो डर करके शोक।
तुम्हें छोड़ भागा यदा, आप गये थे मोक्ष॥
सूकर तेरा चिह्न है, विमल आपका नाम।
शिव पाया सब कर्म का, करके काम तमाम॥६९॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं शोकदोष-रहित श्री विमलनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

(ज्ञानोदय)

कूट रहा श्री सुवीर जिस पर, अन्तिम-अन्तिम ध्यान किया।
शेष बचे सब कर्म दलों को, नाश आत्म का पान किया॥
ऐसे श्री प्रभु विमलनाथ का, विधान करके गुणगण गा।
अर्घ चढ़ाऊँ ध्यान केवली बना रहे बस तव पद का॥७०॥

ॐ ह्रीं सुवीरकूटेभ्यो नमः अर्घ्यं...।

स्वर्ण वर्ण के स्फटिक रत्न सी, निर्मल जिनकी काया है।
और चेतना बनी जगत में, निर्मलतम गतमाया है॥
ऐसे तीर्थंकर जगनामी, विमलनाथ की प्रतिमाएँ।
जहाँ विराजित अर्घ चढ़ाऊँ, मेरे उर में विलसाएँ॥७१॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री विमलनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

पूर्णार्घ्य

(घत्ता)

जो धर्म दिवाकर, सुख के सागर, सुर भी जिनके चाकर हैं।
नर, दानव तुमको, शचिपति भी तो, नित्य पूजता आ करके॥

वे विमल शिवंकर, हैं क्षेमंकर, अर्घ चढ़ाऊँ उनके पद।
तज पर द्रव्यों को, दुख छिद्रों को, हो जाऊँ मैं निज में रत ॥७२॥
ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री विमलनाथ-जिनेन्द्राय नमः पूर्णार्घ्यं...।

जाप्य—ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री विमलनाथ-जिनेन्द्राय नमः

९/२७/१०८

जयमाला

(दोहा)

अष्ट अंग को मैं झुका, सौ-सौ करूँ प्रणाम।
अष्ट गुणों की आस से, गाऊँ तव गुणगान॥१॥

(ज्ञानोदय)

जान रहा हूँ विमलनाथ तुम, वीतराग गतराग रहे।
नहीं आपमें किसी वस्तु के, पाने की ही आस अरे॥
और नहीं तुम खुश होकर के, भक्तों को कुछ देते हो।
तथा नहीं तुम भक्त जनों की, नैया को ही खेते हो ॥२॥

क्योंकि आप नहिं इस जगती की, किसी वस्तु के कर्त्ता हैं।
नहीं सृष्टि की रचना करते, नहीं सृष्टि के हर्त्ता हैं॥
और नहीं तुम पालक बनकर, जीवों के सुख दाता हैं।
भक्त जनों के नहीं रहे तुम, ओहो भाग्य विधाता हैं ॥३॥

लेकिन स्वामी आप बिना भव, नैया तैर न सकती है।
बिना आपकी शरण लिए तो, आत्मा भव में रुलती है॥
खिल नहिं सकता भाग्य कभी भी, सौख्य शान्ति नहिं हो सकती।
पलट न सकती किस्मत रेखा, दुख विधियाँ नहिं खो सकती ॥४॥

तव चरणों की भक्ति बिना ही, जिसको शिव सुख पाना है।
बन्ध्या सुत को गगन पुष्प का, हार बना पहनाना है॥

जैसे बन्ध्या नारी के नहिं, पुत्र कभी भी हो सकते।
नहिं अम्बर में वृक्ष लता नहिं, फूल कभी भी खिल सकते ॥५॥

इसी भाँति हे विमल प्रभु तव, भक्ति बिना कुछ सम्भव ना।
और भक्ति से भव्य जनों के शिव पाना भी सम्भव हाँ॥
इसीलिए मैं तेरे पद में, शरणार्थी बन आया हूँ।
शरणागत के शरणदातृ प्रभु, तुमको पा हरषाया हूँ ॥६॥

दर्शन कर विश्वास हुआ है, खेवटिया अब तुम ही हो।
भवसागर से पार लगाने, सच्ची नैया तुम ही हो॥
विमल आप ही तीन लोक के, शरण रहे हो शरण रहे।
सबके रक्षक आप रहे सो, भव्य आपके चरण रहे॥७॥

चक्रवर्ति तो नव रत्नों का, खुश हो थाल चढ़ाता है।
नारायण भी हीरे-पन्ने, चढ़ा-चढ़ा सुख पाता है॥
कई भूप तव पाद-पद्म के, भक्त बने आनन्दित हो।
राज - काज तज दीक्षा लेकर, हो जाते जग वन्दित वो॥८॥

और कई तो कनक रजत के, पुष्पों की भर थाली ला।
तुम्हें पूजकर धन्य-धन्य हो, माने दिन खुशहाली का॥
तथा देव तो कल्पवृक्ष के, फल-फूलों को दीपक को।
अक्षत चन्दन नैवज अर्पित, करते लोकप्रदीपक को॥९॥

नाना विध के वाद्य यंत्र को, सुर मिल खूब बजाते हैं।
इसीलिए सब दौड़े-दौड़े, तव पद में आ जाते हैं॥
अद्भुत-अनुपम नृत्य गान से, निशदिन भक्ति रचाते वे।
और पूजकर प्रभो आपको, विपदा से बच जाते हैं ॥१०॥

विमलनाथ पर मैं तो तेरा, इक छोटा सा भक्त रहा।
पाप लिप्त मैं अक्ष विषय में, हाय-हाय आसक्त रहा॥

इसीलिए नहिं रहे पास में, मेरे माणिक मोती है।
दिव्य नहीं है हीरे जिनमें, सभी ज्योतियाँ खोती हैं ॥११॥

प्रभो नहीं मैं चक्रवर्ति हूँ, नहिं नारायण भूप रहा।
और नहीं मैं स्वर्ग लोक का, इन्द्र देव सुख कूप रहा॥
फिर भी मेरे हृदय कमल में, अहो अलौकिक भक्ति रही।
वो ही मुझमें तव पूजा की, भर देती है शक्ति सही॥१२॥

उसी शक्ति से सभी काम तज, मैं भी दौड़ा आया हूँ।
थोड़ा सा यह अर्घ सुलेकर, मन में अति हुलसाया हूँ॥
पर स्वामी मैं इसको थोड़ा, अल्पमूल्यमय क्यों मानूँ।
आप शरण को पायी तो फिर, निज को छोटा क्यों मानूँ॥१३॥

तुम्हें चढ़ाया इसीलिए यह, हीरे पन्ने नीलम सा।
मूल्यवान बन सबके मन को, हर लेगा शुभ नीरज सा॥
सरोजनी के दल पर जैसे, पड़ी हुई जल बिन्दु अहो।
मोती जैसी आभावाली, क्या नहिं बनती शीघ्र विभो॥१४॥

उसी भाँति तव पादपद्ममय कमल पत्र का संगम पा।
पानी सम मम द्रव्य बनेगा, मुक्ताफल सम उत्तम वा॥
और प्रभो मम लोहे जैसा जीवन होगा स्वर्णमयी।
चरण-कमलमय पारसमणि के, स्पर्श मात्र से सौख्यमही॥१५॥

फिर तो मेरे दुख का किंचित्, नाम नहीं बच पायेगा।
लौकिक सुख की बात कहूँ क्या, शिव सुख भी मिल जायेगा॥
सत्यनिष्ठ हे सदाशयी प्रभु, संचालक तुम शिवपथ के।
और आप ही रहे अग्रणी, सुख पाने के सुखपथ में॥१६॥

कंचन सी तव काया में जो, कान्ति रही वह अनुपम है।
भोगभूमि में मध्यलोक में, मिल न सकेगी सुरपुर में॥

कृपासिन्धु हो, करुणासागर, करुणा के भण्डार रहे।
परमपिता हो, परमपुरुष हो, तुम ही जग में सार रहे॥१७॥
सम्भव है इस जग में कोई, नभ के तारे गिन डाले।
क्षीर सिन्धु की जल बूँदों को, गिनती करके बतलावे॥
किन्तु विमलप्रभु तेरे गुण को, गिन पायेगा कौन कहाँ।
अवधिज्ञानी या मनःपर्यय, ज्ञानी धारे मौन यहाँ॥१८॥
अथवा कोई साहस करके, कोशिश करले गिनने की।
भव-भव बीते, तन भी छूटे, गिन न सकेगा किंचित् भी।
हारेगा वह पछतायेगा, लेकिन कुछ नहिं कर पावे।
हार मानकर तेरे पद की, शरण मात्र ही मन भावे॥१९॥
मैं तो फिर श्री विमलनाथ जी, अल्पबुद्धि हूँ लघुतम हूँ।
लघुधी हूँ मैं अज्ञानी पर, पूर्ण समर्पित तव पद हूँ॥
तब तो जीवन धन्य हुआ मम, रम्य हुआ मैं धन्य हुआ।
रोम-रोम इस तन का मेरे, सार्थक होकर धन्य हुआ॥२०॥
इसीलिए मैं गुण गाकर संतुष्ट हुआ हूँ आज प्रभो
मन में केवल आप बसे सो, हुआ अभी कृतकाज विभो!
अतः पूर्ण कर जयमाला शुभ, करूँ प्रार्थना विनती ये।
सिद्धालय के सिद्धों की अब, आ जाऊँ मैं गिनती में॥२१॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री विमलनाथ-जिनेन्द्राय नमः जयमाला पूर्णार्घ्यं...।

आशीर्वाद

विमल आप ही तीन लोक को, शिव की राह दिखाते हो।
भव्य जनों को मोक्षमार्ग पर, चलना आप सिखाते हो॥
इसीलिए जो विधान तेरा, भक्ति भाव से करता है।
भवसागर को तैर शीघ्र ही, मोक्ष निवासी बनता है॥

इत्याशीर्वादः परिपुष्पाञ्जलिं क्षिपामि/क्षिपेत्।

श्री अनन्तनाथ विधान

पीठिका

(दोहा)

अनन्त पद में नित्य ही, नमूँ अनन्तों बार।
पूजन की लिख पीठिका, पाऊँ भव का सार॥१॥

(ज्ञानोदय)

खण्डधातकी पूर्व मेरु की, उत्तर दिशि में राज रहा।
नगर सुसुन्दर अरिष्ट सब ही, नगरों का जो ताज कहा॥
सुख सम्पद का पार नहीं सो, कोई पाप न करता था।
ऊँचे-ऊँचे जिनमन्दिर से, सबके मन को हरता था॥२॥

उस नगरी का राजा वृषपति, धर्म धुरन्धर धर्मी था।
नाम पद्मरथ साधु समागम, में रहता सत्कर्मी था॥
इक दिन पाया पुण्य योग से, स्वयंप्रभ जिनस्वामी का।
दर्शन करके गदगद् हो उपदेश सुना वृषनामी का॥३॥

समझ गया था सत्य सभी की, नश्वरता को भववन को।
अशुचि देह की धनदौलत की, लौकिक सभी व्यवस्था को॥
सो चिन्तन कर अनुप्रेक्षा जो, बारह प्रभु ने बतलायी।
विरत भाव मन उमड़ पड़ा तब, मोक्षमार्ग की मति आयी॥४॥

जैसे वन में दावानल से, झुलस रहे हों पशुगण जो।
करते हैं पुरुषार्थ वहाँ से, निकल भागने क्षणभर को॥
वैसे ही उस भूपति ने भी, चतुगति के दुख दावा से।
बच जाने का हेतु रहा जो, शिवपथ सुख का दाता है॥५॥

उसको पाने राज्य सौंपकर, बने दिगम्बर मुनिवर वे।
सभी परिग्रह छोड़ अहो, निर्ग्रन्थ बने थे गुरुवर वे॥

अक्ष विषय से मुख को मोड़ा, आतम में तल्लीन हुए।
भेद समझकर तन - चेतन का, निश्छल वे स्वाधीन हुए ॥६॥

बारह तप से मोह गाँठ को, खोल आत्म को पहिचाना।
मूलगुणों को उत्तम उत्तर, सभी गुणों को उर धारा॥
और बाँधकर तीर्थंकर पद, दायक जो शुभ कर्म रहा।
पाँचों कल्याणक को देकर, दिलवाता शिव शर्म अहा ॥७॥

अंत समय में सम भावों से, उत्तम पण्डित मरण किया।
औदारिक तन छोड़ स्वर्ग में, वैक्रियिक तन धार लिया॥
अच्युत सुर जो सोलहवाँ है, सुख का अति भण्डार रहा।
विमान उसमें पुष्पोत्तर जो, सब उपमाएँ टाल रहा ॥८॥

वहाँ बने थे इन्द्र सुउत्तम, सुख सुविधाएँ सुरियाँ थी।
विमान में ही बाग बगीचे, गिरि पर्वत थे नदियाँ थी॥
आयु रही बाईस सिन्धु की, लेश्या शुक्ला उत्तम थी।
दुख की नहिं थी गन्ध शोकमय, बात नहीं थी कर्दम की ॥९॥

भोग-भोगकर नगर अयोध्या, काश्यपगोत्री भूप जहाँ।
सिंहसेन था जिसका सब, आचरण धर्म अनुरूप रहा॥
माता सर्वयशा के आँगन, आकर जिनने जन्म लिया।
उनकी पूजा लिखकर मैंने, जीवन अपना धन्य किया ॥१०॥

परिपुष्पाञ्जलिं क्षिपामि/क्षिपेत्

विधान प्रारम्भ

स्थापना

(ज्ञानोदय)

अनन्त तुम भगवन्त बने फिर, अनन्त गुण को पाया है।
अनन्त भव का अन्त किया सो, अनन्तसुख विलसाया है॥
अनन्त तुमको अनन्त वन्दन, करके आज बुलाता हूँ।
पूजा करने आओ हृदयासन, पर तुम्हें बिठाता हूँ ॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री अनन्तनाथ जिनेन्द्र अत्र अवतर-अवतर संवौषट् इति आह्वाननं! ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री अनन्तनाथ जिनेन्द्र अत्र तिष्ठ-तिष्ठ ठः ठः स्थापनं! ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री अनन्तनाथ जिनेन्द्र अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणं!

अष्टक

(लय—कहाँ गये चक्री...)

कलश लिया यह रजतमयी, जो जल से पूरित है।
जो भी पूजे बन जाते वे, त्रिभुवन पूजित हैं॥
अनन्त तुमने मोह कर्म के, पैर उखाड़े हैं।
तेरी पूजा करके हमने, भाव सुधारे हैं॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री अनन्तनाथ-जिनेन्द्राय नमः जन्म-जरा-मृत्यु-विनाशनाय जलं...।

चन्दन लेकर वन्दन करके, तुम्हें चढ़ाता हूँ।
इसी बहाने निकट बैठकर पाप घटाता हूँ॥
अनन्त तुमने...॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री अनन्तनाथ-जिनेन्द्राय नमः संसार-ताप-विनाशनाय चंदनं...।

तन्दुल लाऊँ भर-भर थाली, अर्चा करने को।
तुम्हें चढ़ाऊँ केवल भव की, चर्चा तजने को॥

अनन्त तुमने मोह कर्म के, पैर उखाड़े हैं।
तेरी पूजा करके हमने, भाव सुधारे हैं॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री अनन्तनाथजिनेन्द्राय नमः अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान्...।

खूब लड़ा पर कामदेव ने मुँह की खायी थी।
तुमसे, सो, हम पूजे सुर ने, महिमा गायी थी॥
अनन्त तुमने...॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री अनन्तनाथजिनेन्द्राय नमः कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं...।

अमृत सम स्वादिष्ट मिष्ट पकवान चढ़ाता हूँ।
क्षुधा जीतने इष्ट देवता, तुम्हें बनाता हूँ॥
अनन्त तुमने...॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री अनन्तनाथजिनेन्द्राय नमः क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं...।

जगमग करती दीप पंक्ति यह आज बनाई है।
तुम्हें चढ़ाऊँ मोह मिटा दो, आश लगाई है॥
अनन्त तुमने...॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री अनन्तनाथजिनेन्द्राय नमः मोहान्धकारविनाशनाय दीपं...।

धूप चढ़ाकर पाप धूल को, आज उड़ाता हूँ।
त्रिभुवननायक, त्रिभुवन ज्ञायक, शीश झुकाता हूँ॥
अनन्त तुमने...॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री अनन्तनाथजिनेन्द्राय नमः अष्टकर्म-दहनाय धूपं...।

इलायची बादाम सुपारी, श्रीफल लाया हूँ।
तुम्हें पूजने हर्षित हो गुण, गाने आया हूँ॥
अनन्त तुमने...॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री अनन्तनाथ-जिनेन्द्राय नमः महा-मोक्षफल-प्राप्तये फलं...।

तुम्हें पूजने मिला-जुलाकर, अर्घ बनाया है।
मिल-जुल करके भक्तों का यह, मण्डल आया है॥

अनन्त तुमने मोह कर्म के, पैर उखाड़े हैं।
तेरी पूजा करके हमने, भाव सुधारे हैं॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री अनन्तनाथजिनेन्द्राय नमः अनर्घपदप्राप्तये अर्घ्यं...।

प्रत्येक-अर्घ्य

(दोहा)

अनन्त तव गुण का नहीं, रहा जगत में पार।
उनमें से कुछ को जजूँ, पाऊँ वृष का सार॥

इति मण्डलस्योपरिपुष्पाञ्जलिं क्षिपामि/क्षिपेत्...

जन्मातिशय के १० अर्घ्य

(ज्ञानोदय)

सप्त धातु से भरा देह पर, स्वेद कभी नहिं आता है।
मेरा मन तो इसीलिए प्रभु, तेरे ही गुण गाता है॥
अनन्त तेरा नाम जपे तो, अनन्त भव के पाप सभी।
कट जाते हैं फिर तो उसके, नहीं बिगड़ते काम कभी॥१॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं निःस्वेदत्व-जन्मातिशय-गुणधारक श्री अनन्तनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

मल नहिं बनता नहीं निकलता, तव वपुषा से नाथ तभी।
सुर पूजित तुम हुए असुर से, पूजे नृप अधिराज सभी॥
अनन्त तेरा भक्त लोक में, सबसे आगे ऊपर हो।
पूजनीय सुर वन्दनीय हो, यश पावेगा भूपर वो॥२॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं निर्मलत्व-जन्मातिशय-गुणधारक श्री अनन्तनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

मानव भव है तेरा फिर भी, रक्त श्वेत क्यों दिखता है।
उसका कारण जीवों के प्रति, दया भाव जो पलता है॥
आप हृदय में उसने ही तो, अतिशय यह दिखलाया है।
उससे आकर्षित हो चेला, अर्घ चढ़ाने आया है॥३॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं क्षीरगौररुधिरत्व-जन्मातिशय-गुणधारक श्री अनन्तनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

रूप सलौना सहज रहा, शृंगार रहित भी मोहक है।
निर्मद! तेरी भक्ति लोक में, पाप कर्म अवरोधक है॥
मैं तो केवल आप रूप को, देख-देखकर पुलकित हूँ।
अर्घ चढ़ाकर अनन्त जिन को,मन ही मन में प्रमुदित हूँ॥४॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं सौरूप्य-जन्मातिशय-गुणधारक श्री अनन्तनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

तेरे तन सी सुगन्ध जग में, और किसी में नहिं मिलती।
पूजे उसके गुलाब जैसी, खुशबू जीवन में खिलती॥
अनंत प्रभु ने धर्म पताका, तीन लोक में फहराई।
यह सुन करके मुझमें पूजा, करने की अब मति आई॥५॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं सौगन्ध्य-जन्मातिशय-गुणधारक श्री अनन्तनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

सुन्दर शुभकृत लक्षण जितने, मात्र आपके तन में हैं।
तीर्थंकर पद बाँधा जिसका, फल पाया यह तुमने है॥
अनन्त प्रभु के चरणकमल में,अर्पित करके जीवन को।
पूजूँ अघतम नाश हेतु तुम, जग में सच्चे दिनकर हो॥६॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं सौलक्षण्य-जन्मातिशय-गुणधारक श्री अनन्तनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

सुन्दरता है कैसी कितनी, अचरज सबको उपजाती।
सौष्ठव देही तुम्हें देखकर, पाप बुद्धि मम मिट जाती॥
अनन्त स्वामी अनन्तसुख को, भोग जन्म से छूट गये।
तेरी पूजा की तो मेरे, पातक सारे टूट गये॥७॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं समचतुरस्र-संस्थान-जन्मातिशय-गुणधारक श्री अनन्तनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

बल का पारावार नहीं है, अपार बल तव अतुल रहा।
उत्तम संहननधारी तब तो, ध्यान लगाया अचल महा॥
बचपन में भी पचपन जैसे, अनन्त तेरी जय-जय हो।
पूजा के फल में हे स्वामी, मेरा जीवन शिवमय हो॥८॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं वज्रवृषभनाराच-संहनन-जन्मातिशय-गुणधारक श्री अनन्तनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

हित-मित प्यारे मधुर वचन सुन, उर के दुख सब मिट जावे।
अनन्त जिन की भक्ति करे तो, पापास्रव भी रुक जावे॥
ढोल बजाकर नाचूँ स्वामी, गाऊँ तेरे गीत सदा।
श्रद्धा पूर्वक अर्घ चढ़ाऊँ, आप सरीखा देव कहाँ॥९॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं प्रियहितवादित्व-जन्मातिशय-गुणधारक श्री अनन्तनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

प्रभो आपके बल की तुलना कौन कहाँ कर पाएगा।
कोशिश करले करने की तो केवल वह पछताएगा॥
त्रिभुवन जेता मोह बली ने, डाल दिये हथियार अहो।
ध्यान शक्ति के आगे तो फिर, कौन बचा बलवान कहो॥१०॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं अप्रमितवीर्य-जन्मातिशय-गुणधारक श्री अनन्तनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

केवलज्ञानातिशय के १० अर्घ्य

(लय—शांतिनाथ मुख शशि...)

दुर्भिक्षों से सब बच जाते।
सुभिक्षता से सब भर जाते॥
अनन्त तेरी भक्ति करे तो।
अनन्तसुख को शीघ्र वरे वो॥११॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं गव्यूतिशत-चतुष्टय-सुभिक्षत्व-घातिक्षय-जातिशय-गुणधारक श्री अनन्तनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

अम्बर से तुम रहित हुए हो।
पर अम्बर में विचर रहे हो॥
गगनगमन यह प्यारा लगता।
अनन्तदर्शन मन को हरता॥१२॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं गगनगमनत्व-घातिक्षय-जातिशय-गुणधारक श्री अनन्तनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

प्राणिघात तो महापाप है।
पाप रहित हे प्रभो! आप हैं॥
वह अनन्त से क्यों होवेगा।
जो पूजेगा भव खोवेगा॥१३॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं अप्राणिवधत्व-घातिक्षय-जातिशय-गुणधारक श्री अनन्तनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

भोजन अब आवश्यक नहिं है।
अतिशय प्रकटा ज्ञानमही के॥
घाति बचे नहिं तेरे अब सो।
तेरे पद में लोटे हम तो॥१४॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं भुक्त्यभाव-घातिक्षय-जातिशय-गुणधारक श्री अनन्तनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

बाधाएँ भी बाधित होकर।
दूर गयी हैं मद को खोकर॥
फिर क्यों हो उपसर्ग आप पर।
भक्त मुक्त हो पाप साफकर॥१५॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं उपसर्गाभाव-घातिक्षय-जातिशय-गुणधारक श्री अनन्तनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

समवसरण में सब प्राणी को।
दर्श मिले सो सुखखानी हो॥

अनन्त तेरा नाम जपूँगा।
तब तो अघ से नाथ बचूँगा ॥१६॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं चतुर्मुखत्व-घातिक्षय-जातिशय-गुणधारक श्री अनन्तनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

विद्या जग में नहीं बची है।
तेरे पद में जो न रची है ॥
पूजूँ-पूजूँ अनन्त तुमको।
केवल विद्या होवे मुझको ॥१७॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं सर्वविद्येश्वरत्व-घातिक्षय-जातिशय-गुणधारक श्री अनन्तनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

छाया पायी केवल निधि की।
तभी बताते शिव की विधि जी ॥
अनन्त छाया नहिं पड़ती पर।
तव छाया से तर जाता भव ॥१८॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं अच्छायत्व-घातिक्षय-जातिशय-गुणधारक श्री अनन्तनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

कमल दलों सम नयनों की अब।
पलके नहीं झपकती सो सब ॥
आकर बनते भक्त पुजारी।
पाने आया मैं सुख क्यारी ॥१९॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं अपक्ष्मस्पन्दत्व-घातिक्षय-जातिशय-गुणधारक श्री अनन्तनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

केवल पाया तब थे जितने।
केश तथा नख दोनों उतने ॥
रहते अतिशय अतिशयकारी।
अनन्त महिमा जग में न्यारी ॥२०॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं समान-नखकेशत्व-घातिक्षय-जातिशय-गुणधारक श्री अनन्तनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

देवकृत अतिशय के १४ अर्घ्य

(लय—कहाँ गये चक्री जिन...)

अर्द्धमागधी भाषा सबको, उपकृत करती है।
मोह तथा अज्ञान भाव के, तम को दलती है॥
अनन्त भव के दुःख विनाशक, तुमको वन्दन है।
तीन लोक में मात्र आपका, जीवन चन्दन है ॥२१॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं सर्वार्धमागधी-भाषा-देवोपनीतातिशय-गुणधारक श्री अनन्तनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

दुःख मिटे सब जीव जन्तु के, सुख ही सुख होवे।
मित्र बने सब इक दूजे के, वैर भाव खोवे॥
अनन्त प्रभुवर सदा आपकी, गाथा गाऊँगा।
दिवस-रात तो स्वामी भव में, लौट न आऊँगा ॥२२॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं सर्वजन-मैत्रीभाव-देवोपनीतातिशय-गुणधारक श्री अनन्तनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

सब ऋतुओं के फल फूलों से, तरु भर जाते हैं।
सुरपति खगपति विद्याधर भी, तव गुण गाते हैं॥
अनन्त तेरा नाम भवोदधि, तारणहारा है।
प्रभो! आपने भव्य जनों को, भव से तारा है ॥२३॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं सर्वर्तुफलादि-शोभिततरु-परिणाम-देवोपनीतातिशय-गुणधारक श्री अनन्तनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

चम-चम करती रत्नों सम, भू निर्मल होती है।
तेरी संगति बीज भव्य के, सुख के बोती है॥
भक्त बनेगा अनन्त तेरा, शिव को पावेगा।
सब देवों को तजकर केवल, तव गुण गावेगा ॥२४॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं आदर्शतल-प्रतिमा-रत्नमयी-देवोपनीतातिशय-गुणधारक श्री अनन्तनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

पवन नहीं प्रतिकूल चलेगा, अनन्त आयेंगे।
बनकर सब अनुकूल आपकी, महिमा गायेंगे॥
पशु हो या नर किन्नर होवे, पद में लीन रहे।
मिले आपकी संगति तो क्यों, कोई हीन रहे॥२५॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं विहरण-मनुगतवायुत्व-देवोपनीतातिशय-गुणधारक श्री अनन्तनाथ जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

जैसी खुशबू वाला पानी, रिमझिम बरसाते।
मेघ देव आ इस धरती पर, अतिशय बतलाते॥
ऐसी खुशबू वाला जग में, कोई द्रव्य नहीं।
अनन्त तेरी पूजा सा नहिं, अच्छा काम कहीं॥२६॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं मेघकुमारकृत-गन्धोदक-वृष्टि-देवोपनीतातिशय-गुणधारक श्री अनन्तनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

छा जावे आनन्द वहाँ पर, जहाँ पधारेंगे।
अनन्त तेरे भक्तों के अघ, स्वर्ग सिधारेंगे॥
मेरा मन तो तुमको स्वामी, छोड़ न पावेगा।
चाहे करले मृत्यु वरण पर, तव गुण गावेगा ॥२७॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं सर्वजन-परमानन्दत्व-देवोपनीतातिशय-गुणधारक श्री अनन्तनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

काँटे कंकड़ कर्दम आदिक, दूर हटेंगे जी।
इसीलिए तो हम भी तेरे, मार्ग डटेंगे जी॥
अनन्त तेरा अतिशय मुझको, कितना भाता है।
मेरा मन तो बिना कहे ही, सुख को पाता है ॥२८॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं वायुकुमारोपशमित - धूलि - कण्टकादि-देवोपनीतातिशय-गुणधारक श्री अनन्तनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

कमल सुकोमल मृदुतम प्यारे, सुन्दर रखते हैं।
सब झंझट को छोड़ तुम्हारे, पद में रहते हैं॥
पंकजवत ही खिला रहेगा, भक्त बनेगा जो।
अर्घ चढ़ावे अनन्त पद, आसक्त रहेगा वो ॥२९॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं पादन्यासेकृत-पद्मानि-देवोपनीतातिशय-गुणधारक श्री अनन्तनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

आओ जल्दी रुको नहीं तुम, जल्दी आ जाओ।
अनन्त जिन के पद में आकर, इनको झुक जाओ॥
तीन लोक आ चरण झुकेंगे, फल में तेरे रे।
भक्त बना तू प्रभु का तो क्या, संशय इसमें है ॥३०॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं एतैतैति - चतुर्निकायामर - परस्पराह्वानन-देवोपनीतातिशय-गुणधारक श्री अनन्तनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

प्रभो समागम से निर्मलतम, दशों दिशाएँ हों।
भक्त बने यदि अनन्त का तो, सही दशाएँ हो॥
चित्तवृत्ति लग जावे तुममें, तो फिर कहना क्या?
शिव पाने को पहनेगा वह, संयम गहना वा ॥३१॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं शरन्-मेघवन्निर्मल-दिग्विभागत्व-देवोपनीतातिशय-गुणधारक श्री अनन्तनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

वृक्ष लताएँ झाड़-झाड़ियाँ, फल से झुकते हैं।
कहते तेरे भक्त बने तो, पातक रुकते हैं॥
अनन्त सुन्दर नाम रटूँ तो, बाधा क्यों आवे।
बाधा वर्जित सुख पाएगा, शिव में विलसावे ॥३२॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं फल-भार-नम्र-शालि-देवोपनीतातिशय-गुणधारक श्री अनन्तनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

शरदकाल में जैसा निर्मल, नभ हो जाता है।
वैसा बादल ओस कणों से, वर्जित भाता है॥

गगन सुनो यह अनन्त प्रभु के, आने से ही हो।
सुख पाते वो अर्घ चढ़ा तव, गुण ही गाते जो ॥३३॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं शरत्कालवन्निर्मल-गगनत्व-देवोपनीतातिशय-गुणधारक श्री अनन्तनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

धर्मचक्र वह आगे-आगे, चलकर कहता है।
चक्कर मेटे भव का इनके, पथ जो चलता है॥
धर्म पूर्णकर अनन्त ने सुख, अनन्त पाया है।
तेज देखकर धर्मचक्र का, रवि शरमाया है ॥३४॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं धर्मचक्र-चतुष्टय-देवोपनीतातिशय-गुणधारक श्री अनन्तनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

अष्ट प्रातिहार्य के ८ अर्घ्य

(दोहा)

अनन्त तव सान्निध्य से, शोक तजे तरुराज।
तव चेले के सौख्य का, नहीं रहे अन्दाज॥
गद्‌गद् होकर आपकी, पुलकित हो इक बार।
गाथा गावे तो नहीं, जन्मे बारम्बार॥३५॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं अशोकवृक्ष-प्रातिहार्य-मण्डित श्री अनन्तनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

पुष्पवृष्टि यह तब हुई, जब पाया विश्राम।
अनन्त तुमने आत्म में, नहीं बचा था काम॥
पुत्र-मित्र परिवार को, छोड़ बने मुनिराज।
रानीगण से मोह तज, आप बने शिवराज॥३६॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं सुरपुष्पवृष्टि-प्रातिहार्य-मण्डित श्री अनन्तनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

पीछा छोड़ा घाति ने, तो चामर ले देव।
लगे ढोरने आप पर, मान सु उत्तम देव॥

अनन्त गुण की खान हो, अनन्त का है ज्ञान।
अनन्त तेरा नाम है, जैनधर्म की शान॥३७॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं चतुः षष्ठी-चामर-प्रातिहार्य-मण्डित श्री अनन्तनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

निर्मलता तव आत्म की, भामण्डल बन आज।
अनन्त बाहर आ कहे, ये ही हैं जिनराज॥
जन्म दिया जब आपको, सर्वयशा कृतकाज।
हुई तभी से वो प्रभो! नारी में सिरताज॥३८॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं भामण्डल-प्रातिहार्य-मण्डित श्री अनन्तनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

दुन्दुभि बाजों की रही, मनमोहक आवाज।
अनन्त तेरे भक्त को, मिलता शिव का ताज॥
बजा-बजाकर ढोल जो, आकर तेरे द्वार।
पूजे उसके बन्द हो, चारों गति के द्वार॥३९॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं दुन्दुभि-प्रातिहार्य-मण्डित श्री अनन्तनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

चाँदी के त्रय छत्र ये, कहते सुन ले भ्रात।
अनन्त को तू पूज ले, बच न सके अघ बात॥
सिंहसेन के पुत्र हो, नगर अयोध्या शान।
भक्त बना मैं सो प्रभो, बने आप वरदान॥४०॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं छत्रत्रय प्रातिहार्य-मण्डित श्री अनन्तनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

दिव्य ध्वनि की दिव्यता, जग में उपमातीत।
जो सुन ले इक बार भी, जाता अघ से जीत॥
अनन्त भव का नाशकर, पद पा अन्तातीत।
अनन्तसुख के नाथ बन, गाये अपने गीत॥४१॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं दिव्यध्वनि-प्रातिहार्य-मण्डित श्री अनन्तनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

स्वर्ण सुनिर्मित रत्न से, खचित मिला पर[१] देव।
सिंहासन छूते नहीं, क्योंकि मिटी अघटेव॥
क्षण भर भी यदि आपका, पा जावे जो साथ।
झंझट से बच वो बने, त्रयलोकों का नाथ ॥४२॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं सिंहासन-प्रातिहार्य-मण्डितश्री अनन्तनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

पंच कल्याणक के ५ अर्घ्य

(लय–श्री वीर महा अति...)

वह पहली कार्तिक कृष्ण, जग में धन्य हुई।
जब गर्भ पधारे आप, विधियाँ रम्य हुई॥
तव सेही का है चिह्न, स्वर्णिम देह रहा।
मैं भक्त बना सो देव, पातक शेष कहाँ॥४३॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं गर्भकल्याणक-मण्डित श्री अनन्तनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

शुभ बारस-कृष्णा जेष्ठ, जन्में तीर्थ अहा।
हम बजा-बजाकर बीन, पूजें अर्घ चढ़ा॥
तुम सर्वयशा के लाल, यश की खान रहे।
हे अनन्त तेरा ध्यान, सुख का दान करे॥४४॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं जन्म-कल्याणक-मण्डित श्री अनन्तनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

तिथि जन्म बनी तब पूज्य, दीक्षा जब धारी।
नम अनन्त को मैं मोक्ष, पाऊँ सुखकारी॥
ले साकेती में जन्म, भ्रमण मिटाया है।
सो लेकर मैंने अर्घ, तुम्हें चढ़ाया है ॥४५॥

१. किन्तु

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं तपःकल्याणक-मण्डित श्री अनन्तनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

वह अमावसी थी चैत्र, केवलज्ञान लिया।
प्रभु समवसरण में बैठ, वृष का दान दिया॥
श्री सर्वश्री थी मुख्य, श्रमणी लाख रही।
जब पूजे तेरे पाद, अघ की राख हुई॥४६॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं ज्ञान-कल्याणक-मण्डित श्री अनन्तनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

तुम खड्गासन से शीघ्र, निज में लीन हुए।
तब तीन लोक के जीव, तव आधीन हुए॥
शुभ बना स्वयंप्रभ कूट, शिव में आप गये।
अब कृपा करो हम देव, शाश्वत धाम रहे॥४७॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं मोक्ष-कल्याणक-मण्डित श्री अनन्तनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

अनन्त चतुष्टय के ४ अर्घ्य

(लय—मुनि सकलव्रती बड़भागी...)

जब ज्ञान सुपंचम पाया, तब त्रिभुवन पद में आया।
यह सुनकर ढोल बजाऊँ, मैं नाचूँ गा हर्षाऊँ॥४८॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं अनंत-ज्ञान-गुणमण्डित श्री अनन्तनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

तुम दर्शन के बन स्वामी, बन गये आप निष्कामी।
मम अनन्त जग के त्राता, भक्तों के भाग्य विधाता॥४९॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं अनंत-दर्शन-गुणमण्डित श्री अनन्तनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

सुख अनन्त तुमने पाया, वह मेरे मन अब भाया।
तुम मोक्षपुरी के राजा, पूजक पावे सुख ताजा॥५०॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं अनंत-सुख-गुणमण्डित श्री अनन्तनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

है वीर्य आपमें चोखा, यह पाकर के शुभ मौका।
हे अनन्त मैं नहिं खोऊँ, तो भव को अब क्यों ढोऊँ॥५१॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं अनंत-वीर्य-गुणमण्डित श्री अनन्तनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

१८ दोष से रहित के १८ अर्घ्य

(छन्द-नरेन्द्र)

(लय–शान्तिनाथ के पद पंकज...)

अनशन आदिक बाह्य तपों से, भूख दोष को रोका।
शुद्धातम का अमृत पीकर, घाति कर्म को शोखा॥
क्षुधा जीतने अनन्त तेरे, पद-पंकज में आऊँ।
पूजा करके कर्म शत्रु से, धोखा अब नहिं खाऊँ ॥५२॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं क्षुधादोष-रहित श्री अनन्तनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

सभी तरह के पेय त्यागकर, पूज्य हुए हो स्वामी।
प्यास मिटाने ऋषिवर भी तो, आते हैं अभिरामी॥
इसीलिए मैं नाच-नाचकर, पूजन करने आऊँ।
पूजा करके कर्म शत्रु से, धोखा अब नहिं खाऊँ॥५३॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं तृषा-दोष-रहित श्री अनन्तनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

ध्यान अग्नि में जल नहिं जाऊँ, यही सोच भय भागा।
तब तो तेरी वाणी सुनकर, सोया जग यह जागा॥
निर्भय होकर जगद्वन्द्य मैं, चरण आपके आऊँ।
पूजा करके कर्म शत्रु से, धोखा अब नहिं खाऊँ ॥५४॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं भय-दोष-रहित श्री अनन्तनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

समता यदि मिट जायेगी तो, द्वेष बढ़ेगा भारी।
साम्य भाव से भरे लबालब, रहते आत्म विहारी॥

शत्रु भाव से बचने निशदिन, महिमा गाने आऊँ।
पूजा करके कर्म शत्रु से, धोखा अब नहिं खाऊँ ॥५५॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं द्वेष-दोष-रहित श्री अनन्तनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

अहंकार ममकार मिटा सो, नहिं होते तुम रागी।
फिर भी चक्री - शक्री तेरे, पद के हो अनुरागी॥
दौड़-दौड़कर पूजन करने, आते मैं भी आऊँ।
पूजा करके कर्म शत्रु से, धोखा अब नहिं खाऊँ ॥५६॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं राग-दोष-रहित श्री अनन्तनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

योग धार कर आतापन का, तन ममता को छोड़ा।
मोह दोष ने अनन्त तुमसे, अपने मन को मोड़ा॥
मोह कर्म को नाश करूँ मैं, भाव सदा ये भाऊँ।
पूजा करके कर्म शत्रु से, धोखा अब नहिं खाऊँ ॥५७॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं मोह-दोष-रहित श्री अनन्तनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

परिजन पुरजन पुत्र-पौत्र को, क्षणभर में ही त्यागा।
तो चिन्ता हो किसकी तुमको, स्नेह हारकर भागा॥
चिन्तामणि सम अनन्त तेरा चिन्तन कर सुख पाऊँ।
पूजा करके कर्म शत्रु से, धोखा अब नहिं खाऊँ ॥५८॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं चिन्तादोषरहित श्री अनन्तनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

जरा वेदना जीत चुके सो, कैसे दुख दे पावे।
गणधर मुनिवर कर्म मिटाने, तेरे पद को ध्यावे॥
दोष मिटाने अनन्त मैं भी, तेरा ध्यान लगाऊँ।
पूजा करके कर्म शत्रु से, धोखा अब नहिं खाऊँ ॥५९॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं जरा-दोष-रहित श्री अनन्तनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

पापी को ही रोग सताते, पुण्य उदय है भारी।
तीर्थंकर बन पाया तुमने, समवसरण सुखकारी॥

कर्म कालिमा पूर्ण मिटाने, और कहीं क्यों जाऊँ।
पूजा करके कर्म शत्रु से, धोखा अब नहिं खाऊँ ॥६0॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं रोग-दोष-रहित श्री अनन्तनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

(लय—शान्तिनाथ के पद पंकज...)

मृत्यु राज को यम पथ भेजा।
तब तो लौट न तुमको देखा॥
मृत्युंजय हो मृत्यु विजेता।
अनन्त रहे शिवमार्ग प्रणेता ॥६१॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं मरणदोषरहित श्री अनन्तनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

स्वेद देह में ही आ सकता।
हुआ दूर वह झट भगवन्ता॥
निराभरण हो निरावरण हो।
पूजूँ मेरा आत्म रमण हो ॥६२॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं स्वेद-दोष-रहित श्री अनन्तनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

कुछ भी पाने की नहिं इच्छा।
तब तो खेद न कभी उपजता॥
समवसरण में चमक रहे हो।
पूजक के घर चमन रहे ओ ॥६३॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं खेद-दोष-रहित श्री अनन्तनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

मोह जयी हो सर्ववन्द्य हो।
सो नहिं मद है सदावन्द्य हो॥
मद मिट जावे नित्य भजूँगा।
अनन्त पद में नित्य रचूँगा ॥६४॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं मद-दोष-रहित श्री अनन्तनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

रति नाशी सो रति करते हम।
नाथ पूज से मिल जावे दम॥

धर्म ध्वजा को तुम फहराते।
तव दर्शन से हम मुस्काते॥६५॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं रति-दोष-रहित श्री अनन्तनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

अचरज मुझको आता है तब।
विस्मय भय से भागा था जब॥
अनन्त तुमको सब भजते हैं।
नहीं भजे तो वे मरते हैं॥६६॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं विस्मयदोषरहित श्री अनन्तनाथजिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

पाँचों निद्रा नहिं आती हैं।
मुझको भी वह नहिं भाती हैं॥
सूरज सम तुम सदा जागते।
तब तो दूषण शीघ्र भागते॥६७॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं निद्रादोषरहित श्री अनन्तनाथजिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

जन्म लिया पर रहे अजन्मा।
मेट दिये हैं पातक फन्दा॥
अनन्त जिन! मैं जन्म न पाऊँ।
तुमको तजकर कहीं न जाऊँ॥६८॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं जन्मदोषरहित श्री अनन्तनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

शोक आप से बहुत दूर जा।
छुपा कहीं वह कानन में जा॥
दर्शन करके चहक गया मन।
अनन्त अर्चा मेटेगी गम॥६९॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं शोकदोषरहित श्री अनन्तनाथजिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

(ज्ञानोदय)

स्वयंसिद्ध हो रहे स्वयं भू, स्वयं कर्म के नाशक हो।
कूट स्वयंप्रभ से तुम स्वामी, बने स्वयं के शासक हो।

नाम रहा है अनन्त तेरा, अनन्तसुख को भोग रहे।
भव्य जीव तव पूजा करके अनन्त दुख को रोक रहे॥७०॥

ॐ ह्रीं स्वयंप्रभ कूटेभ्यो नमः अर्घ्यं...।

जन्म ज्ञान के इन्द्रों द्वारा, किये गये सब अतिशय से।
पूज्य चतुष्टय प्रातिहार्य सुर, वन्दित हो कल्याणक से॥
ऐसे प्रभु श्री अनन्त जिन के, बिम्ब लोक में पूज्य रहे।
तभी आपको सुरनर किन्नर दिव्य द्रव्य से पूज रहे॥७१॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री अनन्तनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

पूर्णार्घ्य

अनन्त तेरी प्रतिमाएँ जो, स्वर्णमयी या रजतमयी।
जहाँ-जहाँ पर रही विराजित, ताम्रमयी पाषाणमयी॥
उन सबको मम शत-शत वन्दन, सहस-सहस अभिवन्दन है।
अर्घ चढ़ाऊँ पूजा करके, मेटूँ भव आक्रन्दन मैं॥७२॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री अनन्तनाथ-जिनेन्द्राय नमः पूर्णार्घ्यं...।

जाप्य—ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री अनन्तनाथ-जिनेन्द्राय नमः।

(९/२७/१०८)

जयमाला

(दोहा)

जयमाला यह श्रेष्ठ है, अनन्त की सुन भ्रात।
पढ़कर जीवन तू गढ़े, तो नहिं पावे गात॥१॥

(ज्ञानोदय)

स्वर्ग छोड़कर गर्भ पधारे, उसके पहले ही सुर ने।
रत्नवृष्टि कर दिखा दिया था, धर्म किया जो जिनवर ने॥
और किमिच्छिक दान दिया था, भूधर ने जो जनक रहा।
अनन्त प्रभु का पुण्यवान वह, अब तक भू पर चमक रहा॥२॥

जिसको जिस-जिस की इच्छा था, और रहा जो आवश्यक।
दिया उसी को वही-वही सो, मिटे सभी के सब पातक॥
इसीलिए तो साकेती में, दरिद्र नहिं था कोई भी।
और बचा नहिं याचक कोई, नहिं करता था चोरी भी॥३॥

माँ के उर में आए तब तो, सब कुछ भू का बदल गया।
स्वर्ग लोक भी उसे देखने, इस धरती पर उतर गया॥
छोड़ा माँ की सेवा करने, छप्पन सुरियों को सुर ने।
सन्निधि पाकर सभी देवियाँ, आनन्दित थी निज उर में ॥४॥

गर्भ विराजे पर न मात की, उदर त्रीवलि भंग हुई।
सुन्दरता में चार चाँद लग, गये मातु वह धन्य हुई॥
नवमहिनों के बाद यदा अवतरण हुआ था माँ के घर।
बजी बधाई नगर-नगर में, ढोल बजे थे ढम-ढम-ढम ॥५॥

अहो अयोध्या की गलियों में, घर-घर में हर आँगन में।
खुशियों का नहिं पार रहा था, अचला पर नभ आँगन में॥
नाच उठे थे सभी, सभी के, मन की कलियाँ मुस्काई।
मिटे सभी-के कष्ट-क्लेश नहिं, आकुलता ही बच पाई॥६॥

सिंहसेन का भाग्य खुला सौभाग्यवान कृतकृत्य हुआ।
पुत्र रत्न को पाया था सो, जीवन उसका सत्य हुआ॥
अनेक विधि के बाजे बजवा, शहनाई भी बजवाई।
घेवर बावर और जलेबी, उसने सबको बटवाई॥७॥

शचिपति शचि के साथ तभी, परिवार लिए भू आया था।
इक क्षण में ही मेरु गिरी पर, ले जाकर नहलाया था।
लाकर फिर माता को सौंपा, उत्तम ताण्डव नृत्य किया।
नयन बनाकर सहसों उसने, अनन्त तेरा दर्श किया ॥८॥

भोग-भोगते एक दिवस जब, देखा उल्कापात यदा।
विरति भाव का बीज उगा था, तेरे उर में पूज्य महा ॥
धन वैभव अरु ग्रन्थ छोड़, निर्ग्रन्थ दिगम्बर दीक्षा ले।
मौन रहे फिर केवल पा वृष, मुनि श्रावक की शिक्षा दे ॥९॥

फिर जा गिरि सम्मेदशिखर पर, निज में निज को लीन किया।
ज्ञान शरीरी बन करके शिव, ललना को आधीन किया॥
तब भी आए देव यहाँ, निर्वाण महोत्सव करने को ।
धर्म धर्म के फल की महिमा, सबके आगे रखने को॥१०॥

भू आकर के नाचे थे वे, बाजे खूब बजाए थे।
मुरली ढोलक ताल मँझीरे, वाद्य साथ में लाए थे॥
क्यों नहिं मैं फिर नाचूँ स्वामी, क्यों नहिं मन में हरषाऊँ।
क्यों नहिं तेरे पद में आकर, मानव भव का फल पाऊँ॥११॥

प्रभो नाचना भी तो मुझको, सही रीति से नहिं आता।
और नहीं मैं जान सका हूँ, तव जीवन की शुभ गाथा॥
इसीलिए तो अक्ष विषय की, पूर्ति हेतु मैं अब तक हा।
रहा नाचता लेकिन फल में, पाया अघ का भार हहा॥१२॥

पैर शक्ति को व्यर्थ गँवाकर, भटक-भटककर भरमाया।
चारों गति के कष्टों में पड़, पछ्ता करके दुख पाया॥
अब तो वृष की महानता को, वृषधारी की गरिमा को।
समझ गया श्री अनन्त तेरे, चरण कमल की महिमा को॥१३॥

सो लगता है अहोरात मैं, केवल तेरे गुण गाऊँ।
खाना-पीना धन-अर्जन को, छोड़ आप में मिल जाऊँ॥
तव चरणों को छोड़ कभी भी, और कहीं मैं नहिं जाऊँ।
करूँ अर्चना विधान पूजा, केवल तुममें रम जाऊँ॥१४॥

नाच-नाचकर सार्थकता कर, इन पैरों को पाने की।
सार्थक कर लूँ जिह्वा को जो, शक्ति मिली है गाने की॥
किन्तु बँधा मैं घरकारा में, ऐसा नहिं कर पाता हूँ।
कोशिश कर करके भी स्वामी, पीछे ही हट जाता हूँ॥१५॥

क्षमा करो प्रभु कृपा करो मैं, आगे ऐसा कर पाऊँ।
तव आशिष से तेरे जैसी, पदवी मैं भी पा जाऊँ॥
समवसरण में अर्द्धशतक जो, गणधर तव गुण गाते थे।
सुप्रभ जैसे हलधर तेरे, पद में शीश झुकाते थे॥१६॥

मुख्य सुगणधर अरिष्ट ने सब, अरिष्ट दल का नाश किया।
उसने भी पा अन्तिम मति को, मुक्ति वधू को पास किया॥
वादी मुनि मुनि ऋद्धीश्वर अरु, अवधिज्ञान के धारी भी।
ज्ञान सुचौथा पाया जिनने, रहते आज्ञाकारी जी॥१७॥

तव डेरे में गन्धकुटी के, साथ केवली आए थे।
सभी जाति के देव सुदानव, सबने तव गुण गाए थे॥
गाय शेर पशु पक्षी आदिक, दिव्य देशना सुनने को।
आकर अपने-अपने कोठे, में बैठे गुण वरने को॥१८॥

अहो आपके गुण की गणना, कर न सके गुरु ज्ञानी भी।
हार मानकर मौनी बनकर, रह जावे सन्नामी भी॥
फिर मैं तो प्रभु बालक जैसा, छोटा सा इक भक्त रहा।
अज्ञानी हूँ अल्पबुद्धि हूँ, पाप कर्म में दक्ष रहा॥१९॥

तो भी तेरे दर्शन से मम, उर में उपजी भक्ति अहा।
वो ही मुझमें तव पूजन की, भर देती है शक्ति महा॥
उसके बल से ही मैं स्वामी, लज्जा तजकर गुण गाऊँ।
सागर की लहरों को गिनकर, आज बताना मैं चाहूँ॥२०॥

बालक जैसे पानी में से, चन्द्र बिम्ब को पाने की।
हठकर करके चाहूँ तेरे, अन्तिम गुण को गाने की!॥
गा नहिं पाऊँ, पा नहिं पाऊँ, अन्त कभी तव गुणगण का।
फिर भी चुप नहिं बैठ सका सो, काम किया यह निजमन का ॥२१॥

कमी रही हो गलती होवे, अनन्त स्वामी क्षमा करो।
गल्ती सुधरे आगे मेरी, मुझमें ऐसी शक्ति भरो॥
यही प्रार्थना करके पूरी, करता हूँ यह जयमाला।
फल में शिव ललना से जल्दी, पहनूँ मैं भी वरमाला॥२२॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री अनन्तनाथ-जिनेन्द्राय नमः जयमाला पूर्णार्घ्यं...।

आशीर्वाद

अनन्त जिन की पूजा को जो, एक बार भी करता है।
अनन्तसुख को पाकर के, वह मुक्ति वधू को वरता है॥

इत्याशीर्वाद परिपुष्पाञ्जलिं क्षिपामि/क्षिपेत्

श्री धर्मनाथ विधान

पीठिका

(दोहा)

पूजा की यह पीठिका, लेकर के आशीष।
धर्म आपकी मैं कहूँ, बनने जग का ईश॥१॥

(ज्ञानोदय)

रहा धातकीखण्ड वहाँ वात्सल्य भाव का पूर अहो।
वत्स देश की गुण महिमा को, कह सकता है कौन कहो॥
उसी देश में सुख से मण्डित, नगर सुसीमा उत्तम था।
दशरथ राजा दाशरथी सम, सब भूपों में सत्तम था॥२॥

पाया था भरपूर बुद्धि बल, और भाग्य भी अच्छा था।
इसीलिए तो सभी मित्र थे, शत्रु नहीं इक बच्चा था॥
मुख्य रहा पुरुषार्थ धर्म का, शेष सभी तो पीछे थे।
न्याय-नीति से कार्य करे सो, लगते सबको अच्छे थे॥३॥

एक दिवस जब चन्द्रग्रहण को, देखा तो सब समझ गये।
भव-भोगों के सुन्दर तन के, प्रति आकर्षण सिमट गये॥
सोचा सोलह कला युक्त इस, शशिकर को भी क्षणभर में।
निगल गया यह कृष्ण राहु सो, कान्ति मिटी है पलभर में॥४॥

चाँदी सा यह चम-चम करता, चन्दा काला आज हुआ।
धवल चन्द्रिका युक्त चन्द्र पर, राहु देव का राज्य हुआ॥
ऐसे ही यह जीवन यौवन, वैभव सम्पद सुत दारा।
क्षणभंगुर है नश्वरतम है, बह जाते ज्यों जल धारा॥५॥

सो तज करके इन सबको मैं करूँ मोक्ष पुरुषार्थ अभी।
कर्म मिटाने दीक्षा ले लूँ, तो नहिं आवे दुःख कभी॥

चिन्तन करके राज्य सौंपकर, ज्येष्ठ पुत्र को निकल गये।
वन कानन में छोड़ परिग्रह, परम शान्ति के निलय हुए ॥६॥

करी तपस्या अनुपम जिससे, सभी ऋद्धियाँ दासी सी।
बनकर आयी तुम्हें पूजने, बनी चरण आवासी थी॥
फिर बाँधा था कर्म सुउत्तम, तीर्थंकर पद कारण है।
और लोक के सभी पदों का कर देता यह वारण है ॥७॥

अन्त समय में स्नेह छोड़कर, मरण किया था पण्डित जो।
जनम मरण के दुःखों को झट, कर देता है खण्डित औ॥
जिसके फल में अन्तिम सुर सर्वार्थसिद्धि में जन्म लिया।
सिन्धु-सिन्धु पर्यंत वहाँ पर, इन्द्रिय सुख में रमण किया ॥८॥

उसे छोड़कर भू आये तो, कुरुवंशी जो तेजस्वी।
भूप रहा श्री भानुराज जो, तेजवान था ओजस्वी॥
उसके घर आ धन्य किया, उन धर्मनाथ जिन पूजा को।
करके चाहूँ फल में स्वामी, काम नहीं कुछ दूजा हो ॥९॥

मेरे जीवन में केवल अब, धर्म आपको तज करके।
नहीं किसी के प्रति आस्था हो, आप चरण को भज करके॥
मैं भी तुम सम सिद्धालय पा शाश्वत सुख को पा जाऊँ।
पूजा करने के फल में फिर, लौट न भव में अब आऊँ॥१०॥

परिपुष्पांजलिं क्षिपामि/क्षिपेत्

विधान प्रारम्भ

स्थापना

(ज्ञानोदय)

धर्म-धर्म के उपदेशक जो, धर्म भाव के पूर रहे।
भव के कारण मिथ्यात्वादिक, भावों से अति दूर रहे॥
रत्नपुरी में जन्मे सम्मेदाचल से भव छोड़ दिया।
तब तो पूजा करने तेरी, हमने सबको जोड़ लिया॥

(दोहा)

आओ-आओ हे प्रभो, त्रिभुवन के शिरताज।
स्थापन करके पूजता, बन जाऊँ शिवराज॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री धर्मनाथ जिनेन्द्र अत्र अवतर-अवतर संवौषट् आह्वाननं! ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री धर्मनाथ जिनेन्द्र अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं! ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री धर्मनाथ जिनेन्द्र अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणं!

अष्टक

(ज्ञानोदय)

स्वर्ण कलश में क्षीर सिन्धु का, जल भर करके लाता हूँ।
जन्म विजेता, जरा विजेता, चरणों आज चढ़ाता हूँ॥
धर्मनाथ तव पूजा करके, मन ही मन हरषाता हूँ।
प्रतिदिन प्रातः पूजा करने, जिन मन्दिर में आता हूँ॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री धर्मनाथ-जिनेन्द्राय नमः जन्म-जरा-मृत्यु-विनाशनाय जलं...।

चर्चा करके, अर्चा करके, चन्दन तुम्हें चढ़ाता हूँ।
ताप मिटे, संताप मिटे सब, यही भावना भाता हूँ॥
धर्मनाथ तव...॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री धर्मनाथजिनेन्द्राय नमः संसारतापविनाशनाय चंदनं...।

चावल धोकर थाली भरकर, भेंट चढ़ाएँ आज तुम्हें।
अक्षयपद की प्राप्ति हेतु अब, श्रेष्ठबुद्धि दो आप हमें॥
धर्मनाथ तव पूजा करके, मन ही मन हरषाता हूँ।
प्रतिदिन प्रातः पूजा करने, जिन मन्दिर में आता हूँ॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री धर्मनाथजिनेन्द्राय नमः अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान्...।

कामविनाशक आत्म प्रकाशक, पुष्प आपको भेंट करूँ।
जीत वासना अक्ष गजों को, मुक्ति रमा से भेंट सकूँ॥
धर्मनाथ तव...॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री धर्मनाथजिनेन्द्राय नमः कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं...।

नैवज नाना विधि के मीठे भर-भर थाली लाया हूँ।
भूख मिटाकर निज रस पीने, चरण चढ़ाने आया हूँ॥
धर्मनाथ तव...॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री धर्मनाथजिनेन्द्राय नमः क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं...।

ज्ञानदीप! हे मार्ग प्रकाशक, मणिमय दीपक ले आया।
ज्ञान ज्योति से अन्धकार अज्ञान मिटाने मैं आया॥
धर्मनाथ तव...॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री धर्मनाथजिनेन्द्राय नमः मोहान्धकारविनाशनाय दीपं...।

द्रव्य मिलाकर खुशबू वाली धूप बनायी मैंने ये।
कर्म जलाने सक्षम होऊँ, आशिष माँगू तुमसे ये॥
धर्मनाथ तव...॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री धर्मनाथ-जिनेन्द्राय नमः अष्टकर्म-दहनाय धूपं...।

दाख चिरौंजी ऐला आदिक फल जो मीठे मनहर हैं।
तुम्हें चढ़ाऊँ शीघ्र मिले प्रभु, फल माना जो श्रीकर है॥
धर्मनाथ तव...॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री धर्मनाथ-जिनेन्द्राय नमः महा-मोक्षफल-प्राप्तये फलं...।

जल अक्षत ले पुष्प सुचन्दन, दीप धूप फल नैवज ले।
अर्घ बनाकर पूजा करता, लौकिक वांछा तजकरके॥
धर्मनाथ तव पूजा करके, मन ही मन हरषाता हूँ।
प्रतिदिन प्रातः पूजा करने, जिन मन्दिर में आता हूँ॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री धर्मनाथ-जिनेन्द्राय नमः अनर्घ-पद-प्राप्तये अर्घ्यं...।

प्रत्येक-अर्घ्य

(दोहा)

अष्टक से पूजा तुम्हें, अब पूजूँ ले अर्घ।
धर्म आपकी अर्चना, से मिलता अपवर्ग॥

इति मण्डलस्योपरिपुष्पाञ्जलिं क्षिपामि/क्षिपेत्...

जन्मातिशय के १० अर्घ्य

(दोहा)

स्वेद रहित तव देह है, गुण हैं तेरे स्निग्ध।
तेरी पूजा से प्रभो, मिट जाते सब विघ्न॥
धर्म पूज्य है लोक में, धर्म रहे सुखकार।
धर्म विनाशक पाप के, धर्म मोक्ष करतार॥१॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं निःस्वेदत्व-जन्मातिशय-गुणधारक श्री धर्मनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

औदारिक वपु आपका, फिर भी निर्मल साफ।
धर्मनाथ तव भक्ति से, पातक होते माफ॥
धर्म आप से ही चले, तीर्थ बने वह धाम।
जिस-जिस भू पर आपके, चरण पड़े निष्काम॥२॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं निर्मलत्व-जन्मातिशय-गुणधारक श्री धर्मनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घं निर्वपामीति स्वाहा...।

श्वेत रक्त कहता अहो, श्वेत बने हैं भाव।
तब तो पायी आपने, मुक्ति पुरी की छाँव॥

रत्नपुरी की शान तुम, सुव्रता के लाल।
भक्त आपका शीघ्र ही, बनता मालामाल॥३॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं क्षीरगौररुधिरत्व-जन्मातिशय-गुणधारक श्री धर्मनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

आभूषण नहिं वस्त्र हैं, नहीं रहा शृंगार।
फिर भी नहिं है आपकी, सुन्दरता का पार॥
भक्त बने यदि धर्म का, क्यों न मिले निज धाम।
रहा असम्भव कौन सा, जो न बनेगा काम॥४॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं सौरूप्य-जन्मातिशय-गुणधारक श्री धर्मनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

खुशबू तेरे देह की, ओहो उपमातीत।
लक्ष्मी का घर वो बने, जो गावे तव गीत॥
बैठे बारह कोष्ठ में, आकर तीनों लोक।
सुनकर वाणी आपकी, तज देते सब शोक॥५॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं सौगन्ध्य-जन्मातिशय-गुणधारक श्री धर्मनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

तन में लक्षण आपके, एक सहस अरु आठ।
शीघ्र मिले तव भक्त को, दुनिया भर का ठाठ॥
सुदत्तवर शुभ कूट जो, शिव पाने का स्थान।
धर्म आपका भक्त ही, कर सकता सुख पान॥६॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं सौलक्षण्य-जन्मातिशय-गुणधारक श्री धर्मनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

सुडोल सुन्दर देह का आकर्षक संस्थान।
तो भी ममता छोड़कर, पहुँचे शाश्वत थान॥
समवसरण में नित्य ही, नमते आ भूपाल।
तब तो उनकी शीघ्र ही, गल जाती है दाल॥७॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं समचतुरस्रसंस्थान-जन्मातिशय-गुणधारक श्री धर्मनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

उत्तम संहनन आपका, अतिशय है विख्यात।
धर्मनाथ हो तीर्थकृत, तुम ही जग के तात ॥
जो चलता है आपके, पथ से बन अनुकूल।
उसकी किस्मत तो कभी, बन न सके प्रतिकूल ॥८॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं वज्रवृषभनाराच-संहनन-जन्मातिशय-गुणधारक श्री धर्मनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

प्रिय बोलो मीठे वचन, सब सुनते तज डाह।
उनको सुनने चित्त में, पुनः उपजती चाह ॥
धर्मनाथ पितु भानु जो, भूपों के भी भूप।
पूजन कर पूजक अहो, बन जाता शिवरूप ॥९॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं प्रियहितवादित्व-जन्मातिशय-गुणधारक श्री धर्मनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

जेता जो षट्खण्ड के, वे हारे तत्काल।
आप शक्ति के सामने, हो जाते वे बाल ॥
रात - दिवस बढ़ता रहे, यदि पद में अनुराग।
उसके मिटता पाप अरु, जनम-मरण का दाग ॥१०॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं अप्रमितवीर्य-जन्मातिशय-गुणधारक श्री धर्मनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

केवलज्ञानातिशय के १० अर्घ्य

(ज्ञानोदय)

सौ योजन तक चारों दिशि जग, खुशियों से भर जाता है।
धर्मनाथ का समवसरण जब, भूमण्डल पर आता है॥
अतिशय केवलज्ञान जनित यह, देख सभी हरषाते हैं।
शिव पाने के लालच में हम, केवल तुमको ध्याते हैं ॥११॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं गव्यूतिशत-चतुष्टय-सुभिक्षत्व-घातिक्षय-जातिशय-गुणधारक श्री धर्मनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

गगनांगन में बिना मार्ग के, सीधे-सीधे जाते हैं।
नहीं भटकते फिर भी कोई, बाधा नहिं दे पाते हैं॥
धर्म-धर्म यह नाम रटूँ मैं, तो क्यों भव भरमाऊँगा।
पाप पंक को धोने स्वामी, तेरे ही गुण गाऊँगा ॥१२॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं गगनगमनत्व-घातिक्षय-जातिशय-गुणधारक श्री धर्मनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

चाहे त्रस या स्थावर कोई, चलता-फिरता प्राणी हो।
बाधा नहिं पा सकता तुमसे, आप रहे सुखदानी सो॥
वज्रदण्ड है चिह्न धर्म का, धर्म भाव से पूर्ण भरे।
भक्ति करे जो भव्य शीघ्र ही, भव बन्धन को चूर्ण करे ॥१३॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं अप्राणिवधत्व-घातिक्षय-जातिशय-गुणधारक श्री धर्मनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

नहीं काम का भोजन पानी, क्षुधा रोग का नाश किया।
धर्म आपके चेतन ने बस, आत्मामृत का पान किया॥
भुक्तिभाव अब शेष नहीं सो, कर्म शत्रु नहिं आयेंगे।
तब तो सबको छोड़ धर्म हम, सुन्दर अर्घ चढ़ायेंगे ॥१४॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं भुक्त्यभाव-घातिक्षय-जातिशय-गुणधारक श्री धर्मनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

विघ्न करे उपसर्ग करे जो, वह केवल पछताएगा।
आकर पद में झुके आपके, यदि तो अति हरषाएगा॥
हम तो तेरे भक्त बने हैं, बने रहेंगे आगे भी।
भक्त बने जो उसके झट से, कर्म शत्रु भी भागे जी ॥१५॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं उपसर्गाभाव-घातिक्षय-जातिशय-गुणधारक श्री धर्मनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

धर्म तीर्थ हैं तीर्थंकर हैं, धर्मनाथ भव त्यागी हैं।
इसीलिए तो तीन लोक यह, बना धर्म अनुरागी है॥
समवसरण में बैठे सबको, एक साथ ही दिखता है।
तव आनन सो क्षणभर में सौभाग्य भव्य का खिलता है ॥१६॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं चतुर्मुखत्व-घातिक्षय-जातिशय-गुणधारक श्री धर्मनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

तीन लोक में जितनी विद्या, जैसी जो भी पाते है।
वे सब मिलकर धर्म आपको, पाकर के हरषाते हैं॥
अतिशय पाया घातिकर्म के, डेरे के उठ जाने से।
हम तो खुश हो अर्घ चढ़ावे, चरण आपके पाने से॥१७॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं सर्वविद्येश्वरत्व-घातिक्षय-जातिशय-गुणधारक श्री धर्मनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

परछाई या छाया पड़ती, औदारिक इस तन की ही।
परमौदारिक देह बना तव, हार हुई जब अघ की जी॥
धर्म आपकी चरण छाँव में, आ पहुँचा मैं आज अभी।
और चढ़ाया अर्घ भक्ति से, तो क्यों हो तकलीफ कभी॥१८॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं अच्छायत्व-घातिक्षय-जातिशय-गुणधारक श्री धर्मनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

नेत्र युगल की पलकें चंचलता को सुन अब छोड़ चुकी।
शक्री-चक्री के मुकुटों की, मणियाँ तब तो आज झुकी॥
ज्ञान प्राप्ति का अतिशय पाकर, धर्म आप कृतकृत्य हुए।
तभी सुरों ने हर्षित होकर, नाना विधि के नृत्य किये॥१९॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं अपक्ष्मस्पन्दत्व-घातिक्षय-जातिशय-गुणधारक श्री धर्मनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

केश रहें या हाथ पैर के, नख भी अब नहिं बढ़ते हैं।
तीर्थंकर पद उदित हुआ सो, दर्शन से अघ घटते हैं॥

धर्म आपकी महिमा गाकर, धन्य भाग हम आज हुए।
पूजा की तो स्वामी मेरे, मनवांछित सब काम हुए॥२०॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं समान-नखकेशत्व-घातिक्षय-जातिशय-गुणधारक श्री धर्मनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

देवकृत अतिशय के १४ अर्घ्य

(लय—श्री वीर महा अतिवीर...)

जब वाणी खिरती देव, हमको धर्म मिले।
सुन हुआ प्रफुल्लित चित्त, सुख के पुष्प खिले॥
तुम आये तज सर्वार्थसिद्धि विमान तभी।
नहिं पुनः लोक में पूज्य, जन्मों आप कभी॥२१॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं सर्वार्धमागधी-भाषा-देवोपनीतातिशय-गुणधारक श्री धर्मनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

मिट जाता वैर विरोध, मैत्री भाव बढ़े।
पा धर्म आपको भव्य, शिव सोपान चढ़े॥
है स्वर्ण वर्ण की देह, सबका मन हरती।
यदि भक्ति करे तो शीघ्र तप का दम भरती॥२२॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं सर्वजनमैत्रीभाव-देवोपनीतातिशय-गुणधारक श्री धर्मनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

सब फल फूलों से वृक्ष, खिलते फलते हैं।
श्री धर्म दरश से मोक्ष, फाटक खुलते हैं॥
तव मघवा चक्री नित्य, पद को भजता था।
सो आकर के षट्खण्ड, वैभव तजता था॥२३॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं सर्वर्तुफलादि-शोभिततरु-परिणाम-देवोपनीतातिशय-गुणधारक श्री धर्मनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

आदर्श सरीखी भूमि, तब ही होती है।
जब धर्म मिले मम चित्त, पाता मोती है॥

हे धर्म आपके पाद, पातक हरते हैं।
सो शिव पाने को भक्त, पद में डटते हैं ॥२४॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं आदर्शतल-प्रतिमा-रत्नमयी-देवोपनीतातिशय-गुणधारक श्री धर्मनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

तब चलती अनुगत वायु, डेरा जब आता।
श्री धर्म जगत में पूज्य, आतम सुख दाता॥
हम बने आपके भक्त, पूजा करके ही।
तिर जावेंगे भव सिन्धु, तुमको भजकर ही॥२५॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं विहरण-मनुगतवायुत्व-देवोपनीतातिशय-गुणधारक श्री धर्मनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

हो सब मन में आनन्द, धर्म समागम से।
तुम रत्नपुरी के चन्द्र, मेटे मातम है॥
मैं नाच-नाचकर आज, तुमको अर्चूंगा।
मैं तजकर सारे काज, पद को पूजूँगा ॥२६॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं सर्वजनपरमानन्दत्व-देवोपनीतातिशय-गुणधारक श्री धर्मनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

हो धूलि शीघ्र उपशान्त, तेरे दर्श मिले।
जब अर्घ चढ़ाया पाद, पातक पूर्ण हिले॥
हे धर्म तुम्हारा नाम, भव का तारक है।
तव पूजा का यह काम, शिव का दायक है ॥२७॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं वायुकुमारोपशमित - धूलि - कण्टकादि-देवोपनीतातिशय-गुणधारक श्री धर्मनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

तब परम सुगन्धित नीर, सुर बरषाते हैं।
हम धर्म आपका योग, पा हरषाते हैं॥
ले अष्ट-द्रव्य का थाल, तुमको भेंट करूँ।
फल में स्वामी मैं शीघ्र, विधि को मेट सकूँ॥२८॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं मेघकुमारकृत-गन्धोदक-वृष्टि-देवोपनीतातिशय-गुणधारक श्री धर्मनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

तुम आ जाओ हे भव्य, प्रभु के पद आओ।
झट कर लो इनकी भक्ति, दुर्गति नहिं पाओ॥
पा अतिशय सुरकृत आप, शिव के पास गये।
सो सुरनर किन्नर शक्र, तेरे दास हुए ॥२९॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं एतैतैति - चतुर्निकायामर - परस्पराह्वानन-देवोपनीतातिशय-गुणधारक श्री धर्मनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

रख देते सरसिज देव, पद के नीचे जी।
जब देखे अतिशय लोग, आवे खींचे जी॥
तव शरण मिली तो धर्म, दुख को क्यों पाऊँ।
अब पूज लिया तो नाथ, क्यों नहिं शिव जाऊँ ॥३०॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं पादन्यासेकृत-पद्मानि-देवोपनीतातिशय-गुणधारक श्री धर्मनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

फल-फूल धान्य से नम्र, तरुवर हो जाते।
जो पूजे चित्त लगाय, दुख को नहिं पाते॥
हे निर्मोही! निर्द्वन्द्व, धर्म सुप्यारे हो।
मैं अर्घ चढ़ाऊँ मृत्यु तेरे द्वारे हो ॥३१॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं फल-भार-नम्र-शालि-देवोपनीतातिशय-गुणधारक श्री धर्मनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

तब शरद काल सम स्वच्छ, दिशियाँ सारी हों।
जब घाति रहित जिनधर्म, शिव सुख क्यारी हो।
मिल गया आपका संग, निर्मल भाव हुए।
तव पूजा से हे धर्म! अघ के पाँव गले ॥३२॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं शरन्-मेघवन्निर्मल-दिग्विभागत्व-देवोपनीतातिशय-गुणधारक श्री धर्मनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

ज्यों सर्दी में आकाश, मल से वर्जित हो।
त्यों धर्म आपका भक्त, सुख से सज्जित हो।
हम हरष-हरषकर देव, पूजा रचवावें।
कृतकृत्य हुए हम आज, मन में मुस्कावें ॥३३॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं शरत्कालवन्निर्मल-गगनत्व-देवोपनीतातिशय-गुणधारक श्री धर्मनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

चतु झग-झग करते चक्र, आगे चलते हैं।
तव पाद-युगल हे धर्म, अघ को दलते हैं॥
हम पूजेंगे दिन-रात मन-वच-काया से।
सो बच जायेंगे धर्म, दुखप्रद माया से ॥३४॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं धर्मचक्र-चतुष्टय-देवोपनीतातिशय-गुणधारक श्री धर्मनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

अष्ट प्रातिहार्य के ८ अर्घ्य

(छन्द-नरेन्द्र)

अशोक बनता वृक्ष वही जो, संगम पावे तेरा।
धर्मनाथ तव स्मरण मात्र से, पुलकित है मन मेरा॥
हे निर्लोभी! हे निर्मानी, मैं न बनूँ अब मानी।
इसी भाव से पूजूँ होवे, पाप कर्म की हानि॥३५॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं अशोकवृक्ष-प्रातिहार्य-धारक श्री धर्मनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

पुष्प बरसते जिनके स्वामी, डण्ठल होते नीचे।
कहते इनको भजने वाले, बन जाते हैं सच्चे॥
धर्म भक्त के बन्धन क्षण में, टूट पड़ेंगे सारे।
फलतः भव में नहिं भटके नहिं, फिरते मारे-मारे॥३६॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं सुरपुष्पवृष्टि-प्रातिहार्य-धारक श्री धर्मनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

घाति कर्म का नाश हुआ सो, चौंसठ चामर ढोरे।
सुर आकर सौभाग्य मानकर, जय-जय जय जय बोले॥
बिहार हो या दिव्य-देशना, प्रातिहार्य यह न्यारा।
धर्म आपके बना रहेगा, अर्घ चढ़ाऊँ प्यारा॥३७॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं चतुःषष्ठि-चामर-प्रातिहार्य-धारक श्री धर्मनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

स्फटिक रत्न से भी अतिनिर्मल, भामण्डल यह तेरा।
बना तभी तो अनन्तसुख ने, आकर डाला डेरा॥
धर्म आपकी चरण धूल को, जो भी शीश चढ़ावे।
मेरु सरीखी बाधाएँ भी, मिट्टी में मिल जावे ॥३८॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं भामण्डल-प्रातिहार्य-धारक श्री धर्मनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

श्रुतिप्रिय दुन्दुभि बाजे नभ में, बजते मीठे-मीठे।
बतलाते प्रभु अर्चा से ही, पाप कर्म सब रूठे।
धर्म लोक में कौन रहा है, जो तुमको नहिं पूजे।
कौन रहा जो बिना अर्चना, भव बन्धन से छूटे ॥३९॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं दुन्दुभि-प्रातिहार्य-धारक श्री धर्मनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

रत्न सुनिर्मित छत्रों में जो, लटक रहे हैं मोती।
और जड़े हैं हीरे जिनसे, फीकी है सुर ज्योति॥
त्रय योगों से भक्ति करें तो, छत्रत्रय को पावे।
धर्मनाथ सम तीन लोक में, वो भी पूजा जावे ॥४०॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं छत्रत्रय-प्रातिहार्य-धारक श्री धर्मनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

खिरती है ओंकारमयी जो दिव्यध्वनि प्रभु तेरी।
जिसको सुनकर अब तक सोयी जगी चेतना मेरी॥

चक्रवर्ति बलभद्र इन्द्र से, पूजित त्रिभुवन स्वामी।
भक्त धर्म का शीघ्र बनेगा, भव्यों में सन्नामी ॥४१॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं दिव्यध्वनि-प्रातिहार्य-धारक श्री धर्मनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

सिंहासन यह प्रातिहार्य है, धर्मनाथ गुणधारी।
पाप-ताप सन्ताप न बचते, आ जाती सुख बारी॥
शत इन्द्रों से पूज्य आपको, पूजे जो भी प्राणी।
उसको निश्चित आप चरण की भक्ति बने वरदानी ॥४२॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं सिंहासन-प्रातिहार्य-धारक श्री धर्मनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

पंचकल्याणक के ५ अर्घ्य

(लय–मुनि सकल व्रती...)

वैशाख माह की धवला, जब तेरस आयी सबला।
तुम माता के उर आए, सुर किन्नर अर्घ चढ़ाए॥४३॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं गर्भकल्याणक-मण्डित श्री धर्मनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

जो माघ शुक्ल की आयी, वह तेरस सबको भायी।
प्रभु धर्मनाथ को पाया, त्रयलोक पूजने आया ॥४४॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं जन्म-कल्याणक-मण्डित श्री धर्मनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

जो जन्म समय की बेला, ली दीक्षा करके तेला।
नृप धन्यसेन बन दानी, बन गया धर्म की शानी॥४५॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं तपःकल्याणकमण्डित श्री धर्मनाथजिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

वह पौष अन्त थी शुक्ला, पा केवलज्ञान सुउजला।
फिर समवसरण को पाया, अरु भू पर वृष बरसाया ॥४६॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं ज्ञान-कल्याणक-मण्डित श्री धर्मनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

शुभ चौथ जेठ की आयी, तब मुक्ति रमा हरषायी।
जय धर्म आपकी बोलूँ, मैं शिव के पट को खोलूँ॥४७॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं निर्वाण-कल्याणक-मण्डित श्री धर्मनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

अनन्त चतुष्टय के ४ अर्घ्य

अनन्त भव का नाश किया सो, अनन्त धी को पाया।
ज्ञानावरणी नहीं बचा है, आत्मा निज में आया॥
धन्य हुए हैं धर्म धर्म की, ध्वजा आप फहराओ।
इसीलिए हे भक्तो इनको, अर्घ चढ़ाने आओ ॥४८॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं अनंतज्ञानगुणमण्डित श्री धर्मनाथजिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

दर्शन का आवरणी अब तो, लौट नहीं आ पावे।
तब तो तेरा अनन्त दर्शन, सबके मन को भावे॥
ललक जगी है मुझमें भी अब, अनन्त दर्शन पाऊँ।
नाच-नाचकर इसीलिए मैं, तव पद अर्घ चढ़ाऊँ ॥४९॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं अनंतदर्शनगुणमण्डित श्री धर्मनाथजिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

अमितकाल का दुःख दर्द जो, पूर्ण आपने नाशा।
फल में पाया अनन्तसुख प्रभु, नहीं बची अब आशा॥
धर्म आपका स्मरण करे तो, मरण कहाँ बच पावे।
तीन लोक के जीव तभी तो, पूजा करने आवे॥५०॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं अनंतसुखगुणमण्डित श्री धर्मनाथजिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

अनन्त बल को पाया सो नहिं, अघातिया टिक पाये।
वे भी डेरा ले अब भागे, मुक्ति वधू आ जावे॥
रत्नपुरी के गौरव को जो, रत्न चढ़ाकर पूजे।
रत्नों सा ही चमक उठे वह, भव में नहिं फिर जूझे॥५१॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं अनंत-वीर्य-गुणमण्डित श्री धर्मनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

१८ दोष से रहित के १८ अर्घ्य

(लय–कहाँ गये चक्री...)

खाद्य स्वाद्य को लेह्य आदि को, तुम नहिं खाते हो।
पहली संज्ञा पूर्ण मिटी सो, भव नहिं पाते हो॥
धर्म हमारी भूख मिटे यह, अरजी करते हैं।
अर्घ चढ़ाकर क्षुधा हेतु को, हम भी हरते हैं ॥५२॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं क्षुधा-दोष-रहित श्री धर्मनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

शीत - उष्ण या खट्टा-मीठा, पेय न पीते हो।
प्यास सताती नहीं तुम्हें सो, निज में जीते हो॥
मिटा सकूँ मैं शीघ्र पिपासा, आशा ले आया।
भक्त बना मैं अर्घ चढ़ाने, थाली भर लाया ॥५३॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं तृषा-दोष-रहित श्री धर्मनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

भय लगता है वपुषा से यदि, ममता होती है।
भय के जेता बिना आपके, जनता रोती है॥
धर्म धर्म तव नाम रटे तो, भय क्यों आवेगा।
बनने को निर्भीक भक्त यह, अर्घ चढ़ायेगा ॥५४॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं भय-दोष-रहित श्री धर्मनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

खटिया कर दी खड़ी द्वेष की, सो नहिं देखेगा।
धर्म आपको वो तो अपनी रोटी सेंकेगा॥
द्वेष गया सो द्वेषी के भी, उर में राग जगा।
अर्घ चढ़ाकर उसने तुमको, माना निकट सखा ॥५५॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं द्वेष-दोष-रहित श्री धर्मनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

आग सरीखा समझ राग को, भू लुढ़काया है।
वीतराग छवि देख लोक यह, पद में आया है॥
ढम-ढम-ढम-ढम ढोल बजाकर, अर्घ चढ़ाता हूँ।
प्रातः उठकर धर्म आपके, पद में आता हूँ ॥५६॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं राग-दोष-रहित श्री धर्मनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

हेय रहा क्या उपादेय क्या, समझ न पाता हूँ।
सवार चिंता मन पर है सो, मैं भरमाता हूँ॥
धर्मनाथ जिन चिंता तुमको, छू नहिं पाएगीं।
तभी पूज्य मम जिह्वा तेरी, महिमा गाएगी ॥५७॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं मोह-दोष-रहित श्री धर्मनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

वैभव सारा क्षणभर में ही छोड़ा ऐसे ज्यों।
सड़े गले इक तिनके को तज, देता मानव त्यों॥
मोह छोड़कर निर्मोही बन, निज में लीन हुए।
पूजा करके धर्म चरण में, हम तल्लीन हुए ॥५८॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं चिन्ता-दोष-रहित श्री धर्मनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

जरा सतावे उसको जो भी, पापी होता है।
पाप रहित का अर्चन मेरे, अघ को धोता है॥
सोलहवानी सोने जैसा, वर्ण आपका है।
पूजूँ जग में केवल तेरा, मार्ग काम का है ॥५९॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं जरादोषरहित श्री धर्मनाथजिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

रोम-रोम में पीड़ादायक, रोग सताता है।
रोग दोष के नाशक से ही, मेरा नाता है॥
धन्य भूप ने भोजन देकर, जीवन सार्थ किया।
अर्घ चढ़ाकर मैंने भी प्रभु, तेरा नाम लिया ॥६०॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं रोग-दोष-रहित श्री धर्मनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

जो मरता है इस जग में वह, जन्म सुलेता है।
लेकिन तेरा मरण अलौकिक, जन्म न देता है॥
इसीलिए तो सिद्ध शिला पर, धर्म विराजेंगे।
मोक्ष हुआ यह सुनकर हम तो, अर्घ चढ़ायेंगे ॥६१॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं मरण-दोष-रहित श्री धर्मनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

जिससे आता स्वेद हेतु अब, मुड़कर देखे ना।
धर्म आपका भक्त तभी तो, अघ को फेंकेगा॥
स्वेद दोष के शत्रु आपके, रिपुता रोष नहीं।
पूजूँ-पूजूँ धर्म मैत्री के, तुम तो कोष सही ॥६२॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं स्वेद-दोष-रहित श्री धर्मनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

जड़े खोदकर खेदभाव को, पूर्ण मिटाया है।
पूजा करके भक्त गणों ने, पाप घटाया है॥
धर्म आपको देख चित्त की, कलियाँ खिल आई।
इसीलिए तो अर्घ चढ़ाकर, जनता हरषाई॥६३॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं खेद-दोष-रहित श्री धर्मनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

स्वर्ग लोक में भेज दिये जो, कारण मद के थे।
मद क्यों छावे फिर आतम पर, रहते निज में हैं॥
मद के नाशक धर्म आपकी, पूजा करने का।
भाव बना सुख सागर में से, गागर भरने का॥६४॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं मद-दोष-रहित श्री धर्मनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

नहीं बचा है अरति भाव सो, रति भी क्यों आवे।
तब तो रति पूर्वक हम स्वामी, तेरे गुण गावे॥
धर्मनाथ का नाम रटे तो, मिटते अघ सारे।
नाच-नाचकर पूजन करने, आवे भवि प्यारे॥६५॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं रति-दोष-रहित श्री धर्मनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

विस्मयकारी बात वही जो नूतन कोई हो।
सब दिखता सो तव चेतनता, निज में खोई ओ॥
अहो रत्नपुर तीन लोक में, तब तो महक उठा।
संगम पाकर धर्म हमारा, मन भी चहक उठा॥६६॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं विस्मय-दोष-रहित श्री धर्मनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

निद्रा का यदि जोर बढ़े तो, धर्म न भाता है।
गाफिल सा हो निज आतम को, हाय भुलाता है॥
आत्म हितैषी आत्म कार्य में, तुम तो जाग रहे।
तभी धर्म की पूजा में मम जागा राग अरे॥६७॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं निद्रा-दोष-रहित श्री धर्मनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

जन्म लिया है माँ के उर से, किन्तु अजन्मा हो।
धर्मनाथ तुम इस धरती पर, सत्य महात्मा हो॥
जन्म मिटाने मेरा मन भी, अब तैयार हुआ।
अर्घ चढ़ाकर फलतः मम भवसागर पार हुआ॥६८॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं जन्म-दोष-रहित श्री धर्मनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

भोग कार्य का शौक रहे तो, शोक न मिटता है।
शौक बढ़े यदि प्रभु के प्रति तो, शोक सिसकता है॥
अहो धर्म के शौक शोक ये, दोनों नाश हुए।
पूजूँ तब तो चरण आपके, शिव के पास हुए ॥६९॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं शोक-दोष-रहित श्री धर्मनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

(ज्ञानोदय)

सुदत्तवर शुभ कूट रहा जो, श्रेष्ठ सुवांछित वर देता।
इसकी पूजा करने वाला, मुक्ति वधू को वर लेता॥
धर्मनाथ ने इसी धरा पर, अघ का सत्यानाश किया।
और सुनो शिव ललना को भी, अमितकाल तक पास किया ॥७०॥

ॐ ह्रीं सम्मेदशिखरस्थित सुदत्तवर कूटेभ्यो नमः अर्घ्यं...।

जहाँ कहीं भी धर्म धुरन्धर, धर्मनाथ की धर्ममयी।
स्थापित हैं जिन प्रतिमाएँ जो, अद्‌भुत अनुपम सौख्यमयी॥
वज्रदण्ड का चिह्न वज्रसम, मिथ्यातम का नाश करे।
भव्य दर्श पा अर्घ चढ़ाकर, शिव रमणी को पास करे॥७१॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री धर्मनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

पूर्णार्घ्य

(घत्ता)

हे धर्म सुधाकर, पाप सुखाकर, शिव के नायक आप बने।
भव दुःख मिटाकर, निज में आकर, आत्मिकसुख में आप रमे॥
तुम बन्ध तोड़कर, चित्त जोड़कर, मुक्ति वधू से युक्त हुए।
हम तुमको पाकर, अर्घ चढ़ाकर, सब दुःखों से रिक्त हुए ॥७२॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री धर्मनाथ-जिनेन्द्राय नमः पूर्णार्घ्यं...।

जाप्य—ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री धर्मनाथ-जिनेन्द्राय नमः।

(९/२७/१०८)

जयमाला

(दोहा)

धर्म आपकी माल यह, करती मालामाल।
और पाप को नाशकर, मेटे भव का जाल॥१॥

(ज्ञानोदय)

नीलम पन्ना हीरे-मोती, रत्न बहुत बरषाये थे।
कुबेर ने तब रत्नपुरी में, जन-जन सब हरषाये थे॥
नाम रत्नपुर सार्थ हुआ जब धर्मनाथ ने जन्म लिया।
इस धरती पर धर्मवृष्टि कर, सबका जीवन रम्य किया ॥२॥

धन्य हुई वह धरा धन्य वह, मात-पिता परिवार हुआ।
दर्शमात्र से भव्य जनों का, भव से बेड़ा पार हुआ॥
जननी ने ओ जन्म समय से, सुव्रत के संस्कार दिये।
तब तो उनने सब जीवों के, सुख देने के काम किये॥३॥

सत्यदत्त था राजा जिसने, प्रभु से सहसों प्रश्न किये।
उत्तर पाकर सभासदों ने, अपने पातक व्यर्थ किये॥

सेन आदि थे गणधर तैंतालीस आपके चरणों में।
चञ्चरीक बन धर्मामृत को, पीते थे द्वय कर्णों से॥४॥

राजा पाटलिपुत्र देश का, धन्यसेन था नाम अहो।
ऐषण देकर उस ही भव में, पाया निज का धाम अहो॥
मुनिवर चौंसठ सहस रहे जो, मधुकर सम आसक्त हुए।
पाद-पद्म की पराग पीकर, धर्ममार्ग में दक्ष हुए॥५॥

सत्य परायण सत्यदत्त बन श्रोता वृष को पीकर के।
तृप्त हुआ था समवसरण में, आप चरण में जीकर के॥
धर्म आपकी पूजा करने, तीन लोक के जीव सभी।
तत्पर रहते नम्रनीत हो, नहिं करते थे मान कभी॥६॥

देवेन्द्रों से, नागेन्द्रों से, सूर्य-चन्द्र से शचिपति से।
पूज्य रहे तुम यमधरपति से, सुर इन्द्रों से सुरपति से॥
दया सिन्धु हे पाप प्रणाशक!, ज्ञान नेत्र से जान रहे।
अनन्तसुख से तृप्त हुए तुम, भव्यों के वरदान कहे॥७॥

महाबन्धु हो, सौख्य सिन्धु हो, ममता के भण्डार रहे।
धर्म आपके जीवन को ही, जीने का आधार कहें॥
गणधर आदिक महामना भी, मुकुलित होकर नमते हैं।
हस्त युगल को सिर पर रखकर, तव चरणों में झुकते हैं॥८॥

धर्म आपने समवसरण में, सुरनर किन्नर पशुओं को।
शिव पथ चलने वृष बतलाया, स्वर्ग लोक की वधुओं को॥
मुनिवर्यों को गणधर गुरु को, श्रमणी गण को श्रावक को।
तथा श्राविका आदिक को भी, सुख का पथ सब मानव को॥९॥

धर्म सुना तो पापी जन भी, पापों से भयभीत हुए।
विरत भाव से व्रत धारणकर, वे भी तब अघरीत हुए॥

मैं भी आया आप चरण में, मुझको भी अब पार करो।
दया करो हे धर्मनाथ जी, मेरा अब उद्धार करो॥१०॥

आप बिना हे प्रभो लोक में, कौन रहा भव तारक है।
जो बतलाकर सच्चे पथ को, पाप कर्म का हारक है॥
त्रस्त हुआ मैं हार गया हूँ, जन्म-मरण से भव दुख से।
सो आया हूँ तेरे द्वारे, क्योंकि आपमें शिवसुख है॥११॥

दर्शन से विश्वास हुआ अब मैं भी भव से छूटूँगा।
तव पद में तल्लीन हुआ मैं, पाप कर्म से रूठूँगा॥
तो फिर क्यों नहिं शिव पाऊँगा, क्यों नहिं शाश्वत धाम मिले।
धर्म आपकी शरण मिली तो, क्यों नहिं अब विश्राम मिले॥१२॥

इसी भाव से हे स्वामी मैं, दिवस - रात तव पद आऊँ।
छम-छम-छम-छम नाचूँ-गाऊँ, चरण युगल में नम जाऊँ॥
बजा-बजाकर शहनाई मैं, वीणा वादन आज करूँ।
ढम-ढम-ढम-ढम ढोल बजाऊँ, कर से मैं करताल करूँ॥१३॥

झूम-झूमकर आप भक्ति में, भूल गया मैं सब कुछ ही।
खाना-पीना सोना-हँसना, याद न आता अब कुछ भी॥
आप पिता है माता भी तुम, भाई दादा काका भी।
धर्म आप है मित्र सुबान्धव, आप रहे मम मामा जी॥१४॥

तुम ही मेरे परम हितैषी, परमोत्तम तुम बन्धु रहे।
सुख-दुख बेला में सहयोगी, शान्ति प्रदायक इन्दु रहे॥
अहो आप ही भव तारक है, अघ संहारक आप रहे।
शरणोत्तम तुम परमोत्तम तुम, मंगलकारक आप कहे॥१५॥

अतः प्रभो मैं सभी जनों को, घर-घर से झट बुलवाकर।
भक्ति करूँ मैं पूजा रचवा, महा-महोत्सव रचवाकर ॥

हर्षित होकर कोटि-कोटिशः, हाथ जोड़कर नमन करूँ ।
तव आशिष से इन्द्रिय दल को, वश में करके दमन करूँ ॥१६॥

तेरे गुण को गाने में प्रभु, बृहस्पति श्रुतसागर का।
अधिपति वह भी मौन हुआ जो, समवसरण का नागर था॥
फिर स्वामी मैं कैसे तेरे, गुण की महिमा गा पाऊँ।
अतः पूर्ण कर जयमाला यह, आप चरण में सिर नाऊँ॥१७॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री धर्मनाथ-जिनेन्द्राय नमः जयमाला पूर्णार्घ्यं...।

आशीर्वाद

(ज्ञानोदय)

धर्मनाथ की धर्ममयी जो, पूजा निशदिन करता है।
शक्री-चक्री का वैभव पा, शिव ललना को वरता है॥

इत्याशीर्वादः परिपुष्पाञ्जलिं क्षिपामि/क्षिपेत्।

श्री शान्तिनाथ विधान

पीठिका

कामदेव चक्रेश हैं, तीर्थंकर श्री देव।
शान्तिनाथ की स्तुति करूँ, मेरी नैय्या खेव॥

(ज्ञानोदय)

अमिततेज नृप एक बार निज, शत्रु वर्ग से लड़ने को।
जाता था वह प्राण हरण कर, विजयमाल ही वरने को॥
शत्रु अचानक विजयप्रभु के, समवसरण में पहुँच गया।
दर्शन करके तीर्थंकर के, वैर भाव सब सिमट गया ॥१॥
अमिततेज ने प्रभु की वाणी, सुनकर मिथ्यातम नाशा।
सम्यक् पाकर अनन्त भव को, चुल्लू भर बस कर डाला॥
एक बार फिर भाग्य खुला सो, अमरसिन्धु का दरश किया।
पाकर के उपदेश धर्म का, महाव्रतों को ग्रहण किया ॥२॥
और मरण संन्यास किया जो, सोलह दिवि में जा उपजा।
आकर के बलभद्र हुआ सो, नारायण में मन उलझा॥
नारायण की मृत्यु हुई तो, शव में भी जब राग बढ़ा।
मुनिवर से सम्बोधन पाकर, तत्क्षण उससे राग घटा ॥३॥
दीक्षा लेकर स्वर्ग गये फिर, आ करके नृप क्षेमंकर।
तीर्थंकर के पुत्र आपका, वज्रायुध था नाम अमर॥
चक्रवर्ति थे पुण्यवान थे, षट्खण्डों के अधिपति थे।
नव निधियाँ थी चौदह रत्नों, के स्वामी थे सन्मति थे ॥४॥
स्वर्ग लोक के इन्द्रों ने भी, इनकी सम्यक् श्रद्धा की।
करी प्रशंसा बार-बार तो, सबने उनकी शंसा की॥
लेकिन आकर एक देव ने, करी परीक्षा जब इनकी।
लेश मात्र भी च्युत न हुए तो, सत्य मान ली थी सबही ॥५॥

फिर वे कुछ ही दिन में अपने, पूज्य पिता से दीक्षा ले।
बाहुबली की भाँति खड़े हो, तप तपने की शिक्षा दे ॥
सहा घोर उपसर्ग देवकृत, ग्रैवेयक में इन्द्र हुए।
प्रवीचार से रहित हुए पर, सर्व सुखों के पूर हुए ॥६॥
आकर घनरथ तीर्थंकर के, मान्य मेघरथ पुत्र हुए।
अवधिज्ञान था भेदज्ञान था, जिनशासन के सूत्र हुए ॥
देवों ने आ इस भव में भी, करी परीक्षा करुणा की।
परम अहिंसा धर्म बताकर, अहो कबूतर रक्षा की ॥७॥
श्रावक व्रत को पालन करते, ध्यान लीन थे सुनो तभी।
सुरियों ने आ ब्रह्मचर्य को, हर लेने की कोशिश की ॥
नहीं डिगे थे परम ब्रह्म से, शीलवान थे साहस था।
फिर दीक्षा ले जनक पाद में, पाया समकित क्षायिक था ॥८॥
तीर्थंकर पद का आस्रव कर, स्वर्ग गये फिर आकर के।
ऐरादेवी विश्वसेन के, घर जन्मे सुख पाकर के॥
आहा जिनने भवों भवों में, भव को मूल मिटाने की।
उपसर्गों में परीषहों में, धैर्य आत्मबल पाने की ॥९॥
करी साधना सफल हुआ अब, उनका शिव पुरुषार्थ यहाँ।
गुणसागर के गुण गाने की, मैंने पायी शक्ति कहाँ ॥
फिर भी चुप हो कैसे बैठूँ, भक्ति लहर उर उठ आई।
पूजा रचने विधान सुंदर, बुद्धि कहाँ से उड़ आई ॥१०॥

(दोहा)

शान्तिनाथ के गुण अहो, रहे अनन्तानन्त।
सुरगुरु भी गाने लगे, तो नहिं पावे अन्त ॥

इति परिपुष्पाञ्जलिं क्षिपामि/क्षिपेत्

विधान प्रारम्भ

स्थापना

(ज्ञानोदय)

तीर्थंकर श्री शान्तिनाथ जो, प्रातिहार्य से शोभित हैं।
समवसरण में बारह-गण के, मन को करते मोहित हैं ॥
सुर-नर मुनिगण भाँति-भाँति के, स्तोत्रों से गुण गाते हैं।
दर्शन करके जीव असंख्यों, सम्यग्दर्शन पाते हैं ॥

त्रय पद धारक उन ही प्रभु का, आह्वानन हम करते हैं।
सन्निधि थापन करके स्वामी, चरणों में शिर धरते हैं ॥
सहस-सहस मम भाग्य जगे हैं, पूजन करना भाया है।
पाद-पद्म पा लगा आप सम, पद ही मैंने पाया है ॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री शान्तिनाथ जिनेन्द्र अत्र अवतर अवतर संवौषट् इति आह्वाननं! ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री शान्तिनाथ जिनेन्द्र अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं! ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री शान्तिनाथ जिनेन्द्र अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणं!

अष्टक

(लय—जहाँ डाल डाल पर...)

चेतन झारी में हे स्वामी! ज्ञान पयस भर लाया।
जन्म -जरा-मृत्यु रोग मिटाने, कल्मष धोने आया ॥
मैं पूजन करने आया।
तीर्थंकर श्री शान्तिनाथ की पूजन करने आया।
मैं पूजन करने आया ॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री शान्तिनाथ-जिनेन्द्राय नमः जन्म-जरा-मृत्यु-विनाशनाय जलं...।

जन्म ताप से घबराया सो, चन्दन घिस कर लाया।
आप चरण की छत्र-छाँव में, ताप मिटाने आया॥
मैं पूजन करने आया।
तीर्थंकर श्री शान्तिनाथ की, पूजन करने आया।
मैं पूजन करने आया॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री शान्तिनाथ-जिनेन्द्राय नमः संसार-ताप-विनाशनाय चंदनं...।

क्षत-विक्षत उपयोग रहा सो, निज स्वरूप नहिं पाया।
अक्षत आत्म सुवै-भव पाने, अक्षत आज चढ़ाया॥
मैं पूजन करने आया। तीर्थंकर श्री शान्तिनाथ...॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री शान्तिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अक्षय-पद-प्राप्तये अक्षतान्...।

कामदेव हे कामविजेता, पुष्प चढ़ाने आया।
व्यथित हुआ मैं कामबाण से, उसे मिटाने आया॥
मैं पूजन करने आया। तीर्थंकर श्री शान्तिनाथ...॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री शान्तिनाथ-जिनेन्द्राय नमः कामबाण-विध्वंसनाय पुष्पं...।

भोजन पाने पागल सा बन, दर-दर पर भटकाया।
ज्ञानामृतमय भोजन पाने, नैवज चरण चढ़ाया॥
मैं पूजन करने आया। तीर्थंकर श्री शान्तिनाथ...॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री शान्तिनाथ-जिनेन्द्राय नमः क्षुधारोग-विनाशनाय नैवेद्यं...।

मिथ्यातम के अंधकार से, चारों गति भरमाया।
ज्ञान-दीप से मोह मिटाने, दीपक लेकर आया॥
मैं पूजन करने आया। तीर्थंकर श्री शान्तिनाथ...॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री शान्तिनाथ-जिनेन्द्राय नमः मोहान्धकार-विनाशनाय दीपं...।

क्रोध अग्नि में जलकर हा! हा! आत्मबोध नहिं पाया।
धूप चढ़ाने के मिस स्वामी, कर्म जलाने आया॥
मैं पूजन करने आया।
तीर्थंकर श्री शान्तिनाथ की, पूजन करने आया।
मैं पूजन करने आया॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री शान्तिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अष्टकर्म-दहनाय धूपं...।

काजू किसमिस लौकिक फल से, विरतिभाव मन भाया।
मोक्ष महाफल पाने प्रभुवर, मेरा मन ललचाया॥
मैं पूजन करने आया। तीर्थंकर श्री शान्तिनाथ...॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री शान्तिनाथ-जिनेन्द्राय नमः मोक्षफल-प्राप्तये फलं...।

जल से फल तक सभी द्रव्य को, आज मिलाकर लाया।
आप नाम को सुना तभी से, मम आतम हरषाया॥
मैं पूजन करने आया। तीर्थंकर श्री शान्तिनाथ...॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री शान्तिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अनर्घ-पद-प्राप्तये अर्घ्यं...।

प्रत्येक-अर्घ्य

(दोहा)

पूजा आठों द्रव्य से, अब पूजूँ दे अर्घ।
शान्ति मिले सब जीव को, मिट जावे दुख दर्द॥

इति मण्डलस्योपरिपुष्पाञ्जलिं क्षिपामि/क्षिपेत्।

जन्मातिशय के १० अर्घ्य

(ज्ञानोदय)

औदारिक है देह आपका, फिर भी स्वेद न आता है।
स्वेदरहितता अतिशयधारी, आप नाम मन भाता है॥

शान्तिनाथजी-शान्तिनाथजी, शान्तिनाथ जो नित्य रटे।
पाप कर्म की घनी घटायें, सारी उसकी शीघ्र छटे ॥१॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं निःस्वेदत्व-जन्मातिशय-गुणधारक श्री शान्तिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

खाते पीते लेकिन तन में, मूत्र नहीं नहिं मल बनता।
निर्मलता यह जन्मजात है, भक्ति करे तो भव टलता ॥
शिखि की वाणी सुनकर जैसे, भागे विषधर नाग सभी।
शान्तिनाथ की भक्ति करे नहिं, आ पावे शनि साँप कभी ॥२॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं निर्मलत्व-जन्मातिशय-गुणधारक श्री शान्तिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

श्वेत रक्त है आप देह में, विस्मित मेरा देख जिया।
तभी इन्द्र ने क्षीरोदधि के, जल से तव अभिषेक किया ॥
क्लेश भाव की, पापकर्म की, आग लगी हो चेतन में।
शान्तिनाथ का कीर्तन पानी, उसे बुझावे क्षण भर में ॥३॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं क्षीर-गौररुधिरत्व-जन्मातिशय-गुणधारक श्री शान्तिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

लज्जित था वह इन्द्रराज भी, देख आपकी सुन्दरता।
तब तो चरणों की सेवा में, आ दिखलाई तत्परता॥
शान्तिनाथमय नागदमनियाँ, पास रहेगी जिस घर के।
राहुग्रहमय काले विषधर, आ न सकेंगे उस घर में ॥४॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं समचतुरस्र संस्थान जन्मातिशय गुणधारक श्री शान्तिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

सहज सलौनी देह आपकी, सबको विस्मय उपजावे।
विस्मित नहिं हो मद ना करते, तब तो भव तज शिव पावे ॥
शान्तिनाथ के भक्त तुम्हारे, ऐरावत सम पाप भगे।
शेर सामने खड़ा दिखे तो, हाथी भी क्या वार करे ॥५॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं सौरूप्य-जन्मातिशय-गुणधारक श्री शान्तिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

वज्रों से भी कठोर शक्ति पर, कोमलता अति भारी है।
उत्तम संहनन अतिशयधारी, महिमा जग में न्यारी है॥
शान्तिनाथ की भक्ति करे तो, वज्रों से भी कठिन रहे।
पाप कर्म भी कठोरता तज, मंद बनेंगे त्वरित अरे ॥६॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं वज्रवृषभनाराच-संहनन-जन्मातिशय-गुणधारक श्री शान्तिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

सुगन्ध देही जग की सारी, खुशबू वाली चीजें भी।
दुर्गन्धित सी लगे प्रभो तो, भवि क्यों उनमें रीझे जी॥
सूर्य उदय से जैसे तम भी, भाग खड़ा हो क्षण भर में।
शान्तिनाथ की भक्ति हृदय हो, दुख भागेंगे पल भर में ॥७॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं सौगन्ध्य-जन्मातिशय-गुणधारक श्री शान्तिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

मीन साथिया कमल आदि जो, श्रेष्ठ-श्रेष्ठ शुभ चिह्न रहे।
आप देह में शोभ रहे है, अतिशय सबसे भिन्न अरे।
पाप शत्रु आ वार करे तो, आप भक्तिमय तलघर में।
यदि छुप जावे आपद-विपदा, कैसे आवे जीवन में ॥८॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं सौलक्षण्य-जन्मातिशय-गुणधारक श्री शान्तिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

तुलना कैसे किससे होवे, आप वीर्य की इस जग में।
तभी हिला था मेरुगिरी जब, शंका उपजी सुर मन में॥
शान्तिनाथ की अर्चामय यदि, नौका का अवलम्बन ले।
दुःख शोकमय महासिन्धु को, पार करेंगे निश्चित वे ॥९॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं अप्रमितवीर्य-जन्मातिशय-गुणधारक श्री शान्तिनाथ-जिनेन्द्राय अर्हं नमः अर्घ्यं...।

कभी किसी से कुछ भी बोले, हितप्रद होंगे प्रिय होंगे।
आप वचन हे नाथ! लोक में, दुख मेटेंगे श्रिय देंगे॥
वज्रपात से जैसे पर्वत, चूर-चूर हो जाते हैं।
शान्तिनाथ की पूजा से सब, पाप दूर हो जाते हैं ॥१०॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं प्रिय-हित-वादित्व-जन्मातिशय-गुणधारक श्री शान्तिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

केवलज्ञानातिशय के १० अर्घ्य

(चौपाई)

ईति भीति से अनावृष्टि से, भूमि दूर हो दुष्ट वृष्टि से।
चार घातिया कर्म घात से, अतिशय पाया शान्तिनाथ ने ॥११॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं गव्यूतिशत चतुष्टय सुभिक्षत्व घातिक्षय जातिशय गुणधारक श्री शान्तिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

नभ तल में ही आप चलेंगे, धरती को ना स्पर्श करेंगे।
आधि - व्याधि संताप मिटेंगे, शान्तिनाथ के चरण पड़ेंगे ॥१२॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं गगनगमनत्व-घातिक्षय-जातिशय-गुणधारक श्री शान्तिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

क्षुधा-तृषा का नाम मिटा है, आत्मामृत का पान बढ़ा है।
शान्तिनाथ का चेला बन जा, शान्ति मिलेगी निज को पा जा ॥१३॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं भुक्त्यभाव-घातिक्षय-जातिशय-गुणधारक श्री शान्तिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

प्राणघात नहिं होता तन से, प्राणदान ही पाते तुमसे।
शान्तिनाथ त्रिभुवन के स्वामी, पूजें बनने निज के स्वामी ॥१४॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं अप्राणिवधत्व-घातिक्षय-जातिशय-गुणधारक श्री शान्तिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

बाधा कोई देने आवे, तुमको लखकर गुण ही गावे।
शान्तिप्रभुजी शान्त हुए हैं, भवसागर से पार हुए हैं ॥१५॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं उपसर्गाभाव-घातिक्षय-जातिशय-गुणधारक श्री

शान्तिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

चारों दिशि में आनन दिखता, ऐसा अतिशय किसको मिलता।
तीर्थंकर ही पा सकते हैं, स्मरण मात्र से अघ हरते हैं ॥१६॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं चतुर्मुखत्व-घातिक्षय-जातिशय गुणधारक श्री शान्तिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

इह पर लौकिक सब विद्याएँ, चेरी बनकर तुम पद आए।
लीन रहेंगे शान्तिनाथ में, बन जायेंगे शान्तिनाथ वे॥१७॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं सर्वविद्येश्वरत्व-घातिक्षय-जातिशय-गुणधारक श्री शान्तिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

छाया प्रभु की नहीं पड़ेगी, अघ की कालिख शीघ्र हटेगी।
शान्तिनाथ को जो पूजेगा, रोग-शोक से पूर्ण बचेगा ॥१८॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं अच्छायत्व घातिक्षय-जातिशय गुणधारक श्री शान्तिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

पलकें किंचित नहीं झपकती, इच्छा आकर नहीं फटकती।
निश्चलता को पाऊँ मैं भी, शान्तिनाथ के चरणों में ही ॥१९॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं अपक्ष्मस्पंदत्व घातिक्षय-जातिशय गुणधारक श्री शान्तिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

घातिकर्म का मूल मिटा है, केवलज्ञान सुप्रकट हुआ है।
तब तो बाल न नख बढ़ते हैं, भक्त बने तो भव घटते हैं ॥२०॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं समान-नख-केशत्व-घातिक्षय-जातिशय-गुणधारक श्री शान्तिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

देवकृत अतिशय के १४ अर्घ्य

(लय—शांतिनाथ के पद पंकज...)

मागध सुर आ आप देशना, बहुत दूर फैलावे।
जिसको सुनकर सुरनर तिर्यग्, अपने उर बैठावे॥
शान्तिनाथ की पूजा मय जो, कुल्हाड़ी को लेवे।
कर्म वृक्ष को काट शीघ्र ही, मोक्ष महल में सोहे ॥२१॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं सर्वार्धमागधी-भाषा-देवोपनीतातिशय-गुणधारक श्री शान्तिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

भवों-भवों के वैरी भी आ, वैर भाव को भूले।
शान्तिनाथ के दर्श करे तो, भव में क्यों वह झूले॥
अतिशय करते देव सुआकर, सब जीवों में मैत्री।
केवल तुमको मिल सकता है, आप रहे गत मैत्री ॥२२॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं सर्वजन-मैत्री-भाव-देवोपनीतातिशय-गुणधारक श्री शान्तिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

आम जामफल कदलीफल भी, एक साथ फल जावे।
समवसरण जब शान्तिनाथ का, इस धरती पर आवे॥
इसी भाँति से आप भक्त को, सरस्वती अरु लक्ष्मी।
आकर के वर लेती जल्दी, बिना बुलाये सच्ची ॥२३॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं सर्वर्तुफलादि-शोभित तरुपरिणाम देवोपनीताशय गुणधारक श्री शान्तिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

दर्पण जैसी निर्मल उज्ज्वल, धरती मन को भावे।
सौम्य शान्त छवि देख प्रभु की, चेतन मम हरषावे॥
शान्तिनाथ की चरण धूल को, अपने शीश चढ़ावे।
भाव बनेंगे मोक्षमार्ग के, आकुलता मिट जावे ॥२४॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं आदर्शतल-प्रतिमारत्नमयी-देवोपनीतातिशय-गुणधारक श्री शान्तिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

वायु चलेगी सुखदायी ही, आप जहाँ पर जावे।
सबके मन आनन्दित होवे, चरण शरण में आवे॥
जो भी पूजे पादपद्म को, सौख्य शान्ति को पावे।
शान्तिनाथ का स्मरण करे तो, दरिद्रता मिट जावे ॥२५॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं विहरण-मनुगत-वायुत्व-देवोपनीतातिशय-गुणधारक श्री शान्तिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

सर्व लोक आनन्द भाव से, भर जावे हे स्वामी।
आप पधारो वहाँ सभी को, सुख मिलता है नामी॥
शान्तिनाथ का भक्त लोक में, सब दुख से बच जावे।
चक्रवर्ति के स्वर्ग लोक के, सुख पा फिर शिव पावे॥२६॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं सर्वजन-परमानन्दत्व-देवोपनीतातिशय-गुणधारक श्री शान्तिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

काँटे कंकड़ धूल रहित भू समतल करते पूरी।
वायु जाति के देव अहो! जब, आते हैं अघचूरी॥
शान्तिनाथ का बने पुजारी, काँटों जैसे वैरी।
मित्र बनेंगे वैर तजेंगे, बजे कीर्ति की भैरी॥२७॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं वायुकुमारोपशमित - धूलि - कंटकादि-देवोपनीतातिशय-गुणधारक श्री शान्तिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

मेघ जाति के देव सुउज्ज्वल, मिष्ट सुगन्धित पानी।
मन्द-मन्द बरसाते कहते, आये हैं सुखखानी॥
शान्तिनाथ के धर्मामृत में, स्नान करो हे प्राणी।
कष्ट मिटेंगे पुण्य बढ़ेंगे, पावे शिव रजधानी॥२८॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं मेघकुमारकृत-गन्धोदकवृष्टि-देवोपनीतातिशय-गुणधारक श्री शान्तिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

चरण कमल के नीचे स्वर्णिम, कमल देव रचवावे।
छूते नहिं है लेकिन प्रभु तो, ऊपर से ही जावे॥
शान्तिनाथ का भक्त शीघ्र ही, लक्ष्मी का बन स्वामी।
मोक्ष रमा को वर लेता है, हो जावे जगनामी॥२९॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं पादन्यासे कृत पद्मानि देवोपनीतातिशय-गुणधारक श्री शान्तिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

धान्य आदि जब पक जाते तो झुक-झुक कर यों कहते।
त्रिभुवनपति ये आये आओ, इनसे ही सुख फलते॥

भाग्यवान जो शान्तिनाथ के, चरणों आ हरषावे।
व्यन्तर ज्योतिष नहीं सतावे, सौख्य लहर लहरावे ॥३०॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं फलभार-नम्रशालि-देवोपनीतातिशय-गुणधारक श्री शान्तिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

मेघ दलों की नहीं गर्जना, नहिं विद्युत भी चमके।
नभतल ऐसा लगता मानो, स्फटिक रत्न ही दमके॥
ऐसा ही हो निर्मल जीवन, शान्तिनाथ को ध्यायें।
चरण धूल को शीश चढ़ावे, बाधा सब मिट जायें ॥३१॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं शरत्कालवन्निर्मल-गगनत्व-देवोपनीतातिशय-गुणधारक श्री शान्तिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

मधुर नाद में ढोल नगाड़े, बज उठते हैं सारे।
श्रवण युगल में अमृत घोले, सुनते हो सुख सारे॥
शान्तिनाथ के जो गुण गावे, लोक प्रतिष्ठा पावे।
दर्शन कर ले एक बार तो, फिर न कभी घर जावे ॥३२॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं एतैतैति - चतुर्निकायामर - परस्पराह्वानन-देवोपनीतातिशय-गुणधारक श्री शान्तिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

समवसरण जब आता प्रभु का, दिशियाँ निर्मल होती।
जो भी पाता दर्शन उसकी, विधियाँ पलटे खोटी ॥
शान्तिनाथ की करे अर्चना, पुण्य बढ़ेगा भारी।
पूर्व पाप सब मिट जावेंगे, छा जावे खुशहाली ॥३३॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं शरन्-मेघवन्निर्मल-दिग्विभागत्व-देवोपनीतातिशय-गुणधारक श्री शान्तिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

हीरा मोती पन्ना की भी, काँति पड़ेगी छोटी[१]।
धर्मचक्र जब दिखे सामने, विधि न बचेगी खोटी ॥
भज लेगा जो शान्तिनाथ को, धर्मचक्र को पावे।
सौ इन्द्रों से पूजा जावे, तीर्थंकर कहलावे ॥३४॥

---
१. मन्द

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं धर्मचक्रचतुष्टय-देवोपनीतातिशय-गुणधारक श्री शान्तिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

अष्ट प्रातिहार्य के ८ अर्घ्य

(दोहा)

चतु अंगुल ऊपर रहो, सिंहासन से आप।
देख-देखकर तृप्ति का, नहीं रहा है माप ॥
बजरंगगढ़ में आय कर, नाच-नाचकर आज।
जो पूजेगा शान्ति को, अघ हो जावें साफ ॥३५॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं सिंहासन-प्रातिहार्य-धारक श्री शान्तिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

झालर घण्टा बांसुरी, बाजे ढम-ढम ढोल।
नाद सुना तो काम सब, तज कर आया दौड़ ॥
सीरोंजी में आय कर, गा गाकर संगीत।
शान्तिनाथ को पूज ले, मिट जावे अघरीत ॥३६॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं दुन्दुभि-प्रातिहार्य-धारक श्री शान्तिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

पत्र फलों से पुष्प से, लदा हुआ जो वृक्ष।
अशोक वह जहँ बैठते, धार्मिक जन अध्यक्ष ॥
इषुवारा में शान्ति जो, वीतराग सर्वज्ञ।
कामदेव हैं काम को, नाश बने मर्मज्ञ ॥३७॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं अशोक-वृक्ष-प्रातिहार्य-धारक श्री शान्तिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

चौंसठ चामर चरण में, झुककर ऊपर जाय।
कहते पूजो पाद युग, नीची गति टल जाय ॥
भोजपुरी में शान्ति को, शत-शत करूँ प्रणाम।
पूजा का फल अब मिले, बचे न भव का नाम ॥३८॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं चतुःषष्ठि-चामर-प्रातिहार्य-धारक श्री शान्तिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

भामण्डल के सामने, सूर्य प्रभा घट जाय।
कोटि चाँद की चाँदनी, फीकी ही पड़ जाय॥
हरदा नगरी में रहे, शान्तिनाथ चक्रेश।
भाव भक्ति से जो भजे, पाप न बचते शेष ॥३९॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं भामण्डल-प्रातिहार्य-धारक श्री शान्तिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

छाया पावे आपके, चरण छत्र की नाथ।
तीन छत्र यह कह रहे, सौख्य रहेगा साथ॥
ऐरानन्दन देव की, पूजा है सुख रूप।
शान्तिनगर के शान्ति का, पूजक हो शिवभूप ॥४०॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं छत्रत्रय-प्रातिहार्य-धारक श्री शान्तिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

अपने-अपने चित्त में, जो-जो संशय होय।
दिव्यध्वनि में हे प्रभो, नहीं बचेगा कोय॥
पजनारी के जो रहे, कामदेव तीर्थेश।
इनकी पूजा जो करे, बन जाये सर्वेश ॥४१॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं दिव्यध्वनि-प्रातिहार्य-धारक श्री शान्तिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

कल्पवृक्ष के स्वर्ग के, रंग बिरंगे फूल।
बरस कहे रे पूज ले, नहीं बचेंगे शूल॥
बीनाबारह क्षेत्र पर, खड्गासन शान्तीश।
शरण आपके चरण की, ले लो हो जगदीश ॥४२॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं सुरपुष्पवृष्टि-प्रातिहार्यधारक श्री शान्तिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

पंचकल्याणक के ५ अर्घ्य

(लय—अति पुण्य उदय...)

है हस्तिनागपुर प्यारा, जहँ विश्वसेन नृप न्यारा।
ऐरा सुधर्म अनुरागी, जब स्वप्न देखकर जागी॥
जागी सुसपने देख माता, उठी प्रातः शयन से।
जाने सुफल तो लगा देखा, आज प्रभु को नयन से॥
तब गर्भ आये शान्ति स्वामी, इन्द्र ने उत्सव किया।
माता-पिता को पूजकर, सम्मान देकर सुख लिया॥
नौ मास तक आ देवियाँ माँ, के बहाने आपकी।
सेवा सुकरके पुण्य पाकर, कमी करती पाप की॥४३॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं स्वर्गावतरण-गर्भकल्याणक-मण्डित श्री शान्तिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

जो विश्वसेन के नन्दन, उन शान्तिनाथ को वन्दन।
जब जन्मे ऐरा आँगन, तब बजे सुरीले वादन॥
बज उठे सुवादन ढोल ढम ढम, शंख भेरी बाँसुरी।
सुन देव दानव मनुज नारी, भक्ति करते मनभरी।
वह जेष्ठ कृष्णा चौदशी भी, धवल उज्ज्वल हो उठी॥
प्रभु दर्श करके आपके, अज्ञान महिमा मम हटी।
वो भाग्यशाली पुण्य उसका, खिल गया था हे प्रभो॥
जिसने किया कल्याण दूजा, पा गया सब सुख विभो॥४४॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं जन्म-कल्याणक-मण्डित श्री शान्तिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

जब जन्म दिवस शुभ आया, वैराग्य चित्त में आया।
तब लौकान्तिक सुर आये, यह कल्याणक मन भाया॥
मन भा गया कल्याण मेरे, उग्र-उग्र तप देखकर।
कृतकृत्य मेरा मन हुआ है, आप चरणों बैठकर॥

मैं क्या बताऊँ नाथ मुझको, आ गया आनन्द जो।
वो कह न सकता इन्द्र गुरु भी, भर गया उर नन्द जो ॥
मैं आप पद में अर्घ देकर, छम छमाछम नाचता।
अब आपके चरणों बिना नहिं और कुछ भी भावता ॥४५॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं तपः कल्याणक-मण्डित श्री शान्तिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

जब आप आपमें पागे, तब चार घातिया भागे।
प्रभु केवलज्ञान सुपाया, तब सुर नर शीश नमाया ॥
सुर शक्र राजा चक्रवर्ती, शीश रखते चरण में।
पा इन्द्र आज्ञा धनद ने आ, सिर नमा त्रय करण से ॥
फिर सभामण्डप रच स्वयं के, धन्य माने जनम को।
कृतकृत्य सा बन शान्तिप्रभु से,पा लिया था धरम को ॥
मैं ज्ञानकल्याणक मनाने, आप पद में आ गया।
मानो लगा मैं आज ही वा! मुक्ति वैभव पा गया ॥४६॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं ज्ञान-कल्याणक-मण्डित श्री शान्तिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

तुम मोक्ष सदन के स्वामी, हे मुक्ति रमा जगनामी।
तुम सिद्धशिला पर राजो, मम पाप करम को नाशो ॥
मम पाप सारे नाश स्वामी, सिद्धि भार्या दीजिए।
हो दोष मेरे नष्ट ऐसी, कृपा मुझ पर कीजिए ॥
थी कर्म की जो शेष सत्ता, ध्यान चौथा जब किया।
डेरा उठाकर स्वयं उसने, झट पलायन तब किया॥
हे शान्ति प्रभुजी जन्म के दिन, विदा जग से हो गये।
मैंने सुना तो हर्ष से सब, रोम मेरे खिल गये ॥४७॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं मोक्ष-कल्याणक-मण्डित श्री शान्तिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

अनन्त चतुष्टयों के ४ अर्घ्य

(दोहा)

अन्तरहित है अमित है, ज्ञान आपका शान्ति।
जानो जग के द्रव्य पर, नहीं रही मन क्रांति ॥
शान्तिनाथ का नाम ही, शीघ्र मेटता ताप।
भक्ति करें तो कौन-सा, नहीं मिटें संताप ॥४८॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं अनन्त-ज्ञान-गुणधारक श्री शान्तिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

शान्तिनाथ का दर्श गुण, अन्तर्चित आलोक।
चार घातिया नाश कर, पाया है गत शोक ॥
सोलहवें तीर्थेश को, जो पूजे तज काम।
लौकिक कारज सब बने, फिर पावे शिवधाम ॥४९॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं अनन्त-दर्शन-गुणधारक श्री शान्तिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

कितना कैसा सुख रहा, तुलना उपमातीत।
शान्तिनाथ अरहंत ने, पाया बाधातीत ॥
तीर्थंकर चक्रेश जो, कामदेव की मूर्ति।
तीनों संध्या में जजे, हो जावे सुखपूर्ति ॥५०॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं अनन्त-सुख-गुणधारक श्री शान्तिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

अतुल शक्ति को पा लिया, शान्तिनाथ ने जीत।
विषय वासना मोह को, गाकर अपने गीत ॥
त्रयपद धारक देव ये, त्रय रोगों को नाश।
तीनों गुण को पा बने, तीन लोक के नाथ ॥५१॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं अनन्त-वीर्य-गुणधारक श्री शान्तिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

१८ दोष से रहित १८ अर्घ्य

(लय–कहाँ गये चक्री...)

भूख न लगती इच्छा भी नहिं, कुछ भी खाने की।
मोह नहीं सो नहीं प्रयोजन, नैवज पाने की ॥
आकांक्षा मिट जावे मेरी, अरजी है स्वामी।
क्षुधा रोग के जेता तुमको, नमते शिवगामी ॥५२॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं क्षुधादोषरहित श्री शान्तिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

ठंडाई से शीतल पानों से नहिं मतलब है।
देह नेह नहिं बचा तभी तो, आप न गफलत में ॥
प्यास न लगती आत्मिक रस को, पीकर तुष्ट हुए।
पूजन करके शान्तिनाथजी, हम संतुष्ट हुए॥५३॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं तृषादोषरहित श्री शान्तिनाथजिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

कुछ कम एक कोटि पूर्व तक, देह न जर-जर हो।
जरा दोष यह फटक न सकता, चाहे नर तन हो ॥
उसका कारण कर्म रहा जो, नाश हुआ सारा।
शान्तिनाथ की पूजा से तो, मिटता अघ काला ॥५४॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं जरा-दोष-रहित श्री शान्तिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

उदीरणा हो पाप कर्म की, तो ही रोगी हो।
रोग उसी को होगा जग में, होगा भोगी जो ॥
रोग दोष का मूल नाश कर, स्वस्थ हुए स्वामी।
शान्तिनाथ का भक्त लोक में, होगा शिवगामी ॥५५॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं रोग-दोष-रहित श्री शान्तिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

आयु कर्म का बन्ध करे तो, अगले भव में जा।
जन्मेगा यदि बंध न हो तो, निश्चित शिव होगा॥
त्रय पद धारक शान्तिनाथ ने, मरण रोग नाशा।
तभी शिवालय में जा करके, पाया सुख खासा ॥५६॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं मरणदोषरहित श्री शान्तिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

बाह्य वस्तु से प्रीति बढ़े तो, उनकी रक्षा का।
भय लगता है संसारी को, देह सुरक्षा का॥
प्रीति नहीं है भय कषाय भी, बच नहिं पाई है।
तभी पूजने शान्तिनाथ को, जनता आई है ॥५७॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं भय-दोष-रहित श्री शान्तिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

जिसको अब तक देख न पाया, उसको देखे तो।
अचरज होगा आप सभी, प्रत्यक्ष देखते हो ॥
दोष नहीं है विस्मय तुममें, शान्तिनाथ स्वामी।
तुम सम बनने अर्घ चढ़ाऊँ, नमकर जग नामी ॥५८॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं विस्मयदोषरहित श्री शान्तिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

अक्ष चित्त को भाता जो भी, उसमें राग करे।
इन्द्रिय मन से रहित आपको, कैसे राग वरे ॥
शान्तिनाथ में रति कषाय का, नाम न शेष बचा।
पूजक के अब पाप नाम भी, ना अवशेष बचा ॥५९॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं रति-दोष-रहित श्री शान्तिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

राग आग भी आप भक्त को, जला न पावेगी।
राग करे जो आप चरण में, समता आवेगी॥
राग दोष यह सपने में भी, झाँक न पायेगा।
शान्तिनाथ को अर्घ चढ़ाओ, पाप न आयेगा ॥६०॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं राग-दोष-रहित श्री शान्तिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

वैर भाव जो दुखदाई है, सोच यही नाशा।
शान्तिनाथ ने अपने में रम, पाया निज वासा॥
क्षमा भाव संतोष भाव से, द्वेष मिटाया है।
इसीलिए तो तीन लोक ने, अर्घ चढ़ाया है ॥६१॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं द्वेष-दोष-रहित श्री शान्तिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

निद्रा में यह गाफिल सा हो, धर्म कर्म छूटे।
आप निरन्तर जागृत रहते, आतम क्यों छूटे॥
शान्तिनाथ के चरण कमल में, अर्घ चढ़ावे जो।
मुनि बन करके मोक्षमहल में, कदम बढ़ावे वो ॥६२॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं निद्रादोषरहित श्री शान्तिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

चिन्तित चीजें आप चरण की, सेवा से मिलती।
पूजा कर ले तेरी तो प्रभु, चिन्ता सब मिटती॥
शान्तिनाथ को चिन्ता नागिन, कैसे काटेगी।
आप भक्त को वह भी आकर, सुख ही बाँटेगी ॥६३॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं चिन्तादोषरहित श्री शान्तिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

परमौदारिक देह आपका, प्यारा लगता है।
सप्त धातु अरुस्वेद रहित, पर मन को हरता है॥
शान्तिनाथ के दर्शन से ही, कल्मष धुल जाते।
अर्घ चढ़ा दे आकर के तो, भव को नहिं पाते ॥६४॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं स्वेद-दोष-रहित श्री शान्तिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

मान हानि हो जावे यदि तो, खेद खिन्न होता।
करे प्रशंसा कोई तो हा! पाप बीज बोता ॥
शान्तिनाथ जी खेद भाव से, दूर रहेंगे जी।
पूजा कर ले घर में सुख के, पूर भरेंगे जी ॥६५॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं खेद-दोष-रहित श्री शान्तिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

इष्ट वस्तु का वियोग होवे, शोक बरसता है।
मन भावन को प्राप्त करे तो, साहस बढ़ता है॥
शान्तिनाथ की पूजा में जो, नाचे गावेगा।
दर्शन कर ले तो क्या उसको, कोई भावेगा ॥६६॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं शोक-दोष-रहित श्री शान्तिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

अहंकार में फूल गया जो, भव में डूबेगा।
मद ना छोड़ेगा तो हा! हा!!, वृष से ऊबेगा॥
शान्तिनाथ की आराधन से, भवसागर सूखे।
मद नाशक की पूजा से ही, पाप पंक सूखे ॥६७॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं मद-दोष-रहित श्री शान्तिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

मदिरा पीकर पागल होता, मूर्च्छित होता है।
ऐसे ही यह मोह वशी हो, विवेक खोता है ॥
मोह फँसा है शान्तिनाथ के, चंगुल आ करके।
पूजा कर ले सुख पायेगा, शिव में जा करके ॥६८॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं मोह-दोष-रहित श्री शान्तिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

ऐरा माँ के आँगन में आ, जन्में तुम स्वामी।
पुनः नहीं तुम जन्मोगे, सो जन्म रहित नामी॥
शान्तिनाथजी सिद्धशिला पर, जाकर जन्मेंगे।
तभी भव्य जन अमितकाल तक, इनको पूजेंगे॥६९॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं जन्मदोषरहित श्री शान्तिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

(ज्ञानोदय)

चक्रवर्ति होकर भी तुमने, चक्कर उसका छोड़ दिया।
कामदेव होकर भी ओहो, काम भाव को तोड़ दिया॥
तीर्थंकर बन करके स्वामी, समवसरण से दूर हुए।
शान्तिनाथ प्रभु शान्तिप्रभ से, शिव में जा सुख पूर हुए ॥

(दोहा)

कुन्दप्रभ से शान्ति ने, पूर्ण किया सब काम।
दोनों को मैं अर्घ दूँ, चाहूँ निज का धाम॥७०॥

ॐ ह्रीं कुन्दप्रभकूटेभ्यो नमः अर्घ्यं ...।

जल में थल में विद्याधर के, गृह गाँवों में नगरों में।
गुफा कन्दरा गर्भगृहों में, गिरि पर्वत के शिखरों में ॥

जहाँ कहीं भी खड्गासन से, पद्मासन से शोभित है।
शान्तिनाथ प्रतिबिम्ब सभी में, चित्त हमारा मोहित है ॥
उन सबको मैं हाथ जोड़कर, सिर पर रखकर मन वच से।
काया से भी करूँ वन्दना, मिट जावे मम अघतम ये॥
और अर्घ ले सबके चरणों, भक्तिभाव से भेंट करूँ।
फल में स्वामी कर्म शान्त कर, शिव ललना से भेंट सकूँ ॥७१॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री शान्तिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

पूर्णार्घ्य

(घत्ता)

हे शान्ति जिनेशा, तुम चक्रेशा, कामदेव का पद पाया।
तुमने जग छोड़ा, मन को मोड़ा, विषय भोग से निज ध्याया॥
मैं भव से बचने, शिव में रचने, तव चरणों में आया हूँ।
ये अर्घ सुलेकर, पद में देकर, पूजा करने आया हूँ ॥७२॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री शान्तिनाथ-जिनेन्द्राय अर्हं नमः पूर्णार्घ्यं...।

जाप्य मंत्र

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री शान्तिनाथ-जिनेन्द्राय नमः।

ॐ ह्रीं जगच्छान्तिकराय श्री शान्तिनाथ-जिनेन्द्राय नमः।

(९/२७/१०८ बार जाप करें)

जयमाला

(दोहा)

शान्तिनाथ भगवान की, गुणमाला सुखकेतु।
भक्तिभाव से मैं कहूँ, शान्ति करन के हेतु॥१॥

(ज्ञानोदय)

नगर हस्तिनापुर है न्यारा, शान्तिनाथ ने जन्म लिया।
विश्वसेन पितु ऐरा माँ की, गोदी को कृतकृत्य किया॥
यहीं हुए थे त्रय कल्याणक, जन - जन के हितकारक हैं।
चौथा नंद्यावर्त वृक्ष के, नीचे जो सुखदायक है ॥२॥

चक्रायुध जो लघु भ्राता ने, गणधर पद को पाया था।
पंचम सम्मेदाचल गिरि पर, पंचम गति को पाया था॥
दर्पण में निज रूप देखकर, एक वृद्ध इक यौवन का।
भरा चित्त वैराग्य भाव से, रस न बचा था जीवन का ॥३॥

षट् खण्डों को कोटि अठारह, घोड़ों को झट छोड़ दिया।
सहस छियानव रानी गज लख, चौरासी मुख मोड़ दिया॥
सोलह वर्षों के तप ने ही, चार घातिया सोख लिये।
जिससे केवलज्ञान सुपाया, बन्धन सारे रोक दिये ॥४॥

सहस रहे चौबीस शतक नौ, वर्ष चुरासी ऊपर वा।
दिव्य देशना देकर हमको, पहुँचे मोक्षमहल में जा ॥
शान्तिनाथ के बाद सदा ही, धर्म रहा यह शाश्वत है।
इसीलिए तो पूजा करते, हम सब प्रभु की अब तक है ॥५॥

इक किन्नर ने मथुरा में आ, व्याधि विषम जब फैलाई।
दुख से पीड़ित होकर हा! हा!! जनता सारी भरमाई ॥
उपाय करके राजा ने भी, हिम्मत अपनी जब हारी।
तभी सुनो इक सुमति सेठ ने, युक्ति पूछकर दुखहारी ॥६॥

पूजा की थी शान्तिनाथ की, सोलह दिन तक भक्ति बढ़ा।
व्याधि मिटी थी क्लेश मिटा था, वृद्ध हुआ था हर्ष महा॥

अप्पा साहब वर्धमान जी, मंत्री के सह आये थे।
रामटेक में मंत्री ने जब, जिन दर्शन नहिं पाये थे ॥७॥

भोजन त्यागा सो राजा ने, खोज कराई जिनवर की।
पता लगा जब घनी झाड़ियाँ, ढके हुए हैं प्रभुवर जी ॥
मंत्री ने झट शान्तिनाथ को, निकाल दर्शन पाये थे।
मंदिर बनवा महामहोत्सव, यहाँ बहुत करवाये थे ॥८॥

सपना आया एक व्यक्ति को, देख खेत में जा करके।
भूगत है श्री शान्तिनाथजी, निकाल उनको पा करके॥
उसने उठकर सुबह-सुबह ही, हाथ कुदाली ले करके।
पहुँच खेत पर खोदा तो वा! बिम्ब देख खुश हो करके ॥९॥

लगा उठाने प्रतिमा को तो, हिला नहीं वह पाया था।
मात्र देखता रहा बिम्ब को, विस्मय ही मन आया था॥
लौट नगर में उसने सबको, पूरी बात बताई थी।
सब जन पहुँचे लेकिन प्रज्ञा, काम नहीं कर पाई थी॥१०॥

सबने मिलकर कोशिश की पर, प्रभु तो टस से मस न हुए।
वाणी आई नभ से तब हे, भव्यो क्यों तुम विकल हुए॥
कच्चा धागा लाकर प्रतिमा, शीघ्र उठाओ आप सभी।
उठ जायेंगे शान्ति प्रभु पर, छू ना लेना भूल कभी॥११॥

श्रावक जन ने बिम्ब निकाला, दर्श कराये जन - जन को।
बिना परिश्रम गगन मार्ग से, चला बिम्ब क्यों अचरज हो॥
रुका पनागर के बाहर आ, मंदिर सबने बनवाया।
अद्यावधि भी शान्तिनाथ के, दर्शन कर मन हरषाया ॥१२॥

क्षेत्र पनागर के स्वामी श्री, शान्तिनाथ का प्यारा ये।
कहा गया इतिहास लोक में, अतिशय इनका न्यारा है॥

क्षेत्र बहोरीबन्द जहाँ श्री, शान्तिनाथ खड्गासन है।
अतिशय युत है सौम्य शान्त है, मूर्ति बड़ी आकर्षक है ॥१३॥

एक बार औरंगजेब ने, टाँकी ले इस प्रतिमा को।
खण्डित करना चाहा लेकिन दुग्धधार ने प्रतिभा को ॥
प्रकट किया था, पूज्य प्रभु की, नृप बेचारा हार गया।
मधुमक्खी के झुण्डों ने भी, उसको हा! बेहाल किया ॥१४॥

इषुवारा के जिनमंदिर पर, भारी विद्युत्-पात हुआ।
शान्तिनाथ का कुछ ना बिगड़ा, नहीं किसी को ताप हुआ ॥
धर्मी था इक सेठ बारहा, नगरी से नित जाता था।
बीना में भी बंजी करके, फल में धन भी पाता था ॥१५॥

इक पत्थर से ठोकर लगती, रोज-रोज जब उसको तो।
सपना आया तुझको ठोकर, लगती जाकर उसही को ॥
खोद शान्ति प्रभु तुझे मिलेंगे, दर्शन पाकर आनन्द से।
स्थापित करके मंदिर बनवा, हो जावेगा नन्दन में ॥१६॥

जब ले जावे भूल कभी भी, पीछे मुड़कर देख नहीं।
तीन दिवस तक खोदा तब तो, सपना निकला सही-सही ॥
सोलहवें श्री तीर्थंकर की, प्रतिमा उसने पाई थी।
दर्शन करके भूरी-भूरी, महिमा उसने गाई थी ॥१७॥

लाते - लाते कौतुक वश हो, पीछे को जब देख लिया।
सो बीना में मंदिर बनवा, अपना मस्तक टेक दिया ॥
आदि-आदि है कई जगह पर, शान्तिनाथ के जैसे जो।
चमत्कार कहने की ताकत, मुझ लघु धी में कैसे हो ॥१८॥

सच पूछो तो शान्तिनाथ की, पूजा से क्या मिलता है।
सुर-गुरुवर भी कह न सकेगा, जितना जो भी फलता है ॥

घासफूस-सा शक्री चक्री, धन-वैभव सम्मान मिले।
आधि-व्याधि दुख-शोक कलुषता, पाप ताप संताप टले॥१९॥

शत्रु वर्ग की भूत प्रेत की, बाधाएँ टल जाती है।
मंगल शनि कृत पीड़ाएँ भी, सुख में ही ढल जाती है॥
और कहें क्या दर्श मात्र से, अपार जो भव सागर है।
शीघ्र सूखकर मात्र बचेगा, अञ्जलि भर दुखसागर ये ॥२०॥

भुक्ति मिले भरपूर लोक में, सुख ही सुख को पायेगा।
और बाद में मुनि बनकर जब, आतम ध्यान लगायेगा॥
मुक्ति रमा आ उसको खुश हो, वर लेगी पतिमान अहो।
उससे जो सुख पावे उसको, कह सकता है कौन कहो ॥२१॥

नगर बघेरा भोजपुरी में, शान्तिनाथ हैं हरदा में।
तथा जहाँ भी बिम्ब रहे हैं, उनमें मेरी श्रद्धा हैं ॥
उन सबको मैं शीश नमाकर, कोटि- कोटिशः नमन करूँ।
भव बंधन कट जावे मेरे, आप मार्ग में गमन करूँ ॥२२॥

(घत्ता)

हे शान्ति मुनीशा, त्रिभुवन ईशा, तीन लोक में शान्ति करो।
मम दुःख नाश दो, मोक्ष पास हो, भव्य जनों की क्लान्ति हरो॥
तुम जयमाला हो, सुखशाला हो, अर्घ चढ़ाऊँ आज चरण।
अब मुझको तारो, भाव सुधारो, भव-भव में हो आप शरण॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री शान्तिनाथ-जिनेन्द्राय नमः जयमाला पूर्णार्घ्यं...।

आशीर्वाद

शान्तिनाथ की अर्चना, तीनों सन्ध्या काल।
जो करता है भाव से, खुल जाता शिव द्वार॥

इत्याशीर्वाद पुष्पाञ्जलि क्षिपामि/क्षिपेत्।

श्री कुन्थुनाथ विधान

पीठिका

(दोहा)

काश्यप गोत्री वीर की, पूजा जो सुख रूप।
कहूँ पीठिका अद्य मैं, बनने शिव का भूप॥१॥

(ज्ञानोदय)

वत्स देश का नगर सुसीमा, जिसका राजा सिंहरथ था।
वत्सल गुण से पूर्ण रहा सो, शत्रु वर्ग भी वश में था॥
देखा इक दिन नभ में उल्कापात, चित्त में यों सोचा।
ऐसे ही क्षणभंगुर भव में, मैंने पाया है मौका॥२॥

सो अब मैं भी शीघ्र पराजित, करके भव को छोड़ूँगा।
पाँच पाप को तजकर जल्दी, भोगों से मुख मोड़ूँगा॥
यही सोचकर तत्क्षण वे यति, वृषभ पूज्य के निकट गये।
दर्शन करके मानों उनके पाप, कर्म सब सिमट गये॥३॥

नमस्कार कर तीन प्रदक्षिण, देकर गद्‌गद् हो करके।
धर्म सुना सो भव भोगों से, विरत भाव उर भर करके॥
दीक्षा लेकर मुनि बन करके, उग्र-उग्र तप त्याग किया।
और भावना सोलह भाकर, मुक्ति वधू से राग किया॥४॥

अंत समय में समाधिपूर्वक, समता से जब मरण किया।
अन्तिम सुर सर्वार्थसिद्धि के, उत्तम सुख का वरण किया॥
नहीं दुःख का नाम वहाँ, नहिं प्रवीचार का काम रहा।
और नहीं था तिरस्कार बस, मात्र सौख्य का धाम कहा॥५॥

और वहाँ से कौरववंशी, काश्यपगोत्री भूपति जो।
हस्तिनागपुर का स्वामी श्री, शूरसेन नृप अधिपति वो॥

उसकी पटरानी थी श्री श्रीकान्ता जिसका नाम रहा।
रूपवती थी शीलवती थी, पुण्यवती सुखधाम अहा॥६॥

विभावरी का कहा मनोहर, पहर रहा जो पुण्यमयी।
उसने देखे सोलह सपने, निद्रा के आधीन हुई॥
उसके ही उर गर्भ पधारे, धन्य किया था माता को।
कुन्थुनाथ यह नाम आपका, बने आप जगत्राता ओ॥७॥

कामदेव थे कामविजेता, चक्रवर्ति थे निस्पृह थे।
राजमहल के वैभव को भी, समझ रहे थे तृणवत् वे॥
तीर्थंकर ये शतइन्द्रों से, वन्दित थे अभिनन्दित थे।
धर्मदेशना से भव्यों को, करते थे आनन्दित वे॥८॥

ऐसे प्रभु श्रीकुन्थुनाथ की, विधान पूजा लिखने का।
अल्पज्ञा होकर भी साहस, किया आज गुण गिनने का॥
गिन न सकूँ पर कैसे बैठूँ, चुप हो भक्ति न रोक सकूँ।
इसीलिए कुछ गुण गा चाहूँ, पापास्रव अरु दोष तजूँ॥९॥

परिपुष्पाञ्जलिं क्षिपामि/क्षिपेत्

विधान प्रारम्भ

स्थापना

(ज्ञानोदय)

कुन्थु आदि जीवों की रक्षा, करके वृष को बतलाया।
तीर्थंकर बन तीन लोक में, धर्मध्वजा को फहराया॥
कामदेव का पद पाकर के, कामविजेता आप बने।
षट्खण्डों का वैभव तजकर, स्वयंबुद्ध भगवान बने॥

(दोहा)

ऐसे श्री श्री कुन्थु का आह्वानन है आज।
सन्निधि स्थापन से प्रभो शुरू करूँ शुभ काज॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री कुन्थुनाथ जिनेन्द्र अत्र अवतर अवतर संवौषट् इति आह्वाननं! ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री कुन्थुनाथ जिनेन्द्र अत्र तिष्ठ-तिष्ठ ठः ठः स्थापनं! ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री कुन्थुनाथ जिनेन्द्र अत्र मम सन्निहितो भव-भव वषट् सन्निधिकरणं!

अष्टक

(ज्ञानोदय)

क्षीरसिन्धु का निर्मल जल ले स्वर्ण कलश में भर लाऊँ।
जन्म मृत्यु के दुःख मिटाने अर्पित करके हरषाऊँ॥
त्रय पद धारक कुन्थुनाथ की, तीनों संध्या कालों में।
त्रय योगों से पूजा करके, बच जाऊँ जंजालों से॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री कुन्थुनाथ-जिनेन्द्राय नमः जन्म-जरा-मृत्यु-विनाशनाय जलं...।

कालागरु का चंदन घिसकर रजत कटोरी भर लाया।
पाप ताप संताप मिटाने तुम्हें चढ़ाने मैं आया॥
त्रय पद धारक...॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री कुन्थुनाथजिनेन्द्राय नमः संसारतापविनाशनाय चंदनं ...।

मुक्ता फल सम उज्ज्वल चावल थाली भरकर लाऊँगा।
चरण चढ़ाऊँ तो फिर क्यों नहिं अक्षय पद को पाऊँगा॥
त्रय पद धारक कुन्थुनाथ की, तीनों संध्या कालों में।
त्रय योगों से पूजा करके, बच जाऊँ जंजालों से॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री कुन्थुनाथजिनेन्द्राय नमः अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् ...।

कल्पवृक्ष के खुले खिले ये, पुष्प सुकोमल लाया हूँ।
मदन विजेता मद मिट जावे, इसी भाव से आया हूँ॥
त्रय पद धारक...॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री कुन्थुनाथजिनेन्द्राय नमः कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं...।

घृत से निर्मित मर्यादित पकवान शुद्ध ये लाया हूँ।
पूजा का शुभ अवसर पाकर किस्मत पर इठलाया हूँ॥
त्रय पद धारक...॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री कुन्थुनाथजिनेन्द्राय नमः क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं...।

बिना जलाये करता जो उद्योत वही यह दीपक है।
ऐसा ही तव जीवन है सो पूज बनूँ वृषदीपक मैं॥
त्रय पद धारक...॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री कुन्थुनाथजिनेन्द्राय नमः मोहान्धकारविनाशनाय दीपं...।

अलि करते हैं गुंजन जिस पर ऐसी खुशबू वाली ये।
धूप चढ़ाई सो हे स्वामी आज बड़ी खुशहाली है॥
त्रय पद धारक...॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री कुन्थुनाथ-जिनेन्द्राय नमः अष्टकर्म-दहनाय धूपं ...।

चम-चम करती चाँदी की यह श्रीफल से भर थाली को।
लेकर आया भक्त आपके चरण चढ़ा शिवमाली हो॥
त्रय पद धारक...॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री कुन्थुनाथ-जिनेन्द्राय नमः मोक्षफल-प्राप्तये फलं ...।

जल फल चंदन अक्षत नैवज, आदि मिलाकर लाया मैं।
अर्घ बनाकर अनर्घ पद को पाने चरण चढ़ाया है॥
त्रय पद धारक कुन्थुनाथ की, तीनों संध्या कालों में।
त्रय योगों से पूजा करके बच जाऊँ जंजालों से ॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री कुन्थुनाथ-जिनेन्द्राय नमः अनर्घपद-प्राप्तये अर्घ्यं...।

प्रत्येक-अर्घ्य

(दोहा)

अष्टक से मैं पूजकर, नमन करूँ अष्टांग।
पूजूँ गुणगण को, मिले सदा आपका संग॥

इति मण्डलस्योपरिपुष्पाञ्जलिं क्षिपामि/क्षिपेत्

जन्मातिशय के १० अर्घ्य

नहीं स्वेद आता तुम्हें, तीर्थंकर का चिह्न।
औदारिक है देह पर, रहा सभी से भिन्न ॥
सहस छ्यानव रानियाँ, तजकर क्षण में देव।
मुक्ति वधू को वर लिया, सो करते सुर सेव॥१॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं निःस्वेदत्व-जन्मातिशय-गुणधारक श्री कुन्थुनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

मूत्र नहीं है मल नहीं, अति निर्मल है देह।
भोजन करते पर नहीं, मल बनता गतस्नेह ॥
षट्खण्डों की सम्पदा, समझ अहो निर्मूल्य।
छोड़ प्रभु दीक्षित हुए, समझ धर्म का मूल्य॥२॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं निर्मलत्व-जन्मातिशय-गुणधारक श्री कुन्थुनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

रक्त रहा तव श्वेत ज्यों, पंचम सर का नीर।
नाम स्मरण गौ दुग्ध सम, शीघ्र मिटाता पीर॥

नाच-नाचकर कुन्थु की भक्ति करे हर श्वास।
दुख के कारण पाप का मिट जाता है वास॥३॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं क्षीरगौररुधिरत्व-जन्मातिशय-गुणधारक श्री कुन्थुनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

देख आपके रूप को, शर्माते सब रूप।
कामदेव अहमिन्द्र भी, और स्वर्ग के भूप॥
कुन्थुनाथ का जन्म सुन भू उतरा था स्वर्ग।
रोम-रोम पुलकित हुए मिटे सभी दुख दर्द॥४॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं सौरूप्य-जन्मातिशय-गुणधारक श्री कुन्थुनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

गुलाब सरसिज की अहो फीकी लगती गंध।
तव तन की खुशबू मिले लगते सब निर्गन्ध॥
जब आये थे मात के आँगन में जिनराज।
पूज्य हस्तिनापुर बना नगरों में शिरताज॥५॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं सौगन्ध्य-जन्मातिशय-गुणधारक श्री कुन्थुनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

तेरा जो संस्थान है, वो है उपमातीत।
पा न सकेगा लोक में, भव-भव जावे बीत॥
जन्मजात तुममें रहे, मति श्रुत अवधिज्ञान।
जो भी पूजे आपको, पूरे हो अरमान॥६॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं समचतुरस्त्र-संस्थान-जन्मातिशय-गुणधारक श्री कुन्थुनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

मोक्ष योग्य पौरुष रहा संहनन जिसका नाम।
तेरी अर्चा से बने भव्यों के सब काम॥
श्रीकान्ता की गोद में जब जन्में थे आप।
कुन्थु आप के दर्श से सौख्य मिले निर्माप॥७॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं वज्रवृषभ-नाराच-संहनन-जन्मातिशय-गुणधारक श्री कुन्थुनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

लक्षण जितने देह के, सामुद्रिक हैं श्रेष्ठ।
तव तन में सब शोभते बनकर जग में ज्येष्ठ ॥
जातिस्मरण वैराग्य का कारण था सर्वेश।
पुत्र पौत्र परिवार तज धारा जिनवर वेष॥८॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं सौलक्षण्य-जन्मातिशय-गुणधारक श्री कुन्थुनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

आप शक्ति का माप ना, बालकपन से देव।
देवों के भी देव तुम, अहो रहे अधिदेव॥
खाली करके स्वर्ग को, भू आये सुरराज।
जन्म लिया जब आपने, कुन्थुनाथ जिनराज॥९॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं अप्रमितवीर्य-जन्मातिशय-गुणधारक श्री कुन्थुनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

हित-मित प्रिय ही बोलते, बचपन में भी आप।
तब तो बालक वृद्ध के, बन जाते हैं काम॥
अजर अमर शाश्वत रहा, अविनाशी जो मोक्ष।
तव पूजा से हे प्रभो, जय नहिं पावे मोह॥१०॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं प्रियहितवादित्व-जन्मातिशय-गुणधारक श्री कुन्थुनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

केवलज्ञानातिशय के १० अर्घ्य

(छन्द-नरेन्द्र)

जहाँ-जहाँ पर कुन्थु पधारे, सौ योजन नहिं होवे।
सुनो वहाँ दुर्भिक्ष व्याधि मिट, दुखियों के दुख खोवे॥
अतिशय है यह अहो आपका, केवलज्ञान सुपाया।
अक्षत चंदन आदि मिला मैं, अर्घ बनाकर लाया॥११॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं गव्यूतिशत-चतुष्टय-सुभिक्षत्व-घातिक्षय-जातिशय-गुणधारक श्री कुन्थुनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

नभमण्डल में चलते ऐसे हम तुम भू पर जैसे।
कुन्थुनाथ की गुणगण महिमा, गा पायेंगे कैसे॥
गगनगमन यह विस्मयकारी, अतिशय है हे ज्ञानी।
पूजा करके ज्ञान पाँचवाँ, पावे हम अज्ञानी॥१२॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं गगनगमनत्व-घातिक्षय-जातिशय-गुणधारक श्री कुन्थुनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

कुन्थुनाथ तव योग मिले तो दुख के उठते डेरे।
प्राणीवध की बात दूर है, सुख हों साँझ सबेरे॥
समवसरण की महिमा है यह, जिसको तुमने पाया।
पूजा करने तेरी भोला, भक्त चरण में आया॥१३॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं अप्राणिवधत्व-घातिक्षय-जातिशय-गुणधारक श्री कुन्थुनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

लाडू पेड़ा घेवर बावर चाहे हो या रोटी।
क्यों खाओ तुम क्योंकि आपने पाई शिव की चोटी॥
अहो हस्तिनापुरी शान तुम, सच्चे धर्म प्रणेता।
मैं पूजूँगा दिवस-रात तुम, शिवपथ के हो नेता॥१४॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं भुक्त्यभाव-घातिक्षय-जातिशय-गुणधारक श्री कुन्थुनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

विघ्न करे नहिं बाधा डाले, नहीं बनेगा वैरी।
भूल शत्रुता मित्र बनेगा, आस्था उर हो तेरी॥
कुन्थुनाथ के समवसरण में, लोकत्रय के प्राणी।
आकर नमते पूजा करते, सुनते हैं तव वाणी॥१५॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं उपसर्गाभाव-घातिक्षय-जातिशय-गुणधारक श्री कुन्थुनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

सूरज जग में एक रहा पर, दिखता सबको जैसे।
मुख दिखता है सब जीवों को, समवसरण में वैसे॥
शूरसेन के कुल गौरव मैं तेरी महिमा गाऊँ।
मंदिर आकर पूजा करके, मन ही मन हर्षाऊँ॥१६॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं चतुर्मुखत्व-घातिक्षय-जातिशय-गुणधारक श्री कुन्थुनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

विद्याएँ हैं जितनी वे सब, कुन्थु चरण में आयी।
भाग्य मानकर कहतीं सुन लो, पायी है सच्चाई॥
राग-द्वेष का मूल नाशकर, पाऊँ ऐसी विद्या।
पूजूँ कुन्थुप्रभो जिनेश्वर, मेटो पाप अविद्या॥१७॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं सर्वविद्येश्वरत्व-घातिक्षय-जातिशय-गुणधारक श्री कुन्थुनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

घाति मिटे सो कुन्थु प्रभो नहिं, भू पर पड़ती छाया।
जो भी अर्घ चढ़ावे उसकी, मिट जाती है माया॥
तव पूजा से स्वामी मेरी, मिट जावे अब माया।
ये ही आशा लेकर तेरा, भक्त पूजने आया॥१८॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं अच्छायत्व-घातिक्षय-जातिशय-गुणधारक श्री कुन्थुनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

नयन युगल की पलकें अब तो, नहीं झपकती स्वामी।
ज्ञान पूर्ण है केवलज्ञानी, आप रहे शिवगामी॥
स्वर्ण वर्ण है भाव रहे हैं, तेरे सोलहवानी।
सोने सम हे कुन्थु पधारो, मैं करता अगवानी॥१९॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं अपक्ष्मस्पंदत्व-घातिक्षय-जातिशय-गुणधारक श्री कुन्थुनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

नख केशों की वृद्धि आपके, अब तो कभी न होगी।
कर्म नाशकर आप बने हैं, शुद्धातम के भोगी॥

श्रीकान्ता के नयन सितारे, सबको भव से तारें।
कुन्थु आपकी पूजा कर हम, पहुँचें शिव के द्वारे॥२०॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं समान-नख-केशत्व-घातिक्षय-जातिशय-गुणधारक श्री कुन्थुनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

देवकृत अतिशय के १४ अर्घ्य

(लय—श्री वीर महाअतिवीर...)

तव अर्धमागधी वाच, सबको सुख देती।
दे सात तत्त्व का ज्ञान, भव दुख हर लेती॥
मैं नाच-नाचकर कुन्थु, पूजा आज करूँ।
मैं बनूँ आप सम सन्त, पातक त्याग करूँ॥२१॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं सर्वार्ध-मागधीभाषा-देवोपनीतातिशय-गुणधारक श्री कुन्थुनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

सब बन जाते हैं मित्र, तेरा नाम सुने।
वे करके तुमसे प्रीति, तेरे भक्त बने॥
जो कुन्थुनाथ की नित्य, पूजा रचवावे।
उसके नहिं होवे दुःख, तव पद रम जावे॥२२॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं सर्वजन-मैत्रीभाव-देवोपनीतातिशय-गुणधारक श्री कुन्थुनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

फल फूल पत्र से वृक्ष, फलते मुस्काते।
यह अतिशय है तीर्थेश, करने सुर आते॥
तव नाम सुना तो कुन्थु, हर्षित चित्त हुआ।
सो दौड़ा आया देव, मन का काम हुआ॥२३॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं सर्वर्तुफलादि - शोभित - तरु - परिणाम-देवोपनीतातिशय-गुणधारक श्री कुन्थुनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

हो दर्पण जैसी भूमि, कुन्थु पधारे तो।
जो दुष्ट भयंकर जीव, भाव सुधारे वो॥

मैं तननं तननं ताल, देकर नित्य भजूँ।
मम मिट जावे जंजाल, दुख से नाथ बचूँ॥२४॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं आदर्शतल-प्रतिमा-रत्नमयी-देवोपनीतातिशय-गुणधारक श्री कुन्थुनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

तब पवन बहे अनुकूल, संगति आप मिले।
हे कुन्थु आपको देख, मन के पुष्प खिले॥
मैं ढोल बजाकर देव, पूजन नित्य करूँ।
नहिं पाप बचे अवशेष, भव को शीघ्र तरूँ॥२५॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं विहरण-मनुगतवायुत्व-देवोपनीतातिशय-गुणधारक श्री कुन्थुनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

ओ बढ़ जावे आनन्द, क्षणभर योग मिले।
श्री कुन्थुनाथ का शीघ्र, मन के रोग मिटे॥
बन आप चरण का भक्त, नाचूँ गाऊँ मैं।
हो पूजा में आसक्त, पद में आऊँ मैं॥२६॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं सर्वजन-परमानंदत्व-देवोपनीतातिशय-गुणधारक श्री कुन्थुनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

तब मेघ जाति के देव, जल की वृष्टि करे।
जब समवसरण में कुन्थु, वृष उपदेश करे॥
तव पद में रहती लीन, भविता आदिक थी।
वे श्रमणीगण तव पाद, महिमा कहती थी॥२७॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं मेघकुमारकृत-गंधोदकवृष्टि-देवोपनीतातिशय-गुणधारक श्री कुन्थुनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

सब कण्टक कंकर धूल, सुर आ दूर करे।
श्री कुन्थु आपकी पूज, त्रिभुवन पाप हरे॥
वह बना ज्ञानधर कूट, जब तुम मोक्ष गये।
मैं अर्घ चढ़ाकर पूर्ण, चाहूँ कर्म गले॥२८॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं वायुकुमारोपशमित - धूलि - कण्टकादि-देवोपनीतातिशय-गुणधारक श्री कुन्थुनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

सुर कनक सुनिर्मित पुष्प, पद के नीचे जी ।
रख खुश होते वे भक्त, बनते सच्चे जी॥
ये सोने जैसे कुन्थु, भू की शान बने।
तुम सोने सम ही शुद्ध, अघ को नाश बने॥२९॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं पादन्यासेकृत-पद्मानि-देवोपनीतातिशय-गुणधारक श्री कुन्थुनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

हो निर्मलतम आकाश, मौसम शरद करे[१]।
श्री कुन्थु पधारे धाम, चाहे गरम रहे॥
सुर झूम-झूम कर नित्य, तेरे चरण जजे।
मैं क्यों नहिं पूजूँ आज, दुर्लभ दरश मिले॥३०॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं शरन्मेघवन्निर्मल-दिग्विभागत्व-देवोपनीतातिशय-गुणधारक श्री कुन्थुनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

वे दशों दिशाएँ शीघ्र, मल से वर्जित हो।
जब योग मिले श्री कुन्थु, त्रिभुवन अर्चित जो॥
वह दशा बदलता पूर्ण, क्षण भर ध्याता जो।
अरु दिशा मिलेगी पंथ शिव को जाता जो॥३१॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं शरत्कालवन्निर्मल-गगनत्व-देवोपनीतातिशय-गुणधारक श्री कुन्थुनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

चतु चलते धर्म सुचक्र, आगे जिनवर के।
श्री कुन्थु आपका नाम, सबको सुखकर है॥
सो आया लेकर द्रव्य, पूजा करने को।
तव अर्चा करता पूज्य, पातक दलने को॥३२॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं धर्मचक्रचतुष्टय-देवोपनीतातिशय-गुणधारक श्री कुन्थुनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

---

१. शीतल सुहाना

जब फूल फलों से शालि, भू पर झुकते हैं।
है कारण इसमें आप, जिनवर कहते हैं॥
मैं रजतथाल भर आज, पद में आया हूँ।
मैं अर्चा करके नाथ, अति हरषाया हूँ॥३३॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं फल-भार-नम्र-शालि-देवोपनीतातिशय-गुणधारक श्री कुन्थुनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

हे भव्यो आओ सद्य, पूजा कर लो रे।
ये कुन्थु जगत में पूज्य, तुम भी भज लो रे॥
सब कन्थों[1] को तुम छोड़, बने दिगम्बर हो।
सो मेरा भी अब देव, शिव में नम्बर हो॥३४॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं एतैतैति - चतुर्निकायामर - परस्पराह्वानन-देवोपनीतातिशय-गुणधारक श्री कुन्थुनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

अष्ट प्रातिहार्य के ८ अर्घ्य

(ज्ञानोदय)

जिसके नीचे बैठ जिनेश्वर, आतम ध्यान लगाते हैं।
तरु अशोक वह कहलाता, जब केवलज्ञान सुपाते हैं॥
तत्क्षण बनता समवसरण है, बारह कोठे भर जाते।
भव्य उसी में कुन्थु आपसे, धर्मामृत पा हरषाते॥३५॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं अशोकवृक्ष-प्रातिहार्य-मण्डित श्री कुन्थुनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

कल्पवृक्ष के रंग-बिरंगे, पुष्प देव बरसाते हैं।
मानों प्रभु के यश की खुशबू, चारों दिशि बिखराते हैं॥
कुन्थुनाथजी लौकिक वैभव, छोड़ अलौकिक वैभव पा।
सिद्धशिला के बने निवासी, पूज्य बने निज वैभव पा॥३६॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं सुरपुष्पवृष्टि-प्रातिहार्य-मण्डित श्री कुन्थुनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

---

१. परिग्रह

चौंसठ चामर निर्मल जल के, झरनों जैसे ढुरते हैं।
कहते प्रभु में निर्मल भावों के झरने ही बहते हैं॥
कुन्थु आपने तीर्थंकर जो, प्रकृति पूर्व में बाँधी थी।
उदित हुई सो हम भी पूजे, पूजे मिथ्यावादी भी ॥३७॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं चतुः षष्ठी-चामर-प्रातिहार्य-मण्डित श्री कुन्थुनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

आभामण्डल के मिष स्वामी, शुद्ध भाव की आभा ही।
बाहर आकर बतलाती अब, नहीं बची कुछ बाधा जी॥
प्रातिहार्य यह कुन्थुनाथ ने, सोलहकारण भा करके।
पाया सो त्रय लोक पूजता, हम पूजें पद आ करके ॥३८॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं भामण्डल-प्रातिहार्य-मण्डित श्री कुन्थुनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

दुन्दुभि बाजे बज-बज करके, यशस्कीर्ति तव गाते हैं।
कहते ऐसे कौन रहे जो, तेरे पद नहिं आते हैं॥
हम तो स्वामी बड़ी भक्ति से, द्रव्य सजाकर लाये हैं।
स्वीकारो हे कुन्थुनाथ कुछ, नहीं माँगने आये हैं ॥३९॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं दुन्दुभि-प्रातिहार्य-मण्डित श्री कुन्थुनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

चम-चम चम-चम चमक रहे जो रत्नजटित है चाँदी के।
उसमें मोती की लड़ियों को, भक्त सुरों ने बाँधी है॥
ऐसे सुन्दर छत्र कुन्थु तव, सिर के ऊपर शोभ रहे।
इसीलिए तो अर्घ चढ़ा हम, आप चरण में लोट रहे ॥४0॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं छत्रत्रय-प्रातिहार्य-मण्डित श्री कुन्थुनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

दिव्य देशना अहो आपकी सुनकर शंका मिट जाती।
मोक्षसदन की नींव सुसम्यक्दर्शन निधि वह मिल जाती॥

बिना आपके प्रभो अभी तक, भव में हम तो भटके थे।
कुन्थु आपकी पूजा कर अब, भव में हम नहिं अटकेंगे ॥४१॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं दिव्यध्वनि-प्रातिहार्य-मण्डित श्री कुन्थुनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

रत्नखचित जो बना स्वर्ण का, सिंहासन यह उत्तम है।
तीन-लोक में मात्र आपको, मिल सकता जग उत्तम ये॥
कुन्थुनाथ ने प्रातिहार्य यह, सहज रूप में पाया है।
तब तो अर्घ बनाकर चेला चरण चढ़ाने आया है ॥४२॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं सिंहासन-प्रातिहार्य-मण्डित श्री कुन्थुनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

पंचकल्याणक के ५ अर्घ्य

(लय—शान्तिनाथ मुख...)

श्रावण की थी शुक्ला दसमी।
कुन्थु पधारे माँ के उर जी॥
उत्सव करने सुरगण आये।
विरुदावलियाँ हम भी गावें ॥४३॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं गर्भ-कल्याणक-मण्डित श्री कुन्थुनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

शुक्ल पक्ष वैशाख रहा था।
एकम का दिन खास कहा था॥
कुन्थुनाथ ने जन्म लिया सो।
मंगलमय यह दिवस कहा औ ॥४४॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं जन्म-कल्याणक-मण्डित श्री कुन्थुनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

जन्म दिवस में विरत भाव से।
ओत-प्रोत हो कुन्थु चाव से॥

दीक्षा लेकर बने दिगम्बर।
अर्घ चढ़ावें हम भी मनहर ॥४५॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं तपः कल्याणक-मण्डित श्री कुन्थुनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

चैत्र शुक्ल की तीजी तिथि थी।
पायी तुमने अन्तिम मति थी॥
तत्क्षण पाया समवसरण को।
कुन्थु लोक में आप शरण हो ॥४६॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं ज्ञान-कल्याणक-मण्डित श्री कुन्थुनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

शिवपुर के तुम भूप बने थे।
दीक्षा दिन में कर्म हरे थे॥
कुन्थु सिद्ध बन बने अदेही।
पद पूजे हम बनकर स्नेही ॥४७॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं निर्वाण-कल्याणक-मण्डित श्री कुन्थुनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

अनंत चतुष्टय के ४ अर्घ्य

अमित ज्ञान में सब कुछ झलके।
लेकिन किंचित् राग न फटके॥
नहीं द्वेष है कुन्थु आप में।
अर्घ चढ़ाऊँ चरण आज मैं ॥४८॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं अनंत-ज्ञान-गुणमण्डित श्री कुन्थुनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

अनन्त दर्शन गुण माना है।
काम रहा सब दर्शाना है॥

कुन्थु इसी के नाथ बने हैं।
पूजन के शुभ भाव बढ़े हैं ॥४९॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं अनंत-दर्शन-गुणमण्डित श्री कुन्थुनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

सुख का पारावार नहीं है।
दुख का कुछ भी काम नहीं है॥
लौकिक सुख का नाम न बाकी।
कुन्थु भक्त ही हो बड़भागी ॥५०॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं अनंत-सुख-गुणमण्डित श्री कुन्थुनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

वीर्य आपने कितना पाया।
कहे कौन किस माँ का जाया॥
हम तो केवल श्रद्धा करते।
अर्घ चढ़ाकर उर में धरते ॥५१॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं अनंत-वीर्य-गुणमण्डित श्री कुन्थुनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

१८ दोष से रहित के १८ अर्घ्य

(लय—मुनि सकलव्रती...)

नहिं भूख पास में आवे, सो आप सभी को भावें।
पैंतीस धनुष तन ऊँचा, हे कुन्थु! मार्ग तव सच्चा ॥५२॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं क्षुधा-दोष-रहित श्री कुन्थुनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

जब लगती हाय पिपासा, तब दुख होता है खासा।
वह कुन्थु आपने नाशा, मम उपजी दर्श पिपासा ॥५३॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं तृषा-दोष-रहित श्री कुन्थुनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

यह भय कषाय दुखदानी, वह बची नहीं सुखदानी।
तब भीति हृदय से भागी, जब बना धर्म अनुरागी ॥५४॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं भय-दोष-रहित श्री कुन्थुनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

जो मानस को नहिं भावे, वो शीघ्र द्वेष उपजावे।
ये कुन्थु द्वेष नहिं पाले, सो मिटी मोह की चालें ॥५५॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं द्वेष-दोष-रहित श्री कुन्थुनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

जो पर में हाय लुभावे, वो रागी भव भरमावे।
मम कुन्थुनाथ गतरागी, मैं बना चरण अनुरागी ॥५६॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं राग-दोष-रहित श्री कुन्थुनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

यह मोह निकट नहिं फटके, सो कुन्थु न भव में अटके।
हे निर्द्वन्दी! निर्मोही! जग बना आप पद मोही ॥५७॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं मोह-दोष-रहित श्री कुन्थुनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

नहिं चिन्ता उसे सतावे, जो भेष दिगम्बर पावे।
श्री कुन्थु बने सब त्यागी, हम पूजे हे बड़भागी! ॥५८॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं चिंता-दोष-रहित श्री कुन्थुनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

जब जर-जर तन हो जावे, तब दुखिया बन भरमावे।
श्री कुन्थु जगत् से न्यारे, सो लगते सबको प्यारे ॥५९॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं जरा-दोष-रहित श्री कुन्थुनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

नहिं रोगों का है क्रन्दन, सो करते हम अभिनन्दन।
हे कुन्थु! आप शिवगामी, कुरु वंश रहा तव नामी ॥६०॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं रोग-दोष-रहित श्री कुन्थुनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

तव मृत्यु कभी नहिं होगी, सो अमर हुए गतभोगी।
हम रहें पुजारी तेरे, हम मेटे भव के फेरे ॥६१॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं मरणदोष-रहित श्री कुन्थुनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

जो देह स्वेद की क्यारी, वो बनी स्वेद से न्यारी।
सो गाऊँ तव गुण गाथा, मैं नमा कुन्थु पद माथा ॥६२॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं स्वेद-दोष-रहित श्री कुन्थुनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

वह खेद दोष को छोड़े, जो तुमसे मन को जोड़े।
मैं कुन्थु चरण में आऊँ, बस तेरा ध्यान लगाऊँ ॥६३॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं खेद-दोष-रहित श्री कुन्थुनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

मद भाव आपने नाशा, प्रभु उसका देख तमाशा।
सो नमन करूँ प्रभु तुमको, नाशो मम आठों मद को ॥६४॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं मद-दोष-रहित श्री कुन्थुनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

तब रति डर करके भागी, जब कुन्थु बने निजरागी।
मम शिव की रति उर जागी, मैं आज बना सौभागी ॥६५॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं रति-दोष-रहित श्री कुन्थुनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

तव मन नहिं विस्मित होता, सो कर्म मलों को धोता।
मम विस्मय दोष मिटाओ, हे कुन्थु! हृदय में आओ ॥६६॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं विस्मय-दोष-रहित श्री कुन्थुनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

जो निद्रा में सो जावे, वह समकित को नहिं पावे।
श्री कुन्थुनाथ जी जागे, हम आये भागे-भागे ॥६७॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं निद्रा-दोष-रहित श्री कुन्थुनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

नहिं जन्म तुम्हारा होवे, हम पूजा कर अघ धोवे।
श्री कुन्थु जन्म के जेता, सब नमते जग के नेता ॥६८॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं जन्म-दोष-रहित श्री कुन्थुनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

जब शोक हमें दुख देवे, तब शरण कुन्थु की लेवे।
रफु चक्कर होवे पातक, फिर बने नहीं सुख घातक ॥६९॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं शोक-दोष-रहित श्री कुन्थुनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

(ज्ञानोदय)

चक्रवर्ति अरु कामदेव श्री तीर्थंकर पदधारी की।
जहाँ-जहाँ पर रही विराजित, कुन्थुनाथ दुखहारी की ॥
प्रतिमाएँ उन सबको मेरा, कोटि-कोटिशः वन्दन है।
अर्घ चढ़ाकर चाहूँ जीवन बन जावे अब चन्दन ये ॥७०॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री कुन्थुनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

कूट ज्ञानधर जहाँ कुन्थु ने, अंतिम ध्यान लगाया था।
अंतिम गति को अंतिम गुण को, यहीं आपने पाया था।
पण्डित-पण्डितमरण हुआ सो, मोक्षपुरी का राज्य मिला।
अर्घ चढ़ाने आया सो अब, मेरा भी सौभाग्य खिला॥७१॥

ॐ ह्रीं सम्मेदशिखरस्थित ज्ञानधरकूटेभ्यो नमः अर्घ्यं ...।

पूर्णार्घ्य

भूपति सुरपति अहमिन्द्रों से, विद्याधर से इन्द्रों से।
कुन्थुनाथ तुम पूज्य रहे हो, नागेन्द्रों से चन्द्रों से॥
हम भी स्वामी अष्ट-द्रव्य से, आठ अंग को आज नमा।
पूजा करते आठ पहर तक, मिटे जन्म की नाथ सजा ॥७२॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री कुन्थुनाथ-जिनेन्द्राय नमः पूर्णार्घ्यं...।

जाप्य मंत्र—ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री कुन्थुनाथ-जिनेन्द्राय नमः।

(९/२७/१०८)

जयमाला

कुन्थुनाथ के चरण में, नमकर सौ-सौ बार।
जयमाला अब मैं कहूँ, ये ही जग में सार॥

(ज्ञानोदय)

पहले प्रभु तुम षट्खण्डों के, चक्रवर्ति थे अधिपति थे।
अब तो स्वामी तीन लोक के, नाथ रहे हैं शिवपति हैं।
चक्री थे तब मुकुटबद्ध बत्तीस सहस नृप नमते थे।
सौ-सौ चक्री कोटि-कोटि अब, इन्द्र सुरासुर जपते हैं॥१॥

चक्ररत्न से तुमने भू के, सभी नृपों को जीता था।
किया साधु बन ध्यान चक्र से, कर्मचक्र को सीधा वा।

धर्मचक्र के स्वामी बनकर, धर्मध्वजा को फहराया।
समवसरण में दिव्यध्वनि से, सत्यधर्म को समझाया॥२॥

छत्र लगाये सुर ने आकर, चौंसठ चामर ढोरे थे।
पुष्पवृष्टि कर दुन्दुभि बाजे, बजा-बजा मन जोड़े थे॥
आप चरण से फलतः पायी, खुशहाली निज जीवन में।
क्योंकि रहेंगे आप जहाँ पर, रहे वहाँ नित सावन है॥३॥

आप दर्श से आप कृपा से, मुझमें भी अब मति आयी।
सो तज करके पापबुद्धि मम, चेतनता अति हरषाई॥
सो अर्पण कर अष्ट-द्रव्य का, थाल चित्त में प्रमुदित हूँ।
एक-एक को अलग-अलग से, चढ़ा-चढ़ाकर पुलकित हूँ॥४॥

पूजा करके तन के सारे, रोम-रोम खिल आये हैं।
फूला नहीं समाया चेतन, पद जो तेरे पाये हैं॥
चिह्न आपका अज कहता है, तुमने जो पद पाया है।
वह भी अज है जन्म रहित है, मरण रहित विलसाया है॥५॥

श्रीकान्ता के उर में आये, तब धरती यह श्रीमय हो।
लक्ष्मी से भरपूर हुई सो, नहीं बचा था निर्धन औ॥
रही पालकी विजया जिसमें, आरुढ़ हो जब गमन किया।
मूलगुणों को धारा अट्ठाईस, अक्ष को दमन किया॥६॥

धर्ममित्र दातार बना जो, सच में वृष का मित्र बना।
उस ही भव में आप सरीखा, वह भी शिव का पात्र बना॥
तिलक नाम के वृक्ष तले जब, केवल रवि को प्राप्त किया।
कहता त्रिभुवन तिलक आप हैं, शिव जाने का काम किया ॥७॥
चतु योजन का समवसरण जो, कहता चारों गतियों से।
दूर हुए हैं और पार ये, पहुँचे लौकिक मतियों के॥

आप स्वयंभू बनकर ही तो, कल्मष धोने निकले थे।
सो गणधर भी नाम स्वयंभू, सबसे आगे दिखते थे॥८॥

कूट ज्ञानधर क्षेत्र जहाँ से, मोक्षपुरी को आप गए।
यहीं शेष जो बचे कर्म थे, रास्ता अपना नाप गए॥
खड्गासन में ध्यान खड्ग से, भव के बन्धन सब काटे।
अनादि से जो बने हुए थे, मोक्षमार्ग में हा काँटे॥९॥

इसीलिए तो कुन्थु आपके, पाँचों कल्याणक में आ।
देवों ने सौधर्म इन्द्र ने, उत्सव करके भू पर वा॥
नृत्य किये थे वाद्य बजाए, दृम-दृम वीणा नाद किया।
रत्न प्रपूरित भू को करके, रत्न सुगर्भा नाम दिया॥१०॥

मैं तो स्वामी पापोदय से कल्याणक नहिं देख सका।
फिर भी तेरे दर्श किये तो, बनी हाथ में शुभ रेखा॥
इसीलिए मम भाव हुए हैं, पूजन आज रचाने के।
भव-भोगों से पाप कर्म से, निज को पूर्ण बचाने के॥११॥

अतः प्रभो मैं नाच-नाचकर, खुश हो करके ढोल बजा।
ताल मँझीरे बजा-बजाकर, नमन करूँ मैं शीश झुका॥
इस उत्सव में नगर निवासी, परिजन को अरु राजा को।
बाल-वृद्ध को युवावर्ग को, युवतीगण युवराजा को॥१२॥

बुला कहूँ हे भाई पूजो, कुन्थुनाथ को द्रव्य चढ़ा।
शीघ्र भरे भण्डार पुण्य के, और बनोगे मोक्ष सखा॥
क्योंकि कुन्थु सा नहीं लोक में, देव रहा नहिं भगवन है।
इन जैसा नहिं वीतराग जिन, नहिं कोई भी गतमन है॥१३॥

प्रभु जैसा नहिं रहा सहारा, नहीं रहा है शरण अहो।
नहीं रहा है इन-सा मंगल, नहिं मंगलमय चरण अहो॥

उत्तम-उत्तम ये ही उत्तम, परमोत्तम है उत्तम है।
इनके पाद युगल में नमते, जग के सारे उत्तम हैं ॥१४॥

और कहूँ क्या इनके गुण का, पार नहीं नहिं संख्या है।
नहिं गिन सकता नहिं कह सकता, वाचस्पति भी संख्या में ॥
नहिं चिन्तन कर सकते ऋषिगण, पार न इनका पा सकते ।
नहिं समझाकर अन्य जनों में, इनके गुण को भर सकते ॥१५॥

फिर हम सब तो अल्पबुद्धि है, कैसे गणना कर पावें।
थोड़े से ये गुण गा करके, मन ही मन में मुस्कावे ॥
और पूर्ण कर जयमाला ये, कोटि-कोटिशः वन्दन कर।
करें प्रार्थना हम भी स्वामी, बनें शीघ्र ही अभयंकर ॥१६॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री कुन्थुनाथ-जिनेन्द्राय नमः जयमाला पूर्णार्घ्यं...।

आशीर्वाद

कुन्थुनाथ की विधान पूजा, निर्मद हो जो करता है।
चक्रवर्ति के स्वर्ग लोक के, सुख को पहले वरता है॥
फिर बन करके महामुनीश्वर, मोह भाव का नाश करे।
और शेष सब कर्म नाशकर, मोक्ष द्वार को पास करे॥

इत्याशीर्वादः परिपुष्पाञ्जलिं क्षिपामि/क्षिपेत्

श्री अरनाथ विधान

पीठिका

त्रयपद धारक देव जो, नाम रहा अरनाथ।
गुणगाऊँ मैं भक्ति से, रहे न भव का नाम॥

स्तुति (लय–मुनि सकल व्रती...)

हे तीर्थंकर अर स्वामी, तुम तीन लोक में नामी।
है वंदन तुमको मेरा, मम उठ जावे भव डेरा ॥१॥

जो अतिशय तुममें सोहे, वे सबके मन को मोहे।
सुर चौंसठ चामर ढोले, जो श्रद्धा के पट खोले ॥२॥

छ्यालीस गुणों के धारी, अरहंत बने सुखकारी।
हम दिव्य देशना पाके, जब धन्य हुए पद आके ॥३॥

तो फिर-फिर दौड़े आये, तव दर्शन पा हरषाये।
प्रभु दर्श मात्र से क्षण में, जो दुख देता भव वन में ॥४॥

वह मिथ्यातम झट भागा, मम आत्मबोध उर जागा।
तब सम्यक् दीप उजाला, पा खुला मोक्ष का ताला ॥५॥

अब श्रद्धा उन पर कैसे, जो देव रहे हम जैसे।
हो सकती तुमको तज के, तव चरण युगल को भजके ॥६॥

जो देव रहे भवरागी, मैं उनसे हो वैरागी।
मैं वीतराग का रागी, बन आया हे भवत्यागी ॥७॥

सो शरण मुझे ले लीजे, प्रभु आश्रय मुझको दीजे।
मैं मात्र भजूँगा तुमको, यदि जनम मिलेगा मुझको ॥८॥

मैं चाहे देखूँ सपना, मैं तुमको मानूँ अपना।
मैं पूजूँ बस अर जिन को, फल पाऊँ अक्षय सुख को॥९॥

हे परमोत्तम! हे मंगल!, मम मेटो अघ का दल-दल।
हे शरणदातृ! हे उत्तम! मैं बन जाऊँ परमोत्तम ॥१०॥

मैं पुनः पुनः कर वंदन, मैं करता तव अभिनंदन।
मैं पूर्ण करूँ स्तुति तेरी, हो पंचम गति अब मेरी ॥११॥

(दोहा)

अरस्वामी के गुण अहो, रहे अनन्तानन्त।
सुरगुरु भी गाने लगे, तो नहिं पावे अन्त ॥

इति परिपुष्पाञ्जलिं क्षिपामि/क्षिपेत्

विधान पूजा

स्थापना

(ज्ञानोदय)

चर्चित होकर अरस्वामी जब, पूज्य हुए त्रय लोकों में।
दर्शन कर तब निकट भव्य जन, विरत हुए भव भोगों से ॥
समवसरण में प्रातिहार्य से, अतिशय गुण से शोभित हो।
पूजा करते हम सब मिलकर, आप चरण में मोहित हो ॥
आओ-आओ हे प्रभो, मेरे उर में आज।
स्थापन सन्निधि मैं करूँ, पूजा जो शुभ काज ॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री अरनाथ जिनेन्द्र अत्र अवतर अवतर संवौषट् इति आह्वाननं! ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री अरनाथ जिनेन्द्र अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं! ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री अरनाथ जिनेन्द्र अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणं!

अष्टक

(घत्ता)

ये जल की झारी हे सुखकारी! आप चरण में अर्पित है।
मम जनम मिटा दो, जरा हटा दो, जीवन तुम्हें समर्पित है ॥
चक्री पद छोड़ा, मन को जोड़ा, यम-संयम से योगों से।
'जिन अर' को पूजूँ भव से छूटूँ, नहीं फँसू अब भोगों में ॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री अरनाथ-जिनेन्द्राय नमः जन्म-जरा-मृत्यु-विनाशनाय जलं...।

मलयागिरि चंदन, तुमको वंदन, करके चरण चढ़ाऊँ मैं।
भवताप मिटाने, पाप हटाने, चरणों चित्त लगाऊँ मैं ॥
चक्री पद छोड़ा...॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री अरनाथ-जिनेन्द्राय नमः संसार-ताप-विनाशनाय चंदनं...।

मैं लेकर अक्षत, हे सुख संगत, शाश्वत सुख के पाने को।
मैं पूजा करके, भव को हरके, आया शिव में जाने को ॥
चक्री पद छोड़ा, मन को जोड़ा यम-संयम से योगों से।
'जिन अर' को पूजूँ भव से छूटूँ, नहीं फँसू अब भोगों में ॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री अरनाथ-जिनेन्द्राय नमः अक्षय-पद-प्राप्तये अक्षतान्...।

ये पुष्प सुगंधित सुर-नर वंदित, जो पूजेगा निश्छल हो।
वो काम विनाशे, आत्म प्रकाशे, तव चरणों में निश्चल हो ॥
चक्री पद छोड़ा...॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री अरनाथ-जिनेन्द्राय नमः कामबाण-विध्वंसनाय पुष्पं ...।

जो नैवज लावे, भक्ति रचावे पूजा करके नाचेगा।
वो क्षुधा मिटावे, पुण्य कमावे, शिव पद को भी पावेगा॥
चक्री पद छोड़ा...॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री अरनाथजिनेन्द्राय नमः क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं ...।

लेकर मणि दीपक, जो कुल दीपक, सोम वंश के तारे हैं।
उनके पद पूजे उनमें रीझे, मिटे पाप जो काले हैं॥
चक्री पद छोड़ा...॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री अरनाथजिनेन्द्राय नमः मोहान्धकारविनाशनाय दीपं...।

ये धूप दशांगी हे सुखसंगी! आप चरण में लाया हूँ।
मम कर्म जला दो पास बुला लो पूजा करने आया हूँ ॥
चक्री पद छोड़ा...॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री अरनाथजिनेन्द्राय नमः अष्टकर्म-दहनाय धूपं ...।

बादाम सुपारी, भर-भर थाली, जो भी तुम्हें चढ़ायेगा।
वो शिवफल पावे, फिर ना आवे, मोक्षमहल में जावेगा॥
चक्री पद छोड़ा...॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री अरनाथ-जिनेन्द्राय नमः मोक्षफल-प्राप्तये फलं ...।

जल अक्षत चंदन लेकर वंदन, उनके चरणों मेरा है।
जिनने शिव पाया, निज को ध्याया, भव बंधन को मेटा है॥
चक्री पद छोड़ा, मन को जोड़ा यम-संयम से योगों से।
'जिन अर' को पूजूँ भव से छूटूँ, नहीं फँसू अब भोगों में॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री अरनाथ-जिनेन्द्राय नमः अनर्घ-पद-प्राप्तयेऽर्घ्यं ...।

प्रत्येक-अर्घ्य

(दोहा)

आठों द्रव्यों को चढ़ा, पाद-पद्म में आज।
अन्य गुणों को अर्घ दूँ, आकर तेरे पास॥

इति मण्डलस्योपरिपुष्पाञ्जलिं क्षिपामि/क्षिपेत्।

जन्मातिशय के १० अर्घ्य

(लय—कहाँ गये चक्री...)

स्वेद रहित है देह आपका, हमको अचरज है।
क्षणभर भी जो पूजे उसको, मिलता सत्पथ है॥
'अरस्वामी' ने जन्मजात ही अतिशय पाया है।
तब तो तीनों लोक पूजने चरणों आया है॥१॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं निःस्वेदत्व-जन्मातिशय-गुणधारक श्री अरनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

मल नहिं झरता मूत्र देह से कभी न झरता है।
खाते-पीते पौष्टिक भोजन फिर भी पचता है॥
तीर्थंकर का भोजन जग में, कौन पचा पावे।
निर्मल तन की महिमा सुन हम पूजन रचवावें॥२॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं निर्मलत्व-जन्मातिशय-गुणधारक श्री अरनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

क्षीर सिंधु के जल सम उज्ज्वल, रक्त रहा तन में।
सब जीवों के सुख का 'अर' के भाव रहा मन में॥

चरण स्पर्श से पद्म बना था, लक्ष्मी का स्वामी।
चित्त विराजें जिसके वह क्या दरिद्र हो नामी ॥३॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं क्षीर-गौररुधिरत्व-जन्मातिशय-गुणधारक श्री अरनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

प्रथम रहा संस्थान आपका, उपमा किससे हो।
'अरस्वामी' का रूप देखकर सुर भी लज्जित हो ॥
आप भक्ति से भवों-भवों के पातक कट जावे।
भूत-प्रेत की बाधा कैसे मेरे रह पावे ॥४॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं समचतुरस्र-संस्थान-जन्मातिशय-गुणधारक श्री अरनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

अतिशय है सौरूप्य आपका, जन्म समय से वा।
दाँतों नीचे दाबे अंगुली, देखे शचिपति आ॥
ज्योति रूप हे 'अरस्वामी जी' मम उर आये हो।
पाप बंध अब मुझमें कैसे, क्यों रह पावे तो ॥५॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं सौरूप्य-जन्मातिशय-गुणधारक श्री अरनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

संहनन सबसे उत्तम तेरा पर न झगड़ते हो।
सोमवंश के दीपक की हम राह पकड़ते ओ॥
गर्भ पधारे उसके पहले हो भू सोने की।
हृदय विराजो तुम तो बाधा, क्यों नहिं छोड़ेगी ॥६॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं वज्रवृषभनाराच-संहनन-जन्मातिशय-गुणधारक श्री अरनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

खुशबू वाली वस्तु कहाँ है, तुम सम जग में रे।
'अरस्वामी' सौगन्ध्य देह से, सबको हरते हैं॥
चंद्रकिरण सम हे स्वामी जो, चरणों आयेगा।
दुख दावानल ताप कहो क्या, उसे सतायेगा ॥७॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं सौगन्ध्य-जन्मातिशय-गुणधारक श्री अरनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

मीन साथिया कलश आदि से, उत्तम तन सोहे।
छटा अलौकिक देख कहो क्या, चित्त नहीं मोहे॥
पुत्र सुदर्शन नृप की महिमा, गाऊँ गाऊँगा।
पूजा करके 'अरस्वामी' की, शिव को पाऊँगा ॥८॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं सौलक्षण्य-जन्मातिशय-गुणधारक श्री अरनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

अमित वीर्य जो 'अरस्वामी' में, कैसे बतलाऊँ।
आप सदृश ही बल को पाने, अतिशय मैं गाऊँ॥
मात मित्रसेना के आँगन, आप पधारे थे।
आधि-व्याधि अरु भूत प्रेत परलोक सिधारे थे ॥९॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं अप्रमितवीर्य-जन्मातिशय-गुणधारक श्री अरनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

मीठे लगते घेवर जैसे, प्रिय भी लगते हैं।
प्रिय हितवादी की पूजा से, आनन खिलते हैं ॥
'अरस्वामी' के चरण कमल की, संगति पावेगा।
राहु केतु की बाधा से बच, शिवगति पावेगा ॥१०॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं प्रिय-हित-वादित्व-जन्मातिशय-गुणधारक श्री अरनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

घातिक्षय-जातिशय के अर्घ्य

(लय—मुनि सकल व्रती....)

जब 'अरस्वामी' भू आवे, तव दुर्भिक्षं टल जावे।
सब सौख्य शान्ति को पावे, सब पाप ताप टल जावे ॥११॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं गव्यूतिशत-चतुष्टय-सुभिक्षत्व-घातिक्षय-जातिशय-गुणधारक श्री अरनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

जो गगनांगन में चलते, वे 'अरस्वामी' भव हरते।
मैं शत-शत शीश झुकाऊँ, मैं भव सागर तर जाऊँ ॥१२॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं गगनगमनत्व-घातिक्षय-जातिशय-गुणधारक श्री अरनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

नहिं भोजन करते स्वामी, पर तृप्त रहे शिवगामी।
चउ घाति कर्म को नाशा, यह अतिशय पाया खासा ॥१३॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं भुक्त्यभाव-घातिक्षय-जातिशय-गुणधारक श्री अरनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

वध प्राणी का नहिं होवे, यह अचरज मन में डोले।
मैं 'अरस्वामी' को पूजूँ, मैं फिर न किसी में रीझूँ ॥१४॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं अप्राणिवधत्व-घातिक्षय-जातिशय-गुणधारक श्री अरनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

यदि वैरी भी दुख देगा, उपसर्ग किन्तु नहिं होगा।
पद तीर्थंकर का पाकर, शिव पाया निज में आकर ॥१५॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं उपसर्गाभाव-घातिक्षय-जातिशय-गुणधारक श्री अरनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

मुख चारों दिशि में दिखते, तब पाप कर्म सब फिरते।
गा 'अरस्वामी' की गाथा, शतबार झुकाऊँ माथा ॥१६॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं चतुर्मुखत्व-घातिक्षय-जातिशय-गुणधारक श्री अरनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

तुम विद्याओं के ज्ञाता, तुम जन-जन के हो त्राता।
मैं विद्येश्वर को पूजूँ, नहिं जनम मरण से जूझूँ॥१७॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं सर्वविद्येश्वरत्व-घातिक्षय-जातिशय-गुणधारक श्री अरनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

हैं परमौदारिक देही, पर रहे आप निर्नेही।
नहिं पड़ती 'अर' की छाया, पूजन से मिटती माया ॥१८॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं अच्छायत्व-घातिक्षय-जातिशय-गुणधारक श्री

अरनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

ये नयन युगल नहिं झपके, 'श्री अरस्वामी' हैं सबके।
जो इनकी पूज रचावे, सब बाधाएँ टल जावें ॥१९॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं अपक्ष्मस्पन्दत्व-घातिक्षय-जातिशय-गुणधारक श्री अरनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

नहिं केश बढ़े नहिं नख ही, ये बने हुए हैं सम ही।
सो विस्मय मुझको आवे, मैं धन्य हुआ पद पाये ॥२०॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं समान-नख-केशत्व-घातिक्षय-जातिशय-गुणधारक श्री अरनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

देवकृत अतिशय के १४ अर्घ्य

(नरेन्द्र)

समवसरण में 'अरस्वामी' की, अर्धमागधी भाषा।
सुनकर बैठे दुखी जीव भी, सुख पाते हैं खासा॥
मिथ्यामत को छोड़ भव्य झट, समकित को पा जावे।
अतिशय सुरकृत कहा गया यह, तीर्थंकर के भावे ॥२१॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं सर्वार्धमागधी-भाषा-देवोपनीतातिशय-गुणधारक श्री अरनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

तीनलोक के पुण्यवान या, पापी जन हो कोई।
करे मित्रता आपस में मिल, जगे चेतना सोई ॥
सब जन मैत्री का यह प्यारा, अतिशय 'अर' ने पाया।
अर्घ चढ़ाकर मानो हमने, स्वर्ग सुखों को पाया ॥२२॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं सर्वजन-मैत्री-भाव-देवोपनीतातिशय-गुणधारक श्री अरनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

आम-जाम अरु केला-ऐला, फल जाते हैं सारे।
मौसम भी नहिं होवे तो भी, पुलकित होते प्यारे ॥
सुरकृत अतिशयधारी 'अर' की जो पूजा रचवावे।
राजा बन अधिराजा बनकर, शिव के सुख को पावे ॥२३॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं सर्वर्तुफलादि-शोभित-तरुपरिणाम-देवोपनीतातिशय-गुणधारक श्री अरनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

'अरस्वामी' जी जहाँ पधारे दर्पण सम भू होवे।
रत्नकीर्ति भी फीकी पड़ती, दर्शक के मन मोहे ॥
कुरुकुल के हे तिलक! आपकी, कीर्ति सदा जो गावे।
इह पर भव में यश को पावे, आकांक्षा मिट जावे ॥२४॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं आदर्शतल-प्रतिमारत्नमयी-देवोपनीतातिशय-गुणधारक श्री अरनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

जिस रास्ते से आप गमन हो, अनुचर होती वायु।
मैं भी अनुचर बनकर तुमको, अंतिम क्षण तक पाऊँ॥
देख मेघ को मयूर जैसे, स्वयं सहज ही नाचे।
उसी भाँति हे 'अरस्वामी' हम, आप दर्श से नाचे ॥२५॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं विहरण-मनुगत-वायुत्व-देवोपनीतातिशय-गुणधारक श्री अरनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

निर्धन धन्ना पीड़ित दुखिया, निरोग हो या रोगी।
जो भी देखे तुमको होवे, आनन्दित सुखभोगी॥
पाया परमानन्द आपने, परमात्मा पद पाके।
'अरस्वामी' तव दर्श किए संतुष्ट हुए पद आके ॥२६॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं सर्वजन-परमानन्दत्व-देवोपनीतातिशय-गुणधारक श्री अरनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

समवसरण जब आता तेरा पवन जाति सुर आते।
काँटे कंकड़ धूल दूर कर भाग्य सदा सहराते ॥
'अर जिनवर' की पूजा कर ले, पाप कर्म के काँटे।
हट जावेंगे पुण्य उदय हो, सुख ही सुख को बाँटे ॥२७॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं वायुकुमारोपशमित - धूलि - कंटकादि-देवोपनीतातिशय-गुणधारक श्री अरनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

सुगन्ध वाला रिमझिम-रिमझिम पानी सुर बरसावें।
'अरस्वामी जी' जहाँ विराजे खुशहाली बढ़ जावे॥
नाच-नाचकर खुश हो करके, जो पूजे दिन रात्री।
राहु-केतु सब आकर उससे, कर लेते हैं मैत्री ॥२८॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं मेघकुमारकृत-गन्धोदकवृष्टि-देवोपनीतातिशय-गुणधारक श्री अरनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

कंचन निर्मित सहस पत्र के, नए कमल रच देवे।
'अरस्वामी' के चरण युगल के, नीचे रख सुख लेवे॥
सुरकृत अतिशय तीर्थंकर ही, मात्र लोक में पावे।
जो भी पूजे भूत-प्रेत की बाधाएँ मिट जावे ॥२९॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं पादन्यासेकृत-पद्मानि-देवोपनीतातिशय-गुणधारक श्री अरनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

झाड़-झाड़ियाँ वृक्ष-वृक्ष के, डाल-डाल फल जावे।
ताल बावड़ी सूखे सरवर जल से भर लहरावे॥
ठुमक-ठुमक कर स्वरलहरी में, गीत आपके गावे।
'अरस्वामी' सम अतिशय पावे, दुःखों से बच जावे ॥३०॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं फल-भार-नम्र-शालि-देवोपनीतातिशय-गुणधारक श्री अरनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

मेघों के दल विद्युत धूँधल, किंचित ना बच पावे।
नभतल में हो अतिनिर्मलता, अतिशय मन को भावे॥
शरदकाल के समुद्र जैसे, निर्मल हैं 'अरस्वामी'।
जो पूजेगा सुख बरसेंगे, होवे जग में नामी ॥३१॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं शरत्कालवन्निर्मल-गगनत्व-देवोपनीतातिशय-गुणधारक श्री अरनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

आओ-आओ मोक्षमार्ग के, सार्थवाह ये आये।
ऐसा कहकर दुन्दुभि बाजे, प्रभु के पास बुलाये॥

बजा-बजाकर ढोलक बाजे, बजा-बजाकर ताली।
जो पूजेंगे 'अरस्वामी' को, अघ हो जावे खाली ॥३२॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं एतैतैति - चतुर्निकायामर - परस्पराह्वानन-देवोपनीतातिशय-गुणधारक श्री अरनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

पूरब पश्चिम उत्तर दक्षिण, दशों दिशाएँ प्यारी।
निर्मल होती सुख को देती, लगती सबमें न्यारी॥
देव जनित यह अतिशय सुंदर तीर्थंकर बन पाया।
'अरस्वामी' जी आप समागम तब तो सबको भाया ॥३३॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं शरन्-मेघवन्निर्मल-दिग्विभागत्व-देवोपनीतातिशय-गुणधारक श्री अरनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

धर्मचक्र जो सहस आर का, चलता आगे-आगे।
कहता इनके दर्शन कर लो, ज्ञान ज्योति उर जागे ॥
राज रानियाँ दास-दासियाँ सबको क्षण में छोड़ा।
विहार देखा अरस्वामी तो हमने भी मन जोड़ा ॥३४॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं धर्मचक्रचतुष्टय-देवोपनीतातिशय-गुणधारक श्री अरनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

अष्टप्रातिहार्य के ८ अर्घ्य

(ज्ञानोदय)

स्वर्णमयी सिंहासन नाना मणियों से है जटित रहा।
अधर विराजे 'अरस्वामी' के, प्रातिहार्य यह घटित हुआ॥
जीवन कर दे अर्पित इनको इन्द्रों का सिंहासन हो।
लौकिक सुख पा परम्परा से सिद्ध शिला पर आसन हो ॥३५॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं सिंहासन-प्रातिहार्य-मण्डित श्री अरनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

जिस तरुवर के नीचे बैठे, निज चेतन को ध्याते हैं।
चार घातिया पूर्ण नाशकर, प्रातिहार्य को पाते हैं॥

शोक ग्रसित भी बड़े शौक से 'अरस्वामी' को पूजेगा।
अशोक बनता उस पर सुर का, वैभव भी आ रीझेगा ॥३६॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं अशोकवृक्ष-प्रातिहार्य-मण्डित श्री अरनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

रजतमयी ये तीन छत्र जो, प्रातिहार्य का रूप लिए।
मनमोहक ये लगते कारण, शरण आपकी आज लिए ॥
छत्रच्छाया 'अरस्वामी' की, उसके सिर पर नित्य रहे।
पूजा करके छत्र चढ़ावे, भव-भव के सब पाप कटे ॥३७॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं छत्रत्रय-प्रातिहार्य-मण्डित श्री अरनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

चौंसठ चामर नित्य ढोरते, स्वर्ग लोक के इन्द्र अहो।
नीचे झुककर ऊपर उठते, कहते इनको झुक जाओ ॥
ऊर्ध्व लोक में सुर के वैभव पाकर शिव में जाओगे।
'अरस्वामी' को पूजोगे तो पुनः जन्म नहिं पाओगे ॥३८॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं चतुःषष्ठी चामर प्रातिहार्य-मण्डित श्री अरनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

पृष्ठ भाग का भामण्डल यह, परमौदारिक तन की वा।
कर्म कालिमा रहित आपकी बतलाता है निर्मलता ॥
आभामण्डल 'अरस्वामी' का, जिसको भी मिल जावेगा।
प्रातिहार्य को वह भी पाकर, तीर्थंकर पद पावेगा ॥३९॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं भामण्डल-प्रातिहार्य-मण्डित श्री अरनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

ढम-ढम-ढम-ढम बाजे बजते, नाना विध के नाद बजे।
समवसरण जब आता तेरा, दर्शन से सब काम बने॥
षट्खण्डों का वैभव त्यागा, मानो उसकी खुशियाँ ही।
दुन्दुभि बाजे बजकर कहते, भक्त बनेगा सुखिया जी ॥४०॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं दुन्दुभि-प्रातिहार्य-मण्डित श्री अरनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

कल्पवृक्ष के पुष्प स्वर्ग के, देव सदा बरसाते हैं।
विहरण होवे जहाँ-जहाँ पर, सभी जीव सुख पाते हैं॥
पुष्प वृष्टि यह प्रातिहार्य है, तीर्थंकर ही पा सकते।
'अर-जिनवर' की पूजा से ही, सौख्य निकट में आ सकते ॥४१॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं पुष्पवृष्टि-प्रातिहार्य-मण्डित श्री अरनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

दिव्यध्वनि ओंकारमयी हो, जिसको समझे सब प्राणी।
बारह कोठों में जो बैठे, सबको होती सुखदानी ॥
प्रातिहार्य यह तीर्थंकर पद पाने वाले पा सकते।
'अरस्वामी' को भजने वाले, लोक शिखर पर जा सकते ॥४२॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं दिव्यध्वनि-प्रातिहार्य-मण्डित श्री अरनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

पंचकल्याणक के ५ अर्घ्य

(लय—शांतिनाथ मुख शशि...)

फाल्गुन कृष्णा तीज रही है।
गर्भ पधारे आप सही है॥
'अरस्वामी' जगख्यात रहे हैं।
तारक केवल आप कहे है ॥४३॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं गर्भ-कल्याणक-मण्डित श्री अरनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

मगसिर की शुभ चौदस आई।
सुनकर जनता अति हरषाई॥
'अरस्वामी' ने जन्म लिया था।
तद्भव शिव को पास किया था ॥४४॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं जन्म-कल्याणक-मण्डित श्री अरनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

विरत भाव जब उदित हुआ था।
मगसिर दसमी दिवस रहा था॥
'अरस्वामी' ने दीक्षा ली थी।
भव्यों को शिव शिक्षा दी थी ॥४५॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं तपःकल्याणक-मण्डित श्री अरनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

कार्तिक शुक्ला बारस जानो।
'अरस्वामी' का ज्ञान सुमानो॥
समवसरण में आप विराजे।
भव्यों के तब भाग्य सु जागे ॥४६॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं ज्ञान-कल्याणक-मण्डित श्री अरनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

चैत कृष्ण की अन्तिम काली।
पाई शिव ललना हरियाली॥
काली थी पर बनी सुनिर्मल।
वन्दन से मिट जाते दल-दल ॥४७॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं मोक्ष-कल्याणक-मण्डित श्री अरनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

अनंत-चतुष्टय के ४ अर्घ्य

(ज्ञानोदय)

तीन-लोक की सभी वस्तुएँ, आप ज्ञान में झलक रही।
अंत रहित इस मति को पाने, मेरी मति भी तरस रही ॥
ज्ञानावरणी नाश किया सो, अमिट ज्ञान यह प्रकट हुआ।
मैंने पूजा 'अर जिन' को सो, मोक्षमार्ग अब निकट हुआ ॥४८॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं अनन्तज्ञानगुणमण्डित श्री अरनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

कर्म दर्शनावरण मिटा सो, अनंतदर्शन प्राप्त हुआ।
अवलोकन हो जाता सबका हुए केवली आप्त अहा ॥
चौदह रत्नों को छोड़ा सो, चौदहवाँ गुणस्थान हुआ।
'अरस्वामी' के पूजक के तो, इच्छित सारा काम हुआ ॥४९॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं अनन्त-दर्शन-गुणमण्डित श्री अरनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

मोह कर्म के सत्त्व नाश से अनंतसुख स्वयमेव हुआ।
कभी न मिटेगा कम नहिं होगा, रहा अलौकिक सौख्य महा ॥
'अरस्वामी' के चरण कमल में, अर्घ चढ़ा जो नमन करे।
लौकिक सुख को पाकर वह भी अनंतसुख का वरण करे ॥५०॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं अनन्त-सुख-गुणमण्डित श्री अरनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

अंतराय का नाम निशाना, मिटा दिया सो हे प्रभुवर।
अमित वीर्य से कभी न थकते, अद्‌भुत अनुपम क्षेमंकर ॥
'अर जिनवर' के पाद-पद्म की पूजा करता भाव भरी।
पूजा नहिं कर पाया तो क्या, जीवन में है सार कहीं ॥५१॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं अनन्त-वीर्य-गुणमण्डित श्री अरनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

१८ दोष से रहित १८ अर्घ्य

(दोहा)

अनादि से सबको लगा, जन्म रोग भयकार।
मार दिया पल में उसे, पहुँचे शिव के द्वार॥
आयु बंध के हेतु से फिर-फिर जन्में जीव।
आयु न बाँधी सो नहीं 'अर-जिन' पावे पीव॥५२॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं जन्म-दोष-रहित श्री अरनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

जर-जर कर दे देह को, जरा दूति जब आय।
भय लगता तब मौत का,लेकिन क्या बच पाय॥
तीर्थंकर हैं सो कभी, देह न होवे जीर्ण।
उसके कारण कर्म को, किया आपने शीर्ण॥५३॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं जरा-दोष-रहित श्री अरनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

मोह उदय से अशन की, इच्छा हो दिन-रात।
मोह बिना क्या रह सके, कहो भूख की बात॥
आत्मामृतमय अशन से, तृप्त हुए हैं आप।
'अरस्वामी' के सौख्य का, हो पाये क्या माप॥५४॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं क्षुधा-दोष-रहित श्री अरनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

प्यास बुझायी पयस से, पर न हुआ मैं तृप्त।
धर्मामृत के पान से, आप हुए परितृप्त॥
'अरस्वामी' को प्यास ये, बाधा क्यों दे आय।
जो बन जावे भक्त वो, बन जावे शिवराय॥५५॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं तृषा-दोष-रहित श्री अरनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

मृत्युराज को मारकर, लगा आत्म में ध्यान।
'अरस्वामी' ने अमिट पद, पाया तज अभिमान॥
चैत्रकृष्ण के अंत में मरकर भी तो आप।
अमर हुए सो अमर आ, गुण गावे निर्माप॥५६॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं मरण-दोष-रहित श्री अरनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

इक अणु से भी ना बचा, तुममें किंचित् राग।
राग आग सम समझकर, रहे आत्म में जाग॥
नवनिधियों को आपने, जीर्ण पत्र सम त्याग।
तभी हुआ अरनाथ में, मुक्ति वधू का राग॥५७॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं राग-दोष-रहित श्री अरनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

षोडस कारण भावना, भायी सो तीर्थेश।
तीन लोक से मित्रता, कर ली क्यों हो द्वेष ॥
'अरस्वामी' के भक्त का मिट जाता विद्वेष।
वैरी से वह ना करे, निद्रा में भी द्वेष ॥५८॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं द्वेष-दोष-रहित श्री अरनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

तन के आश्रय से सदा, रोग उपजते नित्य।
कर्मोदय से देह को, अपना माने चित्त ॥
तन ममता को छोड़कर, 'अरस्वामी' गतद्वेष।
पूजा कर ले आपकी, नहीं रहे दुख क्लेश ॥५९॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं रोग-दोष-रहित श्री अरनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

ग्रहण करे पर द्रव्य तो, उपजे मन में खेद।
षट्खण्डों को त्यागकर, आप बने निरखेद ॥
'अर-जिन' के क्यों खेद हो, तन से भी नहिं स्नेह।
जो पूजे उससे करे, मुक्ति रमा आ स्नेह ॥६0॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं खेददोष-रहित श्री अरनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

मद बढ़ता है ग्रहण से, छोड़े तो हो दूर।
नग्न दिगम्बर 'अरप्रभु' दिया मदों को चूर॥
अर्चा से वसु मद मिटे, भर जावे भण्डार।
बिना बुलाये सम्पदा, आ जाती है द्वार ॥६१॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं मद-दोष-रहित श्री अरनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

भय का लेश न अब बचा, 'अरस्वामी' के शेष।
निर्भय निश्चल आपके, भव न बचा अवशेष ॥
नाच-नाचकर आपको, पूजे चित्त लगाय।
सप्त भयों से रहित हो, साता से भर जाय ॥६२॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं भयदोष-रहित श्री अरनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

पर द्रव्यों से मोह हो, तो ललचावे चित्त।
भेद ज्ञान जब उपजता, रिपु हो जाते मित्र॥
'अरस्वामी' ने मोह का अहो उखाड़ा मूल।
इक पल में ही जा बसे, लोक शिखर के चूल ॥६३॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं मोहदोषरहित श्री अरनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

निद्रा में गाफिल बना, विवेक ना बच पाय।
आत्मा का हित भूलकर, पापों में फँस जाय॥
'अरस्वामी' के नहिं बचा, निद्रा का अब नाम।
क्षणभर भी यदि पूज ले, मिट जाएगा काम ॥६४॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं निद्रा-दोष-रहित श्री अरनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

रहे परिग्रह तो सुनो, चिन्तातुर हो चित्त।
'अर' ने चिन्ता नाशकर, आतम किया पवित्र॥
चक्रपुरी में आपने, प्रथम किया आहार।
होकर के निश्चिन्त ओ, निज में किया बिहार ॥६५॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं चिन्ता-दोष-रहित श्री अरनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

नहीं पसीना आपके, परमौदारिक देह।
स्वेद दोष से रहित हो, नहीं देह से स्नेह ॥
'अरस्वामी' की अर्चना, जो करता है नित्य।
चमक उठेगा लोक में, ज्यों चमके आदित्य ॥६६॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं स्वेद-दोष-रहित श्री अरनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

विस्मित होकर देखता, जड़ - पुद्गल को लोक।
विस्मय नाशा सो प्रभो, पूज्य हुए त्रय लोक ॥
पिता सुदर्शन भूप के, घर में जन्में आप।
काश्यपगोत्री देव के, नहीं गुणों का माप ॥६७॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं विस्मय-दोष-रहित श्री अरनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

इष्ट वस्तु से राग ही, रति कहलावे दोष।
‘अर’ ने रति को नाशकर, किया पाप का शोध ॥
छ-छम-छम-छम नाचकर, ढम-ढम ढोल बजाय।
गुण गावे जो आपके, पातक नहिं बच पाय ॥६८॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं रति-दोष-रहित श्री अरनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

वियोग होवे इष्ट का, तो उपजेगा शोक।
‘अर’ के अपना कुछ नहीं, तब तो बने अशोक ॥
सुरनर किन्नर भक्ति से, पूजें आठों याम।
आत्मिक सुख का भोग ही, उनके बचता काम ॥६९॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं शोक-दोष-रहित श्री अरनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

(ज्ञानोदय)

जहाँ-जहाँ पर शांति-कुन्थु के मनभावन जिनबिम्ब रहे।
वहाँ-वहाँ पर ‘अरस्वामी’ के वीतराग प्रतिबिम्ब रहे ॥
उन सबको मैं हाथ जोड़कर मन वच तन से शीश झुका।
अर्घ चढ़ाऊँ पूजा करने भाग्य खुला है आज अहा ॥७०॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री अरनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

(नाटक कूट-सिद्ध स्थल का अर्घ्य)

नहीं अटकना भवसागर में, यह कहता है कूट हमें।
आओ भव्यों भक्ति भाव से, पूजो अघतम टूट पड़े ॥
‘अरस्वामी’ ने इसी कूट से शेष कर्म को नाश किया।
निज चेतन में रमकर ओहो! शिव ललना को ब्याह लिया ॥७१॥

ॐ ह्रीं नाटककूटेभ्यो नमः अर्घ्यं ...।

पूर्णार्घ्य

(घत्ता)

ये अरस्वामी हैं, शिवगामी हैं, अनुपम अद्भुत पद पाया।
मैं पूर्ण अर्घ ले, पूज्य वर्ग में, पूजा करने अब आया ॥

सब काम बनेंगे, पाप टलेंगे, पूजे जो भी निश्छल हो।
वे निश्चल होवे, मद को खोवे, चित्त कभी नहिं चंचल हो ॥७२॥
ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री अरनाथ-जिनेन्द्राय नमः पूर्णार्घ्यं...।

जाप्यमंत्र : ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री अरनाथ-जिनेन्द्राय नमः।

(९/२७/१०८ बार)

जयमाला

(दोहा)

जयमाला गुणमाल ये, अरस्वामी की अद्य।
जो गावेगा भक्ति से, सौख्य मिलेंगे सद्य ॥

(ज्ञानोदय)

क्षेमपुरी का धनपति राजा सच में धन का अधिपति था।
सुखसागर में डूब रहा पर धर्मलीन था सन्मति था॥
न्याय नीति से श्रेष्ठ रीति से प्रजाजनों के पालन में।
तत्पर रहता दया भाव से, दुखियों के संचालन में ॥१॥
बड़े भाग्य से एक बार वह अर्हन् नंदन प्रभुवर के।
समवसरण में दर्शन करके आनन्दित था निजमन में ॥
सुनी देशना तो गद्गद् हो अन्तर कलियाँ खिल आयी।
विरति भाव भी जाग उठा सो दीक्षा चेतन को भायी ॥२॥

तत्क्षण बनकर परम दिगम्बर, वस्त्राभूषण छोड़ दिये।
परिजन पुरजन के सब रिश्ते, नाते क्षण में तोड़ दिये॥
अंतरंग में बढ़ी विशुद्धि जिससे प्रज्ञा वर्धित हो।
ग्यारह अंगों के ज्ञानी हो, मुनिवर्यों में शंसित हो ॥३॥

तीर्थंकर का बन्ध किया था, सम भावों से मरण किया।
जयन्त में जा जन्में इन्द्रिय सुख सागर में रमण किया॥

और वहाँ से कुरुजांगल का नगर हस्तिनापुर न्यारा।
भूप सुदर्शन के घर माता मित्र सुसेना का प्यारा ॥४॥

पुत्र हुआ था गर्भ महोत्सव रत्नवृष्टि से पूर हुआ।
जन्म महोत्सव मेरु गिरी अभिषेक किया तब पूर्ण हुआ॥
मेघ दलों का विलय देख वैराग्य भावना उर जागी।
एक सहस नृप साथ गए थे दीक्षा लेकर शिवरागी ॥५॥

अरस्वामी ने लौकिक नारी गण, को क्षण में त्याग दिया।
दया दान्ति को क्षमा क्षान्ति को लेकिन अपने साथ लिया॥
करी तपस्या मौन लिया था, वर्ष सुसोलह तक स्वामी।
फल में केवलज्ञान प्राप्त कर हुए लोक में सन्नामी ॥६॥

समवसरण तब लगा आपके, चरणों गणधर तीस नमें।
अर्ध लाख मुनि मुक्ति रमा को, वरने तुममें नित्य रमें ॥
साठ सहस थी पूज्य श्रमणियाँ नारी पद से छुटकारा।
पाने को ही दीक्षित होकर छोड़ दिया था घरकारा ॥७॥

एक लाख अरु साठ सहस जो श्रावक देशव्रती आये।
तीन लाख थी व्रती श्राविका शरण प्राप्त कर सुख पाये॥
अरस्वामी तव दिव्य देशना सुनकर सब कृतकृत्य हुए।
आप गुणों को गाकर प्रभुवर हृदय हमारे धन्य हुए ॥८॥

अहो धन्य हो, अहो धन्य हो दिव्य देशना दे करके।
धन्य किया था जीवन सबका, तीर्थंकर पद पा करके॥
वर्ष सहस्रों तक प्रभु तुमने, भरत क्षेत्र में विचरण कर।
धर्मचक्र का किया प्रवर्तन सुखदायक शुभ वृष को धर॥९॥

एक माह जब शेष बचा तब समवसरण तव विघट गया।
दिव्य देशना विहार आदिक क्षणभर में ही सिमट गया॥

सम्मेदाचल गिरि पर जाकर योग रोकने आप रुके।
मोक्ष निकट तब देख आपको, पुनःपुनः शत इन्द्र झुके ॥१०॥

नगर हस्तिनापुर में जन्में, अचल क्षेत्र से मोक्ष गए।
दुनिया के सब नाटक छोड़े नाटक[१] से भव शोष गए ॥
षट्खण्डों के वैभव को जर तृण सम क्षण में छोड़ दिया।
सहस छियानव नारीगण से नाता पल में तोड़ दिया ॥११॥

वस्त्राभूषण छोड़ दिये पर, कितने सुंदर कौन कहे।
तीन लोक की सुंदरता भी लज्जित होकर मौन गहे ॥
अस्त्र-शस्त्र से रहित रहे पर भय भी डरकर भाग गया।
वीतराग हो फिर भी तुम पद तीन लोक का राग हुआ ॥१२॥

पाँच पाप तज पंच महाव्रत पाल पाँचवीं गति पायी।
प्रातिहार्य वसु पा पहुँचे सो अष्टम वसुधा महकायी ॥
चौदह रत्नों को छोड़ा सो चौदहवें गुण तीर गये।
कोटि अठारह घोड़े तजकर सहस अठारह शील लिये ॥१३॥
चक्रवर्ति तुम रहे सातवें, सप्त भयों से छूट गए।
आठ ध्यान को छोड़ दिया सो, आठों बंधन टूट गए ॥
चौदहवें तुम कामदेव हो, कामदेव को जीत लिया।
शुक्ल ध्यान के बल से तुमने अन्तक को भयभीत किया ॥१४॥

षट्खण्डों को छोड़ दिया पर, तीन लोक के अधिपति हो।
लोकत्रय का राज्य किया है, सदा-सदा को शिवपति हो ॥
आप गुणों को गाने में तो सुरगुरुवर भी हार गया।
गणधर ऋषियों मुनियों ने भी मौन भाव स्वीकार किया ॥१५॥

एक बार भी अरस्वामी को, भक्ति भाव से जो पूजे।
चक्री-शक्री का वैभव पा, मोक्ष महल में वह पहुँचे ॥

१. नाटक कूट से

आप नाम के मात्र स्मरण से, आपद विपदा पीड़ाएँ।
जलकर होती राख वज्र से, ज्यों तरुवर की शाखाएँ॥१६॥

अरस्वामी के चरणों में आ करे समर्पित जीवन तो।
सुख ही सुख बरसेगा घर में आ जाता है सावन ओ॥
आशीर्विष[1] ज्यों मंत्र स्मरण से शीघ्र दूर हो जाता है।
नाम स्मरण से त्यों न कभी भी, पाप जहर रह पाता है॥१७॥

ज्यों दावानल की ज्वालाएँ मेघ बरसकर नष्ट करे।
त्यों अरस्वामी आप नाम ही क्रोध अग्नि के कष्ट हरे॥
तीर्थंकर से बड़ा लोक में पद नहिं कोई हो सकता।
तुमने पाया उसको क्या मम दर्श बिना मन रह सकता॥१८॥

चक्रवर्ति पद पाकर भी तो चक्कर उसका छोड़ दिया।
ध्यान चक्र से कर्म सैन्य का रास्ता तुमने मोड़ दिया॥
शरणदातृ हो शरणोत्तम हो, सर्वोत्तम हो उत्तम हो।
मंगलमय हो मंगलमय हो, मंगल मंगल मंगल हो॥१९॥

पंचम गति है पंचम मति है, परमेष्ठी पद पाया है।
सर्व लोक से पूज्य रहे हो, आतम सुख हुलसाया है॥
चैत्र माह की रही अमावस, काली थी पर उज्ज्वल हो।
चमक उठी निर्वाण देखकर अरस्वामी का मुकुलित हो॥२०॥

घर में थे तब चक्र रत्न से राजाओं को डरा दिया।
मुनि बनकर के ध्यान चक्र से, घाति कर्म को हरा दिया॥
तीर्थंकर बन धर्मचक्र से तीन लोक को झुका दिया।
समाधि चक्र से शेषकर्म को ध्यान अग्नि में जला दिया॥२१॥

---

१. ऋद्धि मंत्र

इसीलिए मैं हाथ जोड़कर सिर पर रखकर नित्य नमूँ।
पुनः पुनः मैं नमस्कार कर आप गुणों में नित्य रमूँ ॥
इसी भाव से जयमाला यह पूर्ण करूँ मैं अल्पमती।
गलती हो तो क्षमा करें जो प्राज्ञ रहे हैं श्रेष्ठमती ॥२२॥

इस पूजा के फल में स्वामी रत्नत्रय मम निर्मल हो।
मोक्ष महाफल पाने को ही मेरा मन यह निर्मद हो ॥
नमन करूँ मैं नमन करूँ मैं नमन करूँ मैं नमन करूँ।
सभी पथों को तजकर केवल आप मार्ग में गमन करूँ ॥२३॥

(घत्ता)

निर्नाम हुए तुम, धन्य हुए हम, मोक्ष गए यह सुन करके।
तव ध्यान करेंगे, मुक्ति वरेंगे, तुम सम हम भी बन करके॥
जब योग निरोधा विधि को शोधा अंतिम गुण को पा करके।
तब मुक्ति रमा आ आप शरण पा खुश होती गुण गाकर के॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री अरनाथ-जिनेन्द्राय नमः जयमाला पूर्णार्घ्यं...।

आशीर्वाद

विधान करता भक्ति से, जो भी अर का ज्येष्ठ।
भुक्ति, मुक्ति सब सहज में मिल जाती है श्रेष्ठ ॥

इत्याशीर्वाद परिपुष्पाञ्जलिं क्षिपामि/क्षिपेत्।

श्री मल्लिनाथ विधान

पीठिका

(दोहा)

मल्लिनाथ का नाम ही, मेटे दुख का काम।
इसीलिए मैं पीठिका, लिख चाहूँ शिवधाम॥१॥

(ज्ञानोदय)

वीतशोक नगरी का राजा, वैश्रवण प्रभु भक्त रहा।
विषय भोग को भोग रहा पर, जैनधर्म अनुरक्त रहा॥
चन्दन वन में सुगुप्त मुनि का, जब शुभदर्शन पाया था।
आशिष ले उपदेश सुना अरु, चरणों चित्त लगाया था॥२॥

रत्नत्रय व्रत धारण करके, नृपवर खुश आनन्दित था।
विधि विधान से व्रत पालनकर, प्राज्ञ जनों में शंसित था॥
एक दिवस वह क्रीड़ा करने, मित्र वर्ग के साथ चला।
एक वृक्ष को देख बताया, सुंदर तरु यह हरा-भरा ॥३॥

सुंदर प्यारा लगता कितना, आकर्षक फल पुष्पों से।
लदा हुआ है मनमोहक है, दूर रहा है दुष्टों से॥
क्रीड़ा करके लौट रहा जब, वज्रपात से वृक्ष वही।
टूट चुका था जला हुआ था, शोभा किंचित् बची नहीं ॥४॥

भव-भोगों से सुडोल तन से, विरत भाव उर जाग गया।
दीक्षा लेकर मुनिपन में ही, अन्तरंग से राग हुआ॥
ग्यारह अंगों के पाठी बन, सोलहकारण भावन भा।
तीर्थंकर जो श्रेष्ठ प्रकृति है, बाँधी उत्तम पावन वा ॥५॥

समाधिपूर्वक मरण किया सो, स्वर्ग अनुत्तर पाया था।
यहाँ स्वयं अहमिन्द्र बने थे, इन्द्रिय सुख को पाया था॥

आयु रही तैंतीस सिन्धु की, सुख का नहिं परिमाण रहा।
प्रवीचार नहिं नहीं देवियाँ, नहीं वहाँ अपमान कहा ॥६॥

सिंधु प्रमित आयुष भी उनका, चन्द पलों में बीत गया।
विरत भाव नहिं उपजा चित्त न, भोगों से भयभीत हुआ॥
आयु पूर्ण होने पर मिथिला, नगरी में आ जन्म लिया।
कुम्भ भूप माँ प्रभावती की, गोदी को कृतकृत्य किया ॥७॥

बालपने में कामदेव का, मूल चूल से नाश किया।
पाँचों कल्याणक को पाकर, उत्तम-उत्तम काम किया॥
नाम रहा था मल्लिनाथ जो, तीन लोक से अर्चित हैं।
नाग इन्द्र की, चक्रवर्ति, सौधर्म सभा में चर्चित हैं ॥८॥

मल्लि अतः तव विधान लिखने, पाद युगल में नमन करूँ।
भक्ति करूँ मैं संस्तव करके, अक्ष गजों का दमन करूँ॥
तव प्रसाद से कार्य सफल हो, पाप विफल हो जीवन में।
तुम सम ही पा वीतरागता, जन्म न पाऊँ भव वन में ॥९॥

इति परिपुष्पाञ्जलिं क्षिपामि/क्षिपेत्

विधान प्रारम्भ

स्थापना

(ज्ञानोदय)

हे मल्लि आप ही मोह मल्ल के, काम मल्ल के जेता हैं।
तीर्थंकर हैं क्षेमंकर हैं, मोक्षमार्ग के नेता हैं॥
इसीलिए मैं हृदय कमल पर, सादर तुम्हें बिठाता हूँ।
स्थापन करके उमग-उमग कर, पूजन आज रचाता हूँ॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री मल्लिनाथ जिनेन्द्र अत्र अवतर अवतर संवौषट् इति आह्वाननं! ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री मल्लिनाथ जिनेन्द्र अत्र तिष्ठ-तिष्ठ ठः ठः स्थापनं! ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री मल्लिनाथ जिनेन्द्र अत्र मम सन्निहितो भव-भव वषट् सन्निधिकरणं!

अष्टक

(घत्ता)

भर झारी में जल, आकर तव पद, जन्म न हो अब गुण गाऊँ।
तव चरण चढ़ाकर, शीश झुकाकर, भाव लगाकर हरषाऊँ॥
श्री मल्लि जिनन्दा, सुख के कन्दा, कुम्भ सुनन्दा अर्चूं मैं।
नित पूजूँ तुमको, मति दो मुझको, मिथ्यातम को तज दूँ मैं॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री मल्लिनाथ-जिनेन्द्राय नमः जन्म-जरा-मृत्यु-विनाशनाय जलं...।

मलयागिरि चंदन, हे शिवनंदन, करके वन्दन अब तुमको।
मैं ध्याऊँ गाऊँ, चित्त लगाऊँ, फिर ना पाऊँ अब भव को॥
श्री मल्लि जिनन्दा......॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री मल्लिनाथ-जिनेन्द्राय नमः संसार-ताप-विनाशनाय चंदनं ...।

ले अक्षत थाली, हे शिव माली, विधि जो काली नाश करो।
यह भेंट चढ़ाऊँ, शिव सुख पाऊँ, निज में आऊँ पास रहो॥
श्री मल्लि जिनन्दा, सुख के कन्दा, कुम्भ सुनन्दा अर्चूं मैं।
नित पूजूँ तुमको, मति दो मुझको, मिथ्यातम को तज दूँ मैं॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री मल्लिनाथजिनेन्द्राय नमः अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् ...।

जो पुष्प सु लेता, हे शिव नेता, तुमको देता काम हरे।
वह मन्मथ जीते, सुख से पीते, वृष को पाते मोक्ष वरे॥
श्री मल्लि जिनन्दा...॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री मल्लिनाथजिनेन्द्राय नमः कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं...।

हे क्षुधा विजेता, सबके वेत्ता, कर्म विभेत्ता पूज करूँ।
नैवेद्य सु लाऊँ, तुम्हें चढ़ाऊँ, तुम गुणगण गाऊँ भूख हरूँ॥
श्री मल्लि जिनन्दा...॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री मल्लिनाथजिनेन्द्राय नमः क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं...।

अघ अंध हटाया, पथ दरशाया, शिव को पाया सो आया।
झट प्रातः आकर, दीपक लाकर, ज्ञान प्रभाकर हरषाया॥
श्री मल्लि जिनन्दा...॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री मल्लिनाथजिनेन्द्राय नमः मोहान्धकारविनाशनाय दीपं...।

ले धूप सुगन्धित, त्रिभुवन वन्दित, कर दो खण्डित अघ मेरे।
शाश्वत सुख पाने, पाप मिटाने, रहे दिवाने हम तेरे॥
श्री मल्लि जिनन्दा...॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री मल्लिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अष्टकर्म-दहनाय धूपं ...।

बादाम सुपारी, हे सुख क्यारी, पिस्ता भारी लाया हूँ।
शिव पथ को पाने, निज में आने, चरण चढ़ाने आया हूँ॥
श्री मल्लि जिनन्दा...॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री मल्लिनाथ-जिनेन्द्राय नमः मोक्षफल-प्राप्तये फलं ...।

ये अक्षत पानी, हे सुखखानी, धर्म निशानी, आज लिये।
ले आया पद में, दुख आपद में, सुख सम्पद में आप रहे॥
श्री मल्लि जिनन्दा, सुख के कन्दा, कुम्भ सुनन्दा अर्चूं मैं।
नित पूजूँ तुमको, मति दो मुझको, मिथ्यातम को तज दूँ मैं॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री मल्लिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अनर्घ-पद-प्राप्तये अर्घ्यं...।

प्रत्येक-अर्घ्य

(दोहा)

पूजा की है द्रव्य से, आकर तेरे पास।
अब पूजूँ मैं अर्घ ले, जो-जो गुण हैं खास॥

इति मण्डलस्योपरिपुष्पाञ्जलिं क्षिपामि/क्षिपेत्

जन्मातिशय के १० अर्घ्य

(लय—शांतिनाथ मुख शशि उनहारी...)

स्वेद रहित है तन की क्यारी।
सबको लगती प्यारी-प्यारी॥
मिथिलानगरी के तुम गौरव।
पूजक में भर जावे सौरभ॥१॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं निःस्वेदत्व-जन्मातिशय-गुणधारक श्री मल्लिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

मल वर्जित है जन्म समय से।
अर्घ चढ़ाऊँ पूर्ण विनय से॥
कुम्भ भूप के नयन सितारे।
शरणागत को शीघ्र उबारे॥२॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं निर्मलत्व-जन्मातिशय-गुणधारक श्री मल्लिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

लज्जित होती क्षीर धवलता।
देख मल्लि की रक्त विमलता॥
त्रय योजन का समवसरण था।
पूजूँ तेरी पूज्य शरण पा॥३॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं क्षीरगौररुधिरत्व-जन्मातिशय-गुणधारक श्री मल्लिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

सोने जैसा रूप तुम्हारा।
गोल सुडोल सु लगता न्यारा॥
खड्गासन से मोक्ष पधारे।
पापी धर्मी सबको तारे॥४॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं सौरूप्य-जन्मातिशय-गुणधारक श्री मल्लिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

संहनन तन की शक्ति कहाती।
सबसे उत्तम सबको भाती॥
प्रभावती के नन्दन तुम हो।
पूजन करके चन्दन हम हों॥५॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं वज्रवृषभ-नाराच-संहनन-जन्मातिशय-गुणधारक श्री मल्लिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

द्रव्य सुगन्धित जितने जग में।
सब ही मिलकर आये तुम में॥
चक्रवर्ति नारायण आकर।
पूजें तुमको शीश झुकाकर॥६॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं सौगन्ध्य-जन्मातिशय-गुणधारक श्री मल्लिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

बल का तुममें पार कहाँ है।
शत इन्द्रों से पूज्य यहाँ है॥

नाचूँ गाऊँ बीन बजाऊँ।
नाथ मल्लि को अर्घ चढ़ाऊँ॥७॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं अप्रमितवीर्य-जन्मातिशय-गुणधारक श्री मल्लिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

तुम सम उत्तम लक्षण किसको।
मिल पायेंगे जब भी जिसको ॥
वो ही तीर्थंकर पद पाए।
अर्घ चढ़ा हम नाचें गाए॥८॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं सौलक्षण्य-जन्मातिशय-गुणधारक श्री मल्लिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

घेवर बावर का मीठापन।
फीका लगता तव वाणी सुन॥
धन्य मल्लि प्रभु अतिशय तेरा।
पूजूँ सुधरे परभव मेरा॥९॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं प्रियहितवादित्व-जन्मातिशय-गुणधारक श्री मल्लिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

प्रथम रहा संस्थान सुप्यारा।
नहीं किसी ने अब तक पाया॥
भाग्य जगा सौभाग्य जगा जब।
मल्लि चरण में चित्त लगा तब॥१०॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं समचतुरस्त्र-संस्थान-जन्मातिशय-गुणधारक श्री मल्लिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

केवलज्ञानातिशय के १० अर्घ्य

(दोहा)

एक शतक योजन रहे, सुभिक्षता निरबाध।
घाति कर्म नहिं शेष सो, ना होगा अपवाद॥

वीणा वादन नित्य कर, पूजो मल्लि जिनंद।
नये-नये मंगल मिले, वर्षेगा आनन्द॥११॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं सुभिक्षत्व घातिक्षय-जातिशय गुणधारक श्री मल्लिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

गगन मार्ग से आपका, गमन रहा सुख रूप।
समवसरण में देशना, सुन मिटते दुख कूप॥
घन-घन घण्टा मैं बजा, पूजूँगा दिन रात।
मल्लिनाथ के चरण में, बच न सके दुख बात॥१२॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं गगनगमनत्व-घातिक्षय-जातिशय-गुणधारक श्री मल्लिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

भोजन पानी भुक्ति का, बचा नहीं तव भाव।
जिसने पूजा भक्ति से, जीत गया हर दाँव॥
सब देवों को छोड़कर, पूजूँ मल्लि जिनन्द।
आप रहे आकाश में, ज्यों ऋक्षों में चन्द्र॥१३॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं भुक्त्यभाव-घातिक्षय-जातिशय-गुणधारक श्री मल्लिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

अभयदान देते सदा, क्यों हो जीव विनाश।
त्रिभुवन वल्लभ आपका, तभी बना जग दास॥
मल्लिनाथ के नाम से, बन जाते सब काम।
पूजक को क्षण में मिले, शाश्वत सुंदर धाम॥१४॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं अप्राणिवधत्व-घातिक्षय-जातिशय-गुणधारक श्री मल्लिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

सब जीवों को दिख रहा, तेरा मुख चहुँ ओर।
डूब रहे इस भक्त की, खीचों अब तो डोर॥
केवलज्ञानी आपने, अतिशय पाया नाश।
घातिकर्म को मूल से, निज में पा अवकाश॥१५॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं चतुर्मुखत्व-घातिक्षय-जातिशय-गुणधारक श्री मल्लिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

विद्या जितनी लोक में, पाकर तव संसर्ग।
जाना नहिं चाहे कहीं, तजकर तेरा संग ॥
मल्लि तभी तो मैं बना, आप चरण का भक्त।
अब नहिं छोड़ूँ एक क्षण, रहूँ यहीं आसक्त॥१६॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं सर्वविद्येश्वरत्व-घातिक्षय-जातिशय-गुणधारक श्री मल्लिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

कोई भी नहिं कर सके, तुम पर अब उपसर्ग।
भव-भव में प्रभु आपका, मिले मुझे सत्संग ॥
मल्लि मोह से दूर हैं, रहें मोक्ष के पास।
पूजा का फल अब मुझे, मिले शिवालय वास॥१७॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं उपसर्गाभाव-घातिक्षय-जातिशय-गुणधारक श्री मल्लिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

आप बने अरहंत सो, छाया का नहिं काम।
मल्लिनाथ का भक्त तो, बन जाता निर्नाम॥
मल्लिनाथ की छाँव में, जो आवे इक बार।
भव में अब वह जन्म ना, पावे बारम्बार॥१८॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं अच्छायत्व-घातिक्षय-जातिशय-गुणधारक श्री मल्लिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

पलके नहिं झपके प्रभो, कांक्षा नहिं अवशेष।
घाति कर्म के नाश से, गुण पाये निःशेष ॥
जो आवे तेरी शरण, सौ-सौ खुलते भाग्य।
सुख सावन बरसे सदा, मिट जावे दुर्भाग्य॥१९॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं अपक्ष्मस्पंदत्व-घातिक्षय-जातिशय-गुणधारक श्री मल्लिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

अब तो प्रभुवर आपके, बढ़ते नहिं नख केश।
तब तो पूजित लोक में, अर्हन् का यह वेष ॥
बाल ब्रह्मचारी रहे, मल्लिनाथ निज लीन।
हुई तभी तो आपके, मुक्ति रमा आधीन ॥२०॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं समान-नख-केशत्व-घातिक्षय-जातिशय-गुणधारक श्री मल्लिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

देवकृत अतिशय के १४ अर्घ्य

(ज्ञानोदय)

मल्लिनाथ की अर्धमागधी, भाषा सुनकर हारा है।
मेरा भी यह काम मल्ल सो, अर्घ चढ़ाने आया मैं॥
त्रिशूल नहिं ना गदा हाथ में, नहीं शस्त्र नहिं अस्त्र रहे ।
फिर भी तुम निर्भीक रहे सो, पूजे चक्री शक्र अरे ॥२१॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं सर्वार्ध-मागधीभाषा-देवोपनीतातिशय-गुणधारक श्री मल्लिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

मैत्री जन-जन में फैली सो, मल्लिनाथ की कीर्ति रही।
अर्चे पूजे नाचे-गावे, पावे जग में कीर्ति वही॥
वस्त्र नहीं नहिं आभूषण हैं, नहीं साज शृंगार रहा।
फिर भी रम्भा तिलोत्तमा का, रूप आपसे हार रहा ॥२२॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं सर्वजन-मैत्रीभाव-देवोपनीतातिशय-गुणधारक श्री मल्लिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

सब ऋतुओं के फल से शोभित, वृक्ष लताएँ झुक जातीं।
मल्लि आपका ज्ञान महोत्सव, मना-मनाकर सुख पाती॥
श्वेताम्बर नहिं ना पीताम्बर, नहीं रहे हो रक्ताम्बर।
रहे दिगम्बर गत अम्बर सो, पूजित तुम हो भू अम्बर ॥२३॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं सर्वर्तुफलादि-शोभित-तरु-परिणाम-देवोपनीतातिशय -गुणधारक श्री मल्लिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

मणिमय रत्नप्रभा दर्पण सम, धरती पल में हो जाती।
मल्लि संग से कलियाँ मन की, क्षण भर में ही खिल जाती॥
ताप नहीं संताप नहीं है, नहीं राग की आग रही।
इसीलिए तो आप चरण में, तीन लोक का राग सही॥२४॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं आदर्शतल-प्रतिमा-रत्नमयी-देवोपनीतातिशय-गुणधारक श्री मल्लिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

विहार होता अहो मल्लि का, जहाँ-जहाँ जिस दिशा-दिशा।
वहाँ चले अनुकूल वायु ही, पूजक को मिल जाय दिशा॥
पाप नहीं है पुण्य नहीं है, शुद्ध पूर्ण उपयोग खिला।
तब तो धन्य हुए हम हमको, आप दर्श का योग मिला॥२५॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं विहरण-मनुगतवायुत्व-देवोपनीतातिशय-गुणधारक श्री मल्लिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

परम-परम आनंद मिलेगा, सर्व जनों को जन-जन को।
मल्लि आपका मिले समागम, खुशियाँ ना हो किस मन को॥
शोक मिटा है शौक मिटा है, और मिटे हैं रोग सभी।
हर्षित होकर अर्घ चढ़ावे, बन जावे गतरोग वही ॥२६॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं सर्वजन-परमानंदत्व-देवोपनीतातिशय-गुणधारक श्री मल्लिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

वायु देव आ दूर हटाते, धूल शूल अरु कंकर को।
मल्लिनाथ का भक्त मेटता, आर्त्त-रौद्रमय संकट को॥
महाधैर्य है अतुल वीर्य है, अद्‌भुत अनुपम ज्ञान कहा।
मैंने पूजा जब से तुमको, मेरे मन का मान गया॥२७॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं वायुकुमारोपशमित - धूलि - कण्टकादि-देवोपनीतातिशय-गुणधारक श्री मल्लिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

मेघ जाति के देव वहाँ पर, गंध सहित जल बरसाते।
जहाँ पधारो मल्लिनाथ तुम, शत्रु गले आ मिल जाते॥

कामजयी हो कर्मजयी हो, मोहजयी तुम धन्य हुए।
संगति पाकर पाप मिटाकर, हम भी तुम सम रम्य हुए॥२८॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं मेघकुमारकृत-गंधोदकवृष्टि-देवोपनीतातिशय-गुणधारक श्री मल्लिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

जहाँ-जहाँ पदपद्म रखोगे, वहाँ-वहाँ सुर पद्म रखें।
मल्लिनाथ मैं चहक चहककर, अर्घ चढ़ाऊँ मुक्ति सखे!॥
मृत्यु जीतकर जन्म दोष से, रहित हुए सो शिव पाया।
महिमा सुनकर अर्घ सु लेकर, हर्ष-हर्षकर पद पाया॥२९॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं पादन्यासेकृत-पद्मानि-देवोपनीतातिशय-गुणधारक श्री मल्लिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

मीठे-मीठे पके फलों से, लता गुल्म तरु फलते हैं।
पापी के तो पाप कर्म भी, पुण्य रूप में ढलते हैं॥
मल्लि आपकी पूजा से तो, कामदेव भी ठण्डा[१] हो।
शीलवान बन यश पायेगा, चाहे पापी अन्धा हो॥३०॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं फल-भार-नम्र-शालि-देवोपनीतातिशय-गुणधारक श्री मल्लिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

शरदकाल में जैसे नभतल, स्वच्छ सुनिर्मल हो जाता।
वैसे ही हो गगन जहाँ पर, समवसरण तव आ जाता॥
पाँचों कल्याणक का वैभव, पाकर पंचमगति पायी।
तव प्रसाद से मल्लि मुझे भी, तव पूजन की मति आयी॥३१॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं शरत्कालवन्निर्मल-गगनत्व-देवोपनीतातिशय-गुणधारक श्री मल्लिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

आओ भव्यो जल्दी आओ, इनके चरणों में आओ।
दुन्दुभि बाजे बज-बज कहते, इनके पद में रम जाओ॥
मल्लिनाथ का समवसरण यह, बार-बार नहिं मिल पावे।
अवसर आया इनको पूजो, यह अवसर फिर नहिं आवे॥३२॥

---

१. समाप्त

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं एतैतैति - चतुर्निकायामर - परस्पराह्वानन-देवोपनीतातिशय-गुणधारक श्री मल्लिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

दशों दिशाएँ ऐसी लगतीं, शरदकाल ही आ पहुँचा।
निर्मल-निर्मलतम होकर के, कहती प्रभु का पथ सच्चा॥
मल्लि आपकी भक्ति करे तो, कृष्ण अमावस पूनम हो।
भाग्य सितारा चमके उसका, जीवन सच में सावन हो॥३३॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं शरन्मेघवन्निर्मल-दिग्विभागत्व-देवोपनीतातिशय-गुणधारक श्री मल्लिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

चलते जाते धर्मचक्र चउ, जहाँ-जहाँ प्रभु जाते हैं।
अतिशय सुरकृत धन्य देव भी, पूजा करने आते हैं॥
मल्लि आपको नमस्कार कर, जो भी शीश झुकायेगा।
लौट न आवे शिव में जावे, अपने में रम जायेगा॥३४॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं धर्मचक्रचतुष्टय-देवोपनीतातिशय-गुणधारक श्री मल्लिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

अष्ट प्रातिहार्य के ८ अर्घ्य

(लय—मुनि सकल व्रती बड़भागी...)

गत शोक वृक्ष के नीचे, जा बन जाते हैं ऊँचे।
जब चौथा[१] ध्यान लगाते, तब विदा घाति हो जाते॥३५॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं अशोकवृक्ष-प्रातिहार्य-मण्डित श्री मल्लिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

तब देव पुष्प बरसाते, जब मल्लिनाथ है आते।
इस प्रातिहार्य को पाया, सो जग ने शीश झुकाया॥३६॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं सुरपुष्पवृष्टि-प्रातिहार्य-मण्डित श्री मल्लिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

ये चामर झुक-झुक कहते, तू आ जा इनके पथ पे।
तव जीवन होगा सार्थक, ये मल्लिप्रभु शिव साधक॥३७॥

---
१. शुक्लध्यान

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं चतु:षष्ठि-चामर-प्रातिहार्य-मण्डित श्री मल्लिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

भामण्डल में दिख जाते, भव सात भव्य जब आते।
हम मल्लिप्रभु के द्वारे, आ रत्नत्रय वृष धारे॥३८॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं भामण्डल-प्रातिहार्य-मण्डित श्री मल्लिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

बज ढोल तुरहि शहनाई, ये कहते आओ भाई।
शिव सार्थवाह ये आए, हम मल्लि चरण गुण गाए॥३९॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं दुन्दुभि-प्रातिहार्य-मण्डित श्री मल्लिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

त्रय छत्र रजतमय प्यारे, जो कहें घाति निरवारे।
सो मल्लिनाथ पद आ जा, तू पूजन कर सुख पा जा॥४0॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं छत्रत्रय-प्रातिहार्य-मण्डित श्री मल्लिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

जो दिव्यध्वनि प्रिय वाणी, सुन झुक जाते अभिमानी।
हैं मल्लि धर्म उजियारे, ये शरणागत को तारे॥४१॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं दिव्यध्वनि-प्रातिहार्य-मण्डित श्री मल्लिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

इस स्वर्णमयी सिंहासन, पर अधर आपका आसन।
प्रभु मल्लिनाथ सुखदाता, मैं गाऊँ तव गुण गाथा॥४२॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं सिंहासन-प्रातिहार्य-मण्डित श्री मल्लिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

पंचकल्याणक के ५ अर्घ्य

(घत्ता)

जो चैत्र माह की, पुण्य भाव सी, पावन एकम तिथि आयी।
तब गर्भ पधारे, नयन सितारे, प्रभावती के सुखदायी ॥

यह कल्याणक है, शिव का मग है, मल्लिनाथ ने पाया है।
सो अर्घ बनाकर, चित्त लगाकर, भक्त चढ़ाने आया है॥४३॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं गर्भ-कल्याणक-मण्डित श्री मल्लिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

तब विधियाँ सुलझी, मगसिर उजली, ग्यारस तिथि थी जब आयी।
प्रभु मल्लि तीर्थ बन, कुम्भराज घर, जन्म लिया भू हरषायी॥
सौधर्म सु आया, गज बिठलाया, मेरु गिरी पर न्हवन किया।
ला माँ को सौंपा, अघ को रोका, सुर ने ताण्डव नृत्य किया॥४४॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं जन्म-कल्याणक-मण्डित श्री मल्लिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

शुभ ग्यारस तिथि में, बने अतिथि वे, चक्रपुरी के भूधर ने।
आहार दिया था, सफल किया था, जन्म मल्लि पद छू करके॥
जब मगसिर आया, मन ललचाया, दीक्षा लेने धन्य हुए।
जो अष्टद्रव्य ले, पूजा करते, वे ही जग में रम्य हुए॥४५॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं तपः कल्याणक-मण्डित श्री मल्लिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

जो कृष्णा दूजी, पौष माह की, केवलज्ञानी आप बने।
तब सुरनर किन्नर, राजा भूधर, उत्सव कर कृतकाज बने॥
वन रहा मनोहर, घाति नाशकर, समवसरण में शोभित हो।
उपदेश दिया तब, अर्घ लिया शुभ, आया तुम पद मोहित हो॥४६॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं ज्ञान-कल्याणक-मण्डित श्री मल्लिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

निर्वाण पधारे, भव नहिं धारे, मल्लि कभी भी भू पर आ।
वह फाल्गुन महिना, पायी महिमा, पंचम तिथि में वा वा वा॥
हम थाल सजा के, चरण चढ़ाने, खुश होकर के आये हैं।
सो फल में हमको, निज का पद हो, आशा यही लगाये हैं॥४७॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं निर्वाण-कल्याणक-मण्डित श्री मल्लिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

अनंत चतुष्टय के ४ अर्घ्य

(लय—मुनि सकलव्रती...)

जब अमित ज्ञान प्रकटाया, अरहंत महापद पाया।
श्री मल्लि रहे अघहारी, सो शिव के हैं अधिकारी॥४८॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं अनंत-ज्ञान-गुणमण्डित श्री मल्लिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

जब दर्शन पाते तेरे, मिट जाते अघ के डेरे।
तुम अतुल दर्श के स्वामी, सो बने आप सन्नामी॥४९॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं अनंत-दर्शन-गुणमण्डित श्री मल्लिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

जो सौख्य मिला है तुमको, वह मिल जावे अब हमको।
सो मल्लिप्रभु के डेरे, हम आवें साँझ सबेरे॥५0॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं अनंत-सुख-गुणमण्डित श्री मल्लिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

जो पाया वीर्य अनोखा, नहिं उस सम कोई चौखा।
हम आप दर्श के प्यासे, हैं अर्पित तव पद श्वासे॥५१॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं अनंत-वीर्य-गुणमण्डित श्री मल्लिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

१८ दोष से रहित १८ अर्घ्य

(लय—कहाँ गये चक्री जिन...)

क्षुधा रोग से पीड़ित होकर, अभक्ष्य खाया है।
भोजन पानी त्याग आपने, निज को ध्याया है॥
इसीलिए हे मल्लि आपको, दुनिया पूज रही।
आप भक्त बन अर्घ चढ़ाकर, अघ से दूर हुई॥५२॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं क्षुधा-दोष-रहित श्री मल्लिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

पीते नहिं हैं फिर भी प्यास न, तुमको लगती है।
धन्य आपकी भक्ति भव्य के, भय को हरती है॥
मल्लि आपके पद पंकज में, अलि सा लीन रहे।
भक्त शिरोमणि मान न करता, और न दीन बने॥५३॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं तृषादोषरहित श्री मल्लिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

सातों भय को नाश आप ही, भय से दूर हुए।
निर्भय बनकर भयातीत तुम, सुख के पूर हुए॥
मल्लि आपके पद पंकज की, अर्चा करता जो।
जन्म-मरण की भव-भव दुख की, चर्चा हरता वो ॥५४॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं भय-दोष-रहित श्री मल्लिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

किसी वस्तु को देख आपको, घृणा न आती है।
द्वेष उपजता नहीं आपके, मन को भाती है॥
संबल[१] पर तुम संबल पाकर, भव से पार हुए।
भव्यों के तुम मोक्षमार्ग में, शिव आधार हुए॥५५॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं द्वेष-दोष-रहित श्री मल्लिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

राग नहीं है विषय भोग से, और न योगों से।
तब तो पायी समता बचकर, भव के रोगों से॥
मल्लि आपका नाम मात्र ही, भव को हरता है।
और राग को पूर्ण नाशकर, शिव सुख करता है॥५६॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं राग-दोष-रहित श्री मल्लिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

मात्र मोह के कारण स्वामी, भव में भटका मैं।
हे निर्मोही! भव्य मात्र तव, पद में रहता है॥
मोह मल्ल के जेता तुमको, महामल्ल अर्चें।
झूम-झूमकर अर्घ चढ़ा हम, मन ही मन हर्षे॥५७॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं मोह-दोष-रहित श्री मल्लिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

१. कूट का नाम

चिंता लगती परद्रव्यों की, संगति कर ले तो।
चिंता मिटती आतम ध्याकर, शिव को वर ले वो॥
अचिन्त्य स्वामी चिंतन तेरा, नहिं कर पायेंगे।
गणधर मुनिवर मल्लि आपकी, महिमा गायेंगे॥५८॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं चिंतादोषरहित श्री मल्लिनाथजिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

जरा घेरती तन को तब वह, जीर्ण-शीर्ण होता।
तीर्थंकर हैं मल्लि आप सो, नहीं जीर्ण होता॥
मरण दूति का नाश किया सो, जरा न छूयेगी।
और मुक्ति वा! आकर तेरे, पद में झूमेगी॥५९॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं जरादोषरहित श्री मल्लिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

रोगी हो या रहा निरोगी, तन तो बन्धन है।
सब जीवों के कर्म उदय ही, दुख आक्रन्दन हैं॥
मल्लि रोग से रहित हुए सो, तन नहिं पावेंगे।
बने अदेही रहे विदेही, हम गुण गावेंगे॥६0॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं रोग-दोष-रहित श्री मल्लिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

अंतक का भी अंत किया सो, मृत्यु विजेता हो।
मल्लि आप ही मोक्षमार्ग के, सच्चे नेता हो॥
मर-मर कर हैरान हुआ सो, उसे मिटाऊँ मैं।
आप भक्ति के फल में स्वामी, मृत्यु न पाऊँ मैं॥६१॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं मरण-दोष-रहित श्री मल्लिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

स्वेद नहीं आवेगा तुमको, अर्हत् पद पाया।
तब तो अहमिन्द्रों का मन भी, तुममें ललचाया॥
पाप प्रणाशक मल्लि आपका, नाम रटेगा जो।
आपद में भी धर्म-मार्ग से, नहीं हटेगा वो॥६२॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं स्वेद-दोष-रहित श्री मल्लिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

खेद नहीं होता है स्वामी, जीते दोष सभी।
तब तो हे निर्दोषी! दोष न, आवें लौट कभी॥
धन्य-धन्य हे मल्लि आपकी, ब्रह्मचर्य महिमा।
सुनकर मैं तो गद्‌गद् होकर, गाऊँ तव गरिमा॥६३॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं खेद-दोष-रहित श्री मल्लिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

कल्याणक को समवसरण को, प्रातिहार्य पाये।
फिर भी मद का नाम नहीं सो, सुर नर पद आये॥
धन्य हुआ मैं आज आपके, दर्शन पाकर के।
हे निर्मद! हम आनन्दित हैं, गाथा गाकर के॥६४॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं मद-दोष-रहित श्री मल्लिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

पर द्रव्यों में रति करता तो, पाप बाँधता है।
आप मार्ग में रति कर ले तो, भ्रमण नाशता है॥
तुम तो रति से रहित रहे सो, रागी जन आवें।
अर्घ चढ़ाकर शिव पथ पर वे, जल्दी बढ़ जावें॥६५॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं रति-दोष-रहित श्री मल्लिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

अचरज लगता मुझ पर मुझको, तुमको तजकर हा।
मिथ्या देवों को क्यों पूजा, अब सुधि आयी वा॥
विस्मय दूषण रहित मल्लि के, दर्श किये स्वामी।
अर्घ चढ़ा मैं आज आपका, भक्त बना नामी॥६६॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं विस्मय-दोष-रहित श्री मल्लिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

निद्रा कैसे आवेगी जो, तिरस्कार पाया।
जागृत देखा तुमको तो मम, आतम हुलसाया॥
नींद विजेता मल्लि आपको, मुनिवर ध्याते हैं।
चक्रवर्ति सौधर्म इन्द्र भी, अर्घ चढ़ाते हैं॥६७॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं निद्रा-दोष-रहित श्री मल्लिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

जन्म न होगा पुनः कभी भी, आप अजन्मा हो।
तब तो स्वामी केवल तुम ही, मम भगवन्ता हो॥
मल्लि आपकी महिमा गावे, गद्‌गद्‌ वाणी हो।
तव गुण गावे उसकी भव-भव, मीठी वाणी हो॥६८॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं जन्म-दोष-रहित श्री मल्लिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

वस्तु तत्त्व को नहिं समझे तो, शोक सताता है।
दर्श आपका क्षणभर में ही, शोक मिटाता है॥
मल्लि आपकी महिमा गाने, वाचस्पति हारा।
अल्प बुद्धि मैं अर्घ चढ़ाकर, चाहूँ शिव द्वारा॥६९॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं शोक-दोष-रहित श्री मल्लिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

(ज्ञानोदय)

गर्भगृहों में जिनालयों में, चैत्यालय में गिरिवर पर।
गुफा कंदरा भू के अंदर, जहाँ विराजे श्री जिनवर॥
मल्लिनाथ के बिम्ब उन्हें मैं, मन से वच से काया से।
करूँ वंदना अर्घ चढ़ाऊँ, तजकर जग की माया मैं॥७०॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री मल्लिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

कूट रहा है सम्बल जिसके, दर्शन से बल मिल जाता।
शिव जाने का सुख पाने का, जिससे अघतम मिट जाता॥
यहीं पधारे मल्लिनाथ जी, योग निरोधी बनने को।
अर्घ चढ़ाऊँ तनकारा तज, शुद्धातम के भजने को॥७१॥

ॐ ह्रीं सम्बलकूटेभ्यो नमः अर्घ्यं ...।

पूर्णार्घ्य

(घत्ता)

हे मल्लि आपके पूज्य पाद में, मैं तो निशदिन आऊँगा।
शुभ अर्घ सजाकर, भाव लगाकर, पूजन दिव्य रचाऊँगा॥

तुम वीतराग हो, रहित पाप हो, भव सागर के तीर गये।
सो पूजा करके, ममता तजके, भवसागर की पीर हरे॥७२॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री मल्लिनाथ-जिनेन्द्राय नमः पूर्णार्घ्यं...।

जाप्य मंत्र—ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री मल्लिनाथ-जिनेन्द्राय नमः।

(९/२७/१०८)

जयमाला

(दोहा)

जयमाला श्री मल्लि की, देती पथ पाथेय।
वीतराग को छोड़कर, शेष सभी हैं हेय॥१॥

(ज्ञानोदय)

यौवन आया तब राजा ने, राजकुमारी से शादी।
पक्की करके लग्न रचाने, पाने को सुख आबादी॥
द्वार-द्वार पर तोरण द्वारे, बाँध ध्वजाएँ फहराई।
बड़े-बड़े दरवाजे बनवा, सौम्य घंटियाँ लगवाई॥२॥
विविध रंग की विविध ढंग की, रांगोली को माँडा था।
नगर जनों ने जगह-जगह सम्मान कार्य को साधा था॥
मल्लिनाथ के विवाह की जब, तैयारी सब पूर्ण हुई।
सज-धज करके बाराती की, सभी टोलियाँ पूर्ण बनी॥३॥
मल्लि प्रभु जब देख रहे थे, सजी-धजी उस नगरी को।
स्वर्गपुरी को लज्जित करने, वाली सुख की गगरी को॥
तभी अचानक जातिस्मरण का, स्वामी के उर उदय हुआ।
शीघ्र अनुत्तर विमान की सब, विभूति आयी याद तदा॥४॥
इतने लम्बे अर्सों तक ओ, मैंने जो-जो भोग किये।
उनके आगे स्वल्प मात्र ही, मानव भव के भोग रहे॥

वहाँ रहा प्रविचार रहित मैं, फिर क्यों शादी रचवाऊँ।
भोगों में फँस व्यर्थ गँवाकर, मानव भव को दुख पाऊँ॥५॥
बारह भावन भाकर इस विध, विरति भाव को प्राप्त हुए।
तत्क्षण लौकान्तिक सुर आकर, उनके पद प्रणिपात हुए॥
करी प्रशंसा धर्म भाव की, संयम पथ पर चलने की।
परम दिगम्बर दीक्षा लेकर, अष्ट कर्म को दलने की॥६॥
तभी मल्लि ने जयन्त वन में, वस्त्राभूषण छोड़ दिये।
नमः सिद्ध कह परिजन पुरजन, से नाते सब तोड़ दिये॥
दुनिया कहती राग आग है, जला-जलाकर राख करे।
भव-भव में भटकावे सबको, इससे प्राणी पाप करे॥७॥
मल्लिनाथ पर आप चरण से, राग पाप का नाश करे।
स्वर्ग दिलावे प्रथम बाद में, मोक्षमहल को पास करे॥
सच में तेरे पद पंकज की, राग आग है सच्ची जी।
जो पातक को जला बनाती, चेतनता को अच्छी ही॥८॥
विषय-भोग का राग सही में, आग रहा है आग महा।
इनमें फँसकर करता आया, इनमें मैं अनुराग हहा !!॥
यही राग है हाय लोक में, अस्ताचल की लाली सा।
फैलाकर यह मिथ्यातम को, किस्मत करता काली हा॥९॥
और आपसे राग कहा है, उदयाचल की लाली सा।
कोटि भवों के पाप नाशता, अरु करता हरियाली वा॥
अतः आपसे राग करें हम, जब तक शिव को नहिं पावें।
कर्मबंध से बचकर हम भी, घाति रहित नहिं बन जावें॥१०॥
धन्य आपने भोगों के प्रति, राग प्रथम ही छोड़ दिया।
और राग जो प्रशस्त माना, उससे भी मुख मोड़ लिया॥
उसके फल में अर्हत् पद को, क्षेमंकर पद पाया है।

वीतरागता सर्वदर्शिता, पूर्ण ज्ञान विलसाया है॥११॥
दीक्षा लेते ही हे स्वामी, छह दिन का बस समय लगा।
आकर तब कैवल्य ज्ञान ने, शीघ्र आपका वरण किया॥
मिथिला नगरी में ही ओहो, कल्याणक चतु पाये थे।
अचल क्षेत्र से शिवपुर पहुँचे, पुनः लौट नहिं आयेंगे॥१२॥
कलश चिह्न है पीत वर्ण है, रहे कलश सम मंगल तुम।
आयुष पचपन सहस वर्ष था, कुम्भ भूप के नंदन तुम॥
तन ऊँचा पच्चीस धनुष पर, सुन्दरता का पार नहीं।
तुम से सुंदर और लोक में, नहीं मिलेगा रूप कहीं ॥१३॥
फिर भी मद नहिं स्नेह नहीं था, नहीं देह से ममता थी ।
अहो धन्य हो सबमें तेरी, साम्य भावना समता थी॥
तव शासन में चक्रवर्ति जो, पद्म नाम विख्यात हुआ।
नंदिमित्र बलदेव रहा जो, भक्त आपका खास हुआ॥१४॥
पुष्पदन्त था नारायण प्रतिनारायण प्रहरण रहा।
महापुरुष वह पाद पद्म में, अलि सम ही आसक्त कहा॥
नाच-नाचकर चामर ढोरूँ, उमग-उमगकर नृत्य करूँ ।
ढोल नगाड़े बजा-बजाकर, आप चरण की भक्ति करूँ ॥१५॥
मधुर स्वरों में गा-गाकर संगीत गीत मैं भजन करूँ ।
ताल मंजीरे बजा आपके, चरणों में मैं नमन करूँ ॥
चम-चम चम-चम करते सुन्दर, थाल सजाऊँ रजतमयी।
श्रीफल ऐला अक्षत दीपक, लाडू-पेड़ा चंदन भी॥१६॥
और कलश दो स्वर्णिम रखकर, आऊँ पूजा करने को।
रत्नजटित शुभ सिंहासन पर, तुमको स्थापित करके औ॥
न्हवन करूँ मैं अर्चा करके, पाद युगल की रज को मैं।
शीश चढ़ा कृतकृत्य हुआ सा, नमस्कार कर तुमको मैं॥१७॥

पुलकित होकर गद्गद् मैं जब, आप चरण तल्लीन हुआ।
लगा चित्त में मानों सुर के, सिंहासन आसीन हुआ॥
सब चिंताएँ क्षणभर में ही, डरी-डरी सी भाग गयी।
और व्याधियों बाधाओं की, स्वामी सारी साख गयी॥१८॥
अब तो मैं निश्चिंत हुआ मम, जीवन यौवन धन्य हुआ।
धन्य हुआ मैं धन्य हुआ मैं, धन्य हुआ मैं धन्य हुआ॥
कैसे शब्दों में बतलाऊँ, कितना खुश हूँ आज अहो।
मानो पाया मल्लि दर्श से, षट्खण्डों का राज्य अहो॥१९॥
शब्द नहीं है बुद्धि नहीं है, गुण गाने की शक्ति नहीं।
किन्तु आपके पाद-पद्म में, टंकोत्कीर्णक भक्ति रही॥
इसीलिए कुछ शब्दों में जो, पूजा आज रचाई है।
वो ही मेरे अघनाशक है, यही रही सच्चाई है ॥२०॥
अतः पूर्ण कर जयमाला अब, पुनः पुनः पद नमन करूँ।
शिव ललना को पाने तेरे, पथ पर ही मैं गमन करूँ ॥
कमी रही हो इसमें कोई, बुद्धिमान सब माफ करे।
पूजा करके चरण कमल की मुक्ति वधू को आप वरें॥२१॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री मल्लिनाथ-जिनेन्द्राय नमः जयमाला पूर्णार्घ्यं...।

आशीर्वाद

बाल ब्रह्ममय मल्लिनाथ का, विधान जो भी रचवाता।
भव के दुख से पाप बंध से, आपद से वह बच जाता॥
पूजा करके स्वर्ग लोक के, इन्द्रिय सुख को पाता है।
फिर तो मुनि बन आत्मध्यान से, मोक्षपुरी में जाता है॥

इत्याशीर्वादः परिपुष्पाञ्जलिं क्षिपामि/क्षिपेत्

सुव्रतदायक श्री मुनिसुव्रतनाथ विधान

पीठिका

(दोहा)

लिखूँ पीठिका हे प्रभो, सुव्रत जो जगदीश।
चिह्न रहा कछुआ सुनो, रहे बीसवें ईश॥

(ज्ञानोदय)

चम्पापुर में हरिवर्मा नृप, सुख से जीवन जीता था।
मात-पिता के लाड़ प्यार में, उसका बचपन बीता था॥
भूप बना तो सर्व प्रजा के, दुख को सुनकर दूर करें।
पूज्य जनों में नम्रनीत हो, मद को वह चकचूर करे॥१॥

मुनिवर अनंतवीर्य पूज्य की, तीन प्रदक्षिण दे करके।
नमस्कार कर बैठ सुना, उपदेश साधु का मन भरके॥
विरत हुआ था भव-भोगों से, गुरु चरणों में दीक्षा ले।
करी तपस्या चित्त लगाकर, भव्यों को शिव शिक्षा दे॥२॥

और बाँधकर तीर्थंकर पद, प्राणत सुर में इन्द्र बने।
राजगृही में आकर माता, सोमा के सुत चन्द्र बने॥
पाँचों कल्याणक में स्वामी, देवों से भी अर्च्य हुए।
तीन लोक के सौ इन्द्रों से, अर्चित होकर वन्द्य हुए॥३॥

जन्म पूर्व ही ओहो तुममें, अवधिज्ञान था सम्यक् था।
गर्भ अवस्था में ही तेरा, जीवन सुखमय रम्यक् था॥
राज्यावस्था की इक घटना, सुनो आज मैं बतलाऊँ।
तीर्थंकर की परम हितंकर, बात बताकर सुख पाऊँ॥४॥

एक दिवस इक गजपालक आ, उनसे बोला हे राजा।
स्वस्थ हस्ति भी भोजन तज कर, आज बना है दुखकाजा॥

आप जानते पूर्वोत्तर की, भव-भव की सब बातें हैं।
अतः हमें बतलाओ स्वामी, आप वचन मन भाते हैं॥५॥

सुव्रतनृप ने अवधिज्ञान से, जान सभी को बतलाया।
वन में भोगे भोग याद कर, हाथी मन में अकुलाया॥
झट से गज के निकट पहुँचकर, सम्बोधित कर बोले यों।
अरे भोग को भूलो हाथी, क्यों विषयों में डोले हो॥६॥

भोग दुःखमय उनका फल भी, दुखदायी है सोच अभी।
आत्मा का कल्याण करो तुम, विषय-भोग को छोड़ सभी॥
सम्बोधन पा हाथी ने औ, पाँच अणुव्रत धार लिये।
पा करके गुणस्थान पाँचवाँ, मन में निर्मल भाव किये॥७॥

इससे ही नृप मुनिसुव्रत के, विरत भाव उर जाग गया।
बारह भावन भाकर दीक्षा, लेने चेतन पाग गया॥
दीक्षा लेकर पंचमज्ञानी, बनकर सुखमय आप बने।
दिव्यदेशना देकर जग को, तीनलोक सिरताज बने॥८॥

ऐसे सुव्रत पूज्य प्रभु की, गुण गाथा मैं लिख पाऊँ।
आप चरण आदर्श बनाकर, निज चेतन को लख पाऊँ॥
नमस्कार कर शीश झुकाऊँ, कोटि-कोटिशः नमन करूँ।
तव प्रसाद से विधान लिखकर, पाप कर्म का शमन करूँ ॥९॥

इति परिपुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्/क्षिपामि

विधान प्रारम्भ

स्थापना

(ज्ञानोदय)

मुनियों के शुभ महाव्रतों को, धारा सुव्रत कहलाए।
ऋषि मुनि यति अनगारों को भी, शरण आप की मन भाए॥
मुनिसुव्रत जी तुम्हें बुलाकर, हृदय-कमल पर पधराऊँ।
पूजा अर्चा चरण-वंदना करके मन में हरषाऊँ॥

(दोहा)

आह्वानन है स्थापना, सन्निधि करता आज।
अवसर पाकर पूजना, सबसे सुंदर काज ॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री मुनिसुव्रत जिनेन्द्र अत्र अवतर अवतर संवौषट् इति आह्वाननं! ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री मुनिसुव्रत जिनेन्द्र अत्र तिष्ठ-तिष्ठ ठः ठः स्थापनं! ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री मुनिसुव्रत जिनेन्द्र अत्र मम सन्निहितो भव-भव वषट् सन्निधिकरणं!

अष्टक

(ज्ञानोदय)

रत्नजटित इस स्वर्ण कलश में, उज्ज्वल जल भर लाया हूँ।
कर्म कालिमा धुल जावे मम, विनती करने आया हूँ॥
त्रिभुवन पूजित मुनिसुव्रत को, तीन योग से नमन करूँ।
पूजा करके पूज्य आपकी, मोक्षमार्ग पर गमन करूँ ॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री मुनिसुव्रत-जिनेन्द्राय नमः जन्म-जरा-मृत्यु-विनाशनाय जलं...।

चंदन घिस-घिस लेप लगाया, पर ना शीतलता पायी।
तब तो चंदन चढ़ा आपकी, महिमा मैंने अब गायी॥
त्रिभुवन पूजित...॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री मुनिसुव्रतजिनेन्द्राय नमः संसारतापविनाशनाय चंदनं...।

सुंदर अक्षत थाली भरकर, पूजन आज रचाई है।
पूजा करके सम्यक् पाने, भक्त मण्डली आई है॥
त्रिभुवन पूजित मुनिसुव्रत को, तीन योग से नमन करूँ।
पूजा करके पूज्य आपकी, मोक्षमार्ग पर गमन करूँ॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री मुनिसुव्रतजिनेन्द्राय नमः अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् ...।

काम वासना के वश होकर, अंधा सा मैं व्यथित हुआ।
पुष्प चढ़ाकर पूजा फलतः कामदेव मम व्यथित हुआ॥
त्रिभुवन पूजित...॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री मुनिसुव्रतजिनेन्द्राय नमः कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं...।

लाडू-पेड़ा शुद्ध बनाकर, आप चरण में अर्पित हैं।
क्षुधा मिटाने केवल तुमको, जीवन आज समर्पित है॥
त्रिभुवन पूजित...॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री मुनिसुव्रतजिनेन्द्राय नमः क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं...।

कोटि-कोटि मैं दीप जलाऊँ, प्रकाश फिर भी थोड़ा है।
दीप चढ़ाकर आप ज्ञान से, मैंने मन को जोड़ा है॥
त्रिभुवन पूजित...॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री मुनिसुव्रतजिनेन्द्राय नमः मोहान्धकारविनाशनाय दीपं...।

चंदन केसर लौंग आदि की, खुशबू वाली धूप चढ़ा।
पूजा करके मौज मनाऊँ, हर्ष चित्त में आज बढ़ा॥
त्रिभुवन पूजित...॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री मुनिसुव्रत-जिनेन्द्राय नमः अष्टकर्म-दहनाय धूपं ...।

श्रीफल ले अखरोट चिरौंजी, काजू किसमिस ऐला के।
थाल भराकर कर में लेकर, चरणों आया चेला ये॥
त्रिभुवन पूजित...॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री मुनिसुव्रत-जिनेन्द्राय नमः मोक्षफलप्राप्तये फलं ...।

आठ द्रव्य ये मिला प्रभो मैं, अष्टम वसुधा पाने को।
पूजा करता आठ पहर अब, मोक्ष महल में जाने को॥
त्रिभुवन पूजित मुनिसुव्रत को, तीन योग से नमन करूँ।
पूजा करके पूज्य आपकी, मोक्षमार्ग पर गमन करूँ॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री मुनिसुव्रतजिनेन्द्राय नमः अनर्घपदप्राप्तये अर्घ्यं...।

प्रत्येक-अर्घ्य

(दोहा)

वसुविध द्रव्यों से प्रभो, पूजे तेरे पाद।
अन्य गुणों को पूजने, आया सुन वृषनाद॥

इति मण्डलस्योपरिपुष्पाञ्जलिं क्षिपामि/क्षिपेत्

जन्मातिशय के १० अर्घ्य

(लय—कहाँ गये चक्री जिन...)

बचपन से ही स्वेद कणों से, रिक्त देह तेरा।
तेरी पूजन करने प्रभुवर, ललचा मन मेरा॥
मुनिसुव्रत जी काले हैं पर, न्यारे प्यारे हैं।
जो आता है चरण-शरण में, उसको तारे ये॥१॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं निःस्वेदत्व-जन्मातिशय-गुणधारक श्री मुनिसुव्रत-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

पौष्टिक मीठा भोजन करते, किन्तु न मल बनता।
जो भी खाते-पीते वह सब, पूरा ही पचता॥
मूत्र आदि जो ग्लानिप्रद है, तन में क्यों उपजे।
मुनिसुव्रत की पूजा से तन, विरति भाव निपजे॥२॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं निर्मलत्व-जन्मातिशय-गुणधारक श्री मुनिसुव्रत-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

धवल-धवलतम रक्त रहा है, तेरे तन में ये।
बतलाता जो वत्सलता का, भाव हृदय में है॥

वत्सल गुण के कोष आपमें, अर्पित होता जो।
मुनिसुव्रत सम पूर्व पाप को, क्षण में खोता वो॥३॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं क्षीरगौररुधिरत्व-जन्मातिशय-गुणधारक श्री मुनिसुव्रत-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

सुव्रत तेरे जैसा सुन्दर, रूप न मिलता है।
पूजक के सब मिटे व्याधियाँ, आनन खिलता है॥
अतिशय यह सौरूप्य आपका, किसको नहिं भावे।
एक बार भी दर्श करे नहिं, अन्य कहीं जावे॥४॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं सौरूप्य-जन्मातिशय-गुणधारक श्री मुनिसुव्रत-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

छवि तेरी जो आकर्षक है, पास बुलाती है।
भक्त-गणों के क्षणभर में ही, पाप सुखाती है॥
प्रथम रहा संस्थान आपका, मन को भाता है।
मुनिसुव्रत जी भक्त चरण में, अर्घ चढ़ाता है॥५॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं समचतुरस्त्र-संस्थान-जन्मातिशय-गुणधारक श्री मुनिसुव्रत-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

कोटिमल्ल का बल भी तेरे, बल से कम ही है।
तीन काल में पूज्य हमारे, शरण आप ही है॥
उत्तम से भी उत्तम उत्तम, संहनन पाया है।
मुनिसुव्रत के दर्शन कर मम, मन हरषाया है॥६॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं वज्रवृषभ-नाराच-संहनन-जन्मातिशय-गुणधारक श्री मुनिसुव्रत-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

हाथी घोड़ा मीन साथियाँ, तन में शोभित हैं।
एक सहस वसु लक्षण देखे, जड़ भी मोहित है॥
भूत-प्रेत सब शीघ्र भागते, नाम जपेंगे जो।
मुनिसुव्रत जी आप चरण में नित्य रमेंगे वो॥७॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं सौलक्षण्य-जन्मातिशय-गुणधारक श्री मुनिसुव्रत-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

कमल केतकी गुलाब की भी, गंध न प्यारी है।
तेरे तन की खुशबू ओहो, न्यारी-न्यारी है॥
केतु देव आ पाँव पड़ेगा, भक्त बने उसका।
मुनिसुव्रत के चरण पड़े तो, भला न हो किसका॥८॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं सौगन्ध्य-जन्मातिशय-गुणधारक श्री मुनिसुव्रत-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

घेवर बाबर से भी मीठी, जिनकी वाणी है।
उसको सुनकर भाव सुलटते, पापी प्राणी के॥
अतिशय प्यारा क्या बतलाऊँ, तुमने पाया है।
जिसने पूजा उसकी क्षण में, पलटी काया है॥९॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं प्रियहितवादित्व-जन्मातिशय-गुणधारक श्री मुनिसुव्रत-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

बल कितना है मुनिसुव्रत में, कौन बतावेगा।
बतलाने का गर्व करे यदि, तो पछतावेगा॥
दर्श मात्र से बलशाली भी, मद को छोड़ेंगे।
भोगी जन भी विषय भोग से, मन को मोड़ेंगे॥१०॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं अप्रमितवीर्य-जन्मातिशय-गुणधारक श्री मुनिसुव्रत-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

केवलज्ञानातिशय के १० अर्घ्य

(लय—शांतिनाथ मुख शशि उनहारी...)

सुभिक्ष होता सौ-सौ योजन।
सुख को पाते जग के जन-जन॥
सुव्रत सुव्रत नाम रटूँगा।
शिवपथ मैं अब शीघ्र डटूँगा॥११॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं गव्यूतिशत-चतुष्टय-सुभिक्षत्व-घातिक्षय-जातिशय-गुणधारक श्री मुनिसुव्रत-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

गगन मार्ग में चलते ऐसे।
भू पर हम तुम चलते जैसे॥
सुव्रत राजित समवसरण में।
अर्घ चढ़ावे आप चरण में॥१२॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं गगनगमनत्व-घातिक्षय-जातिशय-गुणधारक श्री मुनिसुव्रत-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

क्यों खायेंगे क्यों पीयेंगे।
भुक्ति भाव से रहित हुए हैं॥
छुम-छुम, छुम-छुम नाचे गावे।
सुव्रत पद में हम फिर आवे॥१३॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं भुक्त्यभाव-घातिक्षय-जातिशय-गुणधारक श्री मुनिसुव्रत-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

जीव मरेंगे कभी न तुमसे।
तब तो पूजित हो तुम सबसे॥
परम दया है सुव्रत तुममें।
पूजा की है तब तो हमने॥१४॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं अप्राणिवधत्व-घातिक्षय-जातिशय-गुणधारक श्री मुनिसुव्रत-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

कर न सके उपसर्ग कभी भी।
सुव्रत पद में रहें सभी जी॥
अभयदान तुम देते सबको।
पूजें हम तो केवल तुमको॥१५॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं उपसर्गाभाव-घातिक्षय-जातिशय-गुणधारक श्री मुनिसुव्रत-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

चतुरानन हो चतुरानन भी।
देव सुरासुर पूजे नर भी ॥
सुव्रत ने यह अतिशय पाया।
विस्मित हमने अर्घ चढ़ाया ॥१६॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं चतुर्मुखत्व-घातिक्षय-जातिशय-गुणधारक श्री मुनिसुव्रत-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

कोई विद्या तजकर तुमको।
जा न सके यह अचरज हमको॥
विद्येश्वर मम सुव्रत स्वामी।
पूजक होगा जग में नामी ॥१७॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं सर्वविद्येश्वरत्व-घातिक्षय-जातिशय-गुणधारक श्री मुनिसुव्रत-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

छाया तेरी पड़ नहिं सकती।
भव्य चेतना तुममें रमती॥
बच न सकेगी अघ की छाया।
जिस पर होगी सुव्रत छाया ॥१८॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं अच्छायत्व-घातिक्षय-जातिशय-गुणधारक श्री मुनिसुव्रत-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

पलके तेरी नहीं झपकती।
पाप नागिनी नहीं फटकती॥
सुव्रत तेरा भक्त बने तो।
आत्मामृत का पान करे वो ॥१९॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं अपक्ष्मस्पंदत्व-घातिक्षय-जातिशय-गुणधारक श्री मुनिसुव्रत-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

पूर्ण रुकी है वृद्धि बाल की।
क्योंकि आप हैं धर्मपाल जी॥

नख भी सुव्रत नहीं बढ़ेंगे।
आप भक्त के पाप घटेंगे॥२०॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं समान-नख-केशत्व-घातिक्षय-जातिशय-गुणधारक श्री मुनिसुव्रत-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

देवकृत अतिशय के १४ अर्घ्य

(ज्ञानोदय)

अर्धमागधी दिव्य देशना, जिसको अपनी भाषा में।
समझ सभी के संशय मिटते, हो जाते सुख साता में॥
मुनिसुव्रत के देवों द्वारा, किया गया यह अतिशय है।
जो पूजेगा यश पावे अरु, सद्गति पावे परभव में॥२१॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं सर्वार्ध-मागधीभाषा-देवोपनीतातिशय-गुणधारक श्री मुनिसुव्रत-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

वैरी बन उपसर्ग आप पर, करने वाला पापी भी।
बने आपका मित्र शीघ्र ही, तजकर आपाधापी जी॥
चित्त लगाकर भाव भक्ति से, भवभंजन को अर्चेगा।
सुव्रत स्वामी स्नेहपात्र बन, सबका मन में हर्षेगा॥२२॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं सर्वजन-मैत्रीभाव-देवोपनीतातिशय-गुणधारक श्री मुनिसुव्रत-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

आम-जाम अरु जामुन केला, सभी साथ में फलते हैं।
मुनिसुव्रतजी आप शरण में, पाप-पिण्ड सब गलते हैं॥
सुरकृत अतिशय तीन लोक में, तीर्थंकर ही पाते हैं।
आप दर्शकर पापी जन भी, मुख्य भक्त बन जाते हैं॥२३॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं सर्वर्तुफलादि-शोभित-तरु-परिणाम-देवोपनीतातिशय -गुणधारक श्री मुनिसुव्रत-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

भूतल होता दर्पण जैसा, मुनिसुव्रत का योग मिले।
एक बार आ पूजा कर ले, जन्म-मरण का रोग टले॥

फिर दैहिक इन रोगों की सुन, बात कहाँ तक रह पावे।
तुमको तजकर भव्य सुधी यह और कहीं पर क्यों जावे? ॥२४॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं आदर्शतल-प्रतिमा-रत्नमयी-देवोपनीतातिशय-गुणधारक श्री मुनिसुव्रत-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

समवसरण जब जहाँ-जहाँ पर, सुव्रत तेरा आता है।
मिथ्यामत का पोषक दल भी, तव अनुचर बन जाता है॥
अनुगत बनती वायु तदा तो, विस्मय इसमें क्या भारी।
आप भक्त के पाप कर्म भी, कर न सकेंगे गद्दारी ॥२५॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं विहरण-मनुगत-वायुत्व-देवोपनीतातिशय-गुणधारक श्री मुनिसुव्रत-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

होता परमानंद लोक में मिले, निकटता तेरी तो।
एक बार के दर्श मात्र से, वाँछे खिलती मेरी तो॥
दिविज मनुज मुनिसुव्रत तुमको, पूजा करते[१] आठ पहर।
अष्ट कर्म से शीघ्र छूटते, पा जाते गुण आठ प्रवर ॥२६॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं सर्वजन-परमानंदत्व-देवोपनीतातिशय-गुणधारक श्री मुनिसुव्रत-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

कंकर कण्टक धूल आदि से, रहित भूमि को कर देते।
वायु जाति के देव मार्ग को, अतिशयता से भर देते॥
उसका कारण मुनिसुव्रत का, विहार जग में मान्य रहा।
नाच-नाच कर अर्घ चढ़ावे, तो बन जाते मान्य यहाँ ॥२७॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं वायुकुमारोपशमित - धूलि - कण्टकादि-देवोपनीतातिशय-गुणधारक श्री मुनिसुव्रत-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

गंध युक्त अति निर्मल जल को, मेघ देव बरसाते हैं।
मुनिसुव्रत के चरण मिले तो, पापी भी हरषाते हैं॥
छुम-छुम-छुम-छुम-नाच-नाचकर, ढम-ढम-ढम-ढम ढोल बजा।
जय-जय करके अर्घ्य चढ़ाऊँ आप भक्ति में आज रचा ॥२८॥

---

१. पूजन करते रहते

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं मेघकुमारकृत-गंधोदकवृष्टि-देवोपनीतातिशय-गुणधारक श्री मुनिसुव्रत-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

सहस पाँखुड़ी वाले सोने के, निर्मित शुभ कमलों को।
रच देते हैं जहाँ-जहाँ पर, तुम रखते पद युगलों को॥
मुनिसुव्रत को भक्ति-भाव से, भव्य चढ़ावे अर्घ यदा।
भर जावे भण्डार पुण्य के, क्यों आवे फिर पाप वहाँ ?॥२९॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं पादन्यासेकृत-पद्मानि-देवोपनीतातिशय-गुणधारक श्री मुनिसुव्रत-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

फल-फूलों से लता गुल्म सब, खिल जाते हैं फल जाते।
और नम्र हो विनयवान सम, पृथ्वी तल तक झुक जाते॥
अतिशय ऐसा मुनिसुव्रत के, ऊर्ध्व-लोक के देव करें।
मुदितमना जो अर्घ चढ़ावे, सुरनर उसके पैर पड़े॥३०॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं फल-भार-नम्र-शालि-देवोपनीतातिशय-गुणधारक श्री मुनिसुव्रत-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

शरदकाल के जैसा निर्मल, गगन वहाँ का हो जाता ।
चरण मिले श्री सुव्रत के तो, जीवन सुख से भर जाता॥
त्रय योगों को निश्छल करके, त्रिभुवनपति को पूजेगा।
आपद-विपदा के बादल से, क्षण-भर में ही छूटेगा॥३१॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं शरन्मेघवन्निर्मल-गगनत्व-देवोपनीतातिशय-गुणधारक श्री मुनिसुव्रत-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

नर तिर्यंचों देवों को भी, दुन्दुभि बाजे बज करके।
कहते शिवपुर सार्थवाह को, पूजो माया तज करके॥
मुनिसुव्रत की ढोल-नगाड़े, और बजाकर शहनाई।
पूजे उस घर नित्य बजेगी, सौख्य-शांति की शहनाई॥३२॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं एतैतैति - चतुर्निकायामर - परस्पराह्वानन-देवोपनीतातिशय -गुणधारक श्री मुनिसुव्रत-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

दिशा वलय सब अंधकार से, धूल ओस से आँधी से।
रहित बनेंगे खिल जायेंगे, चमक उठेंगे चाँदी से॥
मुनिसुव्रत की भक्ति करे तो, दुख के बादल छट जाएँ।
फुदक-फुदककर पुनः पुनः वह, आप चरण के गुण गाएँ॥३३॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं शरत्कालवन्निर्मल दिग्विभागत्व देवोपनीतातिशय गुणधारक श्री मुनिसुव्रत-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

धर्मचक्र को शीश उठाकर, देव हमेशा चलते हैं।
विहार होता मुनिसुव्रत का, वहाँ सौख्य ही फलते हैं॥
पाद-पद्म की अर्चा कर, तूँ चक्र रत्न को पायेगा।
ध्यान चक्र से कर्म नाश कर, इष्ट मोक्ष फल पायेगा॥३४॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं धर्मचक्रचतुष्टय-देवोपनीतातिशय-गुणधारक श्री मुनिसुव्रत-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

अष्ट प्रातिहार्य के ८ अर्घ्य

(लय—श्री वीर महा अतिवीर...)

यह वृक्ष बना गत शोक, तेरे संगम से।
मम उपजा पूजन शौक, तव पद संगत से॥
हे सुव्रत तेरा नाम, भव का तारक है।
तव पूजा का यह काम पाप प्रहारक है॥३५॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं अशोकवृक्ष-प्रातिहार्य-मण्डित श्री मुनिसुव्रत-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

सुर बरसायेंगे फूल, आप विराजेंगे।
आ क्षण भर पूजे पाद, निज को पायेंगे॥
वो खिल जाये ज्यों पुष्प, तुमको अर्चेगा।
कर सुव्रत तेरे दर्श, उर में हर्षेगा॥३६॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं सुरपुष्पवृष्टि-प्रातिहार्य-मण्डित श्री मुनिसुव्रत-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

शुभ चौंसठ चामर देव, आकर ढोर रहे।
जो कर ले तुमसे स्नेह, पंचम ज्ञान लहे॥
हे सुव्रत! तेरा जाप, आठों याम करूँ।
तो क्यों नहिं भव को छोड़, तुम सम पाप हरूँ॥३७॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं चतु:षष्ठी-चामर-प्रातिहार्य-मण्डित श्री मुनिसुव्रत-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

तव भामण्डल यह श्रेष्ठ, सबको मोह रहा।
यह कहता सुव्रत पूज्य, तेरे मोह गया॥
क्या तुमने देखा देव, सुव्रत जैसा रे।
यह दर्श मिले जो श्रेष्ठ, भाग्य सु तेरा है॥३८॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं भामण्डल-प्रातिहार्य-मण्डित श्री मुनिसुव्रत-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

तुम तीन लोक आदर्श, गणधर मुख्य कहे।
यह बतलाते हैं छत्र, त्रिभुवन पूज्य रहे॥
तुम वीतराग पर धन्य, हित उपदेश दिया।
वर मुक्तिवधू को आज, उत्तम काम किया ॥३९॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं छत्रत्रय-प्रातिहार्य-मण्डित श्री मुनिसुव्रत-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

जिस दिव्य ध्वनि से ज्ञान, सबको मिलता है।
उस प्रातिहार्य को देख, मानस खिलता है॥
मम सुव्रत के कर दर्श, अच्छे भाव हुए।
तव पूजन से है हर्ष, भव के ताप गए॥४०॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं दिव्यध्वनि-प्रातिहार्य-मण्डित श्री मुनिसुव्रत-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

ये दुन्दुभि बाजे नित्य, ढम-ढम बजते हैं।
तूँ आ जा प्रभु के पाद, पातक हटते हैं॥

तुम रहे बीसवें तीर्थ, सुव्रत नाम हुआ।
जब पाये तेरे पाद, मन का काम हुआ॥४१॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं दुन्दुभि-प्रातिहार्य-मण्डित श्री मुनिसुव्रत-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

शुभ सिंहासन पर आप, अधर विराजे हो।
सो बढ़ता सबका राग, तव पद पाने को॥
तुम देवों के भी देव, शिवपथ नायक हो।
जो पूजेगा दिन - रात, शिवसुख लायक हो॥४२॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं सिंहासन-प्रातिहार्य-मण्डित श्री मुनिसुव्रत-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

पंचकल्याणक के ५ अर्घ्य

(लय–मुनि सकलव्रती बड़भागी...)

जब माँ ने देखे सपने, कुल दीपक पाने अपने।
तिथि सावन दूजी प्यारी, श्री कृष्णा थी सुखकारी॥४३॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं गर्भ-कल्याणक-मण्डित श्री मुनिसुव्रत-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

वैशाख कृष्ण को जन्में, श्री सुव्रत अद्‌भुत जग में।
सुर उत्सव करने आये, वह दसमी सबको भाये॥४४॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं जन्म-कल्याणक-मण्डित श्री मुनिसुव्रत-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

वैशाख कृष्ण की आयी, जो दसमी थी सुखदायी।
श्री सुव्रत ने तप धारा, भविजन ने भाव सुधारा॥४५॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं तपः कल्याणक-मण्डित श्री मुनिसुव्रत-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

वैशाख मास की आयी, जो नवमी मन को भायी।
मुनिसुव्रत ज्ञान सुपाये, हम नाच-नाच गुण गाये॥४६॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं ज्ञान-कल्याणक-मण्डित श्री मुनिसुव्रत-जिनेन्द्राय

नमः अर्घ्यं ...।

जो फाल्गुन बारस कृष्णा, तब मिटी कर्म की तृष्णा।
श्री सुव्रत ने शिव पाया, मैं पूजा करने आया॥४७॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं मोक्ष-कल्याणक-मण्डित श्री मुनिसुव्रत-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

अनंत चतुष्टय के ४ अर्घ्य

तब लोक-अलोक सुझलके, जब ज्ञान सुअंतिम वरते।
प्रभु अर्हत् पद को पाया, श्री सुव्रत जग के राया॥४८॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं अनंत-ज्ञान-गुणमण्डित श्री मुनिसुव्रत-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

जब अमित दर्श विलसाया, तब तीन लोक पद आया।
मैं पूजूँ दर्शन क्यारी, मिल जावे शिव फुलवारी॥४९॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं अनंत-दर्शन-गुणमण्डित श्री मुनिसुव्रत-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

जो मोह रहा जग वैरी, वह आया शरणा तेरी।
तब सौख्य अलौकिक पाया, मैं सुव्रत पूजन आया ॥५०॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं अनंत-सुख-गुणमण्डित श्री मुनिसुव्रत-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

जो वीर्य अनोखा तुममें, वह मिल सकता है किसमें।
मैं दृम-दृम नाद बजाऊँ, बस सुव्रत ध्यान लगाऊँ॥५१॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं अनंत-वीर्य-गुणमण्डित श्री मुनिसुव्रत-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

१८ दोष से रहित १८ अर्घ्य

(दोहा)

भोजन संज्ञा मिट गई, भूख न फटके पास।
क्षुधा रहित को पूज ले, सुख पावे हर श्वास॥

जगह-जगह पर आपकी हो पूजा दिन रात।
सुव्रत सबके लाडले, कहने की क्या बात॥५२॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं क्षुधा-दोष-रहित श्री मुनिसुव्रत-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

प्यास गयी पाताल में घाति मिटे सो देव।
तृषा मिटाने आपकी, पूजा की हो टेव॥
जगह-जगह पर... ॥५३॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं तृषा-दोष-रहित श्री मुनिसुव्रत-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

तीर्थंकर हैं सो प्रभो, नहीं जरा का नाम।
शोक बुढ़ापे का मिटे, भक्ति करे वसु याम॥
जगह-जगह पर... ॥५४॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं जरा-दोष-रहित श्री मुनिसुव्रत-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

जन्मोंगे तुम मोक्ष में, सो न पुनः हो जन्म।
ऐसे प्रभु को पूजना, शीघ्र मिटावे दम्भ ॥
जगह-जगह पर... ॥५५॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं जन्म-दोष-रहित श्री मुनिसुव्रत-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

जन्म नहीं अवशेष तो, मरना क्यों हो शेष।
जो पूजेगा आपको, कभी न पावे क्लेश॥
जगह-जगह पर... ॥५६॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं मरणदोष-रहित श्री मुनिसुव्रत-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

मैं मेरा सब ही मिटा, मिटा मान अभिमान।
मोह दोष से रहित की, पूजा देती भान॥
जगह-जगह पर... ॥५७॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं मोह-दोष-रहित श्री मुनिसुव्रत-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

पर द्रव्यों से दूर तुम, किसमें उपजे राग।
आप चरण में राग से, मिटे राग की आग ॥
जगह-जगह पर... ॥५८॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं राग-दोष-रहित श्री मुनिसुव्रत-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

शत्रु बचे तो द्वेष हो, अहो हितंकर आप।
सो द्वेषी चरणों रहे, लौट न आवे पाप ॥
जगह - जगह पर आपकी हो, पूजा दिन - रात।
सुव्रत सबके लाडले, कहने की क्या बात ॥५९॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं द्वेष-दोष-रहित श्री मुनिसुव्रत-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

अचरज उपजे क्यों तुम्हें, नयी न कोई चीज।
विस्मय दूषण ना रहा, ये ही सुख का बीज॥
जगह-जगह पर... ॥६०॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं विस्मयदोषरहित श्री मुनिसुव्रतजिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

अरति नहिं है आपमें, रति से भी तुम दूर।
सौम्य-सौम्यता आपमें, राज रही भरपूर॥
जगह-जगह पर... ॥६१॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं रति-दोष-रहित श्री मुनिसुव्रत-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

निद्रा में नहिं पा सके, समकित का जो भाव।
जागृत देखा तो हुआ, मेरा तुममें चाव॥
जगह-जगह पर... ॥६२॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं निद्रा-दोष-रहित श्री मुनिसुव्रत-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

जड़ की चिंता में घुला, मेरा मन दिन रात।
दर्श किये निश्चिंत के, मिटा पाप का साथ॥
जगह-जगह पर... ॥६३॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं चिंता-दोष-रहित श्री मुनिसुव्रत-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

श्वेत कणों से लिप्त यह, तन कारा निःसार।
दोष मिटाकर आपने, पाया निज का सार॥
जगह-जगह पर... ॥६४॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं स्वेद-दोष-रहित श्री मुनिसुव्रत-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

इष्ट मिटे मिल जाय या, अनिष्ट का संयोग।
खेद न उपजे आपको, नहीं खेद का योग ॥
जगह - जगह पर आपकी हो, पूजा दिन - रात।
सुव्रत सबके लाडले, कहने की क्या बात॥६५॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं खेद-दोष-रहित श्री मुनिसुव्रत-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

देह-नेह से जीव ये, होता है भयभीत।
सुव्रत भय से रहित हैं, सो हम करते प्रीत ॥
जगह-जगह पर... ॥६६॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं भय-दोष-रहित श्री मुनिसुव्रत-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

पुत्र-पौत्र दारा सुता, वियोग में हो शोक।
हे अशोक! मुझमें जगा, तव पूजा का शौक ॥
जगह-जगह पर... ॥६७॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं शोक-दोष-रहित श्री मुनिसुव्रत-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

मदमाते वे ही बने, प्रज्ञा होवे अल्प।
पूर्ण ज्ञान पूरित प्रभो!, मद का क्यों हो जल्प ॥
जगह-जगह पर... ॥६८॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं मद-दोष-रहित श्री मुनिसुव्रत-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

कोटि रोग का हे विभो, देह रहा भण्डार।
रोग मूल से मिट गया, मिला मोक्ष का द्वार॥
जगह-जगह पर... ॥६९॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं रोग-दोष-रहित श्री मुनिसुव्रत-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

(नरेन्द्र)

मुनि सुव्रत सम्मेद शिखर के कूट सुनिर्जर आए।
शेष कर्म को पूर्ण नाश कर, शिव में जा विलसाए ॥
उसी कूट पर अर्घ चढ़ाऊँ, आत्मिक सुख को पाने।
सभी कर्म की करूँ निर्जरा, शीघ्र शिवालय जाने॥७०॥

ॐ ह्रीं निर्जरकूटेभ्यो नमः अर्घ्यं ...।

(ज्ञानोदय)

पैठण में है केशुराय में, ग्राम करैया हाट रहे।
और अनेकों जिनालयों में, मुनि सुव्रत के धाम कहे॥
छोटे-मोटे खड्गासन पद्मासन में जिन बिम्ब बने।
अर्घ चढ़ाकर हम भी स्वामी, जैन धर्म के खम्भ बने॥७१॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री मुनिसुव्रत-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

पूर्णार्घ्य

(घत्ता)

हे सुव्रत तेरे, पद में मेरे, पूजा के जो भाव जगे।
वे अमर बने, अब चरण रहे, तव पूजा में ही चाव लगे॥
जो अर्घ चढ़ावे, पुण्य बढ़ावे, उसके सारे पाप मिटे।
वे शिव ना जावें, निज नहिं पावे, तब तक तेरा नाम रटे॥७२॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री मुनिसुव्रत-जिनेन्द्राय नमः पूर्णार्घ्यं...।

जाप्य मंत्र—ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री मुनिसुव्रत-जिनेन्द्राय नमः।

(९/२७/१०८)

जयमाला

(दोहा)

मुनिसुव्रत की माल यह, मुनि व्रत पाने आज।
गाऊँ स्वामी अब मुझे, मिले मुक्ति का राज॥

(ज्ञानोदय)

सब देवों के दर-दर जाकर, ठोकर खा-खा आया हूँ।
सुव्रत जैसा रूप न देखा, सो पद पा हरषाया हूँ॥
अब क्यों छोड़ूँ आप चरण को, कभी नहीं मैं छोड़ूँगा।
सपने में भी रागी गुरु से, चित्त न अपना जोड़ूँगा॥१॥

अहो आपकी वीतराग छवि, मन में पत्थर रेखा सी।
अमिट बनी तो क्यों बच पावे, मेरे अघ की रेखा जी॥
स्वर लहरी में गा-गा करके, तननं तननं ताल बजा।
झालर घण्टा बजा पूज में, आया है जो आज मजा॥२॥

उसको वचनों से मैं कैसे, बतलाऊँ हे सुव्रत जी।
गूँगा गुड़ को खाकर के क्या, स्वाद बतावे सकृत भी॥
वैसे ही इस पूज खुशी का, केवल अनुभव चित्त करें।
मन केकी मम हर्षित हो, आनंदित होकर नृत्य करें॥३॥

फुदक-फुदककर उछल-उछलकर, आप चरण की भक्ति करूँ।
फलतः स्वामी तेरे जैसी, केवलनिधि की शक्ति वरूँ॥
मुनिसुव्रत के बिम्ब लोक में, जहाँ-जहाँ पर शोभित हैं।
भविजन पूजा करके उनकी, पद में रहते मोहित हैं॥४॥

उनमें से मैं दो प्रतिमा का, अतिशय आज बताता हूँ।
मुनिसुव्रत की पूजा का फल, जन-जन को दिखलाता हूँ॥
महाराष्ट्र में ग्राम सुपैठण, मुनिसुव्रत का तीर्थ रहा।
दर्शन अर्चन वंदन से ही, सबका खिलता भाग्य जहाँ॥५॥

बना रेत का बिम्ब यहाँ पर, अहो आज तक अमिट रहा।
लाखों वर्षों पूर्वकाल का, होकर भी यह विशद रहा॥
खरदूषण राजा ने इसको, किया विराजित पूजा था।
दर्शन करके राम लखन अरु, सीता का मन रीझा था॥६॥

कृष्ण वर्ण के मुनिसुव्रत पर, उनके उज्ज्वल भाव रहे।
दर्शमात्र से दर्शक गण के, होते उज्ज्वल भाव अरे॥
चिन्तित हो या रहा अचिन्तित, सब कुछ इनसे मिलता है।
भव-भव का कल्मष भी इनके, चरणों में झट धुलता है॥७॥

अब सुन लो जो क्षेत्र रहा है, केशुराय शुभ न्यारा है।
मुनिसुव्रत का बिम्ब वहाँ पर, अतिशय युत है प्यारा है॥
कहते हैं जब यहाँ प्रतिष्ठा, ठाट-बाट से करवाई।
देवों ने आ पुष्पवृष्टि कर, भक्ति भावना दरशाई॥८॥

और किया था जय-जय जय-जय, केशर धारा बरसाई।
देखा जिसने सुना उसी की, अन्तर आत्मा हरषाई॥
कुन्दकुन्द आचार्य यहाँ पर, संघ सहित जब आये थे।
दर्शन करके गदगद् होकर, वंदन कर हरषाये थे॥९॥

ख्याति रही है दूर-दूर तक, इन दोनों ही प्रतिमा की।
वीतरागता सुन्दरता की, सौम्य शान्तता प्रतिभा की॥
दुनिया कहती तव पूजा से, शनि ग्रह भागे क्षणभर में।
लेकिन तेरे सुमरिन से तो, अघमल धुलते पल भर में॥१०॥

और शनिग्रह आप भक्त के, साथ रहेगा सेवा में।
सुव्रत भक्त बनेगा वह भी, पावे शिव सुख मेवा रे॥
रहे अठारह गणधर तेरे, द्वादशांग के पाठी जो।
मुनिवर तीस हजार शोभते, आप चरण अनुरागी जो॥११॥

पुष्पसुदत्ता प्रमुख अर्जिका, अर्द्ध लाख की संख्या में।
एक शाटिका मात्र पहनकर, आप शरण थी धन्या वे॥
एक लाख थे श्रावक अणुव्रत, धार बने शिवसाधक थे।
और श्राविका तीन लाख थी, आप धर्म आराधक वे॥१२॥

असंख्यात थे देव-देवियाँ, संख्य रहे तिर्यंच वहाँ।
समवसरण के बारह कोठे, में बैठे थे भव्य अहा॥
तीन लोक के जीव आपकी, सेवा में लवलीन हुए।
आप दरश से जग के प्राणी दु:ख कष्ट से हीन हुए॥१३॥

एक माह की आयु बची तब, सम्मेदाचल क्षेत्र गये।
शेष कर्म भी नाश किये सो, शाश्वत उत्तम क्षेत्र रहे॥
चक्रवर्ति हरिषेण आपके, गुण गाते नहिं थकता था।
घर में रहकर भी ओ उसका, मन तुममें ही रमता था॥१४॥

रामचन्द्र भी आप तीर्थ में, शिव ललना के नाथ हुए।
भूषणद्वय भी तव शासन में, मुक्ति अंगना साथ हुए॥
ढोल ढमाके बजा-बजाकर, और बजाकर ताली मैं।
अवसर पाया तव पूजा का, फली पुण्य की डाली है॥१५॥

आप दर्श से वित्तराग[१] अब, बहुत दूर ही भाग गया।
वीतराग में पूज्य आप में, मेरा मन यह जाग गया॥
धन अर्जन का भाव नहीं मम, धर्माजन का भाव हुआ।
घर गृहिणी का राग मिटा अरु, मुक्ति वधू से राग हुआ॥१६॥

मुनियों में आदर्श रहे हो, श्रेष्ठ रहे हो आप मुनि।
शरणागत के शरणदातृ हो, गुणियों में हो श्रेष्ठ गुणी॥
रहली पटनागंज क्षेत्र में, बहुत पुराने सुव्रत हैं।
और वहाँ पर तीस जिनालय, महावीर प्रभु मनहर हैं॥१७॥

महाराष्ट्र में पैठन नगरी, जहाजपुर में स्वामी हैं।
केशुराय में अतिशयकारी, सर्व लोक में नामी हैं॥
जहाँ-जहाँ पर मुनिसुव्रत के, बिम्ब बड़े या छोटे हैं।
वीतराग सर्वज्ञ हितंकर, भगवन हैं सो मोठे हैं॥१८॥

भूतल में या जिनगृह में या, गृह चैत्यालय जंगल में।
सर्वोदय शुभ ज्ञानतीर्थ में, मुनिसुव्रत जग मंगल हैं॥
ऐसे सुव्रत स्वामी तेरी, कैसे गाऊँ महिमा मैं।
किन शब्दों में किन छन्दों में बतलाऊँ तव गरिमा मैं॥१९॥

१. धन से प्रेम

ज्ञान नहीं है मुझमें कुछ भी, फिर भी चुप नहिं रह पाऊँ।
बसंत ऋतु में कोकिल सम ही, बिना विचारे गुण गाऊँ॥
आप चरण में भक्ति रही सो, बात रही क्या लज्जा की।
तब तो मैंने अल्प बुद्धि से, सुव्रत तेरी अर्चा की॥२०॥

बुद्धिमान हो प्राज्ञ पुरुष हो, दृष्टि न दोषों पर डाले।
पूजा करके दुर्गति द्वारे, बन्द शीघ्र ही कर डाले॥
पूर्ण हुई यह जयमाला जो, विजयमाल की हेतु रही।
पढ़ने-सुनने वाले भवि के, भवसागर की सेतु रही॥२१॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री मुनिसुव्रत-जिनेन्द्राय नमः जयमाला पूर्णार्घ्यं ...।

शनि रवि बुध या सोमवार हो, मुनिसुव्रत को पूजेगा।
आकर्षित हो ग्रह मण्डल भी, उसके पीछे घूमेगा॥
लौकिक सुख की बात कहे क्या, शिव-सुख को भी पायेगा।
सिद्ध करे पुरुषार्थ अंत का, तो क्यों भव में आयेगा॥

इत्याशीर्वादः परिपुष्पाञ्जलिं क्षिपामि/क्षिपेत्.....

श्री नमिनाथ विधान

पीठिका

(दोहा)

विधान की मैं हे प्रभो, कहूँ पीठिका आज।
नमि पूजा से कौन सा, नहिं बनता है काज॥१॥

(ज्ञानोदय)

भरतक्षेत्र के वत्सदेश में, कौशाम्बी इक नगरी थी।
उसका राजा पार्थिव जिसकी, रानी गुण की गगरी थी॥
रही सुन्दरी नारी जिसके, पुत्र रहा सिद्धार्थ बली।
धीर-वीर था युद्ध विजेता, और रहा था अक्षबली॥२॥

इक दिन नृप ने धर्म सुना तो, विरत भाव का बीज उगा।
सिद्ध अर्थ सिद्धार्थ पुत्र को, तिलक लगाने भाव जगा॥
भूप बनाकर बेटे को सब, राज्य कार्य भी सौंप दिया।
और स्वयं ने मुनि से दीक्षा, लेकर निज में मौज किया॥३॥

एक दिवस जब खबर मिली श्री, पूज्य पिता सुरलोक गये।
समाधिपूर्वक मरण किया सो, पाप कर्म भी शोख गये॥
समाचार सुन विषय भोग की, इच्छाएँ सब पूर्ण हिली।
और महाबल भगवन से शुभ, दिव्य देशना खूब मिली॥४॥

आया था वैराग्य उसी क्षण, परम दिगम्बर वेष लिया।
बढ़ा भाव की निर्मलता को, क्षायिक समकित प्राप्त किया॥
ग्यारह अंगों का श्रुत पाकर, सोलहकारण भावन भा।
तीर्थंकर पद बाँध अनुत्तर, सुर में पहुँचे सुखकर वा॥५॥

भोगों में तैंतीस सिन्धु यों, बीत गये ज्यों क्षण बीते।
विरति भाव नहिं उपजे स्वर्गी, अक्ष अश्व भी नहिं जीते॥

छह महिने जब शेष बचे तब, मिथिलावासी हरषाये।
मात वप्पिला के घर आँगन, रत्न धनद ने बरसाये॥६॥

आषाढ़ी की कृष्णा दसमी, सोलह सपने देकर के।
नमि स्वामी जी गर्भ पधारे, सुर विमान को तज करके॥
जन्म लिया फिर स्वर्गपुरी से, प्राप्त विषय का भोग किया।
पुण्य उदय से प्राप्त राज्य का, संचालन उपभोग किया॥७॥

फिर विरक्त हो दीक्षा लेकर, चार घातिया नाश किये।
कूट मित्रधर पर आकर के, शेष कर्म भी साफ किये॥
पूज्य भूप श्री विजय पुत्र की, मात वप्पिला नन्दन की।
मिथिला नगरी के गौरव की, नमि स्वामी गत क्रन्दन की॥८॥

गाथा लिखकर त्रिभुवन पूजित, अपार गुण के सागर से।
अल्पबुद्धिमय भक्ति पात्र में, भरना चाहूँ सागर में॥
तव प्रसाद से नमि जिनवर यह, कार्य सफल मम हो जावे।
तेरे जैसे कर्म नाश की, प्रज्ञा मुझको मिल जावे॥९॥

परिपुष्पाञ्जलिं क्षिपामि/क्षिपेत्

विधान प्रारम्भ

स्थापना

(ज्ञानोदय)

तीन लोक के सब जीवों को, मित्र बनाकर मित्र बने।
तीर्थंकर पद पाकर शिव पथ,पथिकों के जो सूत्र बने॥
ऐसे नमि को हृदय कमल पर, आमंत्रित कर सादर मैं।
राजित करके पूज रचाऊँ, शीश झुकाऊँ आदर से ॥

(दोहा)

आओ स्थापन कर सदा, सन्निधि पाने देव।
अष्ट द्रव्य अर्पित करूँ, मिटे पाप की टेव ॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री नमिनाथ जिनेन्द्र अत्र अवतर अवतर संवौषट् इति आह्वाननं! ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री नमिनाथ जिनेन्द्र अत्र तिष्ठ-तिष्ठ ठः ठः स्थापनं! ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री नमिनाथ जिनेन्द्र अत्र मम सन्निहितो भव-भव वषट् सन्निधिकरणं!

अष्टक

(लय—मुनि सकलव्रती बड़भागी...)

जल भरकर लाऊँ कलशा, तव चरण चढ़ा मन हरषा।
नमि जनम मिटा दो मेरा, मैं भक्त रहूँ नित तेरा॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री नमिनाथ-जिनेन्द्राय नमः जन्म-जरा-मृत्यु-विनाशनाय जलं...।

जो चन्दन खुशबू वाला, कर भोग बना मतवाला।
नमि तुम्हें चढ़ा जगचन्दा, भव ताप मिटावे बन्दा ॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री नमिनाथजिनेन्द्राय नमः संसारतापविनाशनाय चंदनं...।

भर अक्षत थाली-थाली, जो लावे हो खुशहाली।
वह जीवन भर सुख भोगे, नमि चरण पूज अघ रोके॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री नमिनाथजिनेन्द्राय नमः अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् ...।

जो काम महा दुखकारी, यह दुनिया उससे हारी।
नमि जीत आत्म विलसाए, हम पुष्प चढ़ाने आए ॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री नमिनाथजिनेन्द्राय नमः कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं...।

हे क्षुधा रोग के जेता, यह मुझको हा दुख देता।
सो नैवज लेकर आया, नमि चरण चढ़ा सुख पाया॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री नमिनाथजिनेन्द्राय नमः क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं...।

यह मोह निशा अंधियारी, तुम सौख्य पुञ्ज हो भारी।
मणि दीप हाथ ले आया, नमि पूजन कर हरषाया ॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री नमिनाथजिनेन्द्राय नमः मोहान्धकारविनाशनाय दीपं...।

मैं धूप बनाकर प्यारी, ले आया हे सुख क्यारी।
मम अष्ट कर्म जल जावे, नमि चरण मात्र हम पावे ॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री नमिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अष्टकर्म-दहनाय धूपं ...।

बादाम सुपारी ऐला, ले भक्त आज अलबेला।
नमि तुम्हें पूजने आया, तब तो अघ से बच पाया ॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री नमिनाथ-जिनेन्द्राय नमः मोक्षफल-प्राप्तये फलं ...।

फल अक्षत चन्दन पानी, हो पूजन से अघहानि।
नमि अर्घ चढ़ा हरषाऊँ, मैं शाश्वत पद को पाऊँ ॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री नमिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अनर्घ-पद-प्राप्तये अर्घ्यं...।

प्रत्येक-अर्घ्य

(दोहा)

आठ अंग से नमन हो, नमि को आठों याम।
अर्घ चढ़ाकर आपको, सुख पाऊँ निर्दाम॥

इति मण्डलस्योपरिपुष्पाञ्जलिं क्षिपामि/क्षिपेत्

जन्मातिशय के १० अर्घ्य

(लय—कहाँ गये चक्री...)

तीर्थंकर हैं नमि स्वामी, सो स्वेद न आयेगा।
जो नहिं माने इनको सच्चा, फिर पछतायेगा॥
औदारिक तन तेरे जैसा, किसको मिल पावे।
हम तो तेरी पूजा कर-कर, उर में हरषावें॥१॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं निःस्वेदत्व-जन्मातिशय-गुणधारक श्री नमिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

मल नहिं तन में मूत्र नहीं है, निर्मल तन तेरा।
तुम्हें देखकर रोम-रोम अरु, पुलकित मन मेरा॥
निर्मलता मम उर में आवे, अर्घ चढ़ाऊँ मैं।
नमि स्वामी के पाद पद्म में, पूज रचाऊँ मैं॥२॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं निर्मलत्व-जन्मातिशय-गुणधारक श्री नमिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

दूध सरीखा खून देह में, दुःख मिटाने की।
बनी भावना उसका फल है, निज को पाने की॥
नमि जिनवर जी तेरे पद की, पूज रचाऊँगा।
तुमको तजकर सपने में भी, कहीं न जाऊँगा॥३॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं क्षीरगौररुधिरत्व-जन्मातिशय-गुणधारक श्री नमिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

अहमिन्द्रों का रूप मदन का, फीका तुमसे है।
क्या बतलाऊँ आप समा, सुंदरता किसमें है॥
कूट मित्रधर नमि स्वामी का, वैर भुलाता है।
और भव्य को शिवपथ दिखला, पास बुलाता है॥४॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं सौरूप्य-जन्मातिशय-गुणधारक श्री नमिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

कमल केतकी कुमुद सुचम्पा, शरमा जाते हैं।
आप देह की खुशबू पाने, पद में आते हैं॥

सुगन्ध देही नमि प्रभु तेरी, पूज रचावे जो।
जन्म - मरण का शीघ्र नाशकर, शिव में जावे वो ॥५॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं सौगन्ध्य-जन्मातिशय-गुणधारक श्री नमिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

लक्षण जितने सामुद्रिक हैं, तेरे तन में हैं।
तब तो तीनों लोक हमेशा, तेरे पद में है॥
अतिशय पाया जन्म समय से, नमि ने वा-वा वा।
नाच-नाच हम अर्घ चढ़ावें, चरणों आ-आ आ॥६॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं सौलक्षण्य-जन्मातिशय-गुणधारक श्री नमिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

ओर-छोर नहिं आप शक्ति का, पर उपकारी हो।
इसी शक्ति से अघ नाशे सो, शिव अधिकारी हो॥
नमि जिनवर तुम महासिन्धु हो, हम तो नदिया हैं।
तुममें मिलकर चाहें खोटी, पलटें विधियाँ रे॥७॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं वज्रवृषभ-नाराच-संहनन-जन्मातिशय-गुणधारक श्री नमिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

प्रथम रहा संस्थान लोक में, विरले पाते हैं।
पाकर नहिं उपयोग करे तो, भव भरमाते हैं॥
लेकिन नमि ने तन ममता को, मद को छोड़ा है।
तब तो तेरे पद में मैंने, मन को जोड़ा है॥८॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं समचतुरस्र-संस्थान-जन्मातिशय-गुणधारक श्री नमिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

वीर्य आपका अतुलनीय है, विस्मयकारी है।
भयभीतों के भय को मेटे, अरु भयहारी है॥
हे नमि तेरा भक्त लोक में, बल को पाता है।
आठ कर्म को नाश शीघ्र ही, शिव को जाता है॥९॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं अप्रमितवीर्य-जन्मातिशय-गुणधारक श्री नमिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

प्यारे-प्यारे मीठे-मीठे, मिश्री घोले हो।
वचन आपके लगते मानो, सुख के गोले हो॥
नमि की पूजा भव्य जनों के, पाप मिटाती है।
सिद्धालय में सिद्ध पंक्ति में, शीघ्र बिठाती है॥१०॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं प्रियहितवादित्व-जन्मातिशय-गुणधारक श्री नमिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

केवलज्ञानातिशय के १० अर्घ्य

(ज्ञानोदय)

सौ योजन तक ईति भीति अति, वृष्टि कभी नहिं रहती है।
अनावृष्टि का नाम नहीं नहिं, जनता दुख को वरती है॥
नमि स्वामि ने पाया पंचम, ज्ञान उसी की महिमा है।
पूजूँ सौ-सौ बार हृदय में, मात्र आपकी प्रतिमा है॥११॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं गव्यूतिशत-चतुष्टय-सुभिक्षत्व-घातिक्षय-जातिशय-गुणधारक श्री नमिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

अंबर तल में आप विचरते, रत्नत्रय अति निर्मल है।
इसके फल में चार घातिया, नाश हुए सो निर्मद हैं॥
गगन बिहारी आप चरण की, पूजा कर हरषावे जो।
नमि जैसा ही ज्ञानी बनकर, भव में लौट न आवे वो॥१२॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं गगनगमनत्व-घातिक्षय-जातिशय-गुणधारक श्री नमिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

कुछ कम करोड़ पूर्व वर्ष तक, विहार कर उपदेश करें।
प्रतिदिन तो भी थके नहीं नहिं, देह कान्ति ही क्षीण पड़े॥
भुक्ति नहीं है सो नमि पद में, शिव ललना आसक्त हुई।
केवलज्ञानी देख इन्हें वह वरने को आसक्त हुई॥१३॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं भुक्त्यभाव-घातिक्षय-जातिशय-गुणधारक श्री नमिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

एकेन्द्रिय द्वि त्री चतुरिन्द्रिय, पञ्चेन्द्रिय हो सैनी हो।
नहिं हिंसा हो किसी जीव की, नमि से मोक्ष नसैनी जो॥
ज्ञान सुपंचम पाने का यह, फल पाया सो धन्य हुए।
अर्घ चढ़ाया जिनने वे ही, तीन लोक में रम्य हुए॥१४॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं अप्राणिवधत्व-घातिक्षय-जातिशय-गुणधारक श्री नमिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

देव सुरासुर व्यन्तर मानव, शेर साँप पशु आदि कभी।
करे नहीं उपसर्ग आप पर, कहते धनि-धनि धन्य सभी॥
अतिशय प्यारा ज्ञान प्राप्ति का, नमि प्रभु तुमने पाया है।
ठुमक-ठुमककर अर्घ चढ़ाने, भक्त चरण में आया है॥१५॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं उपसर्गाभाव-घातिक्षय-जातिशय-गुणधारक श्री नमिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

समवसरण में नमि जिनवर के, आनन केवल एक रहा।
फिर भी दिखता सब जीवों को, चारों दिशि में पुण्य सखा॥
चार घातिया, नाश हुए सो, अचरजकारी बात हुई।
अर्घ चढ़ाऊँ महिमा तेरी, तीन लोक विख्यात हुई॥१६॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं चतुर्मुखत्व-घातिक्षय-जातिशय-गुणधारक श्री नमिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

विद्याएँ जो तीन लोक की, आप चरण तल्लीन हुई।
ऋद्धि-सिद्धियाँ सब ही देखो, नमि जिन के आधीन हुई॥
अष्ट-द्रव्यमय अर्घ बनाकर, कंचन थाली आज भरूँ।
तुम्हें चढ़ाकर फल में स्वामी, पूजा मैं दिन - रात करूँ॥१७॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं सर्वविद्येश्वरत्व-घातिक्षय-जातिशय-गुणधारक श्री नमिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

परमौदारिक देह बना सो, छाया पड़ना बन्द हुयी।
आप वदन के आगे ओ हो, सूर्य कान्ति भी मन्द हुयी॥
तेरी छत्रच्छाया नमि जिन, जिसके सिर पर नित्य रहे।
पाप-ताप-संताप घटाएँ, तव प्रसाद से शीघ्र हटे॥१८॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं अच्छायत्व-घातिक्षय-जातिशय-गुणधारक श्री नमिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

नयनों की पलकें प्रभु तेरी, नहीं झपकती अहो कभी।
प्रकट हुयी अरहन्त अवस्था, तभी झुकावें शीश सभी॥
नमि प्रभुवर के पाद-पद्म पर, अलि सम बन गुणगान करे।
अर्घ चढ़ावे भव-भव उसके, यश का दुनिया गान करे॥१९॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं अपक्ष्मस्पंदत्व-घातिक्षय-जातिशय-गुणधारक श्री नमिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

हाथ-पैर के नख की तेरे, वृद्धि रुकी है हे स्वामी।
अब तो बाल न कभी बढ़ेंगे, सो लगते हो अभिरामी॥
नमि जिन पूजा दिवस-रात जो, नाच-नाचकर करता है।
तीर्थंकर सा अतिशय पाकर, पुनः कभी नहिं मरता है॥२०॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं समान-नख-केशत्व-घातिक्षय-जातिशय-गुणधारक श्री नमिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

देवकृत अतिशय के १४ अर्घ्य

(लय—शांतिनाथ मुख...)

भाषा तेरी अर्द्धमागधी।
सुनकर सुलटे पाप बुद्धि भी॥
गा-गाकर मैं गीत आपके।
सुख हो नमि की मात्र बात से॥२१॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं सर्वार्ध-मागधीभाषा-देवोपनीतातिशय-गुणधारक श्री नमिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

सब जन से हो पूर्ण मित्रता।
मिटे पाप दुख और शत्रुता॥
नमि जिन तेरी भक्ति रचाऊँ।
भवबन्धन से झट बच जाऊँ॥२२॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं सर्वजन-मैत्रीभाव-देवोपनीतातिशय-गुणधारक श्री नमिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

अनार जामुन जाम साथ में।
फल जाते हैं जहाँ आप हैं॥
सुप्रभ आदिक गणधर तेरे।
समवसरण में मेंटे फेरे॥२३॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं सर्वर्तुफलादि-शोभित-तरु-परिणाम-देवोपनीतातिशय-गुणधारक श्री नमिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

भूमि सुनिर्मल दर्पण सम हो।
तव पद जीवन अर्पण मम हो॥
नमि दर्शन से भाग्य सुजागा।
मन तव पूजा में अनुरागा॥२४॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं आदर्शतल-प्रतिमा-रत्नमयी-देवोपनीतातिशय-गुणधारक श्री नमिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

अनुगत मारुत बहती निशदिन।
क्या विस्मय है इसमें हे जिन॥
नमि के जो अनुकूल चलेंगे।
वे ही अघ के पिण्ड दलेंगे॥२५॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं विहरण-मनुगतवायुत्व-देवोपनीतातिशय-गुणधारक श्री नमिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

सभी जीव आनन्दित होते।
नमि पूजे तो वन्दित होते॥

बजा-बजाकर ढोल ढमाके।
हर्षित हैं हम तव पद आके॥२६॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं सर्वजन-परमानंदत्व-देवोपनीतातिशय-गुणधारक श्री नमिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

गंध सहित जल सुर बरसाते।
सुख साता में सब हो जाते॥
डेरा आता जब नमि तेरा।
पूजन कर मन नाचे मेरा॥२७॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं मेघकुमारकृत-गंधोदकवृष्टि-देवोपनीतातिशय-गुणधारक श्री नमिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

काँटे कंकड़ धूल हटाते।
तव संगति पा पाप घटाते॥
सुर आकर यह अतिशय करते।
नमि पूजा से सब सुख फलते॥२८॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं वायुकुमारोपशमित - धूलि - कण्टकादि-देवोपनीतातिशय-गुणधारक श्री नमिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

कमल कनक जो मन को हरते।
आप चरण के नीचे रखते॥
पूज्य आपके गमन काल में।
अर्घ चढ़ाऊँ अज्ञ बाल मैं॥२९॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं पादन्यासेकृत-पद्मानि-देवोपनीतातिशय-गुणधारक श्री नमिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

शालि धान्य तब पककर झुकते।
आप दर्श से पातक रुकते॥
नमि के पद में जो नम जावे।
जीवन में नहिं गम बच पावे॥३०॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं फल-भार-नम्र-शालि-देवोपनीतातिशय-गुणधारक श्री नमिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

शरद काल सम निर्मल होता।
गगन जहाँ तव संगम होता॥
नमि जिन महिमा गाने वाला।
समझो वह शिव जाने वाला॥३१॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं शरत्कालवन्निर्मल-गगनत्व-देवोपनीतातिशय-गुणधारक श्री नमिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

बजा-बजाकर बाजे ढम-ढम।
कहते तजकर अंदर के गम॥
आओ नमि के पद झुक जाओ।
सुख के सागर तुम बन जाओ॥३२॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं एतैतैति - चतुर्निकायामर - परस्पराह्वानन-देवोपनीतातिशय -गुणधारक श्री नमिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

दशों दिशाएँ मेघ दलों से।
वर्जित होती सभी मलों से॥
प्रभाव यह नमि तेरा ही है।
पूजक के सुख डेरा ही है॥३३॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं शरन्मेघवन्निर्मल-दिग्विभागत्व-देवोपनीतातिशय-गुणधारक श्री नमिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

ध्यान चक्र से कर्म चक्र को।
नाश सुपाया धर्मचक्र को॥
सुर के द्वारा किया गया है।
कारण नमि में पूर्ण दया है॥३४॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं धर्मचक्रचतुष्टय-देवोपनीतातिशय-गुणधारक श्री नमिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

अष्ट प्रातिहार्य के ८ अर्घ्य

(नरेन्द्र)

भूरुह बनता अशोक जिसके, नीचे आकर बैठे।
चार घातिया नाश हेतु तुम, निज आतम में पैठे॥
नमि की पूजा व्यन्तर ज्योतिष, वैमानिक रचवावे।
भवनदेव भी शीश झुकावे, हम भी अर्घ चढ़ावे॥३५॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं अशोकवृक्ष-प्रातिहार्य-मण्डित श्री नमिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

कल्पवृक्ष के पुष्प बरसते, डण्ठल रखकर नीचे।
कहते आजा नमि चरणों में, नहिं जावेगा नीचे॥
अर्पित कर दे जीवन अपना, पाप नहिं आ पावे।
महापुरुष बन धन वैभव पा, शीघ्र शिवालय जावे॥३६॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं सुरपुष्पवृष्टि-प्रातिहार्य-मण्डित श्री नमिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

चौंसठ चामर ढुरते निशदिन, स्वर्ग निवासी द्वारा।
प्रातिहार्य यह लगता मानों, झरे दूध की धारा॥
सोलह कारण भाकर नमि ने, तीर्थंकर पद पाया।
मैं भी अर्घ चढ़ाकर तव सम, पदवी पाने आया॥३७॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं चतुः षष्टी-चामर-प्रातिहार्य-मण्डित श्री नमिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

आभा जो है आप देह की, कहीं नहीं मिल पावे।
राहू जैसी काली निशि भी, उजियाली बन जावे॥
भामण्डल है नाम इसी का, जीवन उज्ज्वल होवे।
तेरा अर्चक पाप भाव तज, बीज धर्म के बोवे॥३८॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं भामण्डल-प्रातिहार्य-मण्डित श्री नमिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

ढोल नगाड़े और बजाते, दुन्दुभि पट शहनाई।
आप पधारे उसी खुशी में, सुर आकर हरषाई॥
नमि जिन तेरी अर्चा में मैं, नाचूँ-गाऊँ झूमूँ।
तुमको तजकर और किसी को, नहिं ध्याऊँ नहिं पूजूँ॥३९॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं दुन्दुभि-प्रातिहार्य-मण्डित श्री नमिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

आतपत्र ये चाँदी के जो, तेरे सिर पर शोभे।
चाँदी-चाँदी होवे जिसका, चित्त आप में खोवे॥
नमि की छत्रच्छाया पायी, क्यों अब आपद आवे।
पूजा कर ले बिना बुलाए, लक्ष्मी तव पद आवे॥४०॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं छत्रत्रय-प्रातिहार्य-मण्डित श्री नमिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

सात शतक लघु भाषा में अरु, महा अठारह भाषा।
खिरती वाणी तेरी जिसको, सुन सुख पाते खासा॥
दिव्यध्वनि सुनने को निशदिन, तरसे चेतन मेरा।
हे नमि पूजूँ तीन लोक में, मुझे सहारा तेरा॥४१॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं दिव्यध्वनि-प्रातिहार्य-मण्डित श्री नमिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

रत्नजटित है, स्वर्णमयी है, सिंहासन जो ऊँचा।
अधर विराजे नमि जिन पूजा, कर ले हो तू ऊँचा॥
आसन की मैं सिंहासन की, छोड़ सभी की आशा।
पूजूँ हे प्रभु आप दर्श ने, मिथ्यातम मम नाशा॥४२॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं सिंहासन-प्रातिहार्य-मण्डित श्री नमिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

पंचकल्याणक के ५ अर्घ्य

(दोहा)

अश्विन कृष्णा दूज को, गर्भ पधारे धीर।
नमि जिनवर की पूज से, मिट जाती है पीर॥
जड़ रत्नों की वृष्टि से, तृप्त हुआ था लोक।
चेतन सच्चे रत्न तव, भक्ति मिटावे शोक॥४३॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं गर्भ-कल्याणक-मण्डित श्री नमिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

कृष्णा थी आषाढ़ की, दसवीं तिथि सुख रूप।
भू आए नमि देव तो, बने सभी अनुरूप ॥
आया तब सौधर्म सुर, ऐरावत पर बैठ।
तव पूजा से हे प्रभो, होवे शिव से भेंट॥४४॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं जन्म-कल्याणक-मण्डित श्री नमिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

दसमी कृष्णाषाढ़ को, दीक्षा पा वैराग्य।
पूजा का अवसर मिला, खुला हमारा भाग्य॥
राजगृही नृप दत्त ने, देकर के आहार।
मुक्ति वधू से शीघ्र ही, पहनी थी वरमाल॥४५॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं तपः कल्याणक-मण्डित श्री नमिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

मगसिर की एकादशी, शुक्ल बनाकर भाव।
केवलज्ञान सु प्रकट हो, पूजेंगे हम चाव ॥
एक लाख श्रावक सदा, नमि तव डेरे बैठ।
धर्म - मर्म सुन आपसे, धन्य बने निज पैठ॥४६॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं ज्ञान-कल्याणक-मण्डित श्री नमिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

चौदस वैशाखी रही, कृष्ण रहा था पक्ष।
शिव पाया तीर्थेश ने, होकर निज में दक्ष ॥
मिथिला के गौरव बने, पा कल्याणक पाँच।
जो पूजे नमि चरण को, नहिं आयेगी आँच ॥४७॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं निर्वाण-कल्याणक-मण्डित श्री नमिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

अनंत चतुष्टय के ४ अर्घ्य

अमित ज्ञान जिसमें सदा, झलक रहे त्रय लोक।
तब तो तेरी अर्चना, शीघ्र मिटाती शोक ॥
नौ महिने छद्मस्थ बन, पाया केवलज्ञान।
अभय दिया सबको अहो, करके आतमपान ॥४८॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं अनंत-ज्ञान-गुणमण्डित श्री नमिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

अनन्तदर्शन में रहा, अवलोकन सामान्य।
पूज्य तभी तो आप ही, सब देवों में मान्य ॥
दो योजन का हे प्रभो, समवसरण सुख रूप।
उसमें बैठे भव्य जन, सुने देशना भूप ॥४९॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं अनंत-दर्शन-गुणमण्डित श्री नमिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

मोहनीय नहिं शेष सो, सुख है अक्षातीत।
देख भयंकर वस्तु ना पूजक हो भयभीत ॥
विजय भूप के पुत्र हो, नमि जिन तुम तीर्थेश।
शरणागत को शरण दे, कर देते परमेश ॥५०॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं अनंतसुखगुणमण्डित श्री नमिनाथजिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

अन्त रहित तव वीर्य का, कहाँ रहा है पार।
तीन काल में ना थके, रहे भवोदधि पार ॥

नमि चरणों में भक्ति से, नमि-नमि करूँ प्रणाम।
जीवन तव नवनीत सा, मार्दव गुण की खान॥५१॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं अनंत-वीर्य-गुणमण्डित श्री नमिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

१८ दोष से रहित १८ अर्घ्य

(लय—श्री वीर महा अति...)

जो क्षुधा रोग दुख रूप, उसको नाशा है।
सो आप बने शिवभूप, निज के राजा हैं॥
श्री नमि जिनवर के पाद, त्रिभुवन अर्चित हैं।
सुख वीर्य सुदर्शन ज्ञान, घर-घर चर्चित है ॥५२॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं क्षुधा-दोष-रहित श्री नमिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

यह प्यास महाभयकार, जग को त्रसित करे।
जो आवे तेरे द्वार, उसके पाप हरे॥
श्री नमि जिनवर... ॥५३॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं तृषा-दोष-रहित श्री नमिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

हो भाग गया भयभीत, भय भी तुमसे वा।
हम बना आपको मित्र, पूजे चरणों आ॥
श्री नमि जिनवर... ॥५४॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं भय-दोष-रहित श्री नमिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

तब आता दिल में द्वेष, क्रोध उपजता जब।
तव द्वेष रहित है वेष, मुझको भाता वह॥
श्री नमि जिनवर... ॥५५॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं द्वेषदोष-रहित श्री नमिनाथजिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

नहिं फटकेगा अब राग, अर्हद् पद पाया।
तब तो प्रभु तेरा मार्ग, मम मन है भाया॥
श्री नमि जिनवर... ॥५६॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं राग-दोष-रहित श्री नमिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

नहिं मोह बचा है शेष, पहले ही नाशा।
मम तुम सा होवे वेष, शिव की हो आशा॥
श्री नमि जिनवर के पाद, त्रिभुवन अर्चित हैं।
सुख वीर्य सुदर्शन ज्ञान, घर-घर चर्चित है ॥५७॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं मोह-दोष-रहित श्री नमिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

क्यों चिन्ता आये पास, सब कुछ त्याग दिया।
मैं बना आपका दास, तुम पद राग किया॥
श्री नमि जिनवर... ॥५८॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं चिंता-दोष-रहित श्री नमिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

जो करती जर्-जर देह, उसको जीत लिया।
उस जरा रोग को देव, तुमने भीत किया॥
श्री नमि जिनवर... ॥५९॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं जरा-दोष-रहित श्री नमिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

यह तन है गद[१] भण्डार, रोग न शेष बचा।
सो पूजन से हे नाथ, भव का पाप कटा॥
श्री नमि जिनवर... ॥६0॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं रोग-दोष-रहित श्री नमिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

तुम मरण दोष को नाश, निज को भोग रहे।
तुम पाकर के निर्वाण, फिर नहिं लौट रहे॥
श्री नमि जिनवर... ॥६१॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं मरण-दोष-रहित श्री नमिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

नमि स्वामी तुममें स्वेद, जबसे नाश हुआ।
तब समवसरण में राज, शिवपुर पास किया ॥
श्री नमि जिनवर... ॥६२॥

१. रोग

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं स्वेद-दोष-रहित श्री नमिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

क्या हो सकता है खेद, पाप न उदित हुआ।
तव पूजा करके देव, मम मन मुदित हुआ॥
श्री नमि जिनवर के पाद, त्रिभुवन अर्चित हैं।
सुख वीर्य सुदर्शन ज्ञान, घर-घर चर्चित है ॥६३॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं खेद-दोष-रहित श्री नमिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

जो मद में गाफिल होय, निज को भूलेगा।
यदि पूजे नमि के पाद, सुख में झूलेगा॥
श्री नमि जिनवर... ॥६४॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं मद-दोष-रहित श्री नमिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

मम नमि के रति नहिं शेष, सो नहिं पाप करे।
तव भक्ति भक्त के शीघ्र, सारे पाप हरे॥
श्री नमि जिनवर... ॥६५॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं रति-दोष-रहित श्री नमिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

नहिं विस्मय तुममें शेष, त्रिभुवन जान रहे।
मम मेटो विस्मय देव, तव गुणगान करे॥
श्री नमि जिनवर... ॥६६॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं विस्मयदोषरहित श्री नमिनाथजिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

तुम निद्रा से अति दूर, सच्चे पण्डित हो।
सो पूजूँ मैं भरपूर, पाप विखण्डित हो॥
श्री नमि जिनवर... ॥६७॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं निद्रा-दोष-रहित श्री नमिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

जब जन्में जग में जीव, दुख ही दुख भोगे।
तुम जन्म विनाशक देव, भव के अघ रोके॥
श्री नमि जिनवर... ॥६८॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं जन्म-दोष-रहित श्री नमिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

जब शोकाकुल हो चित्त, नमि का ध्यान करे।
ये शोक रहित सो देव, उर से शोक हरे॥
श्री नमि जिनवर के पाद, त्रिभुवन अर्चित हैं।
सुख वीर्य सुदर्शन ज्ञान, घर-घर चर्चित है ॥६९॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं शोक-दोष-रहित श्री नमिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

(ज्ञानोदय)

कूट मित्रधर रहा ज्ञानधर, और बीच में नाटक के।
नमि स्वामी ने यहीं मिटाया, जन्म मरण का नाटक रे॥
खड्गासन से पन्द्रह कम सौ, कर्म प्रकृति का नाश किया।
अष्टगुणों को पाकर ओहो, शिव ललना को पास किया ॥७०॥

ॐ ह्रीं मित्रधरकूटेभ्यो नमः अर्घ्यं ...।

जहाँ-जहाँ पर स्वर्ण सुनिर्मित, हीरा-पन्ना आश्मन के।
गिरी गुफा में, जिनमन्दिर में, प्रतिमाएँ शिवसाधन है॥
उन सबको भी कोटि-कोटिशः, वन्दन मेरा वन्दन है।
अर्घ चढ़ाऊँ भाव सुनिर्मल, होवे मेरे चन्दन से ॥७१॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री नमिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ...।

पूर्णार्घ्य

हे नमि जिन चंदा, मेटो फन्दा, मुझको भव से पार करो।
मैं पद में आऊँ, पूज रचाऊँ जन्म मरण का नाश करो॥
वह नीलकमल है, चिह्न अमल है, उससे तुमको पहचाने।
हम अर्घ चढ़ाने, कर्म मिटाने, तव पद आये शिव पाने ॥७२॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री नमिनाथ-जिनेन्द्राय नमः पूर्णार्घ्यं...।

जाप्य मंत्र—ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री नमिनाथ-जिनेन्द्राय नमः।

(९/२७/१०८)

जयमाला

नमि को नम त्रय योग से, जयमाला अभिराम।
कहकर चाहूँ आपसे, मैं पाऊँ शिवधाम॥१॥

(ज्ञानोदय)

एक दिवस श्री नमि स्वामि जी, बैठ हस्ति के कन्धे पर।
क्रीड़ा करने जाते थे तब, देव युगल आ इनके पद॥
बोले प्रभुवर नगर सुसीमा, के तीर्थंकर जिनवर ने।
बतलाया है आप भरत के, तीर्थंकर हैं सुखकर हैं॥२॥
यह सुनकर के पूज्य आपके, दर्शन को हम आए हैं।
दर्शन करके धन्य हमारे, चित्त कमल विकसाए हैं॥
सुनकर देवों की ये बातें, नमि जिन को वैराग्य हुआ।
जातिस्मरण से परिचय पाकर, भव भोगों से राग गया॥३॥
सुप्रभ सुत को राज्य सुदेकर, गये चैत्रवन प्यारा जो।
नमः सिद्ध कह तेला पूर्वक, दीक्षा ले निज ध्याया औ॥
एक सहस भू राजाओं ने, नमि जिन का अनुशरण किया।
मोक्ष दायिनी मुक्ति-स्वामिनी, दीक्षा ले वन गमन किया॥४॥
तीन दिवस के बाद दत्त ने, हस्त युगल में दान दिया।
देवों ने तब रत्नवृष्टि कर, जय-जय-जय जयकार किया॥
सत्रह गणधर समवसरण में, धर्मामृत का पान करें।
बीस सहस मुनि परम दिगम्बर, जीवन का कल्याण करें॥५॥
तीन लाख थी वहाँ श्राविका, एक लाख जो श्रावक थे।
सब ही तेरे पथ अनुरागी, मोक्षमार्ग के भावक थे॥
बकुल वृक्ष के नीचे नमि जब, तुमको केवलज्ञान हुआ।
तब तो वृष पीयूष आपका, भव्यों को वरदान हुआ॥६॥
भरतक्षेत्र यह आप समागम, पाकर उत्तम धाम हुआ।

प्रशंसनीय यह बना तभी से, इसका सबमें नाम हुआ॥
जहाँ-जहाँ पर नमि प्रभु तेरे, चरण पड़े थे गमन हुआ।
वहाँ-वहाँ के जीवों के सब, पाप-ताप का दमन हुआ॥७॥
सबके घर खुशहाली छायी, खुशियों का नहिं पार रहा।
आप दर्श से भव्यों के वो, मिथ्यातम भी भाग गया॥
विचरण करते विहरण करते, दिव्यध्वनि से भविजन को।
धर्म सरोवर में नहला संतुष्ट किया था जन-जन को॥८॥
आयुष का जब एक माह बस, शेष बचा था तब तो वे।
योग निरोधन करने गिरि सम्मेदशिखर पर पहुँचे वे॥
नहिं इच्छा थी जाने की नहिं, रुकने की ही इच्छा थी।
नहीं देशना की इच्छा नहिं, परहित की ही इच्छा थी ॥९॥
फिर भी सब कुछ अहो आपके, सहज रूप से घटित हुआ।
इस कारण ही धन्य-धन्य नमि, जन्म मरण तव व्यथित हुआ॥
जहाँ आपने शेष कर्म के, छक्के शीघ्र छुड़ाये थे।
वही मित्रधर कूट बना था, सबने शीश झुकाये थे॥१०॥
बजा-बजाकर वीणा दृम-दृम, दृम-दृम दृम-दृम नाद करूँ।
पूजा करके आप चरण की, भव-भव का संताप हरूँ॥
नीलकमल से नयन आपके, नीलकमल का चिह्न रहा।
मात वप्रिला विजय भूप के, पुत्र निराले आप अहा॥११॥
डोंडी पिटवा जगभर में यह, समाचार भिजवाऊँ मैं।
सच्चे जिनवर नमि स्वामी हैं, सबको यह समझाऊँ मैं॥
आओ इनके दर्शन कर लो, पूजा कर लो आओ रे।
परम हितंकर और कहीं भी, नहीं मिलेंगे आओ रे॥१२॥
एक बार यदि आये तुम तो, मन न करेगा जाने का।
अहो-रात बस लगा रहेगा, इनके पद में आने का॥

शुद्ध स्वर्ण सा वर्ण रहा इन, पन्द्रह धनु की काया थी।
आत्म बोध पा क्षणभर में ही, छोड़ी जग की माया थी॥१३॥
और कहीं तुम पहुँच गये तो, कोई देव न भावेगा।
मिथ्या मत को देख-देखकर, मन तेरा घबरायेगा॥
होगा पश्चाताप चित्त में, कुदेव को क्यों पूजा था।
उनको सच्चा समझ हाय जो, अब तक उनमें रीझा था॥१४॥
आज आपके दर्शन से संतुष्ट, हुआ जो चित्त अहो।
उसका अनुभव अद्‌भुत न्यारा, जिह्वा से यदि आप कहो॥
कह न सकोगे थक जाओगे, जीवन पूरा हो जावे।
लेकिन भूल न पाओ भाई, जब तक मुक्ति न मिल पावे॥१५॥
अतः छोड़कर द्वन्द-फन्द तुम, आ करके नमि चरणों में।
जीवन अर्पित कर दो भोले, जिससे फिर नहिं भटकोगे॥
नमि स्वामी तव गुणगण गाथा, जड़ शब्दों से क्या गाऊँ।
फिर भी चुप नहिं बैठ सकूँ सो, भ्रमित हुआ सा गुण गाऊँ॥१६॥
टूटे - फूटे कुछ शब्दों में, मैंने यह गुण गाये हैं।
क्षमा करो हे नमि जिन मेरा, मन शिव में ललचावे ये॥
पूर्ण करूँ जयमाला तेरे, चरणों में नित नमन करूँ।
आप मार्ग पर चलकर मैं भी, मुक्ति रमा का वरण करूँ॥१७॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री नमिनाथ-जिनेन्द्राय नमः जयमाला पूर्णार्घ्यं...।

आशीर्वाद

विषय भोग की तृष्णा तजकर, नमि स्वामी के पद आवे।
एक बार भी दर्श करे तो, चित्त कहीं नहिं फिर जावे॥
आप भक्ति से लौकिक निधियाँ, सहज रूप से मिलती हैं।
और शीघ्र ही आकर्षित हो, मुक्ति रमा भी वरती है॥

इत्याशीर्वादः परिपुष्पाञ्जलिं क्षिपामि/क्षिपेत्

श्री नेमिनाथ विधान

पीठिका

शौरीपुर में द्वारिका, नेमिनाथ का धाम।
जो पूजेगा भक्ति से, सभी बने शुभ काम ॥

स्तुति

(ज्ञानोदय)

श्रेष्ठी अर्हद्दास पुत्र अपराजित गुणधर वीर रहा।
शीलवान था शूरवीर था, योद्धाओं में धीर रहा॥
उस ही को दे राज्य भूप ने, तीर्थंकर के पद में जा।
दीक्षा लेकर साथ उन्हीं के, सुख पाया था शिव को पा ॥१॥

राजा ने जब सुना पिताजी, तीर्थंकर के साथ गये।
मोक्षमहल तो दुखिया होकर, नयन युगल से नीर बहे॥
नियम लिया था जब तक दोनों, भगवन के नहिं दर्शन हो।
चारों विध के भोजन त्यागूँ, जब तक नहि पद पर्शन हो ॥२॥

आठ दिवस जब भोजन पानी, बिना नृपति के बीत गये।
दर्श न पाये लेकिन प्रभु के, पाप कर्म नहिं रीत हुए॥
पता लगा तब इन्द्र देव ने, समवसरण को बनवाया।
दर्शन करवा पृथ्वीपति को, तृप्त किया था समझाया ॥३॥

प्रबल पुण्य था तब तो शचिपति, सेवा करने आया था।
बना विक्रिया बल से भगवन, दरश तुम्हें करवाया था॥
इक दिन राजा पूजा करके, धर्मकार्य में लीन हुआ।
गगनगामिनी ऋद्धिधरों को, नमन किया था शीश झुका ॥४॥

मुनिवर बोले एक माह का, आयुष तव अवशेष रहा।
पूर्वकाल के भाई तुममें, स्नेह भाव जो शेष रहा॥

इस कारण ही हम आये हैं, तुम्हें बताने आज यहाँ।
भोग छोड़कर संयम धारो, भोगों में है सौख्य कहाँ॥५॥

मुनिवर की सुन बात भूप ने, श्रद्धा धर संन्यास लिया।
देह-नेह का कषाय दल का, मन-वच-तन से त्याग किया॥
फलतः अंतिम स्वर्ग पधारे, सुख भोगे भरपूर वहाँ।
हस्तिनागपुर के अधिपति के, पुत्र हुए थे आप यहाँ॥६॥

नाम रहा सुप्रतिष्ठ इनका, पूज्य सुमन्दर स्वामी का।
योग मिला सो दीक्षा लेकर, तीर्थंकर पद बाँधा था॥
जयंत सुर में जाकर जन्में, अद्भुत अनुपम सुख भोगे।
शौरीपुर में जन्ममात्र से, तीन लोक के दुख रोके॥७॥

फिर तप धारा ज्ञान सुपंचम, पाकर के शिवमहल गये।
मुक्तिपुरी का राज्य मिला सो, वहीं आप अब अचल हुए॥
इस विधि नेमि प्रभो आपका, विधान करता गुण गाकर।
पुनर्जन्म से रहित बनूँ मैं, आप चरण में अब आकर॥८॥

परिपुष्पांजलिं क्षिपामि/क्षिपेत्

विधान पूजा

स्थापना

(ज्ञानोदय)

जूनागढ़ की राजकुमारी, राजुल से मन मोड़ा था।
ऊर्जयन्तगिरि पर जा मन को, शिव ललना से जोड़ा था॥
उन ही श्रीमद् नेमिनाथ को, उर में आज बुलाता हूँ।
आओ स्वामी निकट पधारो, पूजा आज रचाता हूँ॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री नेमिनाथ जिनेन्द्र अत्र अवतर अवतर संवौषट् इति आह्वाननं! ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री नेमिनाथ जिनेन्द्र अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं! ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री नेमिनाथ जिनेन्द्र अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणं!

अष्टक

(घत्ता)

यह क्षीर सिन्धु का, पूर्ण इन्दु सा, जल कलशों में भर लाया।
मम जन्म नाश हो, मोक्ष पास हो, चरण चढ़ाने मैं आया॥
जब करुणा आयी, जो सुखदायी, नेमि मुक्ति आसक्त हुए।
तज राजमती को, सौख्य सती सो, हम भी तेरे भक्त हुए॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री नेमिनाथजिनेन्द्राय नमः जन्मजरामृत्यु विनाशनाय जलं...।

मलयागिरि चंदन, बनने कुन्दन, लेकर प्रभु के पद आया।
सो ताप मिटा दो, शीतलता दो, पूजन करके हरषाया॥
जब करुणा आयी...॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री नेमिनाथजिनेन्द्राय नमः संसारतापविनाशनाय चंदनं...।

जो तन्दुल लावे, चरणों आवे, अखण्ड पद के पाने को।
वो भार उतारे, मूर्च्छा टारे, सिद्धालय में जाने को॥
जब करुणा आयी...॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री नेमिनाथजिनेन्द्राय नमः अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान्...।

जो काम जीतने, मुक्ति प्रीति से, पुष्प चढ़ाने आयेगा।
वो ब्रह्ममयी हो, अक्षजयी हो, निज वैभव को पायेगा ॥
जब करुणा आयी, जो सुखदायी, नेमि मुक्ति आसक्त हुए।
तज राजमती को, सौख्य सती सो, हम भी तेरे भक्त हुए ॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री नेमिनाथजिनेन्द्राय नमः कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं...।

ले मञ्जुल मीठे, मनहर नीठे, नैवज चरण चढ़ायेगा।
वो क्षुधा दूरकर, पाप चूरकर, आनन्दामृत पायेगा ॥
जब करुणा आयी...॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री नेमिनाथजिनेन्द्राय नमः क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं...।

ले मणिमय दीपक, शिवपथ दीपक! पूजा करने आया हूँ।
मम मोह नाश हो, आप खास हो, अरजी लेकर आया हूँ ॥
जब करुणा आयी...॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री नेमिनाथजिनेन्द्राय नमः मोहान्धकारविनाशनाय दीपं...।

वर धूप सुगंधित, त्रिभुवन वंदित, अर्पण करता तुमको जो।
उसको जो मिलता, भाग्य सु खुलता,कह पावेगा कौन कहो ॥
जब करुणा आयी...॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री नेमिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अष्टकर्म-दहनाय धूपं...।

बादाम सुपारी, भर-भर थाली, आप चरण में भेंट करें।
तो मिटे आपदा, सर्व सम्पदा, आकर उससे भेंट करे ॥
जब करुणा आयी...॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री नेमिनाथ-जिनेन्द्राय नमः मोक्षफल-प्राप्तये फलं...।

वसु द्रव्य मिलावे, तुम्हें चढ़ावे, श्रद्धा से जो एक दफा।
वह वसु गुण पावे, मान गलावे, बन जावेगा पुण्य सखा ॥
जब करुणा आयी...॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री नेमिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अनर्घ-पद-प्राप्तये अर्घ्यं...।

प्रत्येक-अर्घ्य

(दोहा)

नेमिनाथ प्रभु आपके, गुण का नहिं है पार।
उनमें से कुछ को जजूँ, ये ही जग में सार॥

इति मण्डलस्योपरि पुष्पाञ्जलिं क्षिपामि/क्षिपेत्।

(लय—शांतिनाथ मुख शशि उनहारी...)

स्वेद कभी नहिं आता तुमको।
देख उपजती खुशियाँ हमको॥
नेमिनाथ का जाप जपेगा।
पुण्य बढ़ेगा पाप मिटेगा ॥१॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं निःस्वेदत्व-जन्मातिशय-गुणधारक श्री नेमिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

अति निर्मल तव देह रही है।
फिर भी तन से स्नेह नहीं है॥
धर्म धुरा हो नेमिनाथ जी।
पूजक पाता मोक्षपाथ जी॥२॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं निर्मलत्व-जन्मातिशय-गुणधारक श्री नेमिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

सिन्धु फेन सा श्वेत रक्त है।
पूजन का पा श्रेष्ठ वक्त ये॥
नेमि प्रभु की महिमा गाओ।
लौट न भव में फिर से आओ ॥३॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं क्षीर-गौररुधिरत्व-जन्मातिशय-गुणधारक श्री नेमिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

सामुद्रिक सब लक्षण वाला।
देह आपका गुणगण शाला॥

सुर से आता भोजन पानी।
चरण पूज से बने सुज्ञानी॥४॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं समचतुरस्त्र-संस्थान-जन्मातिशय-गुणधारक श्री नेमिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

संहनन तन में सर्वोत्तम है।
किन्तु न उसका किंचित् मद है॥
नेमिनाथ के पूजक जग में।
सुख पावेंगे जीवन भर वे॥५॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं वज्रवृषभनाराच-संहनन-जन्मातिशय-गुणधारक श्री नेमिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

कितना सुन्दर कौन बतावे।
रूप देखकर मन ललचावे॥
नेमिनाथ की उपमा नहिं है।
अंतिम देही काम सही है॥६॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं सौरूप्य-जन्मातिशय-गुणधारक श्री नेमिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

खुशबू वाला तन पाकर भी।
बने तपस्वी गुण आकर जी॥
परम सुगंधित नेमिनाथ है।
भक्त जनों के नित्य साथ है॥७॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं सौगन्ध्य-जन्मातिशय-गुणधारक श्री नेमिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

उत्तम लक्षण युक्त रहा है।
सब दोषों से मुक्त कहा है॥
पन्द्रह महिने रत्न बरषते।
नेमि भक्त के भाग्य हरषते॥८॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं सौलक्षण्य-जन्मातिशय-गुणधारक श्री नेमिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

अतुलनीय है शक्ति आप में।
जन्मजात है नहीं माप है॥
नासा से ही शंख बजाया।
विस्मय सबको तब उपजाया॥९॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं अप्रमितवीर्य-जन्मातिशय-गुणधारक श्री नेमिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

मीठे-मीठे तोल-तोलकर।
नेमि वचन का नहीं मोलकर॥
राहु-केतु आ पद चूमेंगे।
आप भक्ति में जो झूमेंगे॥१०॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं प्रियहितवादित्व-जन्मातिशय-गुणधारक श्री नेमिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

केवलज्ञानातिशय के १० अर्घ्य

(ज्ञानोदय)

तन से मन से धन से सबहि, जीव सुखी हो जाते हैं।
केवलज्ञानी आप पधारें, 'सुभिक्षता' सब पाते हैं॥
नेमि रत्न भण्डार रहे हैं, क्यों तू कंकर चुनता है।
वीतराग को तजकर भोले, सराग को क्यों नमता है॥११॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं गव्यूतिशत-चतुष्टय-सुभिक्षत्व-घातिक्षय-जातिशय-गुणधारक श्री नेमिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

नभतल में यो विहार करते, जैसे भू पर चलते हो।
गगन गमन यह अतिशय प्यारा, दुःख क्लेश को दलते हो॥
नेमिनाथ को भक्तिभाव से, भज ले, भज ले, भज ले रे।
श्रद्धा करके मिथ्यातम को, तज दे, तज दे, तज दे रे॥१२॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं गगनगमनत्व-घातिक्षय-जातिशय-गुणधारक श्री नेमिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

नहिं खाते नहिं पीते कुछ भी, मोह कर्म जो शेष नहीं।
आत्मामृत को पीकर स्वामी, पायी अतिशय पुण्यमही॥
नाच-नाचकर नेमिनाथ के, गा-गा करके गुणगण को॥
अर्चूं पूजूँ शीश झुकाऊँ, टालूँ भव के बन्धन को॥१३॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं भुक्त्यभाव-घातिक्षय-जातिशय-गुणधारक श्री नेमिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

घाति कर्म जब नाश हुए तो, प्राणी वध क्यों होवेगा।
अभयदान यह रहा अलौकिक, पूजे तो नहिं सोवेगा॥
राहु-केतु शनि काले हैं सो, देख-देखकर डर लगता।
नेमिनाथ पर आप रूप के, दर्श मात्र से भय भगता॥१४॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं अप्राणिवधत्व-घातिक्षय-जातिशय-गुणधारक श्री नेमिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

भूत-प्रेत पशु मानव कोई, कभी नहीं उपसर्ग करें।
अतिशय धारी को जो पूजे, मुक्ति वधू को शीघ्र वरे॥
जूनागढ़ से रथ मोड़ा था, करुणा क्रन्दन सुन करके।
वही नेमि मम कारण होवे, भव आक्रन्दन तजने में ॥१५॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं उपसर्गाभाव-घातिक्षय-जातिशय-गुणधारक श्री नेमिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

इक आनन पर चारों दिशि में, दिखता सबको तेरा है।
अनुपम अतिशय देख-देखकर,विस्मित मन यह मेरा है॥
नेमिनाथ के नाम मात्र से, मिथ्यातम टल जावेगा।
अनंत दुखमय भवसागर यह, चुल्लू भर रह जावेगा॥१६॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं चतुर्मुखत्व-घातिक्षय-जातिशय-गुणधारक श्री नेमिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

विद्याएँ हैं जितनी जग में, दासी बनकर आयी हैं।
घातिकर्म का नाम मिटा सो, पद पाकर हरषायी हैं॥
नेमिनाथ तुम मेघ रहे हम, केकी तेरे भक्त रहे।
फुदक-फुदककर नाचे तुमको, देख-देख आसक्त हुए॥१७॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं सर्वविद्येश्वरत्व-घातिक्षय-जातिशय-गुणधारक श्री नेमिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

छाया कैसे पड़ सकती है, तीर्थंकर पद उदय हुआ।
आपद छाया पड़ न सके यदि, अर्घ चढ़ावे अमद हुआ॥
कोटि सूर्य का तेज आपसे, फीका है सो लज्जित हो।
नेमि शरण में आकर बैठा, देव कोष्ठ में सज्जित हो॥१८॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं अच्छायत्व-घातिक्षय-जातिशय-गुणधारक श्री नेमिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

पलके झपके थक जावें तो अमिट अतुल बलधारी सो।
क्यों झपकेगी तीन लोक के नायक समताधारी हो॥
भव्य कुमुद खिल जाते जल्दी, नेमिचन्द्र को देख अहो।
जो पूजेगा नेमिनाथ को आ पावे क्या पाप कहो॥१९॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं अपक्ष्मस्पन्दत्व-घातिक्षय-जातिशय-गुणधारक श्री नेमिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

नख केशों के घटने का जो, कारण था वह नष्ट हुआ।
सो न बढ़ेंगे ऐसे प्रभु से, कहो कभी क्या कष्ट हुआ॥
नेमि आप तो नीलमणी से, नीलम से अति नील रहे।
नाचूँ गाऊँ पूजूँ तुमको, श्रेष्ठ शील की झील रहे॥२०॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं समान-नख-केशत्व-घातिक्षय-जातिशय-गुणधारक श्री नेमिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

देवकृत अतिशय के १४ अर्घ्य

(दोहा)

अर्धमागधी देशना, सुनकर मिटते ताप।
सराग की श्रद्धा मिटे, उर बस जाते आप ॥
ऊर्जयंत गिरि पर रहा, नेमिनाथ का धाम।
मन-वच-तन से पूज लो, शेष बचे नहिं काम ॥२१॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं सर्वार्धमागधी-भाषा-देवोपनीतातिशय-गुणधारक श्री नेमिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

सब जन में मैत्री बनी, मिटे पाप के घाव।
चारों गति के जीव में, हित का जो था भाव ॥
गिरनारी में नेमि ने, पाया था निर्वाण।
एक बार भी पूज ले, चुभे नहीं अघ बाण ॥२२॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं सर्वजन-मैत्रीभाव-देवोपनीतातिशय-गुणधारक श्री नेमिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

सब ऋतुओं के खिल उठे, फूल फलों से वृक्ष।
विहार जब हो दर्श कर, शिवपथ में हो दक्ष ॥
तामिलनाडू में रहे, नेमिनाथ प्रत्यक्ष।
अर्हद्गिरि पर पूज ले, जो त्रिभुवन अध्यक्ष ॥२३॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं सर्वर्तुफलादिशोभित-तरुपरिणाम-देवोपनीतातिशय-गुणधारक श्री नेमिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

दर्पण सम निर्मल बने, बने भूमि सुखरूप।
इन्द्राज्ञा से देव आ, सब करते अनुरूप ॥
नेमिनगर में नेमि को, पूजूँ मैं दिन - रात।
अंतिम क्षण तक मैं प्रभु, रहूँ आपके साथ ॥२४॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं आदर्शतल-प्रतिमारत्नमयी-देवोपनीतातिशय-गुणधारक श्री नेमिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

वायु बहे अनुकूल ही, जब आते हैं आप।
सारे संकट तब टले, रहे न अघ का नाम ॥
जैननगर में शोभता, अष्टधातुमय बिम्ब।
नेमि भक्त बन जायगा, उनका ही प्रतिबिम्ब॥२५॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं विहरण-मनुगतवायुत्व-देवोपनीतातिशय-गुणधारक श्री नेमिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

हर्ष बढ़े आनंद भी, पूजे बनकर भक्त।
सरस्वती लक्ष्मी सभी, उस पर हो आसक्त ॥
सालेड़ा इक गाँव में, अतिशयकारी नेमि।
कांक्षा तजकर जो भजे, शिवपथ में हो प्रेम॥२६॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं सर्वजन-परमानंदत्व-देवोपनीतातिशय-गुणधारक श्री नेमिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

कंकर काँटे धूल भी, सुर करते हैं साफ।
जिसके दिल में आप हो, पातक होते माफ॥
मालथौन नेमीश को, जो पूजे भरपूर।
दुख के काँटे एक पल, में हो जाते दूर॥२७॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं वायुकुमारोपशमित - धूलि - कण्टकादि-देवोपनीतातिशय-गुणधारक श्री नेमिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

गंधोदक की वृष्टि से, सुर करते हैं भक्ति।
समवसरण को देख हम, तजें भोग आसक्ति ॥
जिंतुर अतिशय क्षेत्र में, नेमि रहे गतराग।
इसीलिए तो आप में, बढ़ा हमारा राग॥२८॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं मेघकुमारकृत-गंधोदक-वृष्टि-देवोपनीतातिशय-गुणधारक श्री नेमिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

स्वर्णिम सुरभित पद्म को, रख देते सुर देव।
आप पधारेंगे जहाँ, मिटे पाप की टेव ॥

झिरनों मंदिर में रहे, परमेश्वर नेमीश।
बाड़ी की भू में मिले, पूजक हो जगदीश॥२९॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं पादन्यासेकृत-पद्मानि-देवोपनीतातिशय-गुणधारक श्री नेमिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

आम-जाम से पुष्प से, झुक जाते हैं झाड़।
आलस तजकर पूज लें, आवे सुख की बाढ़ ॥
जूनागढ़ ससुराल थी, राजुल सी थी नार।
मुक्ति वरणकर मोक्ष को, बना लिया ससुराल॥३०॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं फलभार-नम्रशालि-देवोपनीतातिशय-गुणधारक श्री नेमिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

बिजली बादल रहित हो, निर्मलतम आकाश।
पूजा कर ले शीघ्र हो, मिथ्यातम का ह्रास ॥
ऊर्जयन्त पर नेमि ने, किये कर्म चकचूर।
जो पूजे मद नाशकर, बन जावेगा शूर॥३१॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं शरत्कालवन्निर्मल-गगनत्व-देवोपनीतातिशय-गुणधारक श्री नेमिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

देव बुलाते आपके, भक्तों को दिन रात।
कहते कर ले दर्श तू, बन जावे सब बात ॥
शौरीपुर युवराज जो, बने मोक्ष सरदार।
अहो नेमिप्रभु आप में, सुख की है भरमार॥३२॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं एतैतैति - चतुर्निकायामर - परस्पराह्वानन-देवोपनीतातिशय-गुणधारक श्री नेमिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

दशों दिशाएँ स्वच्छ हों, सुरकृत अतिशय देव।
सार्थवाह तुम धर्म के, पूजन की हो टेव ॥
रहा द्वारिका नेमि का, जन्म स्थान रमणीय।
एक पलक भी पूज ले, बन जावे कमनीय॥३३॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं शरन्मेघवन्निर्मल-दिग्विभागत्व-देवोपनीतातिशय-गुणधारक श्री नेमिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

धर्मचक्र आगे चले, होवे नेमि विहार।
जो पूजेगा चाव से, आपद जावे हार॥
यादव कुल गौरवमयी, बना नेमि संयोग।
विनती करता हे प्रभो, मिटे जनम का रोग॥३४॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं धर्मचक्र-चतुष्टय-देवोपनीतातिशय-गुणधारक श्री नेमिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

अष्टप्रातिहार्य के ८ अर्घ्य

(लय—कहाँ गये चक्री...)

सिंहासन यह रत्न जटित है, नेमि विराजे हैं।
छूते नहिं हैं लेकिन उसको, अचरज आवे रे॥
प्रातिहार्य यह प्रभो! आपने, कैसे पाया है।
पुण्योदय से भक्त पूजने, चरणों आया है॥३५॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं सिंहासन-प्रातिहार्य-मण्डित श्री नेमिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

जिसके नीचे बैठ नेमि ने, ध्यान लगाया था।
अशोक उसका नाम आपको, पा महकाया था॥
शोक मिटेगा, हर्ष बढ़ेगा, जो भी ध्यायेंगे।
सुख पायेंगे, शिव जायेंगे, लौट न आयेंगे॥३६॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं अशोक-वृक्ष-प्रातिहार्य-मण्डित श्री नेमिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

तीन छत्र जो रजतमयी तव, ऊपर शोभित हैं।
सुंदरता को देख नेमि की, जनता मोहित हैं॥
शिरोमणी ये शिखामणी हैं, छत्र बताते हैं।
थाली भर-भर अर्घ लिये हम, चरण चढ़ाते हैं॥३७॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं छत्रत्रय-प्रातिहार्य-मण्डित श्री नेमिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

चौंसठ चामर नेमि आपको, निशदिन ढुरते औ।
लगते प्रभु की दोनों दिशि में, झरने झरते हों॥
ढोल बजाते जय-जय करते, हम सब आये हैं।
अर्घ चढ़ाकर वीतराग को, दिल महकाये हैं॥३८॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं चतुःषष्ठि चामर-प्रातिहार्य-मण्डित श्री नेमिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

भामण्डल है निर्मल जिसकी, महिमा कौन कहे।
सुरगुरु गणधर ऋषिवर गावे, तो भी मौन रहे॥
नेमि आपके अंतरंग की, शुद्धि बताता है।
भक्त आपकी पूजा करके, अर्घ्य चढ़ाता है॥३९॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं भामण्डल-प्रातिहार्य-मण्डित श्री नेमिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

दुन्दुभि बाजे बजा-बजाकर, सुरगण आते हैं।
प्रभु की महिमा बता-बताकर सुर हरषाते हैं॥
संख्य-असंख्यों चंदा भी तो, आकर नमते हैं।
आप रूप को देख नेमि, हम तुममें रमते हैं॥४०॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं दुन्दुभि-प्रातिहार्य-मण्डित श्री नेमिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

कल्पवृक्ष के विविध पुष्प को, सुर बरसाते हैं।
जो भी देखे प्रातिहार्य को, पद झुक जाते हैं॥
अंग-बंग में देश-देश में, विचरण होता है।
भव्य नेमिमय सरवर पाकर, कल्मष धोता है॥४१॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं सुरपुष्पवृष्टि-प्रातिहार्य-मण्डित श्री नेमिनाथ जिनन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

दिव्य देशना सुनकर सबकी, सुलझें शंकाएँ।
अनेकान्तमय वाणी से मम, श्रद्धा विलसाए॥
नेमि आपकी दिव्यध्वनि यह, मन को भायी है।
तब तो अर्घ चढ़ाने जनता, चरणों आयी है॥४२॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं दिव्यध्वनि-प्रातिहार्य-मण्डित श्री नेमिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

पंचकल्याणक के ५ अर्घ्य

(ज्ञानोदय)

गर्भ पधारे नेमिनाथ तो, उत्सव चारों धाम हुए।
कार्तिक शुक्ला छठवीं तिथि थी, पूजक के सब काम हुए॥
छप्पन सुरियाँ सेवा करतीं, रात-दिवस अति हर्षित हो।
हे करुणानिधि अर्घ चढ़ावें, पाप हमारे कर्षित हों॥४३॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं गर्भकल्याणक-मण्डित श्री नेमिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

श्रावण शुक्ला छठ को जन्मे, सुर के आसन काँप गये।
व्यंतर ज्योतिष वैमानिक सुर, भवन देव भी भाँप गये॥
सो आकर के शीघ्र धरा पर, अद्‌भुत ताण्डव नृत्य किया।
नेमि आपकी पूजन करके, जीवन यह कृतकृत्य हुआ॥४४॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं जन्मकल्याणक-मण्डित श्री नेमिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

जन्म-दिवस में नेमिनाथ ने, जनम-मरण की नाशक जो।
परम दिगम्बर सर्व हितंकर, दीक्षा ली शिव साधक जो॥
देवकुरुक थी श्रेष्ठ पालकी, सहस्राम्र वन नाम रहा।
तप कल्याणक पूजो भव्यो, इससे उत्तम काम कहाँ॥४५॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं तपःकल्याणक-मण्डित श्री नेमिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

क्वाँर सुदी की पहली तिथि में, अनशन छह जब पूर्ण हुए।
चार घातिया द्वितीय शुक्ल से, अल्प समय में चूर्ण हुए ॥
जय-जय करते देवों ने आ समवसरण में दस अतिशय।
करके पूजा अर्घ चढ़ाऊँ बनने मैं भी अब शिवमय ॥४६॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं ज्ञान-कल्याणक-मण्डित श्री नेमिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

सातम शुक्ला आषाढ़ी थी, त्रय योगों को रोका था।
खुशियाँ खूब मनाकर पूजो, पुण्य कमाने मौका पा ॥
नेमिनाथ गत देह हुए थे, एक समय में सिद्ध शिला।
पहुँच गये थे, शुद्ध हुए थे, पूजूँ मैं भी भाग्य खिला ॥४७॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं मोक्ष-कल्याणक-मण्डित श्री नेमिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

अनंत चतुष्टय के ४ अर्घ्य

ज्ञानावरणी नहीं बचा है, अंतिम केवलज्ञान हुआ।
जिसने दर्शन किये आपके, उसको अपना भान हुआ ॥
अमिट ज्ञान को पाया फल में, अचल स्थान को पायेंगे।
छोड़ नेमि को पूजा करने, और कहीं क्यों जायेंगे ॥४८॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं अनंत-ज्ञान-गुणमण्डित श्री नेमिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

कर्म दूसरा नाश हुआ सो, अनंतदर्शन प्रकट हुआ।
सब द्रव्यों का अवलोकन वह, नेमि आपको सहज हुआ ॥
दृम-दृम वीणा वादन करके, झुन-झुन झुनियाँ आज बजा।
ठुमक-ठुमककर नाचूँ-गाऊँ, पूजा कर लूँ अर्घ सजा ॥४९॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं अनंत-दर्शन-गुणमण्डित श्री नेमिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

भोगभूमि के चक्रवर्ति के, स्वर्गपुरी के लौकिक जो।
सुख है उनसे अतुलनीय है, अनुपम है गत लौकिक ओ ॥
प्राप्त हुआ है अनंत इसका, अंत कभी नहिं आवेगा।
नेमि आपका ध्यान लगावे, वो भी इसको पावेगा ॥५०॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं अनंत-सुख-गुणमण्डित श्री नेमिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

श्रेष्ठ वीर्य जो अंतराय के, मूल नाश से प्राप्त हुआ।
तीन लोक को जान रहे पर, श्रम का नहिं अहसास हुआ ॥
नेमि आपके चरण-कमल की, जो नित वंदन करते हैं।
स्वर्ग लोक के सुख पाकर के, मुक्ति अंगना वरते हैं ॥५१॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं अनंत-वीर्य-गुणमण्डित श्री नेमिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

१८ दोष से रहित के १८ अर्घ्य

(लय–श्री वीर महाअतिवीर...)

तुम जनम दोष से दूर, होकर शुद्ध बने।
मैं अर्घ चढ़ाऊँ आप, मुझमें बोध भरे ॥
श्री नेमिनाथ भगवान, शिव में राज रहे।
जो आवेगा दरबार, सुख की श्वास रहे ॥५२॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं जन्म-दोष-रहित श्री नेमिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

जो जर-जर कर दे देह, उसको मार दिया।
सो बने अदेही आप, भव का पार लिया ॥
श्री नेमिनाथ भगवान...॥५३॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं जरा-दोष-रहित श्री नेमिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

ये क्षुधा रोग दुखकार, उसका नाश किया।
यदि पूज लिया इकबार, सुख को पास किया ॥
श्री नेमिनाथ भगवान...॥५४॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं क्षुधा-दोष-रहित श्री नेमिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

जो तृषा सताती देव, पास न आवेगी।
मम जीभ मात्र जिनराज, तव गुण गायेगी॥
श्री नेमिनाथ भगवान, शिव में राज रहे।
जो आवेगा दरबार, सुख की श्वास रहे॥५५॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं तृषा-दोष-रहित श्री नेमिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

यह मरण महादुखदाय, उसको मार दिया।
पा अजर-अमर अविनाश, पद का सार लिया॥
श्री नेमिनाथ भगवान...॥५६॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं मरण-दोष-रहित श्री नेमिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

नहिं तन में उपजे राग, आप विरागी हो।
सब आपद संकट जाय, तव पद रागी हो॥
श्री नेमिनाथ भगवान...॥५७॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं राग-दोष-रहित श्री नेमिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

जब नहीं बचा है शत्रु, तो क्यों द्वेषी हो।
जो अर्चे गावे नित्य, जिनवर वेषी हो॥
श्री नेमिनाथ भगवान...॥५८॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं द्वेष दोष रहित श्री नेमिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

नहिं रहा रोग का नाम, आप निरोगी हो।
जो चरण चढ़ावे अर्घ, शिव सुख भोगी हो॥
श्री नेमिनाथ भगवान...॥५९॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं रोग-दोष-रहित श्री नेमिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

जब खेद खिन्न हो चित्त, मन नहिं लगता है।
तब करे भक्ति पद आय, चेतन खिलता है॥
श्री नेमिनाथ भगवान...॥६०॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं खेद-दोष-रहित श्री नेमिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

तव दर्शन से हो नाश, आठों मद स्वामी।
मम बचे नहीं अब पाप, पूजूँ सन्नामी ॥
श्री नेमिनाथ भगवान, शिव में राज रहे।
जो आवेगा दरबार, सुख की श्वास रहे॥६१॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं मद-दोष-रहित श्री नेमिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

नहिं भय का कोई शेष, कारण बच पाया।
हे निर्भय! तब तो अर्घ, देना मन भाया ॥
श्री नेमिनाथ भगवान...॥६२॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं भय-दोष-रहित श्री नेमिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

तजममता मोह विकार, अर्हद् पद पाया।
मैं मोह मिटाने अर्घ, चरणों ले आया ॥
श्री नेमिनाथ भगवान...॥६३॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं मोह-दोष-रहित श्री नेमिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

ये नींद भुलावे होश, चेतन उलझेगा।
हे जागृत! नित्य सुअर्घ, भक्त चढ़ावेगा ॥
श्री नेमिनाथ भगवान...॥६४॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं निद्रा-दोष-रहित श्री नेमिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

तुम चिन्तित ना हो देव, मूर्च्छा शेष नहीं।
मैं अर्घ चढ़ाऊँ ईश, तुम सम वेष नहीं ॥
श्री नेमिनाथ भगवान...॥६५॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं चिंता-दोष-रहित श्री नेमिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

ये सप्त धातु से रिक्त, तव तन सुन्दर है।
हे स्वेद रहित जगदीश, पूजूँ अंदर से ॥
श्री नेमिनाथ भगवान...॥६६॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं स्वेद-दोष-रहित श्री नेमिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

क्यों विस्मित होंगे सत्य, सारा जान लिया।
जग देख आपका ज्ञान, अर्पित आज हुआ ॥
श्री नेमिनाथ भगवान, शिव में राज रहे।
जो आवेगा दरबार, सुख की श्वास रहे॥६७॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं विस्मयदोषरहित श्री नेमिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

तव राग मिटा सो देव, रति क्यों आवेगी।
तो आप चरण की भक्ति, क्यों नहिं भावेगी ॥
श्री नेमिनाथ भगवान...॥६८॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं रति-दोष-रहित श्री नेमिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

हो इष्ट द्रव्य वियोग, शोक करे प्राणी।
तुम शोक रहित परमेश, अर्चूं सुखदानी ॥
श्री नेमिनाथ भगवान...॥६९॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं शोक-दोष-रहित श्री नेमिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

(ज्ञानोदय)

गिरनारी से शम्बुकुँवर अनिरुद्ध किशनसुत[1] मोक्ष गये।
कोटि बहत्तर सात शतक गुरु, आठ कर्म को शोष गये ॥
कूट पाँचवाँ सबसे ऊपर, जहाँ नेमि गतकर्म हुए।
पाया अव्याबाध महासुख, सिद्धालय के शर्म लिए ॥
सूरीश्वर श्री कुन्दकुन्द ने, पाँच शतक मुनि साथ सदा।
श्वेताम्बर से वाद जीतकर, फहराई थी धर्म ध्वजा ॥
यहीं पूज्य धरसेन सूरि ने, पुष्पदन्त को ज्ञान दिया।
और पढ़ाया भूतबली को, सत्य धर्म का नाम किया ॥

(दोहा)

इन सबकी मैं अर्चना, करके सौ-सौ बार।
अर्घ चढ़ाऊँ पूज्य को, भव से पाने पार॥७०॥

ॐ ह्रीं गिरनारगिरि सिद्धक्षेत्रभ्यो नमः अर्घ्यं...।

---
१. प्रद्युम्नकुमार

महाराष्ट्र में क्षेत्र नवागढ़, नेमगिरी जिन्तूर रहा।
झिरनों मंदिर जैन नगर के, नेमिनाथ सुखपूर यहाँ ॥
सालेड़ा के गिरनारी के, और अनेकों नगरों के।
शंख चिह्न है नहीं विवाहित, नमन करूँ इन चरणों में ॥

(दोहा)

सभी जगह के नेमि को, नमन करूँ शत बार।
अर्घ चढ़ाऊँ तार मम, नम्बर है इस बार॥७१॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री नेमिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

पूर्णार्घ्य

(घत्ता)

तुम सर्वोत्तम हो, शरणोत्तम हो, मंगल में भी मंगल हो।
हम तुमको भजके, सेवा करके, मेटेंगे सब दंगल को ॥
जल अक्षत लावे, चंदन भावे, अष्ट द्रव्य को आज मिला।
यह अर्घ बनाया, थाल सजाया, चढ़ा नेमि पद चित्त खिला ॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री नेमिनाथ-जिनेन्द्राय नमः पूर्णार्घ्यं...।

जाप्य-मंत्र

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री नेमिनाथ जिनेन्द्राय नमः।

(९/२७/१०८ बार)

जयमाला

(दोहा)

जयमाला गुणधीर की, हे जिनवर परमेश।
गाऊँ श्रद्धा से प्रभो! बनने को सर्वेश ॥

(ज्ञानोदय)

नेमि पधारे राजसभा में, नारायण बलभद्र सभी।
आसन से उठ अभिनंदन सम्मान करे तत्काल तभी ॥

तीर्थंकर शुभ कर्म बाँधकर, पूर्व भवों से आये थे।
सो जोड़ें सब हाथ पैर की, रज को शीश चढ़ाते थे ॥१॥

जन्म जात ही इतना बल था, जिसका ओर न छोर मिले।
उसके आगे सभी शक्तियाँ, रहे मचाती शोर अरे ॥
तब तो नासा से ही इनने, शंख फूँककर चकित किया।
सुरासुरों को, वासुदेव को, अपने पद में नमित किया ॥२॥

और सुनो इक घटना जो है, सबको विस्मय उपजाती।
बलशाली पर परम दयालु, तीर्थनाथ की सुखदात्री ॥
छोटी सी जब नेमि अंगुलि को, सीधी करने तत्पर हो।
शक्ति लगाई वासुदेव ने, हिला न पाये किंचित् वो ॥३॥

तब सेना भी वासुदेव की, शक्ति देखने आ पहुँची।
किन्तु न कुछ भी कर पायी सो, शंका मन में हा! उपजी ॥
इसीलिए श्री वासुदेव ने, विवाह उनका रचवाया।
जूनागढ़ की राजकुमारी से, पक्का जब करवाया ॥४॥

लग्न रचाने नेमिकुँवर रथ, बैठे तब बारात चली।
रास्ते में ही पशु का क्रन्दन, सुनकर करुणाधार बही ॥
उनका रथ तब वहीं रुका था, आगे नहिं बढ़ पाया था।
लौट चला था नगर द्वारिका, विस्मय सबको आया था ॥५॥

नेमि हुए वैरागी तत्क्षण, बारह भावन भा करके।
लौकान्तिक सुर आ पहुँचे तव, करी प्रशंसा मन भरके ॥
राजुल ने जब सुना नेमि तो, गिरनारी की ओर चले।
वह भी भागी जूनागढ़ से, ऊर्जयन्त की ओर अरे ॥६॥

व्याकुल होकर करी प्रार्थना, विनय किया था पैर पड़ी।
पर न नेमि को लौटा पायी, बात रही थी यही बड़ी ॥

तिलोत्तमा सी सुरागंनाएँ, डिगा न तुमको पायेगी।
फिर राजुल-सी सति नारी क्या, उनको वश कर पायेगी ॥७॥

इसीलिए वह पुनः लौटकर, जूनागढ़ को आयी थी।
और नेमि के समवसरण में, प्रथम दीक्षिता भायी थी ॥
बाड़ी नगरी की सरिता के, तट पर जिन नेमीश मिले।
लाये जब भोपाल शहर में, देख सभी के शीश झुके ॥८॥

जल यात्रा में नगर निकट ही, रथ में उनको ले जाते।
पूजन अरु अभिषेक ठाठ से, कर - करके सब सुख पाते ॥
नवाब साहब भीड़ देखकर, विस्मित होकर बोले ओ।
पता लगाओ मित्र यहाँ पर ये, सब मिलकर आये क्यों ? ॥९॥

पता लगा जब जैनी जन मिल, इष्ट देव को पूज रहे।
श्रेष्ठ भाव से अर्चा करके, पाप कर्म को दूर करें ॥
शीघ्र दिया आदेश प्रभु का, मंदिर इस ही स्थान बने।
खर्चा पूरा देंगे जल्दी, जैन धर्म की शान बढ़े ॥१०॥

अब तक इस भोपाल शहर में, शिखरबद्ध नहिं मंदिर है।
सो बनवाओ शिखर सहित यह, जिनेन्द्रप्रभु का मंदिर रे ॥
नेमिनाथ की प्रतिमा की यह, रही महत्ता भारी सो।
जैन विरोधी नवाब के भी, भाव बने सुखकारी औ ॥११॥

झरने बहते यहाँ तभी तो, झिरनों मंदिर कहलाया।
जिसने पूजा आकर उसने, क्या-क्या मन का नहिं पाया ॥
मृत्यु गोद में गया हुआ भी, नेमिप्रभु के निकट गया।
शीश झुकाया समझो उसके, रोग-शोक सब सिमट गया ॥१२॥

कहा गया इतिहास सुनो यह, झिरनों मंदिर का प्यारा।
सालेड़ा का अब बतलाऊँ, नेमिनाथ का जो न्यारा ॥

इक गुर्जर ने घर बनवाने, जमीन को जब खोदा था।
नेमिनाथ को प्राप्त किया अरु, अर्चा कर दुख रोका था॥१३॥

खबर मिली तो जिनवर प्रभु को, भीण्डर नगरी लेने को।
पहुँचे तो सब ग्रामीणों ने, मना किया तब देने को ॥
सपना आया फिर गुर्जर को, प्रभु तो यहीं विराजेंगे।
सालेड़ा को छोड़ कहीं भी नेमिनाथ नहिं जायेंगे॥१४॥

मंदिर बनवा स्थापित करने, लगे उठाने शक्ति लगा।
नहीं हिले तब गुर्जर ने ही, शीघ्र उठाया भक्ति दिखा ॥
नेमिनाथ के चरणों में यदि, व्यन्तर भूत पिशाच लगे।
आवें उसके भूत भागते, मानो बिच्छू डंक लगे॥१५॥

कई जनों के चले मुकदमें, आप दरश से सुलझ गये।
धनदौलत में वृद्धि स्वास्थ्य भी, नाम स्मरण से सुलट गये ॥
झूम-झूमकर नेमिनाथ की, कांक्षा तज जो भक्ति करे।
तीनलोक की सभी सिद्धियाँ, आकर उसका वरण करे ॥१६॥

जो न माँगता उसको सुन लो, इस भव में भरपूर मिले।
भविष्य में वह निश्चय मानो, अष्ट कर्म चक चूर करें ॥
नहीं माँगने पर मिलता है, यही कहावत सच्ची है।
याचक को बस भुसा मिलेगा, आस्था उसकी कच्ची है॥१७॥

माँग न लेना भूल कभी भी, भक्ति प्रभु की करके रे।
अरे माँगना मरना इक सा, श्रद्धा उर में कर ले रे ॥
अतः छोड़कर इच्छा सारी, नेमिनाथ का नाम जपो।
दुख में सुख में हर्ष शोक में, मात्र नेमि से काम रखो॥१८॥

मिले सफलता सभी कार्य में, स्वर्ग लोक के सौख्य मिले।
लौकिक सारे भोग भोगकर परम्परा से मोक्ष मिले ॥

सतना सावरगाँव नेमिगिरि, मालथौन आमेर रहा।
ऊर्जयन्त गिरनार सुरुरपुर, सालेड़ा जिन्तूर कहा॥१९॥

क्षेत्र नवागढ़ आदि स्थान पर, नेमिनाथ जिन बिम्ब रहे।
इनकी महिमा गाऊँ स्वामी, जैन धर्म के खम्भ रहे ॥
नेमिनाथ के गुण लिखने को, कलम बनाऊँ वन -वन की।
सिन्धु-सिन्धु की स्याही करके, लिखता जाऊँ भव -भव जी ॥२0॥

स्याही होगी समाप्त कलमें, घिस-घिस करके टूटेगी।
लेकिन गुण नहिं पूरे होंगे, पर्यायें भी छूटेगी ॥
पूर्ण करूँ जयमाल अतः मैं, आप चरण में नमन करूँ।
भगवन मुझको क्षमा करो मैं, आप मार्ग पर गमन करूँ॥२१॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री नेमिनाथ जिनन्द्राय नमः जयमाला पूर्णार्घ्यं...।

आशीर्वाद

बचपन में ही ब्रह्मचर्य को, धार ब्रह्म में लीन हुए।
धन्य आपको धन्य उन्हें जो, आप भक्ति तल्लीन हुए ॥
जब तक भव को पावे उनके, पंकज से मन खुले खिले।
और अंत में बन्धन टूटे, मुक्ति रमा का साथ मिले ॥

इत्याशीर्वादः परिपुष्पाञ्जलिं क्षिपाति/क्षिपेत्

श्री चिंतामणि पार्श्वनाथ विधान

पीठिका

(दोहा)

हृदय कमल आसीन कर, पारस तुमको आज।
पूजा की यह पीठिका, लिख होऊँ कृतकाज ॥१॥

(ज्ञानोदय)

गर्भ पधारे उसके पहले, वामा माँ के आँगन को।
रत्नवृष्टि से भरकर सबके, खिला दिये थे आनन ओ॥
जन्म लिया तब नहलाने को, स्वर्ग लोक से सुर आये।
नृत्य किया सौधर्म इन्द्र ने, शचि ने भूषण पहनाये॥२॥

यौवन आया तो भी ओहो, नहीं वासना उपजी थी।
ब्रह्मचर्य को धारण करके, आत्मा तेरी सुलझी थी॥
सो आया वैराग्य चित्त में, विषय भोग से परिजन से।
मात-पिता से, धन वैभव से, तन कारा से पुरजन से॥३॥

भायी बारह भावन तत्क्षण, लौकान्तिक सुर आ पहुँचे।
भूरि-भूरि तब करी प्रशंसा, फिर तो पारस वन पहुँचे॥
आत्मलीन हो एक बार वे, एक शिला पर बैठे थे।
मोहकर्म से पिण्ड छुड़ाने, चेतनता में पैठे थे॥४॥

तभी कमठ ने पानी पत्थर, चट्टानें भी बरषायी।
लेकिन तव समता के आगे, उसकी कुछ नहिं चल पायी॥
जब आकर धरणेन्द्र देव ने, दूर किया उपसर्ग प्रभो।
पंचम गति का कारण केवल, प्रकट हुआ था ज्ञान विभो॥५॥

सुरनर किन्नर चक्रवर्ति सौधर्म इन्द्र ने आकर के।
पूजा की थी नृत्य किये थे, हरषाये गुण गाकर के॥

समवसरण की रचना करके, प्रभु का अति सम्मान किया।
और देशना सुनकर तेरी, जीवन का कल्याण किया ॥६॥

फिर तो स्वामी समवसरण को, छोड़ सुशाश्वत क्षेत्र गये।
रोक दिया था योगों को सो, कर्म नहीं अवशेष रहे॥
फलतः सिद्ध शिला के राजा, बनकर तन से छूट गये।
परिजन-पुरजन सबसे रिश्ते, सदा-सदा को टूट गये॥७॥

अहो धन्य हो पार्श्व आपने, भव-भव में उपसर्ग सहे।
प्राण हरण की बारी में भी, आतम में ही मस्त रहे॥
अनन्त भव से शत्रु बना जो, मोह कर्म भी हार गया।
दस भव के उस वैरी का भी, बेड़ा भव से पार हुआ॥८॥

तव प्रसाद से सो स्वामी मैं, विधान तेरा रच करके।
मैं भी तेरे पथ चल पाऊँ, अक्ष विषय से बच करके॥
इसी भाव से कृपा सिन्धु मैं, शत-शत शीश झुकाता हूँ।
पूरा होवे कार्य शीघ्र ही, यही भावना भाता हूँ॥९॥

परिपुष्पाञ्जलिं क्षिपामि/क्षिपेत्

विधान प्रारम्भ

स्थापना

(ज्ञानोदय)

बनारसी के गौरव वामानन्दन त्रिभुवन अर्चित हैं।
अहमिन्द्रों के भवनेन्द्रों के सभा भवन में चर्चित हैं॥
अश्वसेन के पुत्र पार्श्व का, आह्वानन मैं करता हूँ।
मेरे उर में प्रभो पधारो, पूजा कर अघ हरता हूँ॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री पार्श्वनाथ जिनेन्द्र! अत्र अवतर-अवतर संवौषट् इति आह्वाननं! ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री पार्श्वनाथ! जिनेन्द्र अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं! ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री पार्श्वनाथ!जिनेन्द्र अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणं!

अष्टक

(ज्ञानोदय)

पवित्र पावन पानी की ये, झारी भरकर ले आया।
जलधारा दे तुम्हें चढ़ाकर, जीवन सार्थक कर पाया॥
वामानन्दन तव पूजा से, जीवन होता नन्दन में।
आनन्दित हो पूजूँ मेरे, भाव बनें अब चन्दन से॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री पार्श्वनाथ-जिनेन्द्राय नमः जन्म-जरा-मृत्यु-विनाशनाय जलं...।

चन्दन लेकर वन्दन करके, अर्चा करने जो आवे।
ताप मिटे सन्ताप मिटे भव, चर्चा तजकर हरषावे॥
वामानन्दन तव...॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री पार्श्वनाथ-जिनेन्द्राय नमः संसार-ताप-विनाशनाय चंदनं...।

धवल सुमंगल अक्षत लेकर, तुम्हें चढ़ाने आऊँगा।
अक्षय पद फिर क्यों नहिं पाऊँ, क्यों भव में भरमाऊँगा॥

वामानन्दन तव पूजा से, जीवन होता नन्दन में।
आनन्दित हो पूजूँ मेरे, भाव बनें अब चन्दन से ॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री पार्श्वनाथजिनेन्द्राय नमः अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान्...।

विषयभोग का साधन है सो, काम बढ़ाते पुष्प हहा।
भोग भावना पूर्ण मिटी तव, सो पूजूँ मैं पुष्प चढ़ा॥
वामानन्दन तव...॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री पार्श्वनाथ-जिनेन्द्राय नमः कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं...।

घेवर बावर फैनी खाजा, क्या-क्या चरण चढ़ाऊँ मैं।
कुछ भी लाऊँ कम लगता है, फिर भी पूज रचाऊँ मैं॥
वामानन्दन तव...॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री पार्श्वनाथजिनेन्द्राय नमः क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं...।

रत्नदीप या घृत का दीपक, कुछ भी लेकर आऊँ मैं।
मतलब नहिं है तुमको फिर भी, शाश्वत दीपक पाऊँ मैं॥
वामानन्दन तव...॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री पार्श्वनाथजिनेन्द्राय नमः मोहान्धकारविनाशनाय दीपं...।

खुशबू वाली सभी वस्तुएँ, मिला-जुलाकर धूप बना।
तुम्हें चढ़ाई सो लगता मैं, मानो त्रिभुवन भूप बना॥
वामानन्दन तव...॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री पार्श्वनाथजिनेन्द्राय नमः अष्टकर्म-दहनाय धूपं...।

ऐला गोला लौंग सुपारी, सौ-सौ श्रीफल भेंट करूँ।
मोक्ष सुपाने हर्षाश्रू से, तव पद का अभिषेक करूँ॥
वामानन्दन तव...॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री पार्श्वनाथजिनेन्द्राय नमः महामोक्षफलप्राप्तये फलं...।

अक्षत चन्दन पुष्प दीप, नैवेद्य पयस का मेल करूँ।
अर्घ बनाकर तव प्रसाद से, नष्ट सभी अब खेल करूँ॥
वामानन्दन तव...॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री पार्श्वनाथजिनेन्द्राय नमः अनर्घपदप्राप्तये अर्घ्यं...।

प्रत्येक-अर्घ्य

(दोहा)

अष्टक से पूजा तुम्हें, प्रभुवर शिव के काज।
शेष गुणों को पूजने, अवसर पाया आज॥

इति मण्डलस्योपरिपुष्पाञ्जलिं क्षिपामि/क्षिपेत्

जन्मातिशय के १० अर्घ्य

(ज्ञानोदय)

पार्श्व आपका तन यह प्यारा, स्वेद कणों से रहित रहा।
जन्म समय से चेतन तेरा, परम पुण्य से सहित कहा॥
इसीलिए तो सौ इन्द्रों से, पूजित सौ-सौ बार हुए।
अर्घ चढ़ाकर प्रभो नित्य ही, पूजूँ सौ-सौ बार तुम्हें ॥१॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं निःस्वेदत्व-जन्मातिशय-गुणधारक श्री पार्श्वनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

नौ द्वारों से मल नहिं बहता, तन निर्मल अति निर्मल है।
जो भी पूजे चरण आपके, बन जाते वे निर्मद है॥
नूतन-नूतन द्रव्य मिलाकर, अर्घ बना मैं लाऊँगा।
निर्मल भावों से पूजा कर, भव सागर तिर जाऊँगा ॥२॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं निर्मलत्व-जन्मातिशय-गुणधारक श्री पार्श्वनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

धवल रुधिर है फिर भी कैसे युगल पाद के तलवे ये।
रक्त वर्ण के दिखकर के आकर्षित सबको करते हैं॥
चिन्तामणि श्री पार्श्वनाथ का, चिन्तन करता अहर्निशी।
चमक उठेगा पूनम को ज्यों, नभ में चमके पूर्ण शशि॥३॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं क्षीरगौररुधिरत्व - जन्मातिशय - गुणधारक श्री पार्श्वनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

रूप सलौना सुन्दर मनहर, अहमिन्द्रों को नहिं मिलता।
भूमिगोचरी विद्याधर में, कहीं न ऐसा तन दिखता॥
पार्श्व आपको तीर्थंकर का महिमामय यह रूप मिला।
लेकिन राग न करते तुम सो,अर्घ चढ़ा मम चित्त खिला॥४॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं सौरूप्य-जन्मातिशय-गुणधारक श्री पार्श्वनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

जिसकी नाशा में पहुँचेगी, गन्ध आपके तन की जी।
उसको पाने भटकेगा अरु, मति विचलित हो उसकी जी॥
सौरभशाली वपुषा पायी, पर नहिं ममता तेरी है।
पारस तब तो आप चरण में, श्रद्धा अर्पित मेरी है॥५॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं सौगन्ध्य-जन्मातिशय-गुणधारक श्री पार्श्वनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

चिह्न रहे हैं एक सहस वसु, फिर भी सुन्दर लगते हो।
कामदेव अरु चक्रवर्ति के,मन को भी तो हरते हो॥
बनारसी के पारस तेरी, महिमा सुरनर गाते हैं।
और पूजने तेरे पद को, नाच-नाच कर आते हैं॥६॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं सौलक्षण्य-जन्मातिशय-गुणधारक श्री पार्श्वनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

नाम कर्म का भेद रहा संस्थान प्रथम जो माना है।
उसमें भी जो सर्वोत्तम है, तुमको यदि वह पाना हैं॥
भज लो पारस के पद पंकज, ये ही एक ठिकाना है।
इनको पूजे बिना न तुमको, सम्भव शिव को पाना है॥७॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं समचतुरस्र-संस्थान-जन्मातिशय-गुणधारक श्री पार्श्वनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

तीन लोक को उल्टा-सुल्टा करने में जो सक्षम हैं।
ऐसा शक्री भी तो तेरे बल के आगे अक्षम है॥

स्वर्णभद्र के पार्श्व आपकी, प्रदक्षिणा त्रय देता हूँ।
अर्घ चढ़ाकर मिथ्यातम का, बनता मैं भी भेत्ता हूँ ॥८॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं वज्रवृषभनाराच-संहनन-जन्मातिशय-गुणधारक श्री पार्श्वनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

चन्दा से ज्यों अमृत झरता, पार्श्व आपके मुख से भी।
हित-मित प्यारे मृदुतम मीठे, वचन निकलते सुख से जी॥
चँवलेश्वर के पार्श्वनाथ को, झूम-झूमकर नमन करूँ।
पूजा के फल में हे स्वामी, पुनः पुनः नहिं मरण करूँ॥९॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं प्रियहितवादित्व-जन्मातिशय-गुणधारक श्री पार्श्वनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

शारीरिक बल आत्मिक बल भी, कितना कैसा तुममें है।
उसको कहने का थोड़ा भी, बल नहिं पारस मुझमें है॥
इसीलिए मैं प्रभुवर तुमको, अर्घ्य चढ़ा संतुष्ट हुआ।
जैनधर्म की श्रद्धा का मम, भाव आज संपुष्ट हुआ॥१०॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं अप्रमितवीर्य-जन्मातिशय-गुणधारक श्री पार्श्वनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

केवलज्ञानातिशय के १० अर्घ्य

(दोहा)

सौ-सौ योजन तक अहो, सुभिक्षता से पूर।
हो जाती यह भूमि है, दुख हो जाते दूर॥
कल्पवृक्ष सम पार्श्व पद, भज ले तू इक बार।
कल्पित फल के साथ में, मोक्ष मिले इस बार॥११॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं गव्यूतिशत-चतुष्टय-सुभिक्षत्व-घातिक्षय-जातिशय-गुणधारक श्री पार्श्वनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

नभतल में जब विचरते, मानो हो घनश्याम।[१]
बिना मार्ग के, मैं जजूँ, तुमको आठों याम॥

---
१. काले बादल

बिजौलिया के पार्श्व की, पूजा कर शिव बीज।
बोवे, उसके घर सदा, बजती रहती बीन॥१२॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं गगनगमनत्व-घातिक्षय-जातिशय-गुणधारक श्री पार्श्वनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

प्राणीगण रक्षित रहे, रहे सुरक्षित जीव।
मिले समागम आपका, नहीं बचेगी पीर॥
बीजापुर में पार्श्व का, बिम्ब रहा है श्याम।
बिना परिश्रम भक्त को, सुख मिलता निर्दाम॥१३॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं अप्राणिवधत्व-घातिक्षय-जातिशय-गुणधारक श्री पार्श्वनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

मृत्यु गोद में भूख जब, पहुँची तो क्यों भाव।
भोजन के होवे प्रभो, पूजूँ कर उत्साह॥
अहो अणिन्दा पार्श्व का, अतिशय है भरपूर।
हृदय विराजो आप तो, क्लेश रहेगा दूर॥१४॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं भुक्त्यभाव-घातिक्षय-जातिशय-गुणधारक श्री पार्श्वनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

दुख देने का भाव ना, क्षण भर भी बच पाय।
अतिशय तेरा ये रहा, पूजे भ्रम मिट जाय॥
सर्प चिह्न से युक्त को, सर्पेश्वर जो देव।
भाग्य मानकर पूजता, सो मिटते दुर्देव॥१५॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं उपसर्गाभाव-घातिक्षय-जातिशय-गुणधारक श्री पार्श्वनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

चतुरानन नहिं आपके, फिर भी दिखते चार।
भक्त पुजारी को तभी, मिलता सुख भण्डार॥
अश्वसेन जिनके पिता, वामा जिनकी मात।
पूज चरण श्री पार्श्व के, सार्थक होगा गात॥१६॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं चतुर्मुखत्व-घातिक्षय-जातिशय-गुणधारक श्री पार्श्वनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

कहती विद्याएँ सभी, हम आयी तव द्वार।
आज्ञा तेरी जो मिले, हम करने तैयार॥
पारस-पारस पार्श्व का, नाम रहा सुख रूप।
जपूँ उसे दिन - रात मैं, तो पाऊँ सुख कूप॥१७॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं सर्वविद्येश्वरत्व-घातिक्षय-जातिशय-गुणधारक श्री पार्श्वनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

छाया तेरी ना पड़े, फिर भी हे प्रभु पार्श्व।
पावे छाया आपकी, तो सुर बनते दास॥
नगर बनारस ख्यात है, वामा सुत से तीर्थ।
पूजक तेरा शीघ्र ही, पहुँचे जग के शीर्ष॥१८॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं अच्छायत्व-घातिक्षय-जातिशय-गुणधारक श्री पार्श्वनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

क्यों झपकेगी नयन की पलके हे जिनराज।
हर्षित हो पूजा करूँ, बनूँ मोक्ष सिरताज॥
अन्देश्वर के पार्श्व की, ख्याति रही चहुँ ओर।
पूजे सुख इतना मिले, जिसका नहिं हो छोर॥१९॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं अपक्ष्मस्पन्दत्व-घातिक्षय-जातिशय-गुणधारक श्री पार्श्वनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

नख केशों ने कर दिया, अब तो बढ़ना बंद।
कर्म शत्रु कैसे बढ़े, पूर्ण रुका है बन्ध॥
नयन सितारे मात के, अश्वसेन के लाल।
नयन बसो मेरे प्रभो, मैं हूँ छोटा बाल॥२०॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं समान-नख-केशत्व-घातिक्षय-जातिशय-गुणधारक श्री पार्श्वनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

देवकृत अतिशय के १४ अर्घ्य

(नरेन्द्र)

आधे कर्मों को नाशा सो, अर्द्धमागधी भाषा।
में होती है दिव्य देशना, सुनने की अभिलाषा॥
मुझमें जागी इसीलिए तो, जागृत होकर आया।
क्योंकि आपका पथ ही मेरे मन को आज सुहाया ॥२१॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं सर्वार्धमागधी-भाषा-देवोपनीतातिशय-गुणधारक श्री पार्श्वनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

सब जन मैत्री जगी तभी तो, कमठ सरीखा वैरी।
शीघ्र बना था सम्यग्दृष्टि नहीं लगी थी देरी॥
पारस तेरे दर्श किये तो, पाप नहीं बच पाया।
चित्त हुआ है निर्मल मम सो, पद में शीश झुकाया ॥२२॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं सर्वजनमैत्रीभाव-देवोपनीतातिशय-गुणधारक श्री पार्श्वनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

सब ऋतुओं के फल-फूलों से, धरती यह भर जाती।
आम-जामफल धान्य फसल भी, खेतों में लहराती॥
अतिशय करने सुर आये सो मैं भी दौड़ा आया।
दर्श किये प्रत्यक्ष अभी तो, फूला नहीं समाया ॥२३॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं सर्वर्तुफलादि-शोभित-परिणाम-देवोपनीतातिशय-गुणधारक श्री पार्श्वनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

झग-झग करती लगती मानों, स्वर्ग लोक की ज्योति।
भू उतरी हो तुम्हें देखकर, मान रही संतोषी॥
तव जीवन आदर्श बना मैं शिवपथ पाने आया।
क्योंकि मोक्ष तक जाने वाला, पथ तुमने बतलाया ॥२४॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं आदर्श-तल-प्रतिमारत्नमयी-देवोपनीतातिशय-गुणधारक श्री पार्श्वनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

अनुगत बहती वायु वहाँ पर, पारस प्रभुवर प्यारे।
जहाँ विराजे भव्यों के अघ, पल में स्वर्ग सिधारे ॥[१]
पारस तेरे पद पाने को, मेरा मन ललचाया।
सुख रत्नाकर ज्ञान दिवाकर, अर्घ चढ़ा सुख पाया ॥२५॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं विहरण-मनुगत-वायुत्व-देवोपनीतातिशय-गुणधारक श्री पार्श्वनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

आनन्दित हो खुश हो जाते, सुरनर सब हरषाते।
पार्श्व पधारे वहाँ धर्म के, ध्वज नभ में लहराते॥
रत्नत्रयमय धर्म सुपाने, द्वार आपके आया।
क्योंकि आपसा हित उपदेशक, और कहीं नहिं पाया ॥२६॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं सर्वजनपरमानन्दत्व-देवोपनीतातिशय-गुणधारक श्री पार्श्वनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

दूर हटाते कीचड़ कंकर, धूल - शूल अरु काँटे।
तेरे दर्शन की खुशियों में, सुर सबको सुख बाँटे॥
विघ्न विजेता नाम सुना तो, दौड़ा-दौड़ा आया।
दर्शन करके मानो मैंने, शुद्धातम को पाया ॥२७॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं वायुकुमारोपशमित-धूलिकण्टकादि-देवोपनीतातिशय -गुणधारक श्री पार्श्वनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

गन्ध सहित पानी की वर्षा, कर - करके सुख पाते।
विहार में भी देव आपका, अतिशय करने आते॥
पाप प्रणाशक पारस तुमको, दुर्लभता से पाया।
इसीलिए तो तव पद में आ, मेरा मन हरषाया ॥२८॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं मेघकुमारकृत-गन्धोदकवृष्टि-देवोपनीतातिशय-गुणधारक श्री पार्श्वनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

तेरे पद के नीचे रखते, देव कमल शुभ पीले।
तव पूजन से पाप कर्म सब, हो जाते हैं ढीले॥

---

१. नष्ट हो जाते

डरकर भागे पाप शत्रु भी, तव पद का हो साया।
सो अर्पित हो पूजा करने, दास चरण में आया ॥२९॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं पादन्यासेकृत-पद्मानि-देवोपनीतातिशय-गुणधारक श्री पार्श्वनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

तव प्रसाद से वृक्ष फलों से, भर जाते झुक जाते।
तब तो पारस भक्त आपके, कभी न धोखा खाते॥
मोक्ष पधारे तभी आप जब, निज में निज को ध्याया।
शुद्धातम को पाने मैं भी, तुम्हें पूजने आया ॥३०॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं फल-भार-नम्र-शालि-देवोपनीतातिशय-गुणधारक श्री पार्श्वनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

शरदकाल सम निर्मलतम हो, नभतल लगता न्यारा।
तव वंदन से मैंने पाया, मानों शिव का द्वारा॥
पारस ज्ञानी बने तभी, त्रय, लोक पूजने आया।
सो मैं भी यह अर्घ सुलेकर, तुम्हें चढ़ाने लाया ॥३१॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं शरन्-मेघवन्निर्मल-गगनत्व-देवोपनीतातिशय-गुणधारक श्री पार्श्वनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

यहाँ पधारो, यहाँ पधारो, कहते दुन्दुभि बाजे।
शीघ्र पधारो पार्श्व प्रभु के दर्श मिलेंगे ताजे॥
मैं भी शिव का प्यासा हूँ सो प्रभु तव पद में आया।
प्यास बुझे विश्वास यही मम, उर में आज समाया ॥३२॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं एतैतैतिचतुर्निकायामर - परस्पराह्वानन-देवोपनीतातिशय-गुणधारक श्री पार्श्वनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

दिग्मण्डल तब घनमण्डल से, रहित बनेगा स्वामी।
जब पावे संसर्ग आपका, नहीं रहे कुछ खामी॥
चिन्तामणि सम चिन्तित दाता, तुमको मैंने पाया।
कठिनाई से सो स्वामी मैं, अर्घ चढ़ाने आया ॥३३॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं शरत्कालवन्निर्मल-दिग्विभागत्व-देवोपनीतातिशय-गुणधारक श्री पार्श्वनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

धर्मचक्र जो पार्श्व आपके, चलते आगे-आगे।
तब तो तेरे नाम मात्र से, अशुभ कर्म सब भागे॥
आप चरण के दर्श मात्र से, त्रिभुवन ने सुख पाया।
ढोल बजाकर तब तो पूजा, करने अर्घ सुलाया ॥३४॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं धर्मचक्र-चतुष्टय-देवोपनीतातिशय-गुणधारक श्री पार्श्वनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

अष्ट प्रातिहार्य के ८ अर्घ्य

(लय—शान्तिनाथ मुख शशि उनहारी...)

अशोक प्यारा बनता तरुवर।
संगम पाकर तेरा मृदुतम॥
पार्श्व रहे हो पारसमणि सम।
पूजूँ मेटो मेरे अघतम ॥३५॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं अशोकवृक्ष-प्रातिहार्य-धारक श्री पार्श्वनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

पुष्प बरसते चारों दिशि में।
कुमुद हरषते जैसे शशि से॥
पूजूँ पूजूँ पारस तुमको।
शिव मिल जावे अब तो मुझको ॥३६॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं सुरपुष्पवृष्टि-प्रातिहार्य-धारक श्री पार्श्वनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

चामर ढुरते चौंसठ निशदिन।
पारस प्रभुवर तेरे फिर-फिर॥
पूजक प्रभु के अमर बनेंगे।
कर्मों से अब नहीं डरेंगे ॥३७॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं चतु:षष्ठि-चामर-प्रातिहार्य-धारक श्री पार्श्वनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

भामण्डल तव बना सुहाना।
प्रातिहार्य यह सबने जाना॥
पारस प्रभु का परस करे तो।
भव तज करके मोक्ष वरे वो॥३८॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं भामण्डल-प्रातिहार्य-धारक श्री पार्श्वनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

बाजे बजते ढम-ढम-ढम-ढम।
कहते इनमें रम-रम-रम-रम॥
पारस से ही पाप कटेंगे।
इसीलिए हम चरण डटेंगे॥३९॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं दुन्दुभिप्रातिहार्य-धारक श्री पार्श्वनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

छत्र लगाते सुरनगरी के।
देव बने तब सुखगगरी वे॥
सोने सम ही शुद्ध बनेगा।
पारस पद को जो अर्चेगा॥४0॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं छत्रत्रय-प्रातिहार्य-धारक श्री पार्श्वनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

दिव्य - ध्वनि में जो - जो आता।
सच्चा वो ही पथ दिखलाता॥
प्रातिहार्य है पारस तेरा।
कोटि-कोटि है वन्दन मेरा॥४१॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं दिव्यध्वनि-प्रातिहार्य-धारक श्री पार्श्वनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

सिंहासन को स्पर्श न करते।
सबके नयनों को तुम हरते॥
पारस-पारस रटता जावे।
पारस जैसा शिव पद पावे॥४२॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं सिंहासन-प्रातिहार्य-धारक श्री पार्श्वनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

पंचकल्याणक के ५ अर्घ्य

ज्ञानोदय+दोहा

वामा माँ के गर्भ पधारे पार्श्व बनारस नगरी में।
छप्पन सुरियाँ सेवा कर तब, बनी पुण्य की गगरी रे॥
छम-छम नाचे शक्र इन्द्र सौधर्म सुरासुर आकर के।
कल्याणक यह पहला हम भी, पूजे अर्घ चढ़ा करके॥
दूजी तिथि वैशाख की, तजकर प्राणत स्वर्ग।
मध्य लोक में आ गये, पाने को अपवर्ग ॥४३॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं गर्भकल्याणक-मण्डित श्री पार्श्वनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

जन्में प्रभु तो सिंहासन भी, काँप उठे सुर इन्द्रों के।
दौड़े-दौड़े आये भू पर, नमन किया शत इन्द्रों ने॥
न्हवन कराकर मेरु गिरी आनन्दित होकर नाचे वे।
पूज्य आपकी जन्म खुशी में, वाद्य अलौकिक बाजे थे ॥
पौष मास की ग्यारसी, जन्म दिवस श्रीपार्श्व।
उत्सव कर हम पूजते,श्वास-श्वास प्रति श्वास ॥४४॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं जन्म-कल्याणक-मण्डित श्री पार्श्वनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

बचपन में ही ब्रह्मचर्य जो असिधारा व्रत कठिन रहा।
उसको धारा दीक्षा ली सो, वो ही उत्तम दिवस कहा॥

यथाजात हो वस्त्राभूषण त्याग दिये श्रृंगार सभी।
अर्घ चढ़ाकर पूजूँ पारस, मुझको भी अब तार अभी ॥
ग्यारस थी वह पौष की, होकर के कृतकृत्य।
चमक उठी थी पार्श्व ने, क्योंकि लिया तप सत्य ॥४५॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं तपःकल्याणक-मण्डित श्री पार्श्वनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

भीमावन में उपसर्गों को माना था उपहार अहो।
इस कारण ही केवलज्ञानी, बने पार्श्व भगवान अहो॥
समवसरण में हुई देशना, भव्यों का सौभाग्य खिला।
समकित पाया शिव पथ पाकर, मोक्ष महल का द्वार मिला॥
चैत माह की चौथ को, चतु संज्ञा को नाश।
पाकर पंचम ज्ञान तुम, पहुँचे शिव के पास ॥४६॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं ज्ञान-कल्याणक-मण्डित श्री पार्श्वनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

श्रावण शुक्ला सातम के दिन, कर्म पचासी नाश किये।
मुक्ति वधू को वरने चौथे, शुक्ल ध्यान में आप जिये॥
पारस पग-पग शरण हमारे, बने रहेंगे जीवन में।
तो क्यों नहिं हो मोक्ष हमारा, पाप-ताप से भव-वन से।
मोक्ष सप्तमी को गये, पारस भव से दूर।
शाश्वत सुख में लीन हो, बने जगत में शूर ॥४७॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं निर्वाण-कल्याणक-मण्डित श्री पार्श्वनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

अनन्त चतुष्टय के ४ अर्घ्य

(लय—श्री वीर महा अति वीर...)

पा अस्त रहित शुभ ज्ञान, केवल नाम कहा।
हम पाने को जिनदेव, निज का धाम अहा॥

ये अर्घ चढ़ाकर पार्श्व, विनती आज करे।
तव अर्चा से नहिं शेष, इच्छित काज रहे ॥४८॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं अनंत-ज्ञान-गुणमण्डित श्री पार्श्वनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

है अमित दर्श जग पूज्य, किसको मिल पावे।
वह मिला आपको देव, सो हम गुण गावे॥
जो चिंतामणि श्री पार्श्व, ये ही नाम रटे।
तो होवे भव से पार, निज में आप डटे ॥४९॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं अनंत-दर्शन-गुणमण्डित श्री पार्श्वनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

तुम अनन्तसुख के नाथ, बनकर धन्य हुए।
पा दर्शन तेरे आज, हम भी रम्य हुए॥
हे कल्पद्रुम सम पार्श्व कल्पित पा जाते।
जो करे भक्ति दिन-रात, निज का सुख पाते ॥५०॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं अनंत-सुख-गुणमण्डित श्री पार्श्वनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

जो अनुपम बल भण्डार, तुममें विलसाया।
कर अन्तराय को चूर, निज में सुख पाया॥
हे पार्श्वनाथ भगवान, तुमसे तीर्थ बने।
हम पूजेंगे दिन - रात, जग के शीर्ष बने ॥५१॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं अनंत-वीर्य-गुणमण्डित श्री पार्श्वनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

१८ दोष से रहित के १८ अर्घ्य

(लय—कहाँ गये चक्री जिन...)

भूख दोष को देश निकाला, तुमने दे डाला।
तब तो भक्तों ने पूजा कर, पापों को टाला॥

पारस तुम ही कामधेनु हो, पारसमणि न्यारे।
भव्य जनों को इसीलिए तो, लगते हो प्यारे ॥५२॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं क्षुधा-दोष-रहित श्री पार्श्वनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

प्यास सताती मोह उदय से, मोह न बाकी है।
तृषा विजेता पारस ने ही, विधि को ढाँकी है॥
नाचूँ गाऊँ खुशी मनाऊँ, अर्घ चढ़ाऊँ मैं।
अन्तिम क्षण तक नाम आपका, रटता जाऊँ मैं ॥५३॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं तृषा-दोष-रहित श्री पार्श्वनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

भय बेचारा डरकर मुख को छुपा सुलज्जित हो।
भागा ऐसा पुनः देखने बची न ताकत ओ॥
पारस तुम निर्भीक निडर गुण, गाऊँ मन से मैं।
अन्तिम क्षण तक अर्घ चढ़ाने आऊँ पद में मैं ॥५४॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं भय-दोष-रहित श्री पार्श्वनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

द्वेष भाव जो सपने में नहिं, तुमको देखेगा।
तब तो पारस तेरे पद में, सिर को टेकेगा॥
सारा जग यह भव से बचने, अर्घ चढ़ाता है।
सो चेला ये खुश हो करके, पूज रचाता है ॥५५॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं द्वेष-दोष-रहित श्री पार्श्वनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

बरसाता है आग राग यह, मेरे जीवन में।
जला दिया है पारस तुमने, रह निज केतन में॥
इसीलिए मैं प्रसन्न होकर, अर्घ चढ़ाऊँगा।
क्षमता पाकर तुमसम मैं भी, उसे हराऊँगा ॥५६॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं राग-दोष-रहित श्री पार्श्वनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

मोह कर्म की सेना ने जब, देखा पारस को।
दिल काँपा था कप-कप कप-कप, बचा न साहस औ॥

मारी जावे यही सोचकर, अर्पित सद्य हुई।
अर्घ चढ़ाकर आह्लादित मम, आत्मा अद्य हुई ॥५७॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं मोह-दोष-रहित श्री पार्श्वनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

लगाव हो यदि पर द्रव्यों से, चिन्ता लगती है।
निज आतम में रमण करे तो, चिन्ता भगती है॥
पारस सबको छोड़-छाड़कर, तुम निश्चिंत हुए।
अर्घ चढ़ा हम मात्र आपके, पद में नित्य रहे॥५८॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं चिन्ता-दोष-रहित श्री पार्श्वनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

अहो बुढ़ापे को जब आयी, नानी याद अरे।
अर्द्धमृतक बेचारा कैसे, अपना काम करे॥
हार मानकर भागा सो वह, लौट न आयेगा।
तब तो पारस भक्त आपका, अर्घ चढ़ावेगा ॥५९॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं जरा-दोष-रहित श्री पार्श्वनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

रोग मिटे हैं जितने भी तन, में हो सकते हैं।
चक्रवर्ति भी रात-दिवस तव, नाम सुरटते हैं॥
अहो निरोगी रोग मिटाने, पूजा करता हूँ।
चरण-कमल में शीश झुकाकर, दुख से बचता हूँ ॥६०॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं रोग-दोष-रहित श्री पार्श्वनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

मृत्यु दोष को मार दिया सो, अमर बने स्वामी।
सिद्धालय को सदन बनाकर, रहते अभिरामी॥
अन्तक भी अब हुआ समर्पित, तेरे पद में सो।
लगा किनारे पारस पूजा, करने आया जो ॥६१॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं मरण-दोष-रहित श्री पार्श्वनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

मद मत्सर को मान भाव को, तुमने जीता है।
इसीलिए तो पारस तेरा, जीवन गीता है॥

हे निर्मानी! मान नाश मैं, शिव को जाऊँगा।
भक्ति-भाव से अर्घ चढ़ा मैं, निज को पाऊँगा ॥६२॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं मद-दोष-रहित श्री पार्श्वनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

खेद नहीं अब शेष बचा सो, मोह न आवेगा।
हे निर्मोही! खेद मिटाने, तुमको ध्यावेगा॥
भक्त आपका पूजा करने, चरणों आता है।
पारस तेरी महिमा गाकर, अर्घ चढ़ाता है ॥६३॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं खेद-दोष-रहित श्री पार्श्वनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

स्वेद दोष ने देखा पारस, तेरी महिमा को।
सुनो पसीना, आया उसको, क्यों नहिं भागे वो॥
स्वेद रहित जो सर्प चिह्न से जाते पहचाने।
दर्श किये तो मन नहिं होता, मेरा घर जाने॥६४॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं स्वेद-दोष-रहित श्री पार्श्वनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

रति से किंचित् रति न बची सो, कैसे आयेगी।
आयेगी तो वह भी आकर, तव थुति गावेगी॥
पार्श्व जीतकर कषाय को तुम, भव से छूट गये।
हमने तुमको पूजा है सो, बन्धन टूट गये ॥६५॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं रति-दोष-रहित श्री पार्श्वनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

विस्मित होकर विस्मय भागा, देख तपस्या को।
पार्श्व आपका भक्त सुखी हो, मेट समस्या को॥
पुलकित होकर पदपंकज की, पूजा करता जो।
अचरज नहिं है इसमें जल्दी, शिव को वरता वो ॥६६॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं विस्मयदोषरहित श्री पार्श्वनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

नींद भुलाती हित आपा फिर, याद न आता है।
जागृत पारस दर्श किये तो, कुछ नहिं भाता है॥

मन में केवल आप चरण ही, आज समायें हैं।
सो स्वामी हम तुम्हें पूजने, मन्दिर आये हैं ॥६७॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं निद्रा-दोष-रहित श्री पार्श्वनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

जन्म न होगा कभी आपका, सो नहिं तन पाओ।
अहो अजन्मा पारस के ही आओ गुण गाओ॥
मैं भी अब नहिं जन्मूँ स्वामी, अरजी है मेरी।
तीन लोक में तीन काल में, शरण रहें तेरी ॥६८॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं जन्म-दोष-रहित श्री पार्श्वनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

शोक छोड़कर भाग खड़ा हो, तुमको जो ध्यावे।
भूल कभी नहिं देखे उसको, पारस पद आवे॥
मैं तो तुमको तजकर स्वामी, कहीं न जाऊँगा।
अर्घ चढ़ाकर सपने में भी, तुमको ध्याऊँगा ॥६९॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं शोक-दोष-रहित श्री पार्श्वनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

(ज्ञानोदय)

स्वर्णभद्र है कूट जहाँ पर, पारस भव से पार गये।
सिद्धशिला के वासी बनकर, शिव ललना के पास गये॥
सहस-सहस मैं करूँ वन्दना, झुका-झुकाकर शीश सदा।
अर्घ चढ़ाऊँ पूज रचाऊँ, शिव पाऊँगा नाथ कदा॥७०॥

ॐ ह्रीं सम्मेदशिखर स्थित स्वर्णभद्रकूटेभ्यो नमः अर्घ्यं...।

पारस प्रभु के कृष्ण वर्ण के, श्वेत वर्ण के पीत हरे।
बिम्ब रहे हैं परम पूज्य जो, भव सागर के तीर रहे॥
सबको मन वच काया से मैं, भक्ति-भाव से नमन करूँ।
अर्घ चढ़ाऊँ तव चरणों में, इन्द्रिय दल का दमन करूँ॥७१॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री पार्श्वनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं...।

पूर्णार्घ्य

(घत्ता)

ले अक्षत चन्दन, हे शिव नन्दन, जल फल आदिक आज मिला।
यह अर्घ बनाया, तेरा साया, बना रहे मम भाग्य खिला॥
जब तुमको पाया, पद में आया, भूल गया तब काम सभी।
सो नवा-नवाकर, मस्तक हे वर! पूज रहा दिन रात अभी ॥७२॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री पार्श्वनाथ-जिनेन्द्राय नमः पूर्णार्घ्यं...।

जाप्य– ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री पार्श्वनाथ-जिनेन्द्राय नमः

(९/२७/१०८)

जयमाला

(दोहा)

विघ्न विजेता देव की, जयमाला सुख रूप।
विघ्न मिटाती शीघ्र ही, देती है शिव कूप॥१॥

(ज्ञानोदय)

पारस प्रभु ने नगर बनारस के अधिपति श्री राजा जो।
अश्वसेन था नाम सुपावन, उनकी रानी वामा को॥
धन्य किया कृतकाज किया था, नारी भव को सफल किया।
जन्म सुलेकर उसके घर में, पुनर्जन्म को विफल किया ॥२॥

जन्म मात्र से अहो आपके, भू पर सुख बरसात हुई।
आसन काँपे देवों के भी, विस्मयकारी बात हुई॥
बालकपन में एक दिवस वे, क्रीड़ा करने कानन में।
देखा तापस नाना को तो, अचरज आया मानस में ॥३॥

बोले तापस खोटे तप से, क्यों जीवों का घात करे।
क्यों लकड़ी को चीर हाय रे, सर्प युगल के प्राण हरे॥

सुनकर क्रोधित हो तापस ने, लक्कड़ को जब काट दिया।
लौकिक सुख से अपने को ही, मानों उसने छाँट लिया ॥४॥

नाग युगल को घायल देखा, तेरा दिल तब काँप गया।
निकट भव्य है अहो युगल यह, ऐसा तुमने भाँप लिया॥
सो सम्बोधन करके ओ हो, वृष से उनको जोड़ दिया।
उनने भी सुन सत्य-धर्म को, क्रोध भाव को छोड़ दिया ॥५॥

सो मरकर धरणेन्द्र बना अहि, नागिन पद्मावति देवी।
पारस तेरे अमृतमय वच, सुने तभी बन सुख सेवी॥
और सुनो वह तापस मरकर ज्योतिष संवर देव हुआ।
सुरगति में भी दुर्गति पाकर, हाय! हाय!! दुर्देव हुआ ॥६॥

और पार्श्व ने दीक्षा लेकर, भीमा वन में तप धारा।
कर्म-कालिमा धोने हेतु, मोह कर्म को दल डाला॥
बेला के उपरान्त आपने, नृप के घर आहार किया।
उसने भी दे दान आपको, मोक्ष महल का द्वार लिया ॥७॥

और अनेकों भव्य जनों ने, दर्शन पाये तेरे थे।
निर्मल करके परिणामों को, मिटा दिये भव फेरे थे॥
फिर आकर के बिजौलिया के, वन में ध्यान लगा करके।
बैठ गये थे बाहर के सब, द्वन्द-फन्द को तज करके ॥८॥

तभी वहाँ से कमठ कहीं पर, गगन मार्ग से जाता था।
रुका यान सो देख पार्श्व को, पागल सा भरमाता था॥
सो क्रोधित हो ओले पत्थर, बरसा-बरसा हार गया।
इतना पानी बरसाया जो, सीमा के भी पार गया ॥९॥

आँधी-तूफां चलने से नभ, धूली से जब पूर्ण भरा।
चट्टानें भी गिरा-गिराकर, हाय-हाय वह नहीं थका॥

सात दिवस जब बीत गये तो, अचलासन भी काँपा था।
धरण इन्द्र का उसने भी तब अवधिज्ञान से भाँपा था ॥१०॥

भवन छोड़कर झट से आया, उपकारी के पास अहो।
सम्बोधन कर जिसने भव को, सुलझाया मम खास अहो॥
सो आकर के दुष्ट कमठ को ललकारा था डाँटा था।
मुक्के मारे और गाल पर, तेज जमाया चाँटा था ॥११॥

मार पड़ी तो पचड़ा सारा, लेकर के वह भाग गया।
तभी प्रभो श्री पार्श्वनाथ को, पंचम अन्तिम ज्ञान हुआ।
कठिन परिक्षा में भी तेरी, समता देखी सो भगवन।
मोहनीय तो हार मान ले, डेरा भागा था तत्क्षण ॥१२॥

ज्ञानावरणी दर्शन का आवरणी दोनों साथ चले।
अन्तराय भी चला बिचारा, क्योंकि पाप के पाँव गले॥
केवल प्रकटा तब तो चक्री, राजा अरु अधिराजा भी।
आये तेरी पूजा करने, स्वर्गपुरी के राजा भी ॥१३॥

कुबेर ने आ बारह कोठे, सहित बनाया समवसरण।
ठीक बीच में सिंहासन से, अंगुल ऊँचे चार प्रवर॥
आप विराजे सो ही सुरनर, किन्नर खगधर आये थे।
और कमठ को बोध हुआ सो, उसने भी गुण गाये थे॥१४॥

तभी वहाँ पर रक्ताम्बर जो, श्वेताम्बर अरु पीताम्बर।
जटा बढ़ाई जिसने वे भी, आ पहुँचे थे आप शरण॥
मैंने भी जब सुना सभी उपसर्ग आपका दूर हुआ।
दौड़ा आया पूजन करने, मानों मैं सुख पूर हुआ ॥१५॥

इससे ज्यादा खुशियों का क्या, काम जगत में हो पाए।
दूर हुआ उपसर्ग तथा प्रभु समवसरण में विलसाए॥

सो मैं नाचूँ गाऊँ स्वामी, बजा-बजाकर झुनिया को।
डोंडी पिटवा भेरी बजवा बतलाऊँ मैं दुनिया को ॥१६॥
पारस सा उपसर्ग विजेता नहीं लोक में मिल पावे।
इनके जैसा क्षमा शिरोमणि, जिससे चेतन खिल जावे॥
सो आओ हे भव्य जनों तुम, आलस तजकर आ जाओ।
नहिं तो फिर पछताओगे सो, आकर इनके गुण गाओ॥१७॥
तुम भी नाचों झुन-झुन झुन-झुन, बजा सु झुनिया नाचों रे।
अवसर पाया पुण्योदय से सो नाचों तुम नाचों रे॥
ढोल बजाओ ढोलक लाओ, तबला भी ले आओ रे।
मृदंग लाओ वीणा लेकर, दृम-दृम नाद बजाओ रे ॥१८॥
सुनो पार्श्व के दर्श मात्र से, मिथ्यातम मिट जायेगा।
सम्यग्दर्शन सूर्य उदित हो, पापास्रव घट जायेगा॥
इसीलिए हम सब मिल करके, इनके पद में नमन करें।
और विनय से इनके पथ पर, हम सब भी अब गमन करें॥१९॥
जिससे बन्धन कट जावे अरु, पुनर्जन्म से बच जावें।
इसी भाव से जयमाला यह पूरी करके सिर नायें॥
प्रमाद वश कुछ गलत हुआ हो, क्षमा माँगते पार्श्व प्रभो!
और क्षमा आ जावे हममें, पूर्ण करो अरदास विभो॥२०॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री पार्श्वनाथ-जिनेन्द्राय नमः जयमाला पूर्णार्घ्यं...।

आशीर्वाद

पाप प्रणाशक पार्श्वनाथ जी, विघ्न विनाशक शरण रहे।
संकट टलते क्षणभर में ही, जो भी इनके चरण रहे॥
इनकी पूजा जो भी करता, स्वर्ग लोक में जाता है।
परम्परा से शिव ललना के साथ रहे सुख पाता है॥

इत्याशीर्वादः परिपुष्पाञ्जलिं क्षिपामि/क्षिपेत्।

श्री वर्द्धमान महावीर विधान

पीठिका

वर्द्धमान अतिवीर के, विधान की जो श्रेष्ठ।
कहूँ पीठिका लोक में, जिनके गुण हैं ज्येष्ठ ॥

(ज्ञानोदय)

भील पुरुरवा ने मुनिवर, उपदेश सुना व्रत धारे थे।
मद्य मांस मधु और साथ में, हिंसा आदिक त्यागे थे ॥
मरकर सुर में गया वहाँ से, आकर चक्री पुत्र हुआ।
भ्रष्ट हुआ था जैनधर्म से, सो पापों का सूत्र हुआ ॥१॥

इस कारण ही भवों-भवों में, भटक-भटक दुख पान किया।
तथा योग से हिमगिरि पर आ, सिंहराज बलवान हुआ॥
चारण ऋषि से सम्बोधन पा, उसको आतम ज्ञान हुआ।
मुँह में पकड़े मृग को छोड़ा, धर्म अहिंसा धार लिया ॥२॥

मरकर पहले स्वर्ग गया फिर, आकर कनक पुंग नृप के।
घर में कनकोज्ज्वल बनकर, उपदेश सुना मुनिपुंगव से॥
मुनिव्रत धारण करके तप में, लीन हुए संन्यास लिया।
समाधिपूर्वक मरण किया सो, सप्तम सुर में वास हुआ ॥३॥

भोग-भोगकर नगर अयोध्या, के राजा की शीलवती।
रानी के तुम पुत्र हुए, हरिषेण नाम के पुण्यमती॥
पुनः महाव्रत धारण करके, त्रय योगों का तप धारा।
कर्म मूल को नाश करूँ यह, सोच पाप को दल डाला ॥४॥

लेकिन पूरे कर्म नाश नहिं, हो पाये सो स्वर्ग गये।
महाशुक्र में सुर बन करके, विविध भाँति सुख शर्म गहे॥

आकर राजा सुमित्र के घर, प्रिय नामक प्रिय पुत्र हुए।
षट्खण्डों के अधिपति बनकर, जैनधर्म के सूत्र हुए ॥५॥

श्री क्षेमंकर तीर्थंकर के, चरण कमल की वन्दन कर।
सुनी देशना तो वैरागी, क्षण भर में ही मुनि बनकर॥
करी तपस्या सहसों मुनि के, साथ रही अघ शोषक जो।
मोक्षमार्ग में कही गई है, मूलोत्तर गुण पोषक जो ॥६॥

तो भी ओ हो मोक्ष न पाया, जिससे बारम स्वर्ग मिला।
मिली अलौकिक सौख्य सम्पदा, सुरांगना का योग मिला॥
लेकिन चित्त न रमता उनमें, संयम व्रत ही भाता था।
मुनि बन करके मोक्षमार्ग में, चलने को ललचाता था ॥७॥

आकर छत्राकार नगर के, मेधावी नृप शासक जो।
नंद नाम था प्यारा उनका पुत्र, बना दुख नाशक वो ॥
प्रोष्ठिल मुनि की वाणी सुनकर, विरत भाव मन उपजा था।
छह महिने तक अनशन धारा, आश्रय लेकर समता का ॥८॥

और सुनो सब जीव लोक के, सुख पावे कल्याण करे।
इनके दुख मिट जावे सबहिं, जीवन में सुख पान करे ॥
इसी भाव के कारण इनके, तीर्थंकर पद श्रेष्ठ रहा।
सोलहकारण भावन भाकर, बाँध लिया जग ज्येष्ठ महा ॥९॥

तथा मरणकर अच्युत सुर में, इन्द्र हुए सुख पाए थे।
आकर के श्री कुण्डलपुर में, त्रिशला माँ को भाए थे ॥
ऐसे श्री महावीर वीर का, विधान लिखकर गुण गाऊँ।
कोटि कोटिशः वन्दन करके, पाप कर्म से बच जाऊँ ॥१०॥

परिपुष्पाञ्जलिं क्षिपामि/क्षिपेत्

विधान प्रारम्भ

स्थापना

(ज्ञानोदय)

वर्द्धमान श्री महावीर अतिवीर वीर का वन्दन है।
तीर्थंकर सिद्धार्थ पुत्र का, करते हम अभिनन्दन है॥
भाग्य खिला सौभाग्य खुला, सो भाव हुए हैं पूजन के।
सन्मति त्रिशलानन्दन मेरे, बैठो उर के आसन पे ॥
करता आह्वानन प्रभो, सन्निधि है शुभ रूप।
स्थापन करके पूजता, हे त्रिभुवन के भूप ॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री वर्द्धमान महावीर जिनेन्द्र अत्र अवतर अवतर संवौषट् इति आह्वाननं! ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री वर्द्धमान महावीर जिनेन्द्र अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं! ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री वर्द्धमान महावीर जिनेन्द्र अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणं!

अष्टक

(लय—श्री वीर महा अतिवीर...)

ले स्वर्ण कलश में नीर, पूजा आज करूँ।
मम जनम विनाशो वीर! भव के काज तजूँ ॥
जय वर्द्धमान तीर्थेश, गुण के सागर हो।
मैं भक्ति करूँ सर्वेश, ज्ञान दिवाकर हो ॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री वर्द्धमान-महावीर-जिनेन्द्राय नमः जन्म-जरा-मृत्यु-विनाशनाय जलं...।

ये चन्दन खुशबू युक्त, लज्जित हो आया।
हो जाऊँ अघ से मुक्त, चरणों ले आया॥
जय वर्द्धमान तीर्थेश...॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री वर्द्धमान-महावीर-जिनेन्द्राय नमः संसार-ताप-विनाशनाय चंदनं...।

मैं अक्षत उत्तम श्रेष्ठ, थाली भर लाया।
तव चरण चढ़ाना ज्येष्ठ, मेरे मन भाया॥
जय वर्द्धमान तीर्थेश, गुण के सागर हो।
मैं भक्ति करूँ सर्वेश, ज्ञान दिवाकर हो॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री वर्द्धमान-महावीर-जिनेन्द्राय नमः अक्षय-पद-प्राप्तये अक्षतान्...।

हे काम विनाशक! काम, मुझको दुख देता।
सो पुष्प चढ़ाकर आज, शिव का पथ लेता॥
जय वर्द्धमान तीर्थेश...॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री वर्द्धमान-महावीर-जिनेन्द्राय नमः कामबाण-विध्वंसनाय पुष्पं...।

ये घृत से निर्मित शुद्ध, नैवज मिष्ट रहे।
हो क्षुधा रोग अवरुद्ध, पूजन इष्ट रहे ॥
जय वर्द्धमान तीर्थेश...॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री वर्द्धमान-महावीर-जिनेन्द्राय नमः क्षुधारोग-विनाशनाय नैवेद्यं...।

ये मोह रहा है वीर, मुझको घेर लिया।
अब ज्ञान दीप जल जाय, दीपक भेंट किया॥
जय वर्द्धमान तीर्थेश...॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री वर्द्धमान-महावीर-जिनेन्द्राय नमः मोहान्धकार-विनाशनाय दीपं...।

जो धूप दशांगी ज्येष्ठ, लेकर पद आवे।
वो कर्म जलावे शीघ्र, निज का पद पावे॥
जय वर्द्धमान तीर्थेश...॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री वर्द्धमान-महावीर-जिनेन्द्राय नमः अष्टकर्म-दहनाय धूपं...।

मैं श्रीफल ऐला लौंग, फल के थाल भरूँ।
अब अर्पित करके नाथ, शिव की चाल चलूँ ॥
जय वर्द्धमान तीर्थेश, गुण के सागर हो।
मैं भक्ति करूँ सर्वेश, ज्ञान दिवाकर हो ॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री वर्द्धमान-महावीर-जिनेन्द्राय नमः मोक्षफल-प्राप्तये फलं...।

जो जल-फल नैवज धूप, अक्षत चन्दन ले।
तव चरण जजे आ भूप! काटे बन्धन वे॥
जय वर्द्धमान तीर्थेश...॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री वर्द्धमान-महावीर-जिनेन्द्राय नमः अनर्घ-पद-प्राप्तयेऽर्घ्यं...।

प्रत्येक-अर्घ्य

(दोहा)

अष्ट द्रव्य से पूजकर, पाद युगल श्रीवीर।
गुण-गण को मैं अर्घ दे, अब पूजूँ अतिवीर॥

इति मण्डलस्योपरिपुष्पाञ्जलिं क्षिपामि/क्षिपेत्॥

जन्मातिशय के १० अर्घ्य

(ज्ञानोदय)

सप्त धातुमय तन है फिर भी, स्वेद न किंचित् झरता है।
अहो अलौकिक तन को देखे, बहता सुख का झरना है॥
जैसे चकवा स्वाति ऋक्ष के, जल से प्यास बुझाता है।
त्यों सन्मति तव दर्शन से भवि, भव आपद सुलझाता है ॥१॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं निःस्वेदत्व-जन्मातिशय-गुणधारक श्री वर्द्धमान-महावीर-जिनेन्द्रेभ्यो नमः अर्घ्यं...।

बचा न मल का नाम निशाना, वीर प्रभु के शुभ तन में।
अति निर्मल ये कर्म मलों का, नाश करेंगे चेतन से॥
रवि के नभ में उग आने पर, अंधकार नहिं रह पावे।
महावीर की भक्ति करे तो, पाप पंक सब मिट जावे ॥२॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं निर्मलत्व-जन्मातिशय-गुणधारक श्री वर्द्धमान-महावीर-जिनेन्द्रेभ्यो नमः अर्घ्यं...।

तीन लोक से वत्सलता का चिह्न सुधवलिम खून रहा।
हाथ-पैर के तलवे लेकिन, लाल रहे सुख पूर अहा ॥
सुमेरु पर्वत पर हे स्वामी! हुआ जन्म अभिषेक यदा।
देव सुरासुर नाच उठे थे, पाप मिटा था पुण्य बढ़ा ॥३॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं क्षीर-गौररुधिरत्व-जन्मातिशय-गुणधारक श्री वर्द्धमान-महावीर-जिनेन्द्रेभ्यो नमः अर्घ्यं...।

उपांग सुन्दर अंग आपके, सबसे न्यारे प्यारे हैं।
प्रथम रहा संस्थान देखकर, मिट जाते मद सारे हैं॥
जिसे देखने शचिपति ने भी, सहस नयन को धार लिया।
फिर भी तृप्त न हो पाया सो, फिर-फिर उनको देख जिया ॥४॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं समचतुरस्र-संस्थान-जन्मातिशय-गुणधारक श्री वर्द्धमान-महावीर-जिनेन्द्रेभ्यो नमः अर्घ्यं...।

वज्रमयी है हड्डी वेष्टन, कीले भी हैं वज्रमयी।
लेकिन कोमलता इन जैसी, मिल न सकेगी और कहीं ॥
महावीर की देह-शक्ति यह, उत्तम में भी उत्तम है।
शिवगामी हैं तद्भव सो हम, अर्घ चढ़ावे उत्तम ये ॥५॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं वज्रवृषभनाराच-संहनन-जन्मातिशय-गुणधारक श्री वर्द्धमान-महावीर-जिनेन्द्रेभ्यो नमः अर्घ्यं...।

चक्रवर्ति अरु कामदेव अहमिन्द्र देव भी आ जावे।
आप रूप को देख दाँत के नीचे अंगुलि दब जावे॥

सौ-सौ युद्धों को जीता हो, वो भी सत्वर हारेगा।
उससे जो भी छोड़ सभी को, वीर शरण में आयेगा ॥६॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं सौरूप्य-जन्मातिशय-गुणधारक श्री वर्द्धमान-महावीर-जिनेन्द्रेभ्यो नमः अर्घ्यं...।

कमल केतकी गुलाब चम्पा, की खुशबू सब पीछे हैं।
सुगंधशाली आप देह त्रय, लोक सुरभि को जीते हैं॥
सन्मति स्वामी की अर्चा से, अर्चित जग में हो जावे।
आपद-विपदा के सब बादल, क्षणभर में ही छँट जावे ॥७॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं सौगन्ध्य-जन्मातिशय-गुणधारक श्री वर्द्धमान-महावीर-जिनेन्द्रेभ्यो नमः अर्घ्यं...।

एक सहस वसु लक्षण तन में, शुभ भविष्य के सूचक है।
कहते मानो अल्प उम्र में, बने कर्म के मोचक ये॥
महावीर जी तीन लोक के, चूड़ामणि जगवल्लभ है।
भक्ति करे वह पा जावेगा, जिसको पाना दुर्लभ है ॥८॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं सौलक्षण्य-जन्मातिशय-गुणधारक श्री वर्द्धमान-महावीर-जिनेन्द्रेभ्यो नमः अर्घ्यं...।

तीन लोक को इक क्षण में ही उठा घुमाकर रख देवे।
किन्तु न ऐसा करते करुणाशाली सबके दुख मेंटे ॥
महावीर में रहा अतुल बल तुलना किससे हो पावे।
देख आपके बल को हम तो अर्घ चढ़ावे मुस्कावे ॥९॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं अप्रमितवीर्य-जन्मातिशय-गुणधारक श्री वर्द्धमान-महावीर-जिनेन्द्रेभ्यो नमः अर्घ्यं...।

जन्मजात औ वचन आपके, प्रिय हित नन्दन दायक ही।
होते सबको सुख देते हैं, होते पाप प्रणाशक ही ॥
कृपासिन्धु श्री महावीर के, करुणा सागर जिनवर के।
चरण पूजता वह पा जाता, यश वैभव सब त्रिभुवन के ॥१०॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं प्रिय-हित-वादित्व-जन्मातिशय-गुणधारक श्री वर्द्धमान-महावीर-जिनेन्द्रेभ्यो नमः अर्घ्यं...।

केवलज्ञानातिशय के १० अर्घ्य

(नरेन्द्र)

सौ-सौ योजन चारों दिशि में, सुभिक्षता हो जावे।
रोग शोक दारिद्र व्याधियाँ, निकट नहीं आ पावे॥
वर्द्धमान अतिवीर वीर की, जो पूजा रचवावे।
भव को तजकर परम्परा से, मोक्ष महल को पावे ॥११॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं गव्यूतिशत-चतुष्टय-सुभिक्षत्व-घातिक्षय-जातिशय-गुणधारक श्री वर्द्धमान-महावीर-जिनेन्द्रेभ्यो नमः अर्घ्यं...।

नभ पथ से तुम विहार करते, साथ चले मुनि स्वामी।
घाति कर्म चउ नाश हुए सो, अतिशय है जगनामी॥
वर्द्धमान अतिवीर...॥१२॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं गगनगमनत्व-घातिक्षय-जातिशय-गुणधारक श्री वर्द्धमान-महावीर-जिनेन्द्रेभ्यो नमः अर्घ्यं...।

भोजन पानी फल-फूलों को, नहिं खाते अतिवीरा।
तो भी तन है पुष्ट आपका, अचरज हमको धीरा॥
वर्द्धमान अतिवीर...॥१३॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं भुक्त्यभाव-घातिक्षय-जातिशय-गुणधारक श्री वर्द्धमान-महावीर-जिनेन्द्रेभ्यो नमः अर्घ्यं...।

चाहे कितनी दूरी तक तुम, गमन करोगे देवा।
प्राणीवध नहिं हो सकता हम, करें आपकी सेवा ॥
वर्द्धमान अतिवीर...॥१४॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं अप्राणिवधत्व-घातिक्षय-जातिशय-गुणधारक श्री वर्द्धमान-महावीर-जिनेन्द्रेभ्यो नमः अर्घ्यं...।

कोई बाधा किसी भाँति की, प्रभु पर ना कर पावे।
इसीलिए उपसर्ग रहित यह, अतिशय हमको भावे॥

वर्द्धमान अतिवीर वीर की, जो पूजा रचवावे।
भव को तजकर परम्परा से, मोक्ष महल को पावे ॥१५॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं उपसर्गाभाव-घातिक्षय-जातिशय-गुणधारक श्री वर्द्धमान-महावीर-जिनेन्द्रेभ्यो नमः अर्घ्यं...।

मुख तो केवल एक रहा पर, दिखे सभी को भाई।
समवसरण में तुम्हें देखकर, मिटे पाप दुखदाई ॥
वर्द्धमान अतिवीर... ॥१६॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं चतुर्मुखत्व-घातिक्षय-जातिशय-गुणधारक श्री वर्द्धमान-महावीर-जिनेन्द्रेभ्यो नमः अर्घ्यं...।

तीनलोक की सब विद्याएँ, चेरी बनकर तेरे।
चरण खेलती पूज्य आपके, भक्त सौख्य से खेले ॥
वर्द्धमान अतिवीर... ॥१७॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं सर्वविद्येश्वरत्व-घातिक्षय-जातिशय-गुणधारक श्री वर्द्धमान-महावीर-जिनेन्द्रेभ्यो नमः अर्घ्यं...।

परमौदारिक देह रहा सो, नहीं पड़ेगी छाया।
वीर चरण की पूजा कर लो, मिट जायेगी माया ॥
वर्द्धमान अतिवीर... ॥१८॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं अच्छायत्व-घातिक्षय-जातिशय-गुणधारक श्री वर्द्धमान-महावीर-जिनेन्द्रेभ्यो नमः अर्घ्यं...।

नहीं झपकती पलकें तो भी, नहिं थकती हैं आँखें।
इक क्षण के बस दर्शन से ही, खिल जाती हैं वाँछें ॥
वर्द्धमान अतिवीर... ॥१९॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं अपक्ष्मस्पंदत्व घातिक्षय-जातिशय गुणधारक श्री वर्द्धमान-महावीर-जिनेन्द्रेभ्यो नमः अर्घ्यं...।

केश न बढ़ते नख का बढ़ना, रुका आपके स्वामी।
अर्पित होकर बने पुजारी, मेटे पाप निशानी ॥
वर्द्धमान अतिवीर... ॥२०॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं समान-नख-केशत्व-घातिक्षय-जातिशय-गुणधारक श्री वर्द्धमान-महावीर-जिनेन्द्रेभ्यो नमः अर्घ्यं...।

देवकृत अतिशय के १४ अर्घ्य

(लय—शांतिनाथ मुख...)

अर्द्धमागधी तेरी भाषा, श्रोता पाते आनन्द खासा।
महावीर को भजने वाला, शीघ्र लगावे भव को ताला ॥२१॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं सर्वार्धमागधी-भाषा-देवोपनीतातिशय-गुणधारक श्री वर्द्धमान-महावीर जिनेन्द्रेभ्यो नमः अर्घ्यं...।

वैर भूलकर जग के प्राणी, करे मित्रता मिल सुखदानी।
वीर प्रभु के भक्त सभी के, मित्र बनेंगे सुनो अभी वे ॥२२॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं सर्वजन-मैत्री-भाव-देवोपनीतातिशय-गुणधारक श्री वर्द्धमान-महावीर-जिनेन्द्रेभ्यो नमः अर्घ्यं...।

सब ऋतुओं के फल लग आवे, पापी के भी अघ धुल जावे।
आपद विपदा सब मिट जावे, परम्परा से शिव को पावे ॥२३॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं सर्वर्तुफलादि-शोभित-तरुपरिणाम-देवोपनीताशय-गुणधारक श्री वर्द्धमान-महावीर-जिनेन्द्रेभ्यो नमः अर्घ्यं...।

दर्पण जैसी निर्मल भू हो, पूजा करके निर्मल तू हो।
जो भज लेगा महावीर को, बन जायेगा महावीर वो ॥२४॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं आदर्शतल-प्रतिमारत्नमयी-देवोपनीतातिशय-गुणधारक श्री वर्द्धमान-महावीर-जिनेन्द्रेभ्यो नमः अर्घ्यं...।

पवन चलेगा सही दिशा में, भक्त रहेगा सही दशा में।
त्रिभुवनपति की भक्ति करे जो, मुक्तिवधू को शीघ्र वरे वो ॥२५॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं विहरण-मनुगत-वायुत्व-देवोपनीतातिशय-गुणधारक श्री वर्द्धमान-महावीर-जिनेन्द्रेभ्यो नमः अर्घ्यं...।

समवसरण जब आता तेरा, घर-घर में हो सुख का डेरा।
श्रद्धा करले पूज्य वीर की, मिट जावेगी सभी पीर जी ॥२६॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं सर्वजन-परमानन्दत्व-देवोपनीतातिशय-गुणधारक

श्री वर्द्धमान-महावीर-जिनेन्द्रेभ्यो नमः अर्घ्यं...।

कंकर कण्टक दूर करेंगे, वायु देव आ पास रहेंगे।
दुख के काँटें शीघ्र हटेंगे, जो सन्मति की भक्ति करेंगे ॥२७॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं वायुकुमारोपशमित - धूलि - कंटकादि-देवोपनीतातिशय-गुणधारक श्री वर्द्धमान-महावीर-जिनेन्द्रेभ्यो नमः अर्घ्यं...।

गंधोदक की वर्षा करते, वीर भक्त नित सुख से भरते।
भज ले, भज ले, भज ले भाई, बन जावेगा सुख का सांई ॥२८॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं मेघकुमारकृत-गन्धोदकवृष्टि-देवोपनीतातिशय-गुणधारक श्री वर्द्धमान-महावीर-जिनेन्द्रेभ्यो नमः अर्घ्यं...।

सहस पत्र के पद्म रचेंगे, स्पर्श न लेकिन वीर करेंगे।
पंकज सा निर्लिप्त रहे जो,तो क्यों भव के दुःख वरे वो ॥२९॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं पादन्यासेकृत-पद्मानि-देवोपनीतातिशय-गुणधारक श्री वर्द्धमान-महावीर-जिनेन्द्रेभ्यो नमः अर्घ्यं...।

फसल धान्य से झुक जाती है, ईति भीति सब भग जाती है।
गुण से भरकर नम्र बनेगा, वीर प्रभु का भक्त बनेगा ॥३०॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं फलभार-नम्रशाली-देवोपनीतातिशय-गुणधारक श्री वर्द्धमान-महावीर-जिनेन्द्रेभ्यो नमः अर्घ्यं...।

वीर पधारे जहाँ - जहाँ पर, निर्मल होता गगन वहाँ पर।
आपद के सब बादल छटते, वीर भक्त के पातक घटते ॥३१॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं शरत्कालवन्निर्मल-गगनत्व-देवोपनीतातिशय-गुणधारक श्री वर्द्धमान-महावीर-जिनेन्द्रेभ्यो नमः अर्घ्यं...।

आओ-आओ आओ कहकर, बुला रहे हैं सबको मिलकर।
अतिशय माना सुरकृत प्यारा,पूजक को फल मिलता न्यारा ॥३२॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं एतैतैति - चतुर्निकायामर - परस्पराह्वानन-देवोपनीतातिशय-गुणधारक श्री वर्द्धमान-महावीर-जिनेन्द्रेभ्यो नमः अर्घ्यं...।

शरद काल के बादल सम ही, होती दिशियाँ निर्मलतमजी।
पूजे अन्तिम तीर्थंकर को, बन जावेगा क्षेमंकर वो ॥३३॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं शरन्-मेघवन्निर्मल-दिग्विभागत्व-देवोपनीतातिशय-गुणधारक श्री वर्द्धमान-महावीर-जिनेन्द्रेभ्यो नमः अर्घ्यं...।

सहस आर का धर्म चक्र जो, प्रभु के आगे चलता है वो।
सच्चे चक्रेश्वर प्रभु वीरा, नाम जपे सब जग के धीरा ॥३४॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं धर्मचक्रचतुष्टय-देवोपनीतातिशय-गुणधारक श्री वर्द्धमान-महावीर-जिनेन्द्रेभ्यो नमः अर्घ्यं...।

अष्ट प्रातिहार्य के ८ अर्घ्य

(लय—कहाँ गये चक्री...)

शोक मिटाता सब जीवों के, रोग मिटाता है।
अशोक प्यारा नाम तभी है, पूज्य बनाता है॥
महावीर की पूजा से तो, पाप मिटेंगे रे।
भक्ति बढ़ा ले जग के वैभव साथ रहेंगे रे ॥३५॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं अशोकवृक्ष-प्रातिहार्य-मण्डित श्री वर्द्धमान-महावीर-जिनेन्द्रेभ्यो नमः अर्घ्यं...।

तीन छत्र जो चाँदी के ये, शिर पर शोभित है।
उनमें लटके मोती जिन पर, सब जन मोहित है॥
वीर प्रभु की छत्रच्छाया, हमने पायी है।
धन्य धन्य कह सारी जनता, चरणों आयी है॥३६॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं छत्रत्रय-प्रातिहार्य-मण्डित श्री वर्द्धमान-महावीर-जिनेन्द्रेभ्यो नमः अर्घ्यं...।

चौंसठ चामर स्वर्ग लोक के, इन्द्र ढोरते हैं।
महावीर के भक्त शीघ्र ही, कर्म तोड़ते हैं॥
प्रातिहार्य गुण रत्नाकर ने, कैसे पाया है।
तीर्थंकर जो कर्म उदय में, वो ही आया है ॥३७॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं चतुःषष्ठि-चामर-प्रातिहार्य-मण्डित श्री वर्द्धमान-महावीर-जिनेन्द्रेभ्यो नमः अर्घ्यं...।

अन्तरंग का शुद्ध भाव ही, बाहर आया है।
जगमग करता भामण्डल बन, सबको भाया है॥
सन्मति स्वामी आप भक्त को, सन्मति मिलती है।
चरणकमल के दर्शमात्र से, दुर्गति टलती है ॥३८॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं भामण्डल-प्रातिहार्य-मण्डित श्री वर्द्धमान-महावीर-जिनेन्द्रेभ्यो नमः अर्घ्यं...।

साढ़े बारह करोड़ बाजे, ढम ढम बजते हैं।
देव बजाते एक ध्वनि में, प्यारे लगते हैं॥
दुन्दुभि बाजे कहते शिव के, नायक आये हैं।
महावीर की पूजा ही बस, मन को भाये हैं ॥३९॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं दुन्दुभि-प्रातिहार्य-मण्डित श्री वर्द्धमान-महावीर-जिनेन्द्रेभ्यो नमः अर्घ्यं...।

रंग रंगीले भाँति भाँति के, पुष्प बरसते हैं।
जिन्हें देखकर पापी के भी, भाग्य पलटते हैं॥
महावीर अतिवीर देव की, महिमा न्यारी है।
चरण पड़े तो पल में पाते, सुख की क्यारी वे ॥४०॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं पुष्पवृष्टि-प्रातिहार्य-मण्डित श्री वर्द्धमान-महावीर-जिनेन्द्रेभ्यो नमः अर्घ्यं...।

सिंहासन यह बना स्वर्ण से, रत्न जड़े न्यारे।
उसके ऊपर अधर विराजे, महावीर प्यारे ॥
सिद्ध शिला पर आसन होगा, भक्ति करेगा जो।
लौट न आवे भूमण्डल पर, वहीं रहेगा वो ॥४१॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं सिंहासन-प्रातिहार्य-मण्डित श्री वर्द्धमान-महावीर-जिनेन्द्रेभ्यो नमः अर्घ्यं...।

अष्टादश है महा, सात सौ, छोटी भाषा में।
दिव्यध्वनि से सर्व तत्त्व को, प्रभुवर समझावे॥

वीर प्रभु अतिवीर आपकी, ध्वनियाँ अद्भुत है।
पूजन करके हमने सारे, पाये सद्गुण है ॥४२॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं दिव्यध्वनि-प्रातिहार्य-मण्डित श्री वर्द्धमान-महावीर-जिनेन्द्रेभ्यो नमः अर्घ्यं...।

पंचकल्याणक के ५ अर्घ्य

घत्ता+दोहा

तब रत्न सुबरसे, मन भी हरषे, गर्भ पधारे आप यदा।
हम पूजा करते, सुख से भरते, ऐसा मिलता भाग्य कहाँ ॥
सुर-सुरियाँ आकर, सेवा पाकर, माँ की अति हरषाती है।
हम कल्याणक पा, चरणों में आ, पूजे प्रभु सुख पाती हैं॥
माह रहा आषाढ़ का, तिथि छठवीं सुखदाय।
अर्घ चढ़ाऊँ वीर को, मेरे भव घट जाय ॥४३॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं गर्भ-कल्याणक-मण्डित श्री वर्द्धमान-महावीर-जिनेन्द्रेभ्यो नमः अर्घ्यं...।

प्रभु भू पर आये, दर्शन पाये, शचि ने सबसे पहले तो।
मिथ्यातम भागा, आतम जागा, मोक्षमार्गमय बनने को॥
हम नाचे गावें, खुशी मनावें, जन्म कल्याणक आज हुआ।
ये अर्घ चढ़ाने, पाप घटाने, भाग्य उदय यह खास हुआ॥
चैत माह की तिथि रही, अट्ठाइसवीं जान[१]।
महावीर को अर्घ दूँ, पूज्योत्तम यह मान ॥४४॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं जन्म-कल्याणक-मण्डित श्री वर्द्धमान-महावीर-जिनेन्द्रेभ्यो नमः अर्घ्यं...।

प्रभु दीक्षा धारे, वस्त्र उतारें, लौकान्तिक भी आये थे।
सुर उठा पालकी, धर्मपाल की, मन ही मन हरषाये थे ॥
वे मौन सुधारें, काम सुधारें, जन-जन उनके वन्दन से।
मम पाप कटेंगे, सौख्य बढ़ेंगे, भाव बनेंगे चन्दन से॥

१. तेरस

मार्गशीर्ष की पूज्य है, दसवीं तिथि यह आज।
तप कल्याणक वीर का, पूजूँ बनकर दास ॥४५॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं तपःकल्याणक-मण्डित श्री वर्द्धमान-महावीर-जिनेन्द्रेभ्यो नमः अर्घ्यं...।

जब ज्ञान उपजता, लोक हरषता, समवसरण भी बनता है।
शुभ दिव्य देशना, छोड़ वेदना, सुनती सारी जनता है॥
तज घर कारा को, सुत दारा को, देश महाव्रत पाते जो।
शुभ मोक्षमार्ग पर, प्रतिपल चलकर, मोक्षमहल में जाते वो ॥
दशमी है वैशाख की, शुक्ल पक्ष की श्रेष्ठ।
पूजे सन्मति वीर को, बनता जग में ज्येष्ठ ॥४६॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं ज्ञान-कल्याणक-मण्डित श्री वर्द्धमान-महावीर-जिनेन्द्रेभ्यो नमः अर्घ्यं...।

प्रभु मोक्ष पधारे, भव नहिं धारे, पुनः लोक में आकर के।
वे भव को तजते, सुख में रमते, शुद्ध अवस्था पाकर के॥
वसु कर्म नहीं है, सौख्य सही है, आठ गुणों को पाया है।
निधि निज की पायी, आनन्ददायी, हमने शीश झुकाया है॥
कृष्णा कार्तिक माह की, रही अमावस श्याम।
मोक्ष गये अतिवीर सो, लगती है अभिराम ॥४७॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं मोक्ष-कल्याणक-मण्डित श्रीवर्द्धमान-महावीर-जिनेन्द्रेभ्यो नमः अर्घ्यं...।

अनन्तचतुष्टय के ४ अर्घ्य

अनन्त दर्शन अनुपम अद्‌भुत, तुमने पाया है।
दर्शन का आवरणी माना, उसे सताया है ॥
अनन्त दर्शन महावीर का, रहा अलौकिक है।
भक्ति करे जो परम्परा से, बने अलौकिक वे ॥४८॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं अनन्त-दर्शन-गुणमण्डित श्री वर्द्धमान-महावीर-

जिनेन्द्रेभ्यो नमः अर्घ्यं...।

रहा अंत से रहित अमित, जो ज्ञान सुपंचम है।
ज्ञानावरणी कर्म नाशकर, पाया उत्तम ये॥
पाने केवलज्ञान आप सम, चरणों आये हैं।
सब देवों को देखा उसमें, आप सुहाये हैं ॥४९॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं अनन्त-ज्ञान-गुणमण्डित श्री वर्द्धमान-महावीर-जिनेन्द्रेभ्यो नमः अर्घ्यं...।

आत्मिक सुख जो नहीं पराश्रित स्वाश्रित भाया है।
महावीर ने शुक्लध्यान से उसको पाया है ॥
कुण्डलपुर के गौरव तेरी, गाथा जो गाते।
गर्व छोड़कर उत्तम मार्दव, वृष को वो पाते ॥५०॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं अनन्त-सुख-गुणमण्डित श्री वर्द्धमान-महावीर-जिनेन्द्रेभ्यो नमः अर्घ्यं...।

तीन लोक के सभी द्रव्य अरु, पर्यायें जानो।
लेकिन थकते नहीं कभी भी, यही वीर्य मानो ॥
विपुलाचल के महावीर को, वंदन करता जो।
भव भोगों के क्लेश छूटते चंदन बनता वो ॥५१॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं अनन्त-वीर्य-गुणमण्डित श्री वर्द्धमान-महावीर-जिनेन्द्रेभ्यो नमः अर्घ्यं...।

१८ दोष रहित भगवान के १८ अर्घ्य

(दोहा)

मोह कर्म का नाम ना, साता है भरपूर।
भूख लगे कैसे किया अघ को चकनाचूर॥
कूल भूप ने वीर को, प्रथम दिया आहार।
हुए पंच आश्चर्य तब, पाया शिव का द्वार ॥५२॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं क्षुधा-दोष-रहित श्री वर्द्धमान-महावीर-जिनेन्द्रेभ्यो नमः अर्घ्यं...।

प्यास न आती पास है, नहीं हेतु अवशेष।
अर्घ चढ़ाकर हे प्रभो, धारूँ मैं जिनवेष॥
नाच-नाच अतिवीर का, जो करते गुणगान।
स्वर्ग लोक को प्राप्त कर, करते शिव सुख पान ॥५३॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं तृषा-दोष-रहित श्री वर्द्धमान-महावीर-जिनेन्द्रेभ्यो नमः अर्घ्यं...।

तीर्थंकर हैं आप सो, जरा न आवे पास।
जरा दोष को नाशकर, पद पाया है खास॥
चाँदनपुर के वीर को, जो पूजे त्रय काल।
अजर-अमर पद प्राप्त हो, फिर नहिं आवे काल ॥५४॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं जरा-दोष-रहित श्री वर्द्धमान-महावीर-जिनेन्द्रेभ्यो नमः अर्घ्यं...।

गर्भ सम्मूर्च्छन जन्म है, और रहा उपपाद।
तीनों के ही नाश से, हुआ मोक्ष उत्पाद ॥
एक सहस वसु कलश से, सुमेरु पर अभिषेक।
जन्म जात जिन वीर का, तृप्त न होते देख ॥५५॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं जन्म-दोष-रहित श्री वर्द्धमान-महावीर-जिनेन्द्रेभ्यो नमः अर्घ्यं...।

मरण रहा अति कष्टमय, कष्ट किए सब साफ।
पण्डित-पण्डित मरण कर, अमर हुए हैं आप ॥
त्रिशलानन्दन वीर के, स्पर्श करे द्वय पाद।
सम्यग्दर्शन धान्य में, मिल जाता है खाद ॥५६॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं मरण-दोष-रहित श्री वर्द्धमान-महावीर-जिनेन्द्रेभ्यो नमः अर्घ्यं...।

भोग रोग के हेतु हैं, नहिं करते तुम भोग।
स्वस्थ हुई है चेतना, नाश हुआ है रोग ॥

सन्मति से सन्मति मिले, मिले सौख्य भण्डार।
द्वन्द्व-फन्द को छोड़कर, यदि आये प्रभु द्वार ॥५७॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं रोग-दोष-रहित श्री वर्द्धमान-महावीर-जिनेन्द्रेभ्यो नमः अर्घ्यं...।

इष्ट वस्तु में जीव के, रति उपजे निस्सार।
रति को नाशा पा लिया, आतम जो है सार॥
रहे पुत्र सिद्धार्थ के, महावीर जिनराज।
कर ले सेवा एक क्षण, सध जावे सब काज ॥५८॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं रति-दोष-रहित श्री वर्द्धमान-महावीर-जिनेन्द्रेभ्यो नमः अर्घ्यं...।

तन ममता से भय बढ़े, शरण ढूँढ़ता जीव।
निर्भय तुम ही शरण हो, भय की मेटी नींव॥
सेवा करती देवियाँ, माता की दिन-रात।
गर्भ विराजे वीर सो, रही अलौकिक बात॥५९॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं भय-दोष-रहित श्री वर्द्धमान-महावीर-जिनेन्द्रेभ्यो नमः अर्घ्यं...।

अचरज क्यों उपजे तुम्हें, झलक रहा सब लोक।
विस्मय लेश न अब बचा, सो पूजे त्रयलोक ॥
पन्द्रह महिने रत्न की, वर्षा करते देव।
कल्याणक जब प्रथम हो, खोने भव की टेव ॥६०॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं विस्मय-दोष-रहित श्री वर्द्धमान-महावीर-जिनेन्द्रेभ्यो नमः अर्घ्यं...।

तीन लोक में आपका, शत्रु नहीं है शेष।
सबके सुख की भावना, भायी जो सुखवेष॥
महावीर के भक्त से, करे न कोई द्वेष।
पुण्यवान वह शीघ्र ही, धारेगा जिन वेष ॥६१॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं द्वेष-दोष-रहित श्री वर्द्धमान-महावीर-जिनेन्द्रेभ्यो नमः अर्घ्यं...।

स्वेद नहीं आवे कभी, आप देह में नाथ।
तब तो पाया आपने, मुक्ति रमा का साथ॥
कुण्डलपुर के वीर का, नित्य करे गुणगान।
झंझट कर्मों का मिटे, करे मोक्ष का पान ॥६२॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं स्वेद-दोष-रहित श्री वर्द्धमान-महावीर-जिनेन्द्रेभ्यो नमः अर्घ्यं...।

मन का यदि मिलता नहीं, तो उपजेगा खेद।
आवश्यकता है नहीं, इसीलिए निर्वेद ॥
श्रेणिक नृप ने पूछकर, साठ सहस शुभ प्रश्न।
उत्तर पाये वीर से, रहूं भक्ति में मस्त ॥६३॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं खेद-दोष-रहित श्री वर्द्धमान-महावीर-जिनेन्द्रेभ्यो नमः अर्घ्यं...।

ज्ञान नाशकर मोह जो, हावी सब पर आज।
उसको नाशा वीर सो, निर्मोही हैं आप ॥
महावीर के चरण में, हुआ समर्पित मोह।
तब तो पूजक शीघ्र ही, पा जाता है मोक्ष ॥६४॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं मोह-दोष-रहित श्री वर्द्धमान-महावीर-जिनेन्द्रेभ्यो नमः अर्घ्यं...।

निद्रा के वश में हुआ, सब कुछ जाता भूल।
मूल मिटाया वीर ने, नहीं बचे अघ शूल॥
नहिं सोते नहिं जागते, महावीर अतिवीर।
नींद मिटेगी पूज ले, मिटे पाप के तीर ॥६५॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं निद्रा-दोष-रहित श्री वर्द्धमान-महावीर-जिनेन्द्रेभ्यो नमः अर्घ्यं...।

चिन्ता उसको ही लगे, परिग्रह होवे पास।
मूर्च्छा त्यागी सो बने, सभी आपके दास॥
महावीर को अर्च ले, चिन्ता होगी दूर।
हो जावे निश्चिंत वो, पा जावे सुख पूर ॥६६॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं चिन्ता-दोष-रहित श्री वर्द्धमान-महावीर-जिनेन्द्रेभ्यो नमः अर्घ्यं...।

कारण जो हैं शोक के, दिया सभी को रोक।
इसीलिए अतिवीर को, क्यों होवेगा शोक ॥
महावीर के भक्त के, कभी न होते पाप।
तो क्यों पावे शोक वो, सुख पावे निर्माप ॥६७॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं शोक-दोष-रहित श्री वर्द्धमान-महावीर-जिनेन्द्रेभ्यो नमः अर्घ्यं...।

गुरु लघु में अंतर मिटा, पायी समता ज्येष्ठ।
तभी बचा नहिं मद प्रभु, निर्मद तुम ही श्रेष्ठ ॥
सन्मति का जो भक्त है, मद मिट जाता शीघ्र।
पुण्यवान के मध्य में, पद पाता है अग्र ॥६८॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं मद-दोष-रहित श्री वर्द्धमान-महावीर-जिनेन्द्रेभ्यो नमः अर्घ्यं...।

अंतरंग बहिरंग के, नहीं परिग्रह पास।
कैसे उपजे राग ये, सुख पाया है खास॥
जो पूजेगा वीर को, ग्रह बाधा मिट जाय।
लक्ष्मी भी आग्रह करे, किन्तु न मूर्च्छा आय ॥६९॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं राग-दोष-रहित श्री वर्द्धमान-महावीर-जिनेन्द्रेभ्यो नमः अर्घ्यं...।

गणधर देव का अर्घ्य

(ज्ञानोदय)

गौतम कुल में ब्राह्मण के घर, जिनका अन्तिम जन्म हुआ।
इन्द्रभूति का, गौतम गणधर, पूज्य नाम विख्यात हुआ॥
महावीर के मोक्ष गमन के, दिन ही सायंकाल अहो।
पाया केवलज्ञान सुपंचम, गुण गा सकता कौन कहो॥

(दोहा)

गौतम आदिक जो रहे, ग्यारह गणधर देव।
सबको पूजूँ अर्घ से, मेरी नैया खेव॥७०॥

ॐ ह्रीं गौतमादि एकादशगणधरेभ्यो नमः अर्घ्यं ...।

पावापुर सिद्धक्षेत्र का अर्घ्य

(ज्ञानोदय)

पावापुर में पद्म सरोवर, कमल खिले है मनमोहक।
ठीक बीच में शिला सुशोभित, जहाँ विराजे जगमोहक॥
शेष बचे जो कर्म सभी को, नाश मोक्ष को पाया था।
अर्घ चढ़ाऊँ पूजा करने, स्वर्ग लोक भी आया था॥७१॥

ॐ ह्रीं पावापुर सिद्धक्षेत्रेभ्यो नमः अर्घ्यं...।

पूर्णार्घ्य

(घत्ता)

हे वीर जिनन्दा, त्रिभुवन चन्दा, आनन्द कन्दा आप रहे।
हम पद आकर के, गुण गाकर के, निज पाकर के पाप हरे॥
जो तुमको पूजे, भव से छूटे, अघ से रूठे जाप करे।
वो शिव में जावे, निज को पावे, निज में आवे ताप तजे॥७२॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री वर्द्धमान-महावीर-जिनेन्द्रेभ्यो नमः पूर्णार्घ्यं...।

जाप्य—ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री वर्द्धमान-महावीर-जिनेन्द्रेभ्यो नमः।

(९/२७/१०८)

जयमाला

(दोहा)

जयमाला अतिवीर की, मैं गाऊँ दे ताल।
फल में चाहूँ हे प्रभो, मिट जावे भव चाल॥१॥

(ज्ञानोदय)

सिंह चिह्न से चिह्नित प्रभु ने, सिंह देह में सम्यक् पा।
मोक्षमार्ग प्रारम्भ किया था, सुख पाने निज आतम का॥
अन्तिम के इन तीर्थंकर ने, अन्तिम का पुरुषार्थ किया।
जिससे अन्तिम गति को पाकर, अन्त रहित सुख प्राप्त किया ॥२॥

मोह कर्म की महाशक्ति को, नाशा सो महावीर कहे।
चार घातियाँ नाश किए सो, हम तुमको अतिवीर कहे॥
ज्ञान आपका सर्वोत्तम अति, वृद्ध हुआ है बढ़ा हुआ।
अतः आपको वर्द्धमान कह, गौरव अनुभव आज हुआ॥३॥

श्रेष्ठ बुद्धि से उपादेय को, हेय वस्तु को जान लिया।
उत्तम-उत्तम गति पाई सो, सन्मति हमने नाम लिया॥
तीन लोक पर जय पाने से, गर्वित जो अति काम हुआ।
उसको जीता सो हे स्वामी! वीर प्रभु यह नाम हुआ॥४॥

चाँदनपुर के टीले में जब, आप बिम्ब शुभ राजित था।
गाय झराती दूध वहाँ पर, तो ग्वाला अति विस्मित था॥
टीला खोदा तो उसमें से, महावीर की प्रतिमा जी।
प्रकट हुई थी जिसे देखकर, सबने गायी महिमा जी ॥५॥

तब से ही वह टीला अब तक, महावीर जी क्षेत्र बना।
दर्श मात्र से भव्य जनों के, पाप नाश का क्षेत्र बना॥
शुद्ध-बुद्ध चैतन्य आत्म में, यदा आप तल्लीन हुए।
किया महा उपसर्ग रुद्र ने, तो भी निज में लीन हुए॥६॥

राजगृही में महावीर का, समवसरण जब आया था।
श्रेणिक नृप ने श्रावक बनकर, उत्तम दर्शन पाया था॥
प्रश्न पूछकर साठ सहस श्री, तीर्थंकर पद पाने का।
बन्ध किया था पथ पाया था, सुख पाने शिव जाने का ॥७॥

मोक्ष रमा की अति इच्छा सो, लोभी आप कहाते हैं।
लंगोटी भी नहिं रखते, निर्लोभी हमें सुहाते हैं॥
शिव ललना से राग रहा सो, रागी तुम्हें बताते हैं।
राग-द्वेष मद मोह मिटा सो, वीतराग हम ध्याते हैं ॥८॥

कर्म शत्रु को नष्ट किया सो, हिंसक तुमको हम कहते।
अभयदान तुम देते सबको, महा अहिंसक हम भजते ॥
भाव शुभाशुभ नष्ट हुए सो, शुद्धातम में तुम रहते।
पाप कर्म सब नाश किए सो, सुखसागर में तुम रमते ॥९॥

त्रिशला की गोदी में जनमे और अजन्मा कहलाते।
पुनः नहीं लो जन्म धरा पर, तब तो सुर नर गुण गाते ॥
मरण किया है पण्डित-पण्डित, फिर भी तुम हो नाथ अमर।
सिद्धालय से कभी न लौटो, गुण गाते है देव अमर॥१०॥

देह नहीं हो जर-जर स्वामी, नहीं भाव ही जर-जर हो।
जरा रोग से पीड़ित ना हो, इसीलिए तुम अजर अहो॥
रही अमावस काली थी पर, वह भी उज्ज्वल धवल हुई।
महावीर के मोक्ष गमन से, सारी विधियाँ चमन हुई॥११॥

पाँच शतक शिष्यों का गुरु जो, मिथ्यामत का पोषक था।
ऐसे गौतम इन्द्रभूति को, बना पाप का शोषक वा ॥
समवसरण में प्रथम सुगणधर, बना धर्म से जोड़ दिया।
आप भक्ति से उनने भी भव-भव से नाता तोड़ लिया ॥१२॥

उस ही भव में मुक्ति रमा से, विवाह करके शिव पाया।
लौट न आवे कभी लोक में, हमने उनको सिर नाया॥
रत्नदीप से भी बढ़कर के, ज्ञान आपका विस्तृत है।
तीन लोक को करे प्रकाशित, तीन लोक से वंदित है ॥१३॥

वर्द्धमान के जन्ममात्र से, नरकों में भी शांति हुई।
भूमण्डल पर दीन दुखी के, जीवन की भी क्लांति गई ॥
भारत भू पर पाप ताप का, हुआ यदा विस्तार हहा।
बलि देने में पापात्मा जब, हुए अग्रणी हाय वहाँ॥१४॥

सन्मति स्वामी के दर्शन कर मुँह मोड़ा था हिंसा से।
बने मोक्ष के पथिक श्रेष्ठतम, लगकर परम अहिंसा में ॥
देव सुरासर नर नारक को, निगोदियों को पशुओं को।
चक्रेश्वर को राजाओं को, जीत लिया सुरवधुओं को॥१५॥

बजा दिया है डंका विजयी होकर हा! उद्दण्ड हुआ।
चढ़कर आया तुम्हें जीतने, जीतूँगा यह सोच हहा ॥
ऐसे काम मल्ल को ओहो, बाल अवस्था में तुमने।
मार भगाया मूल उखाड़ा, सो भागा था इक पल में॥१६॥

लौट न देखा सपने में भी, कैसे देखे किस मुख से।
देखेगा इन महावीर को लीन हुए हैं ये निज में ॥
बाल ब्रह्मचारी बन करके, शिक्षा दी थी सब जग को।
कैसे जीते विषय वासना, कैसे पावे निजपन को ॥१७॥

मात्र बहत्तर वर्ष आयु थी, उसमें से श्री सन्मति ने।
करी तपस्या उत्तम बारह, वर्ष मात्र तक सन्मति ने॥
चार घातिया कर्म नाशकर, केवल पाया प्रभुवर ने।
तीस वर्ष उपदेश सुना था, समवसरण में भविजन ने ॥१८॥

दिव्यध्वनि सुन छह-छह घटिका, तीनों संध्याकालों में।
उस ही ध्वनि को गणधर स्वामी ने, गूँथा था ग्रन्थों में ॥
उन ही शास्त्रों से अद्यावधि धर्म जानते शिवपथ भी।
पाप काटते पुण्य कमाते सुनते बातें सुखपथ की ॥१९॥

अहो वीर के शासन में ही, हम सब अब तक जीवित हैं।
जयवंतें जयवंत रहे नित, जिन शासन यह पृथिवी पे ॥
महावीर के गुण गाने में, पार न कोई पा सकता।
सुरगुरु भी गा थक जायेगा, पार न उनके जा सकता॥२०॥

फिर मैं कैसे आप गुणों को, गा पाऊँ हे वीर प्रभो।
तो भी गाये भक्ति लहर में, खुश होकर के आज विभो ॥
अल्प बुद्धि है अल्प शक्ति है, मुझमें थोड़ी प्रतिभा है।
सो स्वामी यह जयमाला मैं, पूर्ण करूँ तव महिमा है ॥२१॥

छन्द ज्ञान नहिं अर्थ ज्ञान नहिं, ज्ञान रहा नहिं आगम का।
अलंकार का ज्ञान नहीं है, नहीं ज्ञान सुखसागर का॥
किन्तु वीर में महावीर में, अचल भक्ति है श्रद्धा है।
हृदयकमल के सिंहासन पर, केवल प्रभु की प्रतिमा है ॥२२॥

वीर प्रभु बस तुम ही मेरे, शरण रहे हैं उत्तम हैं।
मोक्षमार्ग में मार्ग प्रकाशक, नेता हैं सर्वोत्तम हैं॥
आप भक्ति से स्वामी मेरा, रत्नत्रय यह पूर्ण बने।
पाप पंक मिट जावे जीवन, सौख्य शांतिमय पूर्ण बने ॥२३॥

इस ही फल की इच्छा से यह विधान मैंने आज लिखा।
वर्द्धमान महावीर प्रभु अब, मिल जावे बस मोक्ष शिला ॥
प्रमादवश यदि गल्ती होवे, शोध पढ़ो हे प्राज्ञ जनों।
महावीर की पूजा करके, मोक्ष पथिक ही आप बनो ॥२४॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री वर्द्धमान-महावीर-जिनेन्द्रेभ्यो नमः जयमाला पूर्णार्घ्यं...।

आशीर्वादः

वर्द्धमान श्री महावीर का, विधान जो भी करता है।
सुरनर किन्नर के सुख पाकर, शिव ललना को वरता है॥
पुनः लौट नहिं आता जग में, अमितकाल तक सुख पावे।
सिद्ध पंक्ति में रहे विराजित, पूजक के दुख मिट जावे॥

इत्याशीर्वाद पुष्पाञ्जलिं क्षिपामि/क्षिपेत्।

प्रशस्ति

गुरुसराय में पहले - दूजे, नगर जतारा पुररानी।
तीजे - चौथे सुनो तेंदूखेड़ा बंधाजी सुखदानी॥
पंचम - छटवें नगर जतारा, सप्त घुवारा नगरी में।
चन्द्र बरेली ग्राम बहादुर, सुविधिनाथ प्रभु शीतल है॥१॥

सिलवानी में श्रेय चंदेरी क्षेत्र समसगढ़ धाम कहे।
विमलनाथ बामौरकला श्री अनंत पिपरई ग्राम कहे॥
खनियाधाना धर्म, शान्ति घाटोल जतारा में कुन्थु।
अरस्वामी श्री नेमावर में नगर केसली मल्लिप्रभु॥२॥

क्षेत्र कुराना सुव्रत नमिप्रभु, द्रोणगिरि श्री नेमि कहे।
जैननगर भोपाल पार्श्व प्रभु टीकमगढ़ में पूज्य कहे॥
विन्ध्यावलि में महावीर का मालथौन में बाबा का।
इन - इन स्थानों में इन प्रभु के विधान के शुभ काम अहा॥३॥

शांति - वीर - शिव - ज्ञान सिन्धु के, विद्यासागर संत रहे।
और दूसरे विवेकसागर, परीषहों की पीर सहे॥
उनकी शिष्या श्रमणी पंचम अल्पमति प्रभु भक्त रही।
जिनेन्द्र प्रभु के चरणों में ही, जिसकी मति आसक्त रही॥४॥

उसके द्वारा ही विधान ये, लिखे गये अघहारक हैं।
मार्गप्रकाशक पुण्यविकासक, शिव सुख के भी कारक हैं॥
इनमें जो भी गल्ती होवे, क्षमा करें जो प्राज्ञ रहे।
और अर्चना युगों-युगों तक,भव्यों के अघ साफ करे॥५॥

❑ ❑ ❑

प्रार्थना

प्रातः उठकर करूँ प्रार्थना, तुमसे मेरे हे भगवन्!।
आशिष दे दो तव भक्ती से, जीवन मेरा हो पावन॥

करुणा से मैं पर दुख मेटूँ, हिंसा से नित दूर रहूँ।
झूठ पाप को तजकर हित-मित, प्यारे मीठे वचन कहूँ॥
तेरे पद में रहे समर्पित, मेरा तन मन ये जीवन।
प्रातः उठकर करूँ प्रार्थना, तुमसे मेरे हे भगवन्! ॥१॥

रहे मित्रता सबसे मेरी, सबही मेरे मित्र रहे।
वैर भाव से दूर रहूँ मैं, उर में तेरे चित्र रहे॥
सदाचार हो सज्जन सब हो, शेष बचे ना इक दुर्जन।
प्रातः उठकर करूँ प्रार्थना, तुमसे मेरे हे भगवन्! ॥२॥

व्यसन भाव की गंध रहे ना, पाप ताप सब मूल नशे।
भय ना होवे कभी किसी से, गुरु आज्ञा मम हृदय बसे॥
भाई-भाई जैसे बनकर सुखी रहे सब देश वतन।
प्रातः उठकर करूँ प्रार्थना, तुमसे मेरे हे भगवन्! ॥३॥

न्याय नीति में दया-दान में, मानस मेरा तत्पर हो।
मन में हो ना काम व्यथा, ना रेशम चमड़ा तन पर हो॥
दुष्कर्मों का विलय शीघ्र हो, धर्म भाव का होय जतन।
प्रातः उठकर करूँ प्रार्थना, तुमसे मेरे हे भगवन्! ॥४॥

दर्शन स्तुति

(छन्द-ज्ञानोदय)

धन्य-धन्य हो प्रभुवर तुम ही, धन्य तुम्हारा जीवन है।
धन्य हुआ है आज आपके, दर्शन करके यौवन ये॥
नयन हुए हैं सफल आज ये, तुमको लखकर के स्वामी।
वचन हुए हैं सारवान तुम, थुति करके हे जगनामी॥१॥

पैर हुए हैं सार्थक मेरे, निकट आपके आने से।
मस्तक मेरा सर्वोत्तम यह, बना चरण झुक जाने से॥
पुञ्ज चढ़ाते अञ्जलि-बध[१] हो, हुए हाथ ये उत्तम हैं।
विराजमान कर उर में तुमको, हृदय-कमल यह सत्तम है॥२॥

धन्य हुआ है जीवन मेरा, धन्य आज का दिवस रहा।
धन्य-धन्य यह मानस जिसमें, आप बिम्ब बस निवस रहा॥
अहो जिनेश्वर! हे परमेश्वर! अहो-अहो सर्वेश्वर जी।
ज्ञानवान हो रहित मान हो, तीन लोक के ईश्वर जी॥३॥

क्षमाशील हे धीरवीर! हे जगदाभूषण! तुम्हें प्रणाम।
तीन लोक के शिखामणी हे सर्वोत्तम! हो तुम्हें प्रणाम॥
जन - मन - रंजन, परम निरंजन, वीतराग प्रभु तुम्हें प्रणाम।
मन-वच-तन से शिव सुख भोगी, कोटि, कोटि है तुम्हें प्रणाम॥४॥

समाधिमरण

मात-पिता सुत बान्धव तिरिया, सुन लो अब मैं तुमसे भी।
नाता तोड़ूँ क्योंकी तुम सब, भिन्न रहे हो मुझसे जी॥
चेतन ही है मुझको प्यारा, लगता सारा जग खारा।
मृत्यू को मैं मित्र बनाकर, उसके साथे अब चाला॥१॥

अद्यावधि मैं भूल आत्म को, तुमको अपना जाना था।
तुमही को खुश करने हेतू, पाप किया मन माना था॥
प्रभु से माँगू क्षमा सभी की, क्षमा करो हे सुखशाला॥
मृत्यू को मैं......॥२॥

विषय भोग को सुख के कारण, माना अब तक मूरख बन।
अब समझा ये केवल दुख हैं, मिलता इनसे दुखियापन॥
छोड़ सभी को तन से भी मैं, छोड़ूँ ममता निःसारा॥
मृत्यू को मैं......॥३॥

सर्व परिग्रह छोड़ दिये तो, इच्छा को क्यों पालूँ हा।
तृष्णा नागिन के वश होकर, प्रभु आज्ञा को टालूँ ना॥
आशिष दे दो गुरुवर मुझ पर, बढ़े-चढ़े ना दुख काला।
मृत्यू को मैं......॥४॥

राग-रोष से क्रोध लोभ से, छल कर-करके पछताया।
लेकिन उनको छोड़ा ना जो, भव-भव में हूँ भरमाया॥
हाय कष्ट है, मैंने स्वामिन्! व्रत संयम को ना पाला।
मृत्यू को मैं......॥५॥

नरक ढोर में, मनुज देव में, जन्म लिया था मरण किया।
बार-बार मैं मरकर जन्मा, नये-नये तन धार जिया॥
बनूँ अजन्मा अतः अहं को, अरु मैंने सब मम टाला॥
मृत्यू को मैं......॥६॥

जीर्ण देह से छुड़वा कर जो, नूतन सुन्दर तन देता।
उस अंतक से क्या डरना है, स्वर्ग सुखों को जो देता॥
क्लेशित होकर इससे डरकर, जीवन विरथा कर डाला॥
मृत्यू को मैं......॥७॥

मैंने जो कुछ धर्म किया था, पुण्य कमाया दान दिया।
प्रभु पूजा की गुरु चरणों में, धर्मामृत का पान किया॥
ना समझा पर धर्म तभी तो, मान मदों को बस पाला॥
मृत्यू को मैं......॥८॥

अहो पूर्ण सुख देने वाले, इस अवसर को पाया है।
धारण कर संन्यास मरण को, मेरा मन हरषाया है॥
ममता विनशी समता आयी नहीं रहा मन मतवाला॥
मृत्यू को मैं......॥९॥

क्लेश नहीं है चित में मेरे, नहिं काया पर दृष्टी है।
सुमरन ना है परिजन का, अब लगती भिन तन यष्टी है॥
भेद-ज्ञान से तन चेतन के बनकर आतम बलवाला॥
मृत्यू को मैं......॥१०॥

प्रभो प्रार्थना यही आपसे अंत समय तक तेरा ही।
जपते-जपते नाम सुमरते रटते - रटते चेतन ही॥
चेतन में रम जावें, तेरा नाम रहे बस रखवाला॥
मृत्यू को मैं......॥११॥